जनवरी 2002

'**प्राइमरी शिक्षक**' राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् की एक त्रैमासिक पत्रिका है। इस पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है शिक्षको और संबद्ध प्रशासकों तक केंद्रीय सरकार की शिक्षा नीतियो से सबंधित जानकारियां पहुचाना, उन्हें कक्षा में प्रयोग मे लाई जा सकने वाली सार्थक व संबद्ध सामग्री प्रदान करना और देश भर के विभिन्न केद्रो में चल रहे पाठ्यक्रमों और कार्यक्रमों आदि के बारे में समय पर अवगत कराते रहना। शिक्षा-जगत में होने वाली गतिविधियो पर विचारों के आदान-प्रदान के लिए भी यह पत्रिका एक मंच प्रदान करती है। पत्रिका मे प्रकाशित लेखो मे व्यक्त किए गए विचार लेखकों के अपने विचार भी हो सकते है। यह आवश्यक नही है कि प्रत्येक चिंतन मे परिषद् की नीतियो को ही प्रस्तुत किया गया हो।

पूरन चन्द *प्रधान अकादमिक संपादक*
रामेश्वर दयाल शर्मा *अकादमिक सपादक*
राजकुमार गुप्त *संपादक*
डी. साई प्रसाद *उत्पादन अधिकारी*

मूल्य एक प्रति : 4 रुपये वार्षिक : 16 रुपये

प्राइमरी शिक्षक

वर्ष : 27 | अक 1 | जनवरी 2002

इस अंक में

संपादक की कलम से

मानव के विकास में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है। शिक्षा सुनहरे भविष्य के सपनो को पोषित कर उन्हे उच्च कार्यक्षमता द्वारा वास्तविक रूप में कार्यान्वित करने का दृढ़ संकल्प जाग्रत करती है। यह नए विचारो को ग्रहण करने, मूल्यांकन करने और प्रगति के लिए उनका उपयोग करने की सामर्थ्य प्रदान करती है। परन्तु वर्तमान शिक्षा प्रणाली अपेक्षित विकास के अवसर प्रदान न कर बच्चों को तनावयुक्त वातावरण उपलब्ध करा रही है। इसके परिणामस्वरूप अनेक विद्यार्थी मानसिक एव शारीरिक अनियमितताओ के शिकार हो रहे है। यह दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति प्रशासनिक अकर्मण्यता तथा समाज की उच्च अपेक्षाओ के दबाव के कारण पनप रही है। सामान्यत· बच्चो को उच्च स्तर की शिक्षा दिलाने की ललक में माता-पिता अन्य विकल्पो को अपनाने का प्रयास करते है जिससे उनका भविष्य उज्ज्वल बन सके। इसके लिए वे इच्छित ख्याति प्राप्त विद्यालयों में प्रवेश दिलाने के उद्देश्य से उनको अल्पायु से ही गहन प्रशिक्षण दिलवाना शुरू कर देते हैं, जो उनके सर्वागीण विकास पर प्रतिकूल असर डालता है। विद्यालय में प्रवेश लेने के पश्चात तो प्रति सप्ताह, माह और वार्षिक परीक्षाओं का सिलसिला बालक को मानसिक तनाव की लपेट में ले लेता है। परीक्षा भय के अतिरिक्त अन्य विद्यालयी क्रियाकलाप व प्रावधान बच्चे को आतंकित करने मे सहायक है जो निम्न है–
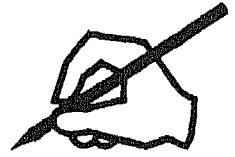
- आवश्यकता-आधारित पाठ्यचर्या के स्थान पर अवधारणाओ से बोझिल पाठ्यचर्या का होना।
- विद्यालय समय उपयुक्त न होना।
- अध्यापक विद्यार्थी अनुपात अधिक होना।
- कक्षा-कक्षो का भौतिक वातावरण व सीखने-सिखाने की विधिया रुचिकर न होना।
- अध्यापक-विद्यार्थी मे स्वस्थ मुक्त परस्पर संवाद का अभाव।
- शारीरिक दड एव अनुशासन की विवेकहीन व्यवस्था।
- असंतुलित तथा अधिक गृहकार्य देकर बालक की स्वतत्रता पर अकुश होना।
- बच्चो की प्रतिभा, सीमाओं तथा व्यक्तिगत योग्यताओं की अध्यापक द्वारा अवहेलना।
- बच्चो की उपलब्धि के बजाय कमी पर विशेष बल देना।

विद्यालय एक सामाजिक सस्था के रूप मे कार्यरत होता है जहा विद्यार्थियों के ज्ञान सवर्धन के साथ-साथ उनके शारीरिक व अन्य क्षमताओ के विकास के अवसर सुलभ होते हैं। इनके समुचित विकास के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा प्रणाली मे उचित व्यवस्था एवं प्रासंगिक विधियो का प्रावधान हो जो बालक के संपूर्ण विकास को प्रभावित करने मे समर्थ हो। अभिभावक द्वारा अपनी आकांक्षाओ को बालक पर थोपना उस पर क्रूरता है।

प्राइमरी शिक्षक पत्रिका परिवार की ओर से सभी पाठकों को नववर्ष की हार्दिक शुभकामनाए। ❑❑

प्रारंभिक शिक्षा में सुधार कुछ प्रमुख सुझाव

❐ आशा शर्मा

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्रदान करने वाली शिक्षा, देश के समक्ष एक ऐसी चुनौती के रूप में है, जिसका समाधान यदि हमारा वर्तमान न कर सका तो निश्चित रूप से देश के भविष्य पर एक प्रश्न चिह्न लग जाएगा। जिस देश मे शिक्षा एवं विकास नीतियां, शिक्षा को मानवीय मूल्यों एवं विकास के महत्वपूर्ण आधार स्तंभों के साथ जोड़ने में असमर्थ हो, वहां "प्राथमिक शिक्षा का लोकव्यापीकरण" "सार्वभौमिक शिक्षा" "सबके लिए शिक्षा" तथा "प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण" आदि शब्दों का मायाजाल आज के समसामयिक गतिशील परिवेश मे मात्र एक हास्यास्पद नारा-सा प्रतीत होता है।

वर्तमान परिदृश्य पर दृष्टिपात करने से यह स्पष्ट होता है कि विभिन्न सरकारी एव गैर-सरकारी प्रयासो के बावजूद भी बढ़ती हुई जनसख्या के प्रवाह, बेरोजगारी एवं विकराल निर्धनता से ग्रसित यह जनमानस मात्र जीवित रहने के लिए संघर्ष करता हुआ, आज भी शिक्षा को अपनी प्राथमिक आवश्यकता स्वीकार करने में असमर्थ है, साथ ही अब इसे बहुत जरूरी भी नहीं समझता है। परन्तु फिर भी कागज के पन्नो पर शिक्षा के लोकव्यापीकरण की संकल्पना आंकड़ो के रूप में अपना विस्तार तीव्र गति के साथ ले रही है, भले ही इसकी दिशा और दशा कुछ भी हो। प्राथमिक शिक्षा के विस्तार के नाम पर जगह-जगह पर विद्यालयों की स्थापना जहां शिक्षा के नाम पर बालक-बालिकाओं की कोमल एवं मनतरगी भावनाओ का शोषण, शिक्षको के वेतन मे असमानता, चिन्तन शक्ति का अभाव, पढ़ाई के नाम पर केवल होमवर्क। इसके अतिरिक्त न्यूनतम अधिगम सप्राप्ति एवं बुनियादी ज्ञान का अभाव। वर्तमान मे यह है सार्वभौमिक शिक्षा का स्वरूप एव मूर्तरूप लेती उसकी परिकल्पना।

यही कारण है कि आज शिक्षाविदो के समक्ष एक चुनौती है कि प्राथमिक शिक्षा जो कि सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था की नींव है, इसमें गुणवत्ता का समावेश एवं उसका सवर्धन कैसे किया जाए? तभी भारतीय सविधान के मूलभूत उद्देश्य एव मानवाधिकार की घोषणा को साकार करने के साथ-साथ "शिक्षा" शब्द की सार्थकता को सिद्ध किया जा सकता है।

शिक्षा के महत्वपूर्ण अवयवों में संप्रेषणीयता सुनियोजितता, अनवरतता और ज्ञानार्जन हैं। विकास के उत्तम मापदण्डों में शिक्षा को प्राथमिकता के आधार पर सम्मिलित किया गया है। शिक्षा में गुणवत्ता संवर्धन हेतु उसमें निहित प्रत्येक घटक जैसे शिक्षक, शिक्षार्थी, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, भौतिक संसाधन, अधिगम प्रक्रिया, सतत् मूल्यांकन, प्रशासनिक व्यवस्था, अभिभावकों का सहयोग, जनसमुदाय की भागीदारी आदि का समावेश कर सतत् आकलन के आधार पर सुधार से शिक्षा में अपेक्षित परिवर्तन किया जा सकता है।

गुणात्मक सुधार की आवश्यकता

शिक्षा की परिभाषा भी उसकी परिपाटी की तरह मानव विकास के भिन्न अवयवों को संजोकर बड़ी विस्तृत है। अंतर्राष्ट्रीय शैक्षिक मानक वर्गीकरण के अनुसार "एक सुनियोजित और अनवरत संप्रेषणीयता जो ज्ञान को जन्म दे शिक्षा है"। इससे यह स्पष्ट है कि यद्यपि हर प्रकार की शिक्षा ज्ञान को जन्म देती है, किन्तु हर प्रकार के ज्ञान का नाम शिक्षा नही है। अर्थात् शिक्षा के महत्वपूर्ण अवयवों, जैसे सप्रेषणीयता, सुनियोजितता, अनवरतता और ज्ञान का पुष्ट होना ही शिक्षा पद्धति को पुष्ट कर

सकता है। अन्य साधनो के माध्यम से जानकारी को तो जन्म दिया जा सकता है, शिक्षा को नही। एक लंबे समय से हमने पढने और लिखने की साधारण योग्यता को शिक्षा का नाम देकर आंकड़े बनाए है और व्यक्तिगत, सामाजिक एवं राष्ट्रीय प्रगति का मूल्याकन किया है।

नोबेल पुरस्कार विजेता प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रो अमर्त्य सेन ने स्वास्थ्य और शिक्षा को विकास के उत्तम मानदण्डों में शामिल कराया है। इसीलिए वह उच्च शिक्षा के प्रसार की बजाय आम लोगो की साक्षरता बढाने तथा प्रत्येक बालक-बालिका को प्राथमिक शिक्षा अनिवार्य रूप से दिलाने की बात करते हैं। यही नही वे "किसी भी शिक्षा" की नही बल्कि "शिक्षा मे गुणवत्ता" की बात करते हैं। उनका मानना है कि उच्च शिक्षा से जो कुछ मिलने की अपेक्षा की गई थी, वह पूरी नही हुई है जबकि प्राथमिक शिक्षा से देश को लाभ हुआ है।

शिक्षा को उद्देश्यपरक और सार्थक बनाने के लिए गुणात्मक मानदण्डो का निर्धारण कर समयानुसार परिवर्तन अपेक्षित होता है जिससे बालक-बालिकाए शिक्षा को सही रूप में ग्रहण कर राष्ट्रोत्थान मे अपनी भूमिका सकुशल निभा सकें। जिस तरह एक पेड़ को रोपना ही नही, उसे निरन्तर पोषित करना भी जरूरी है, ठीक उसी तरह प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। यह तभी संभव है जब शिक्षा में गुणवत्ता संवर्धन हेतु उसमें निहित प्रत्येक घटक जैसे– शिक्षक, शिक्षार्थी, पाठ्यक्रम, शिक्षण विधि, विद्यालय मे उपलब्ध भौतिक ससाधन, अधिगम प्रक्रिया, सतत् मूल्याकन, प्रशासनिक व्यवस्था एवं बच्चों के अभिभावकों के प्रशिक्षण को समाविष्ट कर सतत् आकलन के आधार पर गुणात्मक शैक्षिक कार्यक्रमों का समयानुसार नियोजन किया जाना तथा पचायतों की सक्रिय सकारात्मक भूमिका आवश्यक है। इसके साथ ही जनसमुदाय की भागीदारी एव उनकी शिक्षा के प्रति सजगता भी महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यही घटक संपूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का निर्धारण करते है और उनकी केन्द्रीय धुरी के रूप में शिक्षक विद्यमान है।

शिक्षा प्रक्रिया और उसके घटक
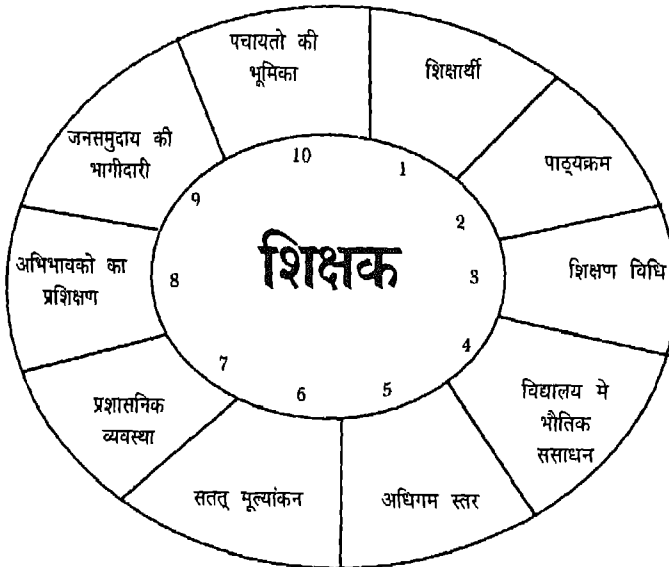
प्रमुख सुझाव

अत: उपर्युक्त घटकों के आधार पर कुछ प्रमुख सुझाव दिए जा रहे हैं जिनके आधार पर "शिक्षा मे गुणवत्ता" का सवर्धन किया जा सकता है।

शिक्षक

शिक्षा मे गुणवत्ता शिक्षक की गुणवत्ता में समाहित है। शिक्षक की गुणवत्ता में सुधार उसकी मनोवृत्ति को शिक्षकीय अभिवृत्ति की ओर मोड़ने से प्राप्त हो सकता है। अत: आज उसे अधिक सामर्थ्यवान बनाने तथा उसके विवेक को जागृत करने की अति आवश्यकता है। यह सामर्थ्य स्वयं भी अद्भुत इच्छा शक्ति को शिक्षा में निवेश कर देने के सकल्प को प्राप्त करने वाली प्रेरणा के रूप मे होनी चाहिए। शिक्षा के क्रियाकलापो मे जिस दिन "शिक्षक को आनन्द" आने लगेगा उस दिन शिक्षा में स्वतः गुणवत्ता स्थापित हो जाएगी।

शिक्षको मे गुणवत्ता संवर्धन के लिए निम्नांकित बिन्दुओं पर प्रारंभ से ही ध्यान देना होगा। ये अधोलिखित है–

चयन का अधिकार–शिक्षकों की गुणवत्ता के लिए उनके चयन में ही हमे विशेष ध्यान देना होगा। चयन का आधार कही नौकरी न मिलने के कारण शिक्षक बनने के बजाय "शिक्षक अभिवृत्ति" वाले व्यक्ति को ही शिक्षक के रूप में चुने जाने की बात करनी चाहिए। इसके लिए विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण की आवश्यकता है। इसके पश्चात् शिक्षको को कई प्रकार के सेवा-पूर्व एवं सेवारत प्रशिक्षणों की आवश्यकता है। सेवा-पूर्व प्रशिक्षण में उनकी शिक्षा में सकारात्मक अभिवृत्ति-विकास के लिए कार्यक्रम भी समाविष्ट होना चाहिए।

शिक्षकों की प्रोन्नति का मापदण्ड–शिक्षकों की शिक्षण के प्रति सकारात्मक अभिवृत्ति एव अभिरुचि तथा सतत् कार्य के आकलन के आधार पर ही उन्हे स्थायी किया जाना चाहिए। शिक्षकीय ज्ञान के नवीनीकरण हेतु समय-समय पर शैक्षिक कार्यक्रमों जैसे–राष्ट्रीय संगोष्ठी, सम्मेलन, कार्यशाला, सिम्पोजियम आदि में अनिवार्य रूप से सहभागिता का होना आवश्यक है ताकि शिक्षकों मे वैचारिक शून्यता एव संवादहीनता की स्थिति व्याप्त न हो। इन्हीं शैक्षिक विकास के मापदण्डो को उनकी प्रोन्नति का यदि आधार बना दिया जाएगा तो स्वाभाविक रूप मे सभी शिक्षक इस दिशा की ओर प्रेरित होगे।

प्रशिक्षण कार्यक्रम–प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी पहली बार तो सत्तर प्रतिशत शिक्षक सेवाकाल में कोई प्रशिक्षण नही लेते। तीस प्रतिशत शिक्षक प्रशिक्षण लेते भी है तो उन्हे "ज्ञान व कौशल" के ही प्रशिक्षण दिए जाते हैं। कोई भी प्रशिक्षण ऐसा व्यापक रूप प्राप्त नही कर सका है जो शिक्षकों के 'भीतर' (सोच एव दृष्टि में) कोई परिवर्तन लाए। यदि शिक्षकों मे अपने व्यवसाय के प्रति आत्म-चेतना जाग्रत हो जाए तो वे स्वतः सीखने व सिखाने के लिए तैयार हो जाएगे। इसके पश्चात् ही सफल अधिगम प्रक्रिया के लिए उन्हें बाल-मनोविज्ञान एवं शिक्षण विधि को जानने एवं समझने की आवश्यकता पडती है। यदि शिक्षकों में इन गुणों का विकास हो जाए तो स्वतः वे अपने कार्य के प्रति प्रतिबद्धता स्थापित करते हुए शिक्षण व्यवसाय मे आनन्द का अनुभव करेगे।

शिक्षण व्यवसाय की महत्ता एवं गुणवत्ता–जिस प्रकार से अभियांत्रिकीय, चिकित्सकीय, सूचना एवं प्रौद्योगिकी का महत्व है, उसी प्रकार से शिक्षक-प्रशिक्षण कार्यक्रमों में गुणात्मकता का समावेश करते हुए भी समान महत्व मिलना आवश्यक है ताकि अधिक से अधिक युवा वर्ग जो कि शिक्षण-अभिक्षमता रखते हैं वे स्वतः प्रेरित होकर शिक्षण व्यवसाय मे आने के लिए आकृष्ट हो। इसमें समान कार्य एव समान वेतन के साथ-साथ समयानुकूल शिक्षको के गुणात्मक स्तर को निर्धारित करने वाले आवश्यक मापदण्डों को भी निर्धारित करना होगा ताकि शिक्षक अपने व्यवसाय के सामाजिक एवं आर्थिक पक्ष से सन्तुष्ट रह सके। क्योकि वर्तमान में शिक्षकों के मध्य वेतन की असमानता तथा अस्तित्व-विहीनता की स्थिति सार्वभौमिक शिक्षा में गुणात्मकता के अभाव को दर्शाती है। अत इस असमानता की खाई को पाटना होगा।

शिक्षकों को रचनात्मक दिशा की ओर प्रेरित करना–सेवाकालीन प्रशिक्षण की समयावधि में प्राथमिक शिक्षको को उनके विद्यालय के क्षेत्रीय परिवेश व शिक्षार्थी

की अधिगम क्षमता के अनुकूल शिक्षण विधियों पर आधारित स्वय अपने मॉडल तैयार करने के लिए प्रेरित करना भी गुणात्मक शिक्षा के संवर्धन का एक महत्वपूर्ण पहलू बन सकता है। ये मॉडल प्रशिक्षण के समय भी प्रयुक्त किए जा सकते है जो कि उपयुक्त व प्रभावी होंगे और शिक्षको को स्वय इस दिशा मे स्वप्रेरणा प्राप्त होगी। इसके साथ ही शिक्षा के क्षेत्र में वे स्वयं अपने महत्व को प्रतिपादित कर सकेगे। इन विशिष्ट कार्यो के योगदान के लिए, प्रोत्साहन के रूप में शिक्षकों एवं विद्यालयों को पुरस्कार प्रदान करने की भी यथोचित व्यवस्था होनी चाहिए ताकि अन्य शिक्षक व विद्यालय भी इस दिशा में प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

मानक के अनुसार शिक्षकों की नियुक्ति--प्राथमिक विद्यालयो में 1:30 के अनुपात मे शिक्षक नियुक्त किए जाए ताकि सभी कक्षाओ का शिक्षण कार्य सुचारू रूप से चल सकेगा तथा शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया के साथ-साथ प्रत्येक बालक की गतिविधियो पर शिक्षक ध्यान देने के साथ-साथ उनका मनोवैज्ञानिक ढग से विकास कर सकेंगे। यदि शिक्षक कम और बच्चे अधिक होंगे तो शिक्षण कार्य सही ढग से नहीं हो सकता और न ही न्यूनतम अधिगम स्तर की प्राप्ति संभव होगी। इसके साथ ही प्रत्येक बालक के व्यक्तिगत विकास की कल्पना भी नही की जा सकती।

शिक्षक में कर्तव्य बोध की भावना का विकास—आज शिक्षक अपने कर्तव्य के प्रति उदासीन है। यह एक ऐसा बिन्दु है जिसके विद्यमान रहते हुए शिक्षा का स्तर ऊंचा हो ही नहीं सकता। इसलिए शिक्षक को अपने कर्तव्य बोध का अहसास कराना होगा तभी वह अपने दायित्वों का निर्वाह कर सकता है। इसके लिए शिक्षक को स्वतः क्रियाशील एवं सतत् स्वाध्याय के लिए प्रेरित होना पड़ेगा तभी वह बालकों को ज्ञान के प्रकाश से अभिभूत करने मे सक्षम हो पाएगा। जैसा कि गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने कहा है-- "यदि शिक्षक स्वयं अध्ययन नहीं करता तो वह सच्ची शिक्षा नहीं दे सकता। जो दीपक स्वयं बुझ गया है वह दूसरे दीपक को क्या जलाएगा? यदि किसी शिक्षक ने अपने विषय के अध्ययन की अतिश्री कर ली है जिसने अपना ज्ञानवर्धन समाप्त कर दिया है और जो पिछली बाते ही दुहराता है। वह विद्यार्थियो के प्रति न्याय नही करता। वह उनका मस्तिष्क प्रखर नही बना सकता। अतः शिक्षक को आजीवन अध्ययन परायण रहना चाहिए।"

शिक्षार्थी

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया मे शिक्षक के पश्चात् शिक्षार्थी या अधिगमकर्ता का महत्वपूर्ण स्थान है। आयु-वर्ग व व्यक्तिगत विभिन्नता को ध्यान में रखते हुए बालको को कौन-सी और किस विधि से तथा क्यों शिक्षा देनी है, इसका सर्वप्रथम निर्धारण करना आवश्यक है। किसी भी बालक को अधिगम कराने से पूर्व उसकी अधिगम क्षमता को पहचानना आवश्यक है तभी शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया प्रभावी होगी। भिन्न-भिन्न परिस्थितियो में तथा विकास के विभिन्न स्तरों पर अधिगम की कौन-कौन सी क्रियाएं प्रभावी एवं सुगम हो सकती हैं और कौन-सी कठिन, यह निश्चित करने मे शिक्षक को बाल विकास के विभिन्न पक्षों का मनोवैज्ञानिक ज्ञान होना चाहिए। इससे शिक्षक को बालक की व्यक्तिगत विभिन्नताओं को जानने एवं समझने में भी सुविधा मिलेगी। व्यक्तिगत विभिन्नताओं के ज्ञान के आधार पर शिक्षक विद्यार्थियो को शैक्षिक-निर्देशन के द्वारा भावी व्यावसायिक जीवन की ओर उनका मार्ग प्रशस्त कर सकता है। इस सन्दर्भ मे वह विद्यार्थियो के अभिभावको को भी उचित परामर्श देकर उनके उपयुक्त विकास में अपना सहयोग प्रदान कर सकता है।

प्रसिद्ध शिक्षा मनोवैज्ञानिक स्किनर महोदय ने व्यक्तिगत विभिन्नता के महत्व को प्रतिपादित करते हुए लिखा है कि, "यदि शिक्षक उस शिक्षा मे सुधार करना चाहता है, जिसको कि समस्त बालक अपनी योग्यता पर ध्यान दिए बिना प्राप्त करते है, तो उसके लिए व्यक्तिगत भेदो के स्वरूप का ज्ञान अनिवार्य है।" अतः स्पष्ट है कि बालक के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास तभी सभव है जब व्यक्तिगत विभिन्नताओं को दृष्टिगत रखते हुए शिक्षा के स्वरूप का निर्धारण हो और शिक्षक को भी व्यक्तिगत विभिन्नता के स्वरूप तथा उसके पहलुओ का ज्ञान हो।

बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम

बच्चो के लिए बाल-केन्द्रित शिक्षा होनी चाहिए। बालक को केन्द्र बिन्दु मानकर पाठ्यक्रम का निर्माण एव शिक्षण विधिया निर्धारित होनी चाहिए तभी बच्चे विद्यालयों मे पढने के लिए प्रेरित होंगे। पाठ्य-सहगामी क्रियाओं को प्रोत्साहित करना, शारीरिक दण्ड पूर्णतः समाप्त करना, कक्षा-VIII तक किसी भी बालक/बालिका को अनुत्तीर्ण न करना, राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अभिन्न अंग हैं। जैसा कि आचार्य राममूर्ति समिति की रिपोर्ट (1990) में बाल-केन्द्रित दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि "प्राथमिक शिक्षा के प्रारम्भिक चरणो में अधिगम के अभिन्न अग के रूप में खेलकूद, सैर-सपाटा, मौजमस्ती करना तथा स्वयं खोजबीन करना जैसे तरीकों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।" इससे बच्चों की सृजनात्मक क्षमता का विकास होगा और वे रचनात्मक दिशा की ओर प्रेरित होगे।

पाठ्यचर्या प्रारूप में मानव-व्यवहार के तीनो पक्षो को समान महत्व दिया जाना चाहिए तभी बालक के सर्वागीण विकास की परिकल्पना (समान महत्व) को साकार रूप प्रदान किया जा सकता है और यही शिक्षा का मूलभूत उद्देश्य है। विभिन्न 'कक्षाओ' का पाठ्यक्रम निर्धारित करने में शिक्षक की सक्रिय भागीदारी का होना आवश्यक है क्योकि शिक्षक ही यह जान सकता है कि शिक्षार्थी और समाज की क्या आवश्यकताएं और सीखने की कौन-सी क्रियाओ से ये आवश्यकताए सर्वोत्तम रूप से पूर्ण हो सकती है? सक्षेप मे क्रियात्मक सफलता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक कक्षा में पाठ्यक्रम को मनोवैज्ञानिक आधार पर प्रयुक्त किया जाना चाहिए।

न्यूनतम अधिगम स्तर की सम्प्राप्ति हेतु शिक्षण विधियों में नवाचार का प्रयोग

प्राथमिक विद्यालयो में अध्ययनरत बालको के अधिगम स्तर के मूल्यांकन से यह स्पष्ट होता है कि कक्षा दो के बच्चे सभी वर्णमाला के वर्णो का ज्ञान नही रखते और कक्षा पाच के बच्चे हिन्दी की पाठ्यपुस्तक सही ढग से नहीं पढ़ पाते। गणित मे तो स्तर और भी गिरा हुआ है। अन्य विषयो की भी यही स्थिति है। प्रयास यह हो कि बालक को स्तरानुकूल ज्ञान, बोध और कौशल मे प्रवीण बनाया जाए। इसके लिए शिक्षकों को प्रयासरत होना पड़ेगा, साथ ही अपने कर्तव्य बोध को महसूस करते हुए दायित्व को निष्ठा के साथ निभाना पडेगा। जैसा कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में विद्यालयी परिवेश एवं शिक्षा के क्षेत्र मे शिक्षक को एक महत्वपूर्ण घटक के रूप मे स्वीकार किया गया है। अतः शिक्षक यदि अपने शिक्षण में खेल विधि, गीत तथा आकर्षक रंगीन शिक्षण सामग्री का प्रयोग करता है तो निश्चित ही बालको के लिए रुचिपूर्ण वातावरण का निर्माण हो सकेगा और उनके अधिगम स्तर मे अभिवृद्धि होगी। बच्चो की जिज्ञासाओं का समाधान पाठ्यपुस्तकों की अपेक्षा मूर्त वस्तुओ के अवलोकन तथा क्रियाओ से ही ज्यादा सम्भव है। इसके द्वारा उनकी कल्पना शक्ति को एक दिशा मिल सकती है और बच्चों को भी स्वतः चित्र, मॉडल बनाने के लिए प्रेरित कर उनकी सृजनात्मक क्षमता का विकास किया जा सकता है।
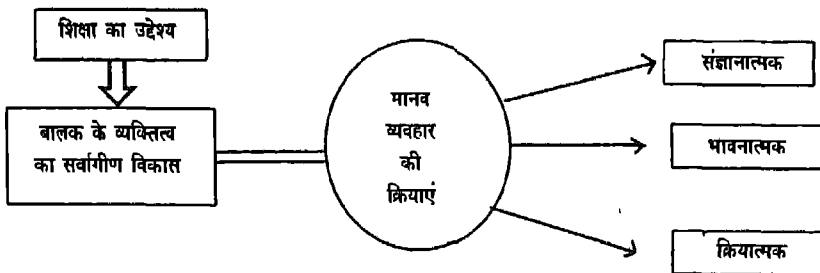
सतत् व्यापक मूल्यांकन

शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया को प्रभावी बनाने के लिए शिक्षार्थी ने कक्षा-शिक्षण तथा अन्य पाठ्य सहगामी गतिविधियों में कितना अधिगम किया है, इसके लिए सतत् व्यापक मूल्याकन की व्यवस्था होना अत्यन्त आवश्यक है। इसके लिए शिक्षकों का प्रशिक्षण, मानक मापन उपकरणो का निर्माण तथा बालको की क्रमिक प्रगति का अभिलेखा सुरक्षित रखा जाना चाहिए। निर्मित उपकरणो के माध्यम से बालको का वास्तविक मूल्यांकन किया जाए ताकि दक्षता आधारित शिक्षण की प्रक्रिया सुचारू रूप से सम्पन्न हो सके। "बाल-केन्द्रित शिक्षा" में इसी मूल्यांकन पद्धति की मौलिक सकल्पना की गई है।

विद्यालय में साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन

बालको के भाषात्मक पक्ष के विकास के लिए विद्यालयो में साहित्यिक एवं सास्कृतिक कार्यक्रमो का आयोजन अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए। प्रत्येक दिन प्रात: प्रार्थना सभा के अन्तर्गत योग, नैतिक वाक्यो का उद्‌बोधन तथा महापुरुषो पर व्याख्यान का आयोजन भी शामिल किया जाना चाहिए। इसके द्वारा विद्यार्थियों में नैतिक एवं मानवीय मूल्यों का विकास सम्भव हो सकेगा। इसके अतिरिक्त प्रत्येक शनिवार को अन्तिम कालांशो मे होने वाली बालसभा के रूप में विद्यार्थियो के मध्य विभिन्न कार्यक्रमों का लघु स्तर पर आयोजन कर उनकी प्रतिभा का आकलन किया जा सकता है। इन्ही कार्यक्रमो को व्यवस्थित रूप देकर विभिन्न आयोजित होने वाले सामाजिक, साहित्यिक एवं राष्ट्रीय पर्वो मे इसको मूर्त रूप में परिणत कर अभिभावको की सहभागिता को भी इसमें अनिवार्य रूप से सम्मिलित किया जाना आवश्यक है। ताकि वह भी विद्यालय मे होने वाली विभिन्न गतिविधियो से परिचित होकर बच्चों के विकास मे अपनी सक्रिय सहभागिता दे सकें।

प्रशासनिक व्यवस्था

किसी भी सस्था के खोल देने मात्र से शिक्षा के उद्देश्य की पूर्ति नही हो जाती बल्कि आवश्यकता होती है सुदृढ़ एवं सुव्यवस्थित प्रशासनिक व्यवस्था के प्रबन्धन एवं संचालन की। किसी भी विद्यालय के प्रबन्धन एवं सचालन में प्रधानाचार्य की अहम् भूमिका होती है। वही संस्था के सार्वभौमिक विकास को अपना नैतृत्व प्रदान करता है। इसीलिए विद्यालय एव वहा पर संचालित शैक्षिक गतिविधियो के प्रबन्धन एव उपयुक्त संचालन का ज्ञान प्रधानाचार्य को होना चाहिए क्योकि उसके कुशल नेतृत्व एव मार्गदर्शन से ही उक्त गतिविधियो को अधीनस्थ वर्ग सम्पन्न करने मे सक्षम हो सकता है। इसके साथ ही उसका दृष्टिकोण व्यावहारिक सहयोगात्मक एव कार्य पद्धति मे लचीलापन होना चाहिए तभी वह अपने शिक्षकों व अधीनस्थ कर्मचारियों को सन्तुष्ट रख पाएगा।

शिक्षकों की अभिक्षमता व रुचि के अनुसार कार्य का वितरण उनके शैक्षिक विकास के लिए समय-समय पर समुचित व्यवस्था, बच्चों व विद्यालय की शैक्षिक गतिविधियों के विकास हेतु प्रतिमाह शिक्षको, स्थानीय समुदाय एव पंचायत प्रतिनिधियो के साथ परिचर्चा आदि प्रशासन की व्यवस्था को एक सुदृढ़ आधार प्रदान कर सकता है।

अभिभावकों का प्रशिक्षण

शासकीय संस्थाओं में अध्ययनरत बच्चे अपनी शिक्षा के लिए पूरी तरह विद्यालय तथा शिक्षकों पर निर्भर है। इन बच्चो को अपने अभिभावको से शैक्षिक मदद नही के बराबर है। इसके साथ ही यह अभिभावक वर्ग बच्चों की शैक्षिक प्रगति की ओर से भी उदासीन है। अत. ऐसी स्थिति में शिक्षा में गुणवत्ता लाने के लिए शिक्षक के बाद अभिभावको के प्रशिक्षण की आवश्यकता है। उन्हे इस बात से अवगत कराना आवश्यक है कि बच्चे के स्वास्थ्य, शिक्षा एवं व्यक्तित्व विकास में उनकी अहम् भूमिका है। यह दृष्टिकोण अपनाते हुए उन्हे स्वयं अपने आवश्यक व्यय (नशा, बीडी तम्बाकू तथा अन्य कुरीतियो पर खर्च) को समाप्त करके बच्चो की शिक्षा के लिए कुछ अधिक सुविधाएं जुटानी होगी। इस कार्य में शिक्षित व्यक्तियों, स्वैच्छिक और समाज सेवी सगठनो तथा

पचायतों को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी पड़ेगी। सजग अभिभावक ही अपने बच्चे को अच्छी शिक्षा दिला सकते हैं। प्रसिद्ध शिक्षाविद् गिजूभाई एव ताराबाई मोडक ने माता-पिता/अभिभावकों के साथ विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित कर इस दिशा मे उल्लेखनीय प्रयास किया। परन्तु उनका यह प्रयास उन्ही तक सीमित रह गया। अत' उनकी इस बाल-शिक्षण की सकल्पना को पुनर्जीवित कर शिक्षा मे इसको समाविष्ट करना होगा।

समाज की भूमिका

शिक्षक और शासन की भूमिका के साथ-साथ समाज की सक्रिय भागीदारी भी शिक्षा के विकास एवं गुणवत्ता संवर्धन मे सहायक है। सम्पन्न वर्ग द्वारा अपनी वैकल्पिक शिक्षा व्यवस्था बनाकर सन्तुष्ट हो जाने की प्रवृत्ति अत्यन्त घातक सिद्ध हो सकती है। दूसरी ओर सुविधा वचित बहुसंख्यक समाज की इस सोच को भी बदलना होगा कि शासकीय संस्थाएं केवल मध्यान्ह भोजन और छात्रवृत्ति प्राप्ति का साधन है और इसकी प्राप्ति के लिए बच्चे को विद्यालय मे प्रवेश करा देना ही उनका अभीष्ट उद्देश्य है। उन्हे यह स्पष्ट करना होगा कि शासकीय सुविधाओ की भी एक सीमा है तथा वह बच्चों की शिक्षा के विकास के लिए है। शिक्षा का लक्ष्य मात्र नौकरी नहीं है बल्कि बच्चों के व्यक्तित्व और आत्म-चेतना का विकास करना है।

ऐसे अनेक उदाहरण है जहा समाज की जागरूकता और सहयोग से अनेक समस्याओं का समाधान हुआ है और उत्साहजनक परिणाम प्राप्त हुए हैं। धार्मिक आस्था और विश्वास से युक्त सेवा कार्यो मे समर्पित भारतीय ग्रामीण जनता यदि शिक्षा को केवल संस्कार के भरोसे छोड़े रहती है तो यह उनकी एक बहुत बड़ी भूल कही जाएगी और इसके लिए ग्रामीण जनता ही नही बल्कि शिक्षा, धर्म एवं राजनीति से जुड़े वे व्यक्ति भी उत्तरदायी हैं जो इस ग्रामीण समुदाय का नेतृत्व करते है।

पंचायतों की भूमिका

पूज्य बापू की इच्छा थी कि "आजादी नीचे से शुरू होनी चाहिएं। हर एक गाव मे जनता की सल्तनत या पंचायत का राज होगा। उसके पास पूरी सत्ता व ताकत होगी"। शिक्षा के बारे में उनका मानना था कि शिक्षा को ग्रामोन्मुखी होना चाहिए। इसी विचारधारा को ध्यान में रखते हुए प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम सन् 1950 में लागू हुआ और पंचायती राज को सवैधानिक दर्जा सन् 1993 में प्राप्त हुआ। अब जाकर एक ऐसे वातावरण का निर्माण हुआ है कि जनता की स्थानीय शासन मे सीधी भागीदारी हो सके और विकास कार्य निचले स्तर तक पहुंचें, तो क्यो न इस व्यवस्था के लाभो को पहचानकर सार्वभौमिक प्रारम्भिक शिक्षा के विकास की दिशा मे इसका सार्थक सदुपयोग किया जाए। लोकतन्त्र के विकेन्द्रीकरण की दिशा में यह एक ठोस प्रयास होगा, जिससे पचायती राज की भावना का सम्मान होगा। परिणामत यह देखने मे भी आया है कि सक्रिय पंचायते अपने सीमित संसाधनो से ही गाव के विद्यालयों के संचालन/प्रशासन से जुड़ रही हैं।

पंचायतो के माध्यम से प्राथमिक शिक्षा के सचालन का बड़ा लाभ यह भी है कि प्रारम्भिक दशा से ही शिक्षा मे व्यावहारिकता की मात्रा बढ़ेगी। इसका लाभ स्वयं पंचायत प्रतिनिधियो को भी मिलेगा, जो अधिकतर अशिक्षित हैं। उनमे भी शिक्षा के प्रति "अभिरुचि" बढ़ी है और वे "सबके लिए शिक्षा" के महत्व को भली-भाति महसूस करने लगे है।

पंचायती राज मे महिलाओं, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति व पिछड़े वर्ग के लोगों को तिहाई आरक्षण दे देने से भी प्रारम्भिक शिक्षा के प्रति इस वर्ग में रुचि पनपना स्वाभाविक है। आज प्राथमिक स्तर पर बालिकाओ के दाखिले का प्रतिशत 43 11 है और उच्च प्राथमिक स्तर पर यह प्रतिशत 39.42 है। इससे स्पष्ट है कि पंचायती राज ने एक गतिशील नेतृत्व के साथ-साथ कमजोर वर्ग को भी अधिकार सम्पन्न बनाया है।

अन्य सुझाव

कुछ ऐसे अन्य कारक हैं जिन पर ध्यान देना आवश्यक है। वे निम्नाकित हैं–

- शिक्षा के प्रति रुचि और गुणात्मक अभिवृद्धि के लिए बालिकाओ और निर्धन परिवारों के बच्चो को प्रोत्साहन के रूप में विशेष सेवाओं की व्यवस्था की जानी चाहिए। उन्हे निःशुल्क पाठ्यपुस्तके, कागज, कलम और दो यूनिफॉर्म उपलब्ध कराने की व्यवस्था कराने के साथ अभिभावको की व्यक्तिगत समस्याओ और उनके मूलभूत जीवन से भी जुड़ना होगा तभी उनके अन्दर सजगता और विश्वास की भावना विकसित होगी।
- ग्रामीण क्षेत्रों मे शिशुओं की देखभाल के केन्द्र खोलने की व्यवस्था की ओर भी ध्यान देना अनिवार्य है। इससे ग्रामीण बालिकाओं को विद्यालय की ओर आकर्षित करने मे सुविधा होगी क्योंकि ग्रामीण बालिकाओं को अपने छोटे भाई-बहनों की देखभाल भी करनी पड़ती है।
- ग्रामीण बालक/बालिकाओ की शिक्षा के साथ माताओ की शिक्षा को भी जोडना होगा क्योंकि जब तक उनमें शिक्षा एवं स्वास्थ्य के प्रति सजगता नहीं आएगी तब तक शिक्षा का लोकव्यापीकरण एवं गुणवत्ता की कल्पना सम्भव नहीं है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में बालिकाओ की शिक्षा को दृष्टिगत रखते हुए ज्यादा से ज्यादा महिला शिक्षिकाओ की नियुक्ति की जानी चाहिए। इसके साथ ही उन्हें आदर्श निवास की सुविधा भी उपलब्ध हो।
- बाल श्रमिकों की समस्याओं को भली-भांति समझकर उनके लिए विशिष्ट सुविधाएं प्रदान की जानी चाहिए ताकि वे भी शिक्षा के लाभ को प्राप्त कर सकें।
- पढ़ाई छोड़ देने वाले बच्चो को फिर से शाला मे पढ़ाई शुरू करने के लिए उनके लिए अल्पकालीन कार्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए।
- ग्रामीण क्षेत्रो मे अध्ययनरत बच्चों के लिए पाठ्यक्रम मे व्यावहारिक एव जीवनोपयोगी विषय जैसे—पशु पालन, जमीन संरक्षण, खेती, गृहविज्ञान, वन सरक्षण, डेरी विज्ञान और दूध उत्पादन आदि समाविष्ट करना जिससे ग्रामीण बच्चे आत्मनिर्भरता एवं स्वावलम्बन की दिशा की ओर अग्रसर हो सकें।
- भारतीय बाल शिक्षा जगत मे अपना विशिष्ट योगदान देने वाले ताराबाई मोडक एवं गिजूभाई की बाल-शिक्षण सकल्पना को आधार बनाना होगा तभी प्रारम्भिक शिक्षा के विकास को एक दिशा मिल सकती है क्योंकि बिना दिशा एवं परिकल्पना के किसी भी कार्य को मूर्त रूप देना कठिन है।

उपर्युक्त विवेचनात्मक बिन्दुओ के आधार पर यह स्पष्ट है कि विद्यालय की सुविधाए उपलब्ध होने पर भी मात्रा और गुणवत्ता दोनो की दृष्टि से अभी भी अपर्याप्त हैं। अगर कोई प्राथमिक विद्यालय 1 किमी. की परिधि मे है और उसमें बच्चों की संख्या मानक औसत से काफी अधिक है या यह एक शिक्षक विद्यालय है या विद्यालय में ब्लैकबोर्ड जैसी मूलभूत सुविधाए भी उपलब्ध नहीं हैं तो ऐसी जटिल स्थिति में बिना किसी नियोजन के प्राथमिक विद्यालय का खोला जाना कोई तर्क सगत नहीं लगता क्योकि शिक्षा मे गुणवत्ता का अर्थ मानक स्तर की शिक्षा से है, जिसके अन्तर्गत बच्चे अपनी आयु एवं कक्षानुसार उस स्तर की शिक्षा प्राप्त करें जिसकी समाज अपेक्षा करता है। अत. ऐसी विषम स्थिति में प्रारम्भिक शिक्षा को सार्वभौमिक बनाने, उसमें शैक्षिक गुणवत्ता का संवर्धन करने और लक्ष्य प्राप्त करने मे समर्पित शिक्षक, संकल्पित शासन और जाग्रत समाज का त्रिकोण ही सहायक सिद्ध हो सकता है। ❑❑

शिक्षा विभाग
महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय
पोस्ट नया गांव, जिला सतना, म.प्र.

शिक्षा और स्वास्थ्य

❒ प्रकाश चन्द्र भट्ट

शिक्षा जगत मे यह उक्ति सुविख्यात है कि "शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वागीण विकास होना चाहिए।" नि.संदेह बालक के शारीरिक एव मानसिक विकास के अभाव में शिक्षा अपूर्ण ही रहेगी। हमारे प्राचीन गुरुकुलो मे शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के सन्तुलित विकास पर समुचित ध्यान दिया जाता था। तभी वे विश्व मे शिक्षा के श्रेष्ठतम केन्द्रो में गिने जाते थे। इन आश्रमों में विद्यार्थियो को विभिन्न विषयो के गहन अध्ययन के साथ ही साथ शारीरिक व्यायाम कराकर अस्त्र-शस्त्र संचालन का प्रशिक्षण भी दिया जाता था। इन गुरुकुलों से निकले मेधावी छात्र प्रखर प्रतिभा सम्पन्न तो होते ही थे साथ ही उनका शरीर भी सुगठित और बलिष्ठ हुआ करता था। इसका एक बड़ा कारण यह भी था कि वहा अध्यापन-कार्य कराने वाले आचार्य-गण भी सयमित जीवन व्यतीत करते थे, नियमित यौगिक क्रियाओ— प्राणायाम, षट्कर्म आदि के द्वारा अपने शरीर को तेजोमय एवं रोगमुक्त बनाए रखते थे। उन लोगो का जीवन व्यसनो से सर्वथा प्ररे हुआ करता था। ज्ञानोपलब्धि के केन्द्रो का भला व्यसनो से क्या सम्बन्ध? सन्तुलित आहार, व्यसन मुक्त जीवन एवम् नियमित योगासन से इन शिक्षा केन्द्रों से संबद्ध व्यक्तियो का शरीर एव मन पूर्ण स्वस्थ व नियन्त्रित होता था। ये साधना केन्द्र शिक्षा और स्वास्थ्य की किरणे बिखेर कर समाज को अपनी धवल रश्मियों से दैदीप्यमान किए हुए थे। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि आचार्य-गण पूर्ण सक्रियता से अध्यापन एवम् अनुसधान कार्य में सलग्न रहा करते थे तथा विद्यार्थी उसी एकाग्रता से ज्ञान ग्रहण करते थे।

यह कहना अप्रासगिक न होगा कि शारीरिक एव मानसिक स्वास्थ्य की सप्राप्ति ही ज्ञानार्जन की प्रक्रिया को अधिकाधिक स्वाभाविक बनाने का एकमात्र माध्यम है। यह एक निर्विवाद एवम् अनुभूत सत्य है कि अस्वस्थ बालक अध्ययन के लिए कभी भी मानसिक रूप से तत्पर नही हो सकता। यदि बालक रुग्ण है, किसी शारीरिक पीड़ा से ग्रस्त है या भूखा है तो कक्षा में उसकी तत्परता ऋणात्मक होगी।

शिक्षा का उद्देश्य बालक का शारीरिक एवं मानसिक विकास करना है। इसके लिए शिक्षा और स्वास्थ्य दोनों में उचित तालमेल स्थापित करना आवश्यक है। शिक्षा में स्वास्थ्य संबंधी बातों का समुचित समावेश करने पर ही यह व्यावहारिक, वास्तविक एवं समाजोपयोगी हो सकती है।

यदि हम भारत के प्राचीन शिक्षा केन्द्रों में कार्यरत आचार्यो की शिक्षा और स्वास्थ्य के प्रति संचेष्टता का आज के विद्यालयो के अध्यापको से तुलना करे तो भारी निराशा ही हाथ लगती है। हालाकि आज साधन-सुविधाएं इतनी बढ़ गई है फिर भी शिक्षा और स्वास्थ्य की सन्तुलित उपलब्धि विद्यार्थियो मे दिखाई नही देती। जरा ठहरकर यदि हम विचार करे कि स्वयं हमारे अध्यापक या अध्यापिकाए अपने स्वास्थ्य के प्रति कितने जागरूक हैं तो यह तथ्य सामने आता है कि अधिकाश इसके प्रति लापरवाह है। उनमें कोई बिरला ही नियमित व्यायाम, योगासन आदि करता होगा। अधिकांश शिक्षक चाय; कॉफी, बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू एवं अन्य व्यसनो से ग्रस्त हैं। कई अध्यापक बच्चो से बीड़ी-सिगरेट मगवाने मे भी संकोच नहीं करते और उनके सामने ही बीडी पीते भी हैं। इन अध्यापक/अध्यापिकाओं के चेहरे निस्तेज, वाणी प्राणहीन एवम् कार्यक्षमता नगण्य देखी जा सकती है। किसी भी कार्य को वे एकाग्र होकर तत्परता से अधिक समय तक कर ही नहीं सकते। नौकरी में वे आ गए

हैं इसलिए नौकरी करना मात्र उनका उद्देश्य बनकर रह गया है। अपने कार्य के प्रति तत्परता का अभाव, टालमटोल करना, बहाने बनाना आदि उनके रुग्ण मानसिक स्वास्थ्य के स्पष्ट द्योतक हैं। उत्तरदायित्व से मुह मोड़ना, बढ़-चढ़ कर अपनी योग्यता की डींगें हाकना, किसी भी नई शिक्षण तकनीक को सीखने से जी चुराना ये ऐसी बाते हैं जो अध्यापकों की शिथिलता के स्पष्ट परिचायक हैं। ऐसे अध्यापक बच्चों के सामने कौन-सा आदर्श उपस्थित कर सकते हैं?

वस्तुतः कोई भी स्वस्थ व्यक्ति इस प्रकार का आचरण नही करता। एक स्वस्थ व्यक्ति प्रत्येक ज्ञान को उत्साह से ग्रहण करता है। उसकी तत्परता एव उत्तरदायित्व वहन करने की भावना श्रेष्ठतम होती है। वह अकर्मण्य व्यक्ति की तरह अपने आसपास के वातावरण पर दोषारोपण नहीं करता। वह प्रशासनिक व्यवस्थाओ को कोसकर आत्मपरितोष अर्जित नहीं करता। सही मायने में शिक्षित और स्वस्थ व्यक्ति अपने आपको देखता है और अपने समय का सदुपयोग करता है। उसके ज्ञान चक्षु सदैव खुले और मानसिक शिराए सक्रिय बनी रहती हैं।

इससे विपरीत स्थिति में बच्चों की शिक्षा व्यवस्था कैसी होगी और उनके स्वास्थ्य की ओर अध्यापक कितना ध्यान दे रहे होगे, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। इस कटु सत्य का उल्लेख करते हुए क्षोभ होता है कि आज विद्यालयों का वातावरण शिक्षा और स्वास्थ्य दोनों ही क्षेत्रों में पिछड़ा हुआ है। शासकीय विद्यालयो के कक्षा V के बच्चे चार पंक्तियां शुद्ध नही पढ़ सकते हैं और न लिख सकते हैं। ग्रामीण विद्यालयों के अध्यापक हिन्दी भाषा के उच्चारण और वर्तनी में बेहद कमजोर हैं। जाहिर है कि शिक्षा और स्वास्थ्य दोनों मोर्चों पर हम असफल हो रहे हैं।

विगत दिनों कई राज्य सरकारों ने कुछ स्कूलों मे योगासन सिखाने के लिए शिक्षकों को नियुक्त किया था किन्तु उसके भी कोई उत्साहवर्धक परिणाम उभरकर सामने नहीं आए। यदि शिक्षा को स्वास्थ्य से जोड़ना है तो सर्वप्रथम अध्यापक/अध्यापिकाओ को अपने स्वास्थ्य को अच्छा बनाना होगा। उन्हें नियमित योगासन, सूक्ष्म व्यायाम, प्राणायाम, षट्कर्म आदि कर अपने आहार को सन्तुलित बना कर व्यसनों से दूर रहना होगा। वे जब अपने स्वास्थ्य का उच्चतम मानदण्ड प्रस्तुत करेंगे तभी विद्यार्थियों पर प्रभाव पड़ेगा।

प्राथमिक कक्षाओं से ही बच्चों को शिक्षा के साथ स्वास्थ्य की बातें समझाना आवश्यक है। प्रत्येक छात्र-छात्रा के लिए व्यायाम अनिवार्य हो। इससे बचने वाले लोग यह कह सकते हैं कि स्कूल अलग-अलग शिफ्टों में लगता है। वैसे प्रात. एवं सायकालीन शिफ्टो मे तदनुसार व्यवस्था की जा सकती है। शिक्षा विभाग के अधिकारी यह देखे कि प्रत्येक विद्यालय में सामूहिक व्यायाम के अवसर बच्चो को कैसे उपलब्ध है। किसी पत्रिका मे एक लेख चीन से सम्बन्धित पढा था। उसमें लिखा था कि प्रातःकाल होते ही समूचा चीन सड़कों पर ही व्यायाम करने निकल पड़ता है। व्यायाम के लाभ को वे जानते हैं और किसी प्ले ग्राउंड के मोहताज नहीं होते। वस्तुतः हमारी सोच ही आज नकारात्मक हो चली है– यही कारण है कि हम काम शुरू करने के पहले ही निराशाजनक बातें सोचने लगते है और विरोधी स्वर अख्तियार कर लेते हैं और यह मानकर चलते हैं कि यह नहीं होगा। स्कूल ऐसा है, कमरे ऐसे है, शिफ्ट ऐसी है आदि-आदि। किसी नकारात्मक सोच की अपेक्षा हमे काम शुरू कर देना चाहिए और फिर आप देखेंगे कि उसकी बाधाएं स्वतः ही दूर हाती चली जा रही है।

आज जहां जीवन-चर्या बदलती चली जा रही है फलस्वरूप खानपान बहुत ही कृत्रिम एवं अप्राकृतिक होता जा रहा है। क्रमशः हम प्रकृति से दूर होते जा रहे हैं। और यही हमारे रोग ग्रस्त होने का मूलभूत कारण भी है। ऐसे प्रदूषित वातावरण में हम जोर देकर इस बात की सिफारिश करते है कि विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में प्राकृतिक जीवन पद्धति से सम्बन्धित बातें भी हों जो बच्चों को बिना दवाई के स्वास्थ्य प्राप्ति के सरल साधनों से परिचित करा सकें। शिक्षा प्राप्ति के बाद भी यदि कोई स्वस्थ न रह सके तो यह निःसंदेह शिक्षा की अपूर्णता है। महात्मा गांधी प्राकृतिक चिकित्सा के प्रबल समर्थक

थे। उनकी यह दृढ मान्यता थी कि ऐलोपैथी पद्धति के द्वारा कभी स्वास्थ्य प्राप्त नहीं किया जा सकता। जब-जब वे रोग ग्रस्त हुए उन्होने स्वस्थ होने के लिए प्राकृतिक चिकित्सा को ही अपनाया। इतना ही नही बा और महादेव भाई के रुग्ण होने पर उन्होने इसी के सहारे उन्हें रोग मुक्त किया।

यहा यह उल्लेखनीय है कि हमारा शरीर जिन पंच तत्वो यथा--मिट्टी, पानी, धूप, हवा और आकाश से निर्मित हुआ है उनके अधिकाधिक सम्पर्क में आकर ही हम स्वस्थ रह सकते है और उनसे दूर जाने का दुष्परिणाम है– रोगी होना। जितना हम कृत्रिम जीवन व्यतीत करेगे उतने ही अस्वस्थ रहेंगे। प्राकृतिक खानपान, उचित विश्राम, नियमित व्यायाम, स्वच्छता, पर्याप्त पानी पीना, शाकाहार अपनाना एव व्यसनों से दूर रहना– ये ऐसी मोटी-मोटी बातें है जो बच्चो को सिखाई जानी चाहिए। अध्यापक/अध्यापिकाएं भी इनका पालन करे। इस प्रकार वे स्वस्थ रह सकते है और शिक्षा के एक महत्वपूर्ण उद्देश्य की प्राप्ति कर सकते है।

स्कूली शिक्षा के पाठ्यक्रम में कक्षाओं के अनुसार निम्नलिखित बाते सम्मिलित करने हेतु यहां प्रस्तावित हैं।

- ☐ बच्चे प्राकृतिक जीवन पद्धति को समझे व अपनाएं अर्थात्– पंच तत्वों के अधिकाधिक सम्पर्क मे आएं।
- ☐ दवाइयों से स्वास्थ्य प्रप्ति नही होती। वे कुछ काल के लिए रोग को दबा देती है या शरीर में उसकी दिशा बदल देती है। विकार शरीर मे बना रहता है।
- ☐ शरीर को विकार मुक्त बनाना ही स्वस्थ होना है– अतः कब्ज न रहने दे।
- ☐ नियमित व्यायाम व योगासन करे या सुबह-शाम घूमने जाएं या नियमित खेलें।
- ☐ शाकाहारी खानपान ही व्यक्तियों को निरोग रख सकता है। हमारा पाचन सस्थान, यकृत जबडे– मांस पचाने व चबाने के योग्य बने ही नही है।
- ☐ विश्व के अनेक विकसित राष्ट्रों मे शाकाहारी भोजन अपनाया जा रहा है और वे मांसाहार की हानियों से अवगत होते जा रहे है। वे मांसाहार छोडते जा रहे हैं।
- ☐ स्वच्छता को जीवन मे सर्वोच्च स्थान दे एव नियमित स्नान करे।
- ☐ चाय, कॉफी, बीडी, सिगरेट, तम्बाकू, गांजा, भांग, स्मैक, शराब आदि नशीले पदार्थो का सेवन न करे। ये हमारी जीवन शक्ति एवं कार्यक्षमता को समाप्त करते हैं।
- ☐ भोजन में मोटे आटे की रोटी, हरी सब्जी, सलाद, अंकुरित अनाज, दूध-दही-मट्ठा आदि का प्रयोग नियमित करे।
- ☐ दिनभर मे कम से कम 3-4 लीटर पानी जरूर पिएं।
- ☐ रात्रि 10 से प्रातः 5 बजे तक पूर्ण विश्राम करें।
- ☐ खाने/नाश्ते में ब्रेड, बिस्कुट, चॉकलेट आदि कृत्रिम पदार्थो के स्थान पर रेशे वाले पदार्थ यथा–अंकुरित दालें, नारियल, खीरा, गाजर या अन्य फल– खजूर आदि पदार्थो का सेवन करे।

शिक्षा में स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों का स[illegible]वेत समावेश करके ही हम शिक्षा को व्यावहारिक, वास्तविक एवं समाजोपयोगी बना सकते है। हमारे विद्यालय ज्ञानोपलब्धि के आगार हो वहा सन्तुलित व्यक्तित्व का निर्माण हो सके तभी तो शिक्षा सर्वांगीण विकास का साध[illegible] सिद्ध हो सकेगी। हमे शिक्षा और स्वास्थ्य दोनों में उ[illegible]त तालमेल स्थापित करना होगा। अतः हमारा नारा है– "शिक्षा और स्वास्थ्य-प्राप्ति हमारा जन्मसिद्ध अधिकार [illegible]। ☐☐

ए, शिवमपुरी
भोल[illegible]म उस्ताद मार्ग
मनवार[illegible]आं, इन्दौर,म.प्र.

आज का परिवेश, विद्यार्थी और नैतिक मूल्य

❑ अनूप कुमार

आज चारों तरफ हिसा, अराजकता और भ्रष्टाचार की भयावह स्थिति व्याप्त है। शायद ही ऐसा कोई दिन गुजरता हो जब समाचार-पत्रों मे उपर्युक्त आशय की सुर्खिया मुखपृष्ठ पर न दिखाई देती हों। हम अखबार पढ़ते हैं, विभिन्न चैनलो पर समाचार देखते-सुनते है; फिर झुंझलाकर कोसते हैं उन लोगो को जो कई प्रकार के जघन्य कृत्यों के जिम्मेदार हैं; बुरा-भला कहते हैं, समाज और उसके व्यवस्थापको को। कदाचित् ऐसा करके हम लोग अपने दायित्व की इतिश्री मान लेते है, क्योकि उसके बाद हम सभी, सब कुछ भूलकर अपनी दिनचर्या में व्यस्त हो जाते हैं। हमारी सवेदना इस कदर कुंद हो गयी है कि इससे ज्यादा कुछ अनुभव कर ही नहीं सकते। वस्तुतः आज लोगों की संवेदना स्वार्थ प्रेरित होकर रह गयी है। जब स्वयं पर कोई संकट आता है, तब हम गहराई तक दुख से मथ जाते हैं और उसके दंश तथा पीड़ा से मुक्ति पाने के लिए छटपटाने लगते हैं। दूसरो से भी अपेक्षा करते हैं कि कष्ट को जल्द से जल्द दूर करने के लिए वे हमारी तत्काल सहायता करें। ज्यो ही हम उस कष्टानुभूति के दश से छुटकारा पाते हैं, पूर्ववत् होकर दूसरो के बड़े कष्टों तक के प्रति घड़ियाली आंसू बहाकर आराम से बैठ जाते है। ऐसी दशा में समाज में घटने वाले विभिन्न घटनाक्रमों के प्रति उदासीन हो जाते हैं। प्रत्येक व्यक्ति इस बात की उम्मीद करता है कि कोई दूसरा इन्सान समाज की कायापलट करने के लिए पहल करेगा। इस संदर्भ मे वह स्वय को निरपेक्ष, अनासक्त या सिर्फ तमाशबीन की भूमिका में रखना चाहता है। वह भूल जाता है कि व्यक्ति समाज का अनिवार्य अंग है, उसके सघटन में स्वय उसका अस्तित्व भी सम्मिलित है और उसी के अनुरूप दूसरो की तरह समाज के प्रति उसकी जिम्मेदारी है। इसी सोच के चलते समाज की दशा मे सुधार और परिवर्तन नहीं आ पा रहा है। यह सर्वविदित है कि व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के पूरक है क्योंकि व्यक्ति के बिना समाज की परिकल्पना नही की जा सकती और समाज-सापेक्ष ही व्यक्ति का महत्व आंका जाता है। ऐसी स्थिति मे समाज में रहने वाले हर व्यक्ति का गुरुतर दायित्व है कि वह समाज को सुव्यवस्थित रखने के लिए व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से निष्ठावान चेष्टा करे। इस संदर्भ में विभिन्न बातो के साथ-साथ नैतिकता के विकास का प्रयास करना अपेक्षित है। आज के परिवेश में सकट के उत्पन्न होने

वर्तमान परिवेश में संकट उत्पन्न होने का मुख्य कारण लोगों के व्यक्तित्व में नैतिकता या चारित्रिक दृढ़ता के भाव में कमी आ जाना है। शायद नैतिकता-अनैतिकता के बीच अन्तर करने का विवेक भी दुर्बल पड़ गया है। आज हम जिस हालत में हैं, उससे और नीचे गिरकर पशु जैसी अवस्था में न पहुंच जाएं इसके लिए आवश्यक है कि आरंभ से विद्यार्थियों में नैतिकता विकास का प्रयत्न करें, उनका चरित्र इतना सुदृढ़ करें जिससे भविष्य में एक ऐसा समाज बन सके जो आज की विभिन्न विसंगतियों से मुक्त हो। इस परिकल्पना को साकार करने के लिए वियालयी शिक्षा में नैतिक /चारित्रिक शिक्षा का समावेश तथा उसका कार्यान्वयन अत्यावश्यक है।

का मुख्य कारण है कि लोगों के व्यक्तित्व मे नैतिकता या चारित्रिक दृढ़ता के अभाव में कमी आ गई है। एक तरह से नैतिकता-अनैतिकता के बीच फर्क करने का विवेक भी दुर्बल पड गया है। आज हम जिस हालत मे हैं, उससे और नीचे गिरकर पशु जैसी अवस्था में न पहुंच जाए, इसके लिए आवश्यक है कि आरंभ से

विद्यार्थियो मे नैतिकता उत्पन्न करने का प्रयत्न करें। इस प्रक्रिया मे उनका चरित्र इतना सुदृढ़ कर दे जिससे वे भविष्य में एक ऐसा समाज बना सके जो आज की विभिन्न विसगतियों से मुक्त हो। इस परिकल्पना को साकार करने के लिए विद्यालयी शिक्षा मे नैतिक या चारित्रिक शिक्षा के समावेश के साथ-साथ उसका कार्यान्वियन अत्यावश्यक है।

यहा स्पष्ट है कि नैतिक या चरित्र-शिक्षा को देने के क्रम मे अध्यापक की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है लेकिन यह जरूरी है कि परिवार भी अपने स्तर पर विद्यार्थियों के आदर्श चरित्र-निर्माण के लिए सतत् सक्रिय रहे। नैतिक शिक्षा एक प्रक्रिया है जो परिवार, विद्यालय, समाज से गुजरती हुई जीवन पर्यन्त चलनी चाहिए। शिक्षा और नैतिक शिक्षा एक-दूसरे से सबद्ध और पूरक हैं। इस परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए कहा जा सकता है कि शिक्षा, बालक को ज्ञान सपन्न बनाने का कार्य करती है और नैतिक शिक्षा उसे सस्कारित करके उन्नत बनाती है। जब विद्यालय मे नैतिक शिक्षा देने की चर्चा होती है, तो प्रायः ऐसी दुविधा होती है कि विद्यार्थियो को नैतिक शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से दी जाए या पाठ्य-विषयो के अंतर्गत उसे समाविष्ट कर दिया जाए और उसके माध्यम से उन्हे नैतिक शिक्षा का संस्कार दिया जाए। इस सदर्भ मे ऐसा प्रतीत होता है कि पाठ्यपुस्तको की सामग्री में नैतिक शिक्षा को अंतर्भुक्त करने से विद्यार्थियों मे नैतिक दृष्टि का विकास करना ज्यादा उपयोगी होगा क्योंकि ऐसा करने से विद्यार्थी अन्य विषयों की विषय-वस्तु के साथ-साथ नैतिकता के बोध को भी सहजता से आत्मसात् करते जाएंगे। दूसरी बात यह कि विद्यालय मे नैतिक मूल्यो की शिक्षा के लिए अलग से कक्षा की व्यवस्था नहीं करनी पड़ेगी। इस कारणवश विद्यालय मे समय-प्रबधन को लेकर कोई कठिनाई नहीं आएगी। स्वतत्र विषय के रूप मे नैतिक मूल्यो की शिक्षा देने से विद्यार्थियों में उन मूल्यो को समाविष्ट करने का दायित्व सिर्फ अध्यापक विशेष पर रहेगा जो उचित नही है। वास्तव में पाठ्य-विषयो के माध्यम से नैतिक दृष्टि का विकास करने के क्रम में सभी अध्यापको को सजग तथा सचेष्ट होना पड़ेगा। इस तरह जब विभिन्न विषयो के अध्यापक अपने-अपने स्तर पर नैतिक मूल्यो के विकास का संकल्प लेंगे, तो परिणाम निश्चय ही उत्साहवर्द्धक होगे। उल्लेखनीय है कि यदि हम उपदेश का ही आधार लेकर विद्यार्थियो मे नैतिक बोध का विकास करना चाहे, तो अपेक्षित सफलता कम मिलेगी क्योंकि इस भाव को सीखने की इतनी आवश्यकता नही होती जितनी कि उसे ग्रहण या आत्मसात् करने की। जो कुछ सीखा जाता है, संभव है समय के अतराल से विस्मृत हो जाए लेकिन जो कुछ ग्रहण (आत्मसात्) किया जाता है, वह व्यक्तित्व का अभिन्न अग बन जाता है। इस तरह विद्यार्थियों को नैतिक शिक्षा इस तरह दी जाए कि आरोपित न हो बल्कि उनके व्यक्तित्व में समा जाए। जैसा कि कहा जा चुका है, नैतिक शिक्षा एक समयबद्ध कार्यक्रम के तहत दी जाने वाली शिक्षा का पर्याय नही है। वस्तुत यह आजीवन चलने वाली एक ऐसी प्रक्रिया है जिसका उद्देश्य है– व्यक्ति के व्यक्तित्व को निरंतर उन्नत बनाते जाना। नैतिक शिक्षा का यह अर्थ नही है और न ही अपेक्षा करनी चाहिए कि जिसे शिक्षित किया जा रहा है, वह मनुष्य के स्तर से ऊपर उठकर ईश्वर बन जाएगा। विद्यार्थियो से गलतियां होगी, यह स्वाभाविक है लेकिन नैतिक शिक्षा प्राप्त कर उनका विवेक जाग्रत होगा जिससे वे उचित-अनुचित मे अतर कर पाएगे। विवेकहीनता आज के युग में एक भयावह रोग की तरह व्याप्त हो गयी है और उसके दुष्परिणामो से सारी मानवता पीडित तथा कलंकित हो रही है। अनेक प्रकार के प्रलोभन हमारे विवेक तथा स्वाभिमान को निगल रहे है। यदि विद्यार्थी नैतिक शिक्षा प्राप्त कर स्वयं चारित्रिक प्रतिरक्षा प्रणाली विकसित कर लेते हैं तो वे अपने विवेक को भ्रष्ट होने से बचा लेते है और प्रलोभनों को दूर रखने में सक्षम होते हैं। नैतिक या चारित्रिक शिक्षा के द्वारा विवेक को भ्रष्ट या सुप्त होने से बचाया जा सकता है और इसे चौकन्ना रखने मे भी मदद मिलती है।

नैतिक या चारित्रिक शिक्षा के बहुविध आयाम हैं। यहां कुछ विशेष बिन्दुओं की चर्चा अपेक्षित है जो विद्यार्थी को नैतिक या चारित्रिक दृष्टि से श्रेष्ठ बनाते हैं। इस क्रम में "अनुशासन" को सर्वोच्च स्थान पर रखा जाना चाहिए। "अनुशासन" शब्द "अनु + शासन" के योग से निर्मित है। "अनु" उपसर्ग है और इसका अर्थ है– पीछे, शासन का अर्थ है– तंत्र। जब तत्र है तो कुछ

न कुछ नीति, नियम-कानून भी होगे और उन्ही के पीछे-पीछे चलना या अनुसरण करना अनुशासन है। वस्तुतः अनुशासन में संयमित होकर रहने का भाव निहित है जो यह अर्थ देता है कि विद्यार्थी रीति-नीति, नियम-कानून का पालन करे। एक तरह से अनुशासन मे "स्व अनुशासन" का भाव विद्यमान है जिसे आज लगभग अनदेखा कर दिया गया है। यही कारण है कि अनुशासन का विद्यार्थी पर आरोपित करने का प्रयत्न किया जाता है। आरोपित होने के कारण यह भाव व्यक्तित्व का अंग नही बन पाता। अनुशासन के पालन करने का तात्पर्य है स्वय पर अकुश लगाकर, मर्यादित रहना। दूसरो पर नियंत्रण लगाना आसान है लेकिन खुद को नियत्रित करना बहुत कठिन है। "स्व अनुशासन" के अभाव मे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे अनुशासन का अनुपालन ठीक ढंग से नही हो पा रहा है। ऐसी स्थिति मे विद्यार्थियो को इस तरह से आगे बढ़ाया जाए कि वे अपने ऊपर स्वय का शासन लगाएं अर्थात् स्वयं मर्यादा मे रहना सीखे। थोपा गया अनुशासन स्थायी नही होता क्योकि अवसर मिलते ही विद्यार्थी उससे मुक्त होने को छटपटाने लगते है। ऐसी स्थिति में जब विद्यार्थियों में "स्व अनुशासन" का भाव पैदा होने लगेगा, तो अनुशासन का पालन समग्रता से होना आरभ हो जाएगा। इसलिए घर और विद्यालय, दोनो स्थानो पर ऐसा प्रयास किया जाना चाहिए कि विद्यार्थियो मे उचित-अनुचित में भेद करने की सामर्थ्य उत्पन्न हो जाए और वे सही बातो को अपनाते जाए तथा गलत बातो को अस्वीकार करते जाए। अध्यापकों के साथ-साथ माता-पिता और परिवार के अन्य सदस्य अपने व्यवहार और आचरण से बच्चो के सामने अनुशासन का आदर्श प्रस्तुत करें।

विद्यार्थी उन्हे देखकर अनुकरण करेगे और उनके स्वयं के चरित्र मे अनुशासन का भाव बद्ध मूल होता जाएगा। यदि माता-पिता और अध्यापको की कथनी-करनी मे अतर रहेगा, तो विद्यार्थियो पर उनकी बातो या नसीहतों का वाछित प्रभाव नही पड़ेगा। इस बात को बराबर ध्यान मे रखना होगा। अनुशासन का वास्तविक अर्थ समझकर उसे जीवन मे उतारना विद्यार्थियो को आजीवन चारित्रिक रूप से दृढ़ रखेगा और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे उन्हें नैतिक बनाएगा क्योंकि अनुशासित रहने पर नैतिकता अपने आप ही आ जाती है। देश के लोकतंत्र के दीर्घजीवी होने के लिए हमे अनुशासित लोगो की महती आवश्यकता है। लोकतात्रिक प्रणाली तभी सफल होती है जबकि उसमे रहने वाले लोग कर्तव्य और अधिकार मे सतुलन बनाए रखे। तात्पर्य है कि समाज और देश के लिए क्या करना अपेक्षित तथा उचित है जो इस बात को समझकर निष्ठापूर्वक कार्य करता है और जो अपने अधिकारों का उपभोग उसी सीमा तक करता है जहा दूसरो के अधिकारो का उल्लंघन या हनन न होता हो, वह वास्तव मे अनुशासित कहलाएगा। उदाहरण हेतु यदि हमें अभिव्यक्ति की स्वतत्रता का अधिकार मिला है तो इसका यह तात्पर्य नही कि हम दूसरो को अपशब्द भी कहने के हकदार है। वास्तविक अनुशासन हमे सिखाता है कि हम स्वय मर्यादित आचरण करे और दूसरो की मर्यादा का सम्मान तथा उसकी रक्षा करे। इसलिए विद्यार्थी का "स्व अनुशासन" से शासित होना आवश्यक है।

नैतिक शिक्षा के सदर्भ मे परोपकार भाव का महत्व अद्वितीय है। इस सदर्भ मे गोस्वामी तुलसीदास की बहुचर्चित पक्तियां उल्लेखनीय हैं—

परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।।

तुलसीदास ने मानव-धर्म के सदर्भ में परहित को सर्वोपरि धर्म बताया है। यदि इसे अपना लिया जाए तो लोगों में एक-दूसरे की भलाई करने के लिए तत्परता बढेगी और इस तरह लोगो के कष्ट कम होते जाएगे। सभवत: समाज की बनावट के पीछे यही मनोवृत्ति काम कर रही थी कि लोग एक-दूसरे का हित चाहे और करे भी। तुलसीदास ने 'पर पीडा' को निकृष्ट अधम कृत्य के रूप में निरूपित किया है। इस तरह, मनुष्यो के लिए (सामाजिक) धर्म की व्याख्या करने के साथ-साथ उस 'अधमाई' को भी रेखाकिंत कर दिया गया है कि 'परपीडा' के समान निकृष्ट कर्म हो ही नहीं सकता। काफी पहले कही गई तुलसीदास की बात आज भी प्रासंगिक है। कवि की उपर्युक्त पक्तिया, नैतिक शिक्षा के परिप्रेक्ष्य मे एक सूत्र थमा देती है जहां विद्यार्थियों को नैतिकता के लिए वाछनीय गुणो को बताया जाए, वही अनैतिकता क्या है, उसे भी निर्दिष्ट किया जाए जिससे सद्गुणो को ग्रहण करने के साथ-साथ दुर्गुणो को त्याग दिया जाए या उनसे दूर रहा जाए।

परिवार तथा विद्यालय, दोनों स्तरों पर परोपकार भावना

के विकास का प्रयत्न किया जाना अपेक्षित है। परिवार मे सभी सदस्य एक-दूसरे को सहयोग दे, पडोसियो के दु.ख कष्टो को दूर करने के लिए तत्पर तथा सचेष्ट रहे। विद्यालय मे "सामुदायिक कार्यक्रम के तहत विद्यार्थियों को जरूरतमंदो की मदद करने के लिए, उनके पास ले जाया जाए और यथा सभव उनकी मदद करवाई जाए।

विद्यार्थियों मे नैतिक मूल्यो का समावेश करने के क्रम मे जरूरी है कि उन्हें समय के महत्व या मूल्य से अवगत कराया जाए। परिवार के सदस्य निर्धारित सभी काम समय पर करे। विद्यालय मे अध्यापक नियत समय पर कक्षा मे आएं और यह सुनिश्चित करे कि विद्यालय के विभिन्न क्रियाकलाप तय समय पर संपन्न हो, तो इन सबका प्रत्यक्ष प्रभाव विद्यार्थियों पर अवश्य पड़ेगा और वे समय के मूल्य को पहचान कर उसके अनुरूप कार्य करेगे। उल्लेख्य है कि सभी लोग समय के महत्व को पहचानें और उसके अनुसार कार्य करे, तो उनकी अपनी तो उन्नति होगी ही, समूचा राष्ट्र भी प्रगति करेगा। जापान के लोगो ने इस बात को बखूबी समझा और उसका पालन भी किया है। उनके देश की बहुमुखी प्रगति सबको दिखाई दे रही है। अभी कुछ महीने पहले अंग्रेजी अखबार "हिन्दुस्तान टाइम्स" मे छपी एक खबर के अनुसार जापान मे बुलेट ट्रेन अपने गतवय पर सिर्फ एक मिनट विलब से पहुंची लेकिन उसके ड्राइवर को इस बात के लिए एक जांच समिति के सामने प्रस्तुत करने के लिए रोक लिया गया। इस घटना को तरजीह देते हुए वहा के समाचार-पत्रो ने काफी कुछ लिखा। एक मिनट के विलंब के लिए इतना कुछ घटित होना इस बात का परिचायक है कि वहां के लोग समय को कितना अहमियत देते हैं। यही बोध हमें विद्यार्थियों में उत्पन्न करना होगा। कहा जा सकता है कि समय के महत्व को समझते हुए उसके अनुसार कार्य करना एक नैतिक या चरित्रवान व्यक्ति होने का अनिवार्य लक्षण है।

विद्यार्थियों को नैतिक बोध से युक्त करने के लिए यह भी आवश्यक है कि उनमे सहिष्णुता का भाव उत्पन्न किया जाए। इस भाव के जागने से दूसरों के प्रति सहनशीलता आती है और जीवन-दृष्टि व्यापक हो जाती है। लोग अपने धर्म, रीति-रिवाज, रहन-सहन तथा भाषा के प्रति अटूट आस्था रखते हुए भी दूसरो के धर्म रीति-रिवाज, रहन-सहन और उनकी भाषा के प्रति पूरा सम्मान रखते हैं। ऐसी स्थिति मे, आरंभ से ही विद्यार्थियों को विभिन्न धर्मो की उन बातों को बताया जाए जो सभी धर्मो में सामान्य रूप से विद्यमान हैं। इस क्रम में उन्हें विविध धर्मो की रीति-परम्पराओ का परिचय दिया जाना चाहिए जिससे उन्हें सभी धर्मो की जानकारी हो और वे उनके वैशिष्ट्य से अवगत हो सकें। विद्यालय में ऐसे आयोजन किए जाएं जिनमे "सर्वधर्म समन्वय" और "अनेकता मे एकता" का विचार उभरता हो। इस दिशा मे ऐसे नाटक मचित किए जाए जिनमें विभिन्न धर्मो के मतावलंबी एक-दूसरे के धर्म का सम्मान करते दिखाए जाएं और विभिन्नताओ के बावजूद एकता के सूत्र में गुथे हुए प्रदर्शित किए जाए। यो तो नैतिकता या चारित्रिक दृढता के सदर्भ मे कई अन्य बातों का भी उल्लेख किया जा सकता है। लेकिन इस लेख की सीमा में रहते हुए जिन गुणो की उपस्थिति की चर्चा हुई है, यदि विद्यार्थियों के व्यक्तित्व में उन्ही का समाहार किया जा सके, तो संभवत: अन्य बातें अपने आप उसमे समाविष्ट हो जाएंगी।

निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि व्यक्ति, समाज, देश और अंतत: पूरे विश्व को उन्नत करने के लिए विद्यार्थियों में नैतिकता या चारित्रिक दृढ़ता का होना अत्यावश्यक है। इसके लिए घर तथा विद्यालय दोनों स्तरों पर सतत् प्रयत्न होना चाहिए। सिर्फ उपदेश देकर नैतिकता या चारित्रिकता का पाठ तो पढ़ाया जा सकता है, उसे विद्यार्थियों के आचरण मे नही उतारा जा सकता। नैतिक मूल्यो को आचरण मे उतारने के लिए आवश्यक है कि परिवार के सदस्य और अध्यापक गण अपने व्यक्तित्व के माध्यम से तथा दूसरे तरीकों से वांछित गुणों को विद्यार्थियो के व्यक्तित्व मे सन्निहित कराए। ❑❑

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान
भुवनेश्वर,उड़ीसा

संप्रेषण कौशल और भाषा-शिक्षण

❑ दिनेश भट्ट

जब आप कक्षा मे प्रवेश करते है तो पचासो उत्सुक निगाहे आपकी ओर उठती हैं। इनमें से कुछ बच्चे नया ज्ञान सीखने की उत्सुकता लिए रहते है, कुछ बेपरवाही से समय पार करना चाहते है, कुछ कमजोर या कामचोर छात्र डरे-सहमे हुए अंतिम पंक्ति में बैठे रहते है।

अब आपको ऐसे बच्चों तक भाषा की पाठ्य-वस्तु संप्रेषित करनी है, जो आपसे उम्र में छोटे हैं। आपसे ज्यादा तर्क या बहस नहीं कर सकते। आपको उन्हे उस ज्ञान का थोड़ा-सा अश सिखाना है जो आप स्वय मे बहुत अधिक मात्रा में रखते हैं।

सोचिए ..... आपके पास ऐसी कला होनी चाहिए जिससे आपकी विषय-वस्तु या भाषागत अवधारणा सरलता से बच्चों तक पहुच जाए। इसे ही सप्रेषण का कौशल कहते है।

हम जादूगर का खेल देखने जाते हैं तो उसके जादू से चमत्कृत होकर यह तो सोचते रह सकते है कि उसका रहस्य क्या है? कौन-सी ट्रिक है? जिसके सहारे उसने हमें चकित कर दिया। लेकिन स्वयं जादू करके यह नहीं चाहते कि वे रहस्य का उद्घाटन हमारे सामने करें।

जादूगर के जिस जादू से आप इतने अधिक प्रभावित थे, उस रहस्य को जान लेने पर वह आपको बहुत साधारण बात लगेगी जो कि केवल अभ्यास के सहारे महत्व पा जाती है।

भाषा-शिक्षण के संप्रेषण की कला का जादू भी ऐसा ही है। यदि आप इसकी ट्रिक समझ गए तो आप भी बच्चों को चकित कर देंगे।

कुशल अध्यापन की तीन बातें बताई गई हैं— ●अपने विषय में सम्पूर्ण अधिकार। ● बाल मनोविज्ञान का गहन ज्ञान। ● संप्रेषण के कौशल की जानकारी।

भाषा-शिक्षण में संप्रेषण के कौशल पर विस्तार से चर्चा के पहले आइए, यह जान ले कि भाषा क्या है?

कुशल अध्यापन के लिए मात्र तीन विशेषताएं आवश्यक हैं— विषय पर प्रभुत्व, बाल मनोविज्ञान का गहन ज्ञान तथा संप्रेषण के उच्च कौशल। भाषा शिक्षण के संप्रेषण कौशल विकसित करने के लिए बोलचाल की भाषा और मुहावरों का प्रयोग, आवाज में उतार-चढ़ाव, हाव-भाव व अभिनय प्रदर्शन, कहानी/ कविता/ चित्रों/ मॉडलों के माध्यम से शिक्षण, गतिविधियों का उचित उपयोग, बच्चों के सामाजिक परिवेश का ज्ञान आदि का समायोजन वांछनीय है।

साधारण सी बात है कि मानव समाज अपने विचारो का आदान-प्रदान करने के लिए जिस माध्यम का प्रयोग करता है, उसे भाषा कहते हैं। विद्वानों के अनुसार— मनुष्य के मुंह से निश्चित किए गए प्रयत्नों से जो सार्थक ध्वनि समूह निकलता है, वह भाषा है। कुछ बिंदुओ के आधार पर और समझें— भाषा मुंह से निकलने वाले प्राकृतिक वर्णों का खेल है, भाषा विभिन्न अर्थों का संकेतित शब्द समूह है, भाषा अभिव्यक्ति का साधन है, भाषा मानव जीवन की आधारशिला है।

बच्चे का भाषा से गहरा सम्बन्ध होता है। बच्चे का भाषा से प्रथम साक्षात्कार परिवार में होता है। बच्चो में भाषा सहज ढंग से सीखने की क्षमता होती है। एक खास उम्र तक भाषा सीखना बच्चों के लिए स्वाभाविक विकास का अंग है। बच्चों में भाषा की अच्छी पकड़ से किसी भी विषय की समझ आसान हो जाती है।

इसी प्रकार शिक्षक और भाषा के सम्बन्ध को नजर-अंदाज नही किया जा सकता। भाषा-शिक्षण मे सुधार के लिए आवश्यक है शिक्षक अपनी भाषा को बेहतर बनाए। भाषा की बुनियाद के अभाव में अध्यापन अच्छी

समझ नही दे सकता। शिक्षकों मे सभी विषयो के शिक्षण के लिए भाषा की शुद्धता तथा सृजनात्मकता पर पर्याप्त आधिपत्य होना चाहिए।

संप्रेषण कौशल क्यों?

शिक्षक अपनी बात जितनी कुशलता से सप्रेषित करता है वह उतना ही कुशल माना जाता है। कुछ लोग जन्मजात शिक्षक होते है और वे शिक्षण-कार्य बड़ी सहजता से कर लेते है। शिक्षा की विविध तकनीको का ज्ञान उन्हें और अधिक कुशल बना देता है। ये शिक्षक लोकप्रिय बन जाते है व इन्हे बालकों, पालको, अधिकारियो आदि सभी से बहुत आदर व स्नेह मिलता है।

जो व्यक्ति जन्मजात शिक्षक नहीं है लेकिन इस कार्य को प्रतिज्ञा के साथ सीखने की लगन रखते है वे भी परिश्रम और उचित मार्गदर्शन में शिक्षण की कुशलताए अर्जित कर लेते हैं।

लेकिन जो न तो प्रतिभाशाली है और न ही परिश्रमी वे शिक्षण कार्य येन-केन-प्रकारेण करते रहते हैं, इससे बच्चों का बड़ा अहित होता है। चूंकि बच्चे राष्ट्र का भविष्य होते हैं यदि उन्हें उचित रीति से नही सम्हाला गया तो परिणाम क्या होंगे आप स्वयं ही समझ सकते हैं।

कमजोर भाषा की नीव पर किसी भी विषय की समझ विकसित हो ही नहीं सकती। कमजोर भाषा-शिक्षण का एक बड़ा कारण भाषा-शिक्षण में शिक्षको का पारंगत न होना है।

अत' भाषा-शिक्षण की कला में जितना पारगंत हो सके उतना प्रयास शिक्षक को करना चाहिए और इसके लिए संप्रेषण के कौशल को सीखना मूलभूत बात है।

संप्रेषण कौशल क्या है?

शिक्षक के मन की बात विद्यार्थी के मन की बात बन जाए यही संप्रेषण है। सप्रेषण भाषा-शिक्षण के बुनियादी महत्व की बात होती है। हम कई तरह से अपनी बात दूसरे व्यक्ति तक पहुंचाते हैं, यह संप्रेषण का कौशल है।

शिक्षक विद्यार्थी को अपने विषय का नवीन ज्ञान देना चाहता है। इसके लिए वह वे सभी युक्तियां काम में लेता है, जो कि इस ज्ञान को सीमित समय मे प्रभावशाली ढग से बालकों तक पहुचा दे। यदि समझने-समझाने की क्रिया मे कोई दोष रह गया तो बालक बात को अपने ढंग से समझ लेगा और उसको दिया गया ज्ञान सार्थक नही हो पाएगा। इसलिए किसी विषय का नवीन ज्ञान देते समय संप्रेषण का कौशल होना आवश्यक है। सप्रेषण के कौशल के लिए भाषा एक सशक्त माध्यम है।

बच्चे कैसे सीखते हैं?

भाषा-शिक्षण के संप्रेषण के कौशल पर विस्तार से चर्चा के पूर्व शिक्षको को इस बात का ज्ञान होना चाहिए कि बच्चे कैसे सीखते है। कुछ बिदुओं के आधार पर देखे–

- ☐ क्रियाकलाप से– बच्चो को क्रियाकलाप (गतिविधि) करने का अवसर दें। गतिविधियों का अभ्यास कराए। गतिविधिया कमजोर बच्चों को अनेक बार कराए।
- ☐ अनुकरण से–परस्पर अभ्यास के अवसर दे। बच्चे जिन चीजों पर भावात्मक रूप से निर्भर है, वह जरूर दिखाएं। अनुकरण के बाद बच्चों को जैसे ही समझ में आए वे स्वयं करके देखने लगते है।
- ☐ जिज्ञासा से – बच्चे को कुछ नया दिखा तो पूछेगे। समझने की कोशिश करेगे। करके दिखाने की कोशिश करेंगे। अपने प्रयास की जांच करना चाहेंगे।
- ☐ यथार्थ स्थिति में – ठोस वस्तुओं से सीखते हैं। मनपसंद ढंग से सीखते हैं। कहानी/ अभिनय/ कविता/ खेल/ चित्रों से सीखते हैं।

भाषा-शिक्षण के संप्रेषण को प्रभावी बनाने के कौशल

भाषा पढाना एक रोमांचक कार्य है। अभी तक हमने भाषा और उसके संप्रेषण के कौशल के महत्व पर चर्चा की, अब भाषा-शिक्षण के सप्रेषण के कौशलो को विस्तार

से समझने की कोशिश करते हैं। ये कौशल निम्नलिखित हो सकते हैं–

- बच्चों के स्तर का ज्ञान,
- विषय का ज्ञान,
- बच्चो के अनुभवों का ज्ञान,
- बोलचाल की भाषा और मुहावरों का प्रयोग,
- आवाज में उतार-चढ़ाव,
- हाव-भाव एवं अभिनय,
- कहानी/कविता/चित्रो के माध्यम से शिक्षण,
- गतिविधिया,
- विभिन्न सामग्री का उपयोग, और
- बच्चो के सामाजिक परिवेश का ज्ञान।

बच्चों के स्तर का ज्ञान

जब आप स्वय प्राथमिक शाला में पढते थे तब आपकी मानसिकता क्या थी? आपकी विचारधारा किस प्रकार की थी? कितना आपका शब्द भन्डार था? आपके ज्ञान और सोच का स्तर क्या था?

स्वाभाविक है जो उक्त बाते आज आपके साथ हैं, जब आप विद्यार्थी थे तब नहीं थीं। यदि आप चाहते हैं भाषा पढाते समय आपकी बात बच्चे तक सप्रेषित हो तो आपको निम्न बातों का ध्यान रखना होगा–

- बच्चे की मानसिक अवस्था पढ़ाते समय आपके पाठ के अनुकूल हो।
- पाठ्य-सामग्री बच्चे के बौद्धिक स्तर के अनुकूल हो।
- बच्चे को एक साथ बहुत ज्यादा न सिखाए।
- शब्दो के अर्थ बच्चे की भाषा और उसके स्तर के अनुरूप हों।
- क्लिष्ट शब्दों का प्रयोग न करें।
- वाक्य संरचना एव विराम चिह्नों का विशेष ध्यान रखे जो कि वच्चों की समझ से बाहर न हो।
- बच्चो के स्तर को देखते हुए शब्दों के अर्थ स्पष्ट करने तथा व्याकरण के नियमों का स्पष्टीकरण के लिए "ज्ञात से अज्ञात की ओर" का सूत्र ध्यान रखें।
- भाषा शिक्षण सदैव सरल से कठिन की ओर तथा मूर्त से अमूर्त की ओर होना चाहिए।

विषय का ज्ञान

स्वाभाविक है, प्रत्येक शिक्षक सभी विषयों मे पारंगत नही होते। लेकिन कभी-कभी शिक्षण सभी विषय का करना पडता है। अत· जिस विषय को हम पढा रहे हैं उसका पर्याप्त ज्ञान हमे होना चाहिए। यदि आप चाहते है कि भाषा पढ़ाते समय बच्चे आपके पाठ को समझे, तो कुछ बाते याद रखें–

- भाषा को पढ़ाने के पहले उसके प्रति अपना व्यक्तिगत दृष्टिकोण बना ले।
- क्रमिक रूप से पढ़ी गई बाते जिनका कोई अर्थ निकलता है याद रखना आसान होती हैं। इसलिए विषय-वस्तु का क्रमवार ज्ञान प्राप्त कर ले।
- यदि चीजे एक-दूसरे से जुडी नही हैं तो याद रखना मुश्किल होता है। अतः विषय-वस्तु से जुडी अन्य चीजों की खोज कर ले जो सम्प्रेषण मे सहायक होगी।
- किसी बड़ी विषय-वस्तु को सार्थक रूप से सूक्ष्म कर याद रखा जा सकता है। अत· लबी विषय-वस्तु का संक्षिप्तीकरण कर ले।
- संप्रेषण आसान बनाने के लिए व्याकरण संबधी जानकारी, पर्यायवाची शब्द, पारिभाषिक शब्दो की व्याख्या, पाठ मे आए संदर्भो से जुड़ी जानकारियो की पूर्व तैयारी कर लें।

बच्चे स्वाभाविक रूप से निरतर संबंध स्थापित करके सीखते हैं। यदि आप भाषा पढाते समय उक्त बातो का ध्यान रखें तो बच्चों में विषय-वस्तु को समझने, उसे याद रखने और उसका सही समय पर उपयोग करने की संभावना बढ़ सकती है। भाषा मे पर्याप्त ज्ञानार्जन के लिए विभिन्न पुस्तकें पढ़ें।

बच्चों के अनुभवों का ज्ञान

बच्चे जो कुछ भी देखते हैं या सुनते है, उस सबका अनुभव स्वय ही करने के लिए बहुत उत्सुक रहते है तथा अपनी देखी या सुनी चीज को हर तरह से अपने

सामने खडी करने का प्रयत्न करते है। बच्चो की इस वृत्ति का उपयोग भाषा मे शब्द और वाक्य सिखाने मे उपयोग किया जा सकता है।

बच्चे प्रत्यक्ष घटने वाली घटनाओं का अनुभव स्वय करते है इसलिए ऐसे शब्द जो बच्चों के सक्रिय अनुभवो और वस्तुओ से जुड़े नही होते वे उनके लिए खाली और बेजान रहते है।

अत. भाषा शिक्षण के सप्रेषण के लिए शिक्षक को ऐसा वातावरण पैदा करना चाहिए कि बच्चे भाषा को लगातार जीवन के अनुभवो और चीजो से जोड़ सकें।

बोलचाल की भाषा और मुहावरों का प्रयोग

पढने का कौशल बोलचाल की भाषा से सहारा लेता है। इसलिए भाषा शिक्षण मे यदि हम बोलचाल की भाषा से प्रारभ करे तो बच्चो के लिए सीखना आसान हो जाएगा क्योकि बोलचाल की भाषा हमारी पहचान और हमारे अस्तित्व का अभिन्न अंग होती है। बच्चों की ज्यादा सुनी और समझी भाषा का प्रयोग करें तो बच्चो को विश्वास मिलेगा कि पढ़ने से कुछ जाना और समझा जा सकता है।

हम ऐसे सरल शब्द प्रयोग करें— जैसे— तट के लिए किनारा, वृक्ष के लिए पेड, स्नान के लिए नहाना इत्यादि।

अब आपके मन में प्रश्न उठता होगा कि क्या हम बच्चो को बोलचाल की भाषा मे ही पढ़ाएं, नहीं! जब बच्चे पढ़ने की कुछ सीढिया चढ ले तो हम मानक भाषा तक बच्चो को ले आएं। इसी प्रकार यदि आप चाहते हैं कि आपके शिक्षण में रोचकता बनी रहे तो मुहावरो का प्रयोग करे क्योकि मुहावरे ही भाषा को सजीव, सुन्दर एव प्रभावशाली बनाते है। मुहावरों मे कम शब्दो मे अधिक भाव व्यक्त करने की क्षमता होती है।

कहा जाता है कि सहज होकर बोलने और लिखने की आजादी बच्चे के भाषाई विकास के लिए एक जरूरी शर्त है।

आवाज में उतार चढ़ाव

भाषा एक बेहद ही लचीला माध्यम है। इसे हम जीवन की किसी भी परिस्थिति के अनुसार ढाल सकते हैं। उदाहरणार्थ, हम किसी पर नाराज होते है तो अपने गुस्से को प्रकट करने के लिए शब्द व स्तर चुनते है। मामले को शात करना हो तो नरम शब्दों और धीमे स्वर शब्दो का प्रयोग करते है। इसी प्रकार भाषा के सम्प्रेषण मे आप निम्नलिखित बातों का ध्यान रखें।

- अहिस्ता-अहिस्ता एक-एक शब्द को स्पष्ट उच्चारित करते हुए धीरे-धीरे वाक्य पूरा करे।
- हर वाक्यांश पर थोड़ा ठहरे।
- महत्वपूर्ण वाक्यों को बुलन्द आवाज मे दुबारा दोहराए।
- समझ न आने पर बार-बार दुहराएं।
- आवाज को इतना प्रभावशाली बनाएं कि अतिम पंक्ति मे बैठा, खिड़की से बाहर झाकता, कॉपी मे चित्र बना रहा या ऊघता हुआ बच्चा भी उसे सुनकर आकर्षित हो जाए।
- भावुकता, दुःख, विवशता, क्रोध, सहानुभूति, घृणा आदि भावों को प्रकट करने के लिए स्वरो के उतार-चढाव में अतर आ जाता है।
- बोलने वाला अपनी बात में कितना गभीर है या सिर्फ बोलने की औपचारिकता कर रहा है, यह बात की गति से प्रकट हो जाता है।
- बच्चो की संख्या के आधार पर अपने उच्चारण का स्तर रखे।

हाव-भाव एवं अभिनय

यदि आप चाहते है कि जो चीज बच्चों के सामने मौजूद नही है, उन्हें वह देखता चले या इस तरह की प्रतिक्रिया करे मानो वह उसके सामने मौजूद है तो आपको भाषा शिक्षण करते समय पाठ मे आए संदर्भो के अनुसार चेहरे एवं शारीरिक हाव-भाव में परिवर्तन लाना पड़ेगा। यदि सपाट रूप से पढ़ाएगे तो बच्चे पाठ के प्रति आकर्षित नहीं होगे।

शब्दों और शरीर की भंगिमाओ को सचेत होकर प्रतीकों की तरह उपयोग करने का सार्थक साधन अभिनय हैं। नकल उतारना, किसी चीज को बढा-चढा कर बताना बच्चे करते ही रहते है। बच्चों के ज्यादातर पाठ कहानियो पर आधारित होते है। कहानी और नाटक मे अतर्सम्बन्ध

होता है। कहानी को ध्यान से सुन रहा बच्चा उसके पात्रों को चुपचाप ग्रहण करता रहता है। पाठ की संप्रेषणीयता के लिए आप उस पाठ का अभिनय बच्चो से करवाएं तो पाठ की विषय-वस्तु ही नही वरन् संवाद के माध्यम से कठिन शब्द भी बच्चो में आसानी से संप्रेषित हो जाएगे। हां यदि आप अभिनय को एक भाषायी गतिविधि के रूप मे ले रहे है तो ध्यान रखे कि उसमें 'स्वतत्रता' और 'आनन्द' की प्रमुखता हो अन्यथा अभिनय में भी बच्चो की अरुचि स्वाभाविक है।

इस प्रकार हम देखते है कि हाव-भाव, कहानी, अभिनय, कविता इत्यादि का समन्वित प्रयास भाषा-शिक्षण के कौशल को परिपक्व बनाता है।

विभिन्न सामग्री का उपयोग

भाषा पढाने की आवश्यक सामग्री केवल पाठ्यपुस्तक मे नहीं मिल सकती। सामग्री के अन्य स्रोत तलाशना तथा उन्हे पाठ्यक्रम के उद्देश्यों के लिए सिलसिलेवार प्रयोग में लाना भाषा के सप्रेषण के लिए उपयोगी होगा जैसे चार्ट, चित्र, नमूने, बाल साहित्य की किताबे, बच्चों की स्वय की रचनाएं इत्यादि। बच्चे नवीन ज्ञान को ग्रहण करने के लिए विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों का उपयोग करते हैं। प्रत्येक वस्तु की अपनी एक विशेषता होती है और इस विशेषता का अनुभव एक अथवा एक से अधिक ज्ञानेन्द्रियो द्वारा होता है। किस प्रसंग में किस इद्रिय का उपयोग आवश्यक है यह ज्ञान होने पर शिक्षक बच्चे की उस इंद्रिय का उपयोग विभिन्न सामग्री द्वारा करा सकता है।

जैसे हम महसूस करते है कि पाठ पढाते समय बच्चे को वस्तु के प्रत्यक्ष सम्पर्क में ले आएं तो बात उसकी समझ में अच्छी तरह आ जाएगी, तब हमें उसे वस्तु का सजीव ज्ञान कराना चाहिए। इससे वह तथ्यों को अधिक समय तक याद रखेगा।

इसके अतिरिक्त आप यथासभव ब्लेकबोर्ड, पॉकेट कार्ड, चित्र कार्ड, मानचित्र, रेडियो, टेप रिकॉर्डर तथा प्रोजेक्टर का प्रयोग भी करें।

कहानी/ कविता/ चित्रों के माध्यम से पढ़ाना

भाषा-शिक्षण करते समय हम विषय-वस्तु को संप्रेषित करने के लिए ठोस वस्तुओं, प्रत्यक्ष अवलोकन, पॉकेट कार्ड, चित्र इत्यादि का प्रयोग करते हैं। लेकिन कुछ भावात्मक विषय-वस्तु जैसे प्रेम, घृणा, ज्ञान, सवेदना इत्यादि को उक्त चीजो से समझाना मुश्किल है। इन्हें समझाने के लिए हमे कहानी/कविता को माध्यम बनाना होगा। संवेदनात्मक विषय-वस्तु असली घटना के साथ-साथ कभी-कभी कल्पित घटना के माध्यम से ही समझाई जा सकती है। भाषा शिक्षण में कविता के प्रयोग से बच्चो मे चीजों को याद रखना, भाषा का विकास, तुकबदी, नए शब्द सीखना आदि का विकास होता है।

कहानी से सबधित कुछ महत्त्वपूर्ण बाते इस प्रकार है--

- कहानी सुनाते समय श्रोता का कहानी से सम्बन्ध स्थापित कराना महत्वपूर्ण चीज है।
- यदि कहानी अच्छी है तो बच्चे उसे सुनकर अवश्य खुश होगे। कहानी कहने का कौशल तो सभय और अभ्यास से आता है।
- कहानी से क्या शिक्षा मिल रही है, इसके प्रति बच्चों का कोई विशेष आकर्षण् नही होता।
- कहानी चाहे वास्तविक घटना पर आधारित हो या काल्पनिक घटना पर वह हमे कुछ न कुछ नया सोचने के लिए देती है।
- बच्चों के पिछले अनुभव कहानी के प्रति बच्चे की प्रतिक्रिया को प्रभावित करते हैं।
- हमे कोशिश करनी चाहिए कि बच्चे कहानी सुनने के बाद उस पर चर्चा करे, उसे तोड़ें-मरोड़ें, पात्रो की अदला-बदली करें तथा स्वय कहानिया बनाए। इसी प्रकार चित्रो के माध्यम से विषय-वस्तु को सम्प्रेषित किया जा सकता है।

गतिविधि कराना

बच्चे शात बैठे रहें, ऐसा बहुत कम होता है। देखने में शात बैठे बच्चे का मन भी कुछ न कुछ करने में लगा रहता है। बच्चो के इस स्वभाव का उपयोग हम भाषा सिखाने मे कर सकते है। बच्चो से भाषा की गतिविधिया कराए जिससे जड़ता तो दूर होगी ही, साथ ही शिक्षण मे बच्चों की सहभागिता भी हो जाएगी। भाषा-शिक्षण के संप्रेषण मे गतिविधि एक महत्वपूर्ण कौशल है।

गतिविधियो से क्या लाभ हो सकते हैं? कुछ बिन्दुओं के आधार पर देखे –

- गतिविधि के माध्यम से अपरिचित सामग्री के सम्पर्क में आने पर बच्चों को उमंग महसूस होती है।
- गतिविधिया बच्चों को शिक्षक से जोड़ती हैं।
- गतिविधियों में बच्चे अपनी अभिव्यक्ति स्वतंत्र रूप से देते हैं।
- गतिविधि बच्चो मे कौशल, जानकारी और समझ विकसित करती है।
- गतिविधि बच्चों में आत्मविश्वास बढ़ाती है।
- गतिविधि सीखने की प्रक्रिया को सहज बनाती है।

बच्चों के सामाजिक परिवेश का ज्ञान

भाषा का संबंध किसी क्षेत्र के सास्कृतिक परिवेश से होता है। परिवेश का सीधा प्रभाव बच्चों की भाषा पर पडता है। आर्थिक एवं सास्कृतिक दृष्टि से समृद्ध परिवारों से संबंधित बच्चो की शब्दावली अन्य बच्चो की तुलना में कही अधिक विकसित होती है। परिवार के रहन-सहन का ढंग और आसपास का वातावरण बच्चे के शब्द भडार के विकास को प्रभावित करता है। अतः यदि हम भाषा-शिक्षण करते समय बच्चे के सामाजिक परिवेश का ध्यान रखे तो संप्रेषण में आसानी होगी।

इस प्रकार हमने भाषा-शिक्षण के सम्प्रेषण के कौशलों को कुछ बिन्दुओ के आधार पर देखा। संप्रेषण प्रक्रिया के रास्ते मे शिक्षक और छात्र के बीच कुछ अवरोध भी आते हैं। यहां हम उन अवरोधो को चिन्हित करेंगे तथा उनको दूर करने के उपायों पर भी चर्चा करेंगे।

संप्रेषण प्रक्रिया के अवरोधों को दूर करने के उपाय

मनोवैज्ञानिक

- बच्चों को समझाए, प्रारंभ में जो नासमझ समझे जाते थे, आगे चलकर वे महान हुए जैसे– न्यूटन, आईस्टीन, कालीदास आदि।
- बच्चो को प्रेरणा, प्रोत्साहन लगातार देते रहें।
- आत्मविश्वास बढ़ाने के लिए प्रेरक कथाए सुनाएं।
- प्रश्न सरल पूछें, ताकि वे सरलता से उत्तर दे सकें।
- उत्तरो को सुनकर तुरत शाबासी दें।
- यदि जवाब गलत हो तो उसे एकदम गलत न कहें, उसे बताएं, उसके कौन से अश गलत हैं।
- बच्चों को स्वयं गलती सुधारने का मौका दे।
- हतोत्साहित करने वाले सम्बोधन न करें।

भौतिक

- शिक्षण के लिए पर्याप्त कमरे, ब्लैकबोर्ड, चार्ट, दृश्य-श्रव्य सामग्री उपलब्ध होना चाहिए।
- शिक्षा को रोचक बनाने के लिए वास्तविक वस्तु, चित्र, मॉडल, नमूने, पत्र-पत्रिकाए, कहानियो के कट्-आउट्स आदि का प्रयोग करना चाहिए।

सामाजिक

- बच्चो की अनुपस्थिति एवं शाला त्याग को कम करने के लिए अभिभावक से सम्पर्क करे।
- शाला में बच्चों द्वारा बनाई हुई सामग्री, क्रियाए, अभिनय आदि का प्रयोग अभिभावको के सामने प्रदर्शित करे।
- समुदाय को शाला की गतिविधियो के लिए आकर्षित करें।
- हसमुख स्वभाव, बात करने का ढंग, बड़ो के प्रति आदर जैसे गुणो से समुदाय से घनिष्ठता स्थापित करे।

एक भाषाविद् के अनुसार भाषा-शिक्षण का उद्देश्य पाठ्यपुस्तक की पढ़ाई नहीं, भाषा से जुड़े कौशलों का विकास है

भाषा-शिक्षण के सम्प्रेषण के कौशल को क्रम से इन तथ्यों के आधार पर विकसित किया जा सकता है–

- अपने विचारों को क्रमबद्ध रूप से सुनियोजित करना।
- फिर उन्हें रोचक तरीके से प्रस्तुत करना।
- आवश्यकतानुसार श्यामपट्ट या दृश्य-श्रव्य माध्यमो का उपयोग करना।
- प्रोत्साहित करते हुए जिज्ञासा उत्पन्न करते हुए, प्रश्न पूछना या सुझाव देना।
- बच्चों की भागीदारी सुनिश्चित करना।
- विभिन्न गतिविधि कराना।
- बच्चो का मूल्यांकंन करना।
- स्वयं का मूल्याकंन करना।

निष्कर्षतः सम्प्रेषण का सवाल सिर्फ भाषा के मुहावरे और व्याकरण-सम्मत प्रयोग के साथ नहीं जुड़ा है, बल्कि घटना की और अनुभूति की सरचना के साथ भी जुड़ा है, अत. भाषा-शिक्षण में सम्प्रेषण के कौशल के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। शिक्षक को इसके प्रति सजग और सचेत दृष्टि अपनानी होगी ताकि भाषा की पाठ्य-वस्तु बच्चों तक सम्प्रेषित हो सके। ❑❑

पेंचव्हेली स्कूल के पास, परासिया
जिला-छिन्दवाड़ा, म.प्र.

शिक्षा और मानवता : दशा एवं दिशा

❑ रामविलास जांगिड़

उन्नीसवी शताब्दी के चौथे दशक में मैकाले ने शिक्षा सम्बन्धी एक रिपोर्ट तत्कालीन अग्रेज सरकार के सामने प्रस्तुत की। उस रिपोर्ट के अनुसार ब्रिटिश शासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए अंग्रेजों को उनके विभिन्न कार्यालयों के लिए 'लिपिको' की आवश्यकता थी। ऐसे लिपिक जो केवल सूचनाओ को अपने मस्तिष्क मे इकट्ठी रख सकें। ऐसे लिपिक जिनका तन भारतीय लेकिन मन अंग्रेजियत से भरा हो। जो उनके इशारे से चल सकें। जिन्हे पूछ हिलाने की आदत पड जाए। जो श्रम से विमुख हो जाएं। जो आत्मा से पूर्णत अजान बन जाएं, ऐसे लिपिकों के निर्माण के लिए मैकाले ने 'स्कूली फैक्ट्रियो' की नींव रखी। लगभग उसी तरह की फैक्ट्रियों में भारत की राजनीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने के बाद भारी इजाफा हुआ। आज देश भर मे 6 लाख से ज्यादा प्राथमिक स्कूल है। इनमे आंकड़ो के अनुसार 107 प्रतिशत बच्चों के नाम दर्ज हैं। उच्च प्राथमिक स्कूलों की सख्या 2 1 लाख है। इनमे 92 प्रतिशत बच्चे दर्ज है। कुल बच्चो का 91.4 प्रतिशत बच्चे 6 से 14 वर्ष की आयु-वर्ग के है, जिनकी सख्या 15 2 करोड़ बैठती है। 84 प्रतिशत स्कूल 1 किलोमीटर की परिधि मे है। ग्रामीण क्षेत्र के 91 प्रतिशत बच्चों को स्कूलों से जोड़ दिया गया है। देश के दस पिछड़े राज्यों मे लगभग 2 लाख 80 हजार अनौपचारिक स्कूल चलाए जा रहे है। इन स्कूलो मे सत्तर लाख बच्चे पढ़ते है जिनमे चालीस लाख लड़के हैं। इनकी औसत उम्र ग्यारह वर्ष है और आयु-वर्ग 9-14 वर्ष।

यह तो हुआ प्रारम्भिक शिक्षा मे पजीकृत बालकों का कागजी आंकड़ा जाल। इतने बच्चों को तैयार किया जा रहा है श्रम से विमुख, आत्मा से रहित चलते-फिरते पुस्तकालय के रूप में मैकाली शिक्षा को देकर। हमारी आजादी के 53 वर्षो के बाद भी हमारी राजनीतिक कमजोरी के कारण आज तक शिक्षा में कोई क्रान्ति नहीं हो सकी है। शिक्षा के बारे मे अनेक मनीषी इसको असरदार तरीके से परिभाषित कर चुके है। महात्मा गाधी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य बालक और मनुष्य के शरीर, मन व आत्मा में जो कुछ श्रेष्ठ है, उसका पूरी तरह से प्रस्फुटन होना है। आत्मा के संस्कार के बिना सब शिक्षा बेकार ही नही घातक ही होगी। स्वावलम्बन ही शिक्षा की सही कसौटी है। रविन्द्रनाथ टैगोर के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य आत्मा को स्वतन्त्र और अन्तिम दिशा मे अग्रसर करना है। बालक उन कौशलों से सुसज्जित हो सके जिससे जीवन आनन्दमय बनाया जा सके। वह एक उपयोगी नागरिक बन सके और अपनी मौलिक क्षमताओं को, सृजनात्मक अभिव्यक्ति को कलात्मक रूप दे सके। स्वामी विवेकानन्द ने युवाओं से राष्ट्र निर्माण की बात करते हुए शिक्षा का मूल उद्देश्य सुप्त शक्तियों का अनावरण एवं उनका विकास करना बताया। विवेकानन्द

वर्तमान शैक्षिक परिवेश में वही छात्र श्रेष्ट समझा जाता है जो अपनी खोपड़ी में सूचनाओं के अम्बार जमा कर सके। वही शिक्षक कुशल है जो बेदर्दी से निरर्थक, नीरस, अव्यावहारिक सूचनाएं अपने छात्रों के दिमाग में ठूंस सके। यह कैसी विडम्बना है। ज्ञान प्राप्ति का यह कैसा विकट स्वरूप बन गया है। शिक्षा का उद्देश्य तो बालक के तन, मन व आत्मा में जो कुछ श्रेष्ठ है, उसका पूर्ण प्रस्फुटन होना है। स्वावलम्बन शिक्षा की सही कसौटी है। बालक ऐसे कौशलों से सुसज्जित हो जिससे उसका जीवन आनंदमय बन सके और जो अपनी मौलिक क्षमताओं तथा सृजनात्मक अभिव्यक्ति को कलात्मक रूप दे सके। संदर्भित लेख में शिक्षा के क्षेत्र में उत्पन्न विसंगतियों पर खासा प्रहार किया गया है।

ने बालक को बरगद वृक्ष के बीज की तरह बताया जिस अति सूक्ष्म बीज मे बरगद जैसे विशाल, बरसों तक चलने वाले पेड़ के रूप में समस्त सम्भावनाएं अन्तर्निहित है। योगीराज अरविन्द ने बालक को शिक्षा के द्वारा उसी प्रकृति मे जो कुछ सर्वोत्तम, सर्वाधिक शक्तिशाली, सर्वाधिक अन्तरंग और जीवन पूर्ण है उसकी अभिव्यक्ति करना है, के तथ्य को स्वीकारा।

इसी क्रम में स्वामी दयानन्द सरस्वती, डा सर्वपल्ली राधाकृष्णन्, महान विचारक जे. कृष्णमूर्ति, पंडित नेहरु, विनोबा भावे, गिजुभाई तथा महान चिन्तक ओशो ने भी शिक्षा के बारे मे अपना चिन्तन प्रस्तुत किया। इन्ही विचारों से साम्यता लिए हुए पश्चिम के शिक्षा विचारक इवान इलिच, पॉलो फैरे, इलविन टाफलर, जॉन लाक, जॉनहाल्ट, मदाम मारिया मांटेसरी ने 'मैकाली शिक्षा' को एक दम नकार दिया। उक्त महान चिन्तको, युग पुरुषो ने शिक्षा के बारे में जो कुछ कहा और किया उसे हम आजादी के 53 वर्षो के बाद भी करने मे पूर्णतः असफल रहे हैं। गिजुभाई ने तो बच्चो की शिक्षा के लिए उनके अभिभावको के शिक्षण, प्रशिक्षण के भी व्यावहारिक प्रयोग कर दिखाए जिसकी कल्पना करना भी हमें अचंभित कर ेता है। स्वतंत्र भारत में कई तरह की बीमारिया घुस आई। कुछ बीमारियों को स्वयं भारत ने पैदा किया। इनमे गरीबी, जनसंख्या में बेतहाशा वृद्धि, स्वास्थ्य मे गड़बड, नैतिक पतन और पर्यावरण प्रदूषण जैसी लाइलाज बीमारियों ने देश को जकड़ रखा है। इसी क्रम मे 1998 मे नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले भारतीय अर्थशास्त्री ने शि ा और अर्थ का गहरा सम्बन्ध बताया। अमर्त्य सेन ने अर्थशास्त्र की मूल चिन्ता शिक्षा को ही बताया। इनके अनुसार जो देश 53 वर्ष की आजादी के बाद 'शिक्षा के सही उद्देश्य के अनुसार' प्रारम्भिक शिक्षा की कोई व्यवस्था नही कर सका। स्वास्थ्य की चिन्ता को जन चेतना से जोड़कर जन स्वास्थ्य के प्रति जिम्मेदारी नहीं निभा सका, अपनी किशोर और युवा पीढ़ी के लिए शिक्षा के जरिए श्रम और उत्पादन के प्रति आस्था न जगा सका, वह देश निश्चित रूप से गरीब ही होगा। इसमें कोई शक नही है। 14 अगस्त, 1947 को जवाहरलाल नेहरु ने देश के नाम अपने प्रथम उद्बोधन मे कहा था— 'हमे देश की किस्मत बनानी है और अपनी कसम निभानी है। हमें अवसरों के जरिए विकास और उपलब्धियो की विजय यात्रा शुरू करनी है। यह तभी सम्भव है जब कि हम अज्ञान व अशिक्षा के अंधेरे का नाश कर दे।' शिक्षा की विराट उपेक्षा ने इस देश को एक विराट वचित, शोषित और अभावग्रस्त समाज बना दिया है।

शिक्षा के लिए इतनी सारी बाते व इतनी सारी समझ होने के बावजूद हम शिक्षा को केवल सूचनाओं के जमा कर्त्ता के रूप मे ही ले रहे है। जिसे फ्रेरे ने शिक्षा की बैकीय अवधारणा के रूप में बताया है। वही छात्र अच्छा है जो अपनी खोपड़ी में कुछ सूचनाए चुपचाप भरने दे। जरा भी आह न करे। वही शिक्षक अच्छा है जो छैनी व हथौडा लेकर बच्चे की खोपडी के ढक्कन को बेदर्दी से खोले और धमाधम अपना कचरा, नाकारा, नीरस अव्यावहारिक सूचनाए भर दे। वही छात्र अच्छा है जो वर्ष भर सूचनाओं को अपने भेजे मे सचित करते हुए तीन घंटे की परीक्षा मे कॉपी में उगल दे जिसके सवाल गैस पैपर्स व वन ऑवर सीरीज में उपलब्ध थे। अच्छा शिक्षक वही है जो परीक्षा के समय बच्चे के मुंह में उंगली डालकर उसे उल्टी करने के तरीके बता सके। अच्छा परीक्षक वह है जो तीन घंटे में लिखे गए कॉपी के उत्तरो को अपने बच्चों की मदद से तीन मिनट मे जांच दे। वर्ष भर की शिक्षा का तीन मिनट में मूल्यांकन। सब शिक्षा विचारकों, चिन्तकों, मनीषियों की शिक्षा का उत्तर सिर्फ तीन मिनट! हमारे भारतीय दर्शन में कहा— 'सा विद्या या विमुक्तये', विद्या (शिक्षा) वही है जिससे भौतिक, दैहिक, आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक समस्याओं से मुक्ति प्राप्त हो। वास्तव में परीक्षा देकर बच्चे के पिता इन सभी समस्याओ से मुक्त हो जाते है। हमने पढ़ाया बच्चे को और शिक्षा मिली उसके पिता को। वाह रे शिक्षा! संसार भर में इससे बड़ा व्यग्य और कहीं नहीं हो सकता।

इस देश में क्रिकेट के मैच फिक्सिंग पर देशव्यापी बहस होगी, दीपा मेहता की स्क्रिप्ट पर आदोलन होगा, कोका कोला पीने पर सवाद होगा, रसोई गैस से गाडी चलाने पर चर्चा होगी, कारो के मॉडल पर व्यापक बहस

होगी, हवाई सेवा के निजीकरण पर बहस होगी, सुपर फास्ट रेल के ए.सी. की आरक्षण व्यवस्था पर जंग छिड़ेगी। परन्तु शिक्षा पर कभी बहस होती न देखी! शिक्षा के क्षेत्र में निकलने वाले समाचार अखबारों के बीच के पृष्ठ मे क्लासीफाइड बनकर रह जाएंगे। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया मे ग्लैमर की चकाचौंध मे शिक्षा की बातों को देखना दिन में तारे देखने के समान ही है। सरकारी सहायता से प्रत्येक राज्य मे छपने वाली शैक्षिक पत्रिकाओं की हालत सभी जानते है। न कोई पेज वढ़िया, न कोई रंगीन चित्र, न कोई अच्छे विचार। क्योकि यह सरकारी सहायता की मातहत है। एक तरह से ऐसा करके ठीक ही कर रहे हैं। क्योकि शिक्षा के ठेकेदार समूह के शिक्षक, शिक्षाधिकारी मिलकर इस शिक्षा से सम्बन्धित पत्रिकाओ को देखते तक नहीं। एक अनुमान के मुताबिक 0.5 प्रतिशत शिक्षक ही इन मासिक पत्रिकाओं को देख पाते है। शिक्षा के लिए इस तरह की वैचारिक शून्यता अति आश्चर्यजनक है। कही कोई सुगबुगाहट नहीं। अगर किसी शिक्षक के सामने गिजुभाई का नाम ले लिया जाए तो वे आश्चर्य से अपनी आंखों को फैलाते ही रह जाते है। रविन्द्रनाथ की तोता कहानी की सच्चाई अक्षरश. दिखाई दे रही है। मेरे सामने इस कहानी के तीन चित्र दिखाई पड रहे हैं। एक चित्र मे राजा सोने के पिजरे मे शिक्षा के लिए तोते को बंद देखकर खुश है और पिंजरे के नीचे चाटुकार नौकरशाह व शिक्षक अपना 'अंश' पाकर आनंदित है। दूसरे चित्र में पंडित बना शिक्षक तोते की गरदन पकडकर उसकी चोच में किताबो के पन्ने खोस रहा है। तोता फडफड़ा रहा है। शिक्षक के पास पोथियों का ढेर लगा है। फड़फड़ाते तोते के पख एक-एक करके टूटते जा रहे हैं। उसमे उड़ने की क्षमता में निरन्तर कमी आ रही है। तीसरे मे तोते को थाल मे सजाकर राजा के सामने प्रस्तुत किया है। वह उडना भूलकर मृत प्राय थाली में पड़ा है। उसके पेट से लेकर कंठ और मुंह (चोच) में किताबों के 'सूखे' पन्ने भरे पडे है। शिक्षक व शिक्षा अधिकारी कहते है इसकी शिक्षा पूर्ण हो गई है। यही है हमारी शिक्षा। तोते के पंख काटकर उसे सोने की थाली में प्रस्तत किया है।

करने के लिए शिक्षा को सहायक समझा जाता था। शिक्षा को पितृ ऋण, ऋषि ऋण और देवऋण से उऋण प्राप्ति का साधन समझा जाता है। शिक्षा पूरी होने पर गुरु शिष्य को— " सत्यं वद। धर्मम् चर। स्वाध्यायान मा प्रमदः", का उपदेश देकर उसे विदा करता था। आज की शिक्षा पूर्ण होने पर बच्चे के पेट में श्रम से विहीन शून्य भावबोध वाला हृदय और सूखे पन्नो की खसखसाहट के साथ-"असत्यं वद! अधर्मम् चर! अस्वाध्यायान मा प्रमदः", के भाव हृदय मे डालकर विदा कर दिया जाता है। सारी शिक्षा के दौरान केवल किताबो के शब्द बालक को सत्य की शिक्षा का उपदेश देते। शिक्षक, राज और समाज असत्य ही खाते, असत्य ही पहनते और असत्य ही बिछाते रहे तो बालक ने असत्य सीख लिया। इसी तरह कक्षा के बरामदे मे धर्म के रास्ते पर चलने वाले 'अमृत कण' ही उपदेश देते रहे। शिक्षक, राज और समाज अधर्म को ही चाटता रहा। बच्चे ने अधर्म पर चलना सीख लिया। स्वाध्याय की बात भी कब की मर गई क्योंकि स्वाध्याय का अर्थ केवल पढना, लिखना नही होता है। इसका अर्थ गहराई से ज्ञान प्राप्त करने से होता है। वैदिककाल मे जिस शिक्षा को प्रकाश, गुप्तधन, तीसरा नेत्र आदि नामो से अलंकृत किया जाता था। जिससे आत्मविश्वास, धैर्य, विश्वास, आत्मसंयम, कर्त्तव्यनिष्ठा की शिक्षा मिलती थी। वही आज की शिक्षा चापलूस, अविश्वासी, अधीर, तनावग्रस्त व दुःखी मनुष्य को जन्म दे रही है।

महावीर, बुद्ध, राम, कृष्ण की इस धरती पर हम अब अशिक्षा के बारूद पर बैठे है। अगर खालिस सूचनाओं को ठूसना ही शिक्षा है तो शिक्षा के नाम पर समस्त विचारको के द्वारा दिए गए विचारों पर तत्काल कालिख लगा देनी चाहिए। शिक्षको को यह बात स्पष्टतः बता देनी चाहिए कि शिक्षा का अर्थ कुछ सूचनाओ को भेजे मे भरना ही है। हमें इस बात को स्वीकार कर लेना चाहिए कि शिक्षा का मतलब केवल आलसी लोगो की फौज खड़ी करना ही है। शिक्षा का श्रम से व आत्मा से कोई अर्थ नहीं है। शिक्षा केवल अपनी बुद्धि से ही सम्बन्ध रखती है।

महाभारत मे एक प्रसग है। विदुरजी द्रौपदी चीरहरण

हमने पाडवों को छल से जुए में हराया है। उनका धन व राज्य भी ले लिया है। अब तुम द्रौपदी के कपड़े उतारने पर तुले हो। वह तो तुम्हारी भाभी है। ऐसा करना अन्याय है। तब दुर्योधन ने कहा— हे तात् ! आपने सत्य कहा। चीरहरण करना अधर्म है, पाप है। भाइयों को लाक्षागृह मे जलाना भी घोर अनीति है। परन्तु काका! यह सब मै जानता हू 'जानामि-धर्मम् न च में प्रवृत्ति, जानाभ्यधर्मम् न च में निवृत्ति।' धर्म क्या है? मैं यह जानता हूं। अधर्म क्या है? मै यह भी जानता हूं। लेकिन उससे मैं मुक्त नही हो सकता। प्रमुख शैक्षिक चिन्तक मनुभाई पंचोली कहते हैं कि हम सब आंशिक रूप से ही सही, दुर्योधन हैं। शिक्षा क्या है? स्कूल किसे कहते हैं? शिक्षक कैसे हों? बच्चों से व्यवहार कैसे करें? क्या हम जानते नहीं? हम जरूर जानते हैं— परन्तु 'न च में निवृत्ति'। इस वृत्ति से हम मुक्त नही हो सकते। परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि हम दुर्योधन से भी घटिया हो चुके हैं। क्योंकि काका के सामने उन्होंने सत्य को स्वीकार तो कर लिया। हम सत्य को स्वीकार ही नहीं कर रहे। शिक्षा के नाम पर केवल अशिक्षा व अज्ञान बेचने का धन्धा चला रहे हैं। हमारा नैतिक पतन और कितने गहरे गड्ढे में जाएगा। क्योकि इस मामले में हमने दुर्योधन को भी पीछे छोड़ दिया है।

फ्रेरे ने कहा 'सच्चा सम्प्रेषण ही सच्ची शिक्षा है'। सम्प्रेषण के लिए संवाद जरूरी है। संवाद ऐसा जिसमे आशा, धैर्य, विश्वास, इच्छा, उत्साह, ईमानदारी, विवेक, संयम और आत्मविश्वास की पूर्णता हो। केवल शब्दों को चिन्तन का स्वरूप देना बकबक है। शब्दाडंबर है। केवल शब्दों को कर्म का रूप देना सक्रियतावाद को जन्म देना है। अतः शब्द के अनुरूप चिन्तन जरूरी है व उसी के अनुसार कर्म बनेगा व इसकी व्यापकता ही संवाद बनती है। संवाद का विस्तृत केनवास सप्रेषण का रूप बनता है। यही सच्ची शिक्षा होगी जो विश्व के रूपान्तरण में सक्षम होगी। हमारे वेदों में भी 'मनसा वाचा कर्मणा' लिखा है जो फ्रेरे की बात को वजन देता है। इसके अनुसार जो मन में हो वह वचन बने। जो [illegible] हो वही [illegible]

लग गया है। राज, समाज और शिक्षक मोटी-[illegible] के वर्णन में लगे रहते हैं। ओजोन परत में [illegible] दुनिया में हल्ला मच गया था। क्लिंटन की ने सिर पर उठा लिया था। शिक्षा में न [illegible] भविष्य में कोई आशा बनती नजर आ रह[ी] आयोग और कमेटियां बैठा दी जाती हैं। जो समय में 'शब्दो क़ी जुगाली' करती रही है। में और इजाफा कर देने के बाद भी इनकी रहती है। स्वतन्त्रता के बाद गिने- चुने उन्होंने जुगाली की। उसके जुगाली किए विभिन्न शिक्षक प्रशिक्षणों में लगाकर उन् का मौका दिया गया। आयोगों के द्वारा च[ा] अपना पेट भरने लग गए।

पाश्चात्य जीवन दर्शन पर आधारित मैकाली शिक्षा उसी पाश्चात्य दर्शन का पूर है। अमेरिका में इस शिक्षा के पढ़े-लिखे लो तनावग्रस्त व दुःखी हैं। वहां के स्कूलों में हत्या कर देने के मामले में बढ़ रहे हैं। पा अनुसार मनुष्य को प्राकृतिक साधनों व सम करने की सीख दी है। जिससे पर्यावरण हुआ है। 'स्ट्रगल फॉर एक्जिस्टेस' के अनुसा के लिए सघर्ष करना जरूरी है। अतः ल जो व्यक्ति अन्य प्राणियों की तुलना में स समर्थ रहेगा। उसी का वंश बचेगा व अन् जाएंगे। अतः परीक्षा में येन-केन-प्रकारेण प्र है। क्योंकि 'सर्वाइवल ऑफ द फिटेस्ट' अंधी दौड़ में एक-दूसरे का गला काटना नि है। ऐसी पाश्चात्य शैली जो क्रूर हिंसा करती है। ऐसी मैकाली शिक्षा जो असंतो[ष] दुःखी मनुष्य का निर्माण करती है। दुर्भा[ग्य] हमारे समाज में अपनी निरन्तरता बनाने गई है। भ्रष्टाचार इसी शिक्षा का एक ग[ह] चालाकी इसके वस्त्र बन गए हैं। ऐसी शि डूब चुके है।

[illegible]

मानकर स्वयं यह जहर लेने लगे हैं। वे खुद अपने आपको कुर्सियों से बाधकर अपना जबड़ा खोलते है। वे खुद शिक्षक को मदद करते हैं कि वे उनके दिमाग में सूचनाएं ठूंस दें। अभिभावक इस काम मे बच्चे को मदद देते हैं। उसके हाथ-पैर पकड़ते हैं। एक तरह से हम भावी पीढ़ी को पालने के बाद ही आत्महत्या की ओर बढ़ाने में विवश व मजबूर कर रहे है। जाने कब महात्मा गांधी, टैगोर, विवेकानन्द, अरविन्द, दयानन्द, विनोबा, कृष्णमूर्ति, गिजुभाई के शिक्षा दर्शन को मूर्तरूप मिलेगा। और अब अमर्त्य सेन की अर्थशास्त्र की मजबूती के लिए सच्ची शिक्षा की वकालत कब क्रान्ति बनेगी। अब जरूरत है शिक्षा में क्रान्ति की। रजनीश के अनुसार शिक्षा का जगत सदा से क्रान्ति का विरोधी रहा है। शिक्षा सदा से प्रतिगामी रही है। यही कारण है कि शिक्षकों ने आज तक क्रान्तिकारी विचारक पैदा नही किए। शिक्षको के ऊपर आज तक आविष्कार का कोई इल्जाम नहीं लग पाया है। शिक्षा का व्यवसाय समादृत हो रहा है, लेकिन प्रथम कोटि की प्रतिभा शिक्षक की तरफ आकृष्ट नहीं हुई। शिक्षा ने बुद्धिमत्ता पैदा नहीं की। शिक्षा ने केवल स्मृति पैदा की जो पुनरुक्त कर सकती है। हमारी सारी परीक्षाएं सिर्फ स्मृति की हैं। ज्ञान, बुद्धि, विवेक, नैतिकता, आचरण की कोई परीक्षा है न शिक्षा।

अत समय रहते हुए शिक्षा में और विशेष तौर से हमारी प्रारम्भिक शिक्षा मे क्रान्ति की जरूरत है। शिक्षको में शिक्षा के विभिन्न आयामो पर शैक्षिक विमर्श की आवश्यकता है। देश की उच्च कोटि की प्रतिभा को शिक्षा की ओर मोडने की जरूरत है। रहीम ने कहा है– 'एके साधे सब सधे, सब साधे सब जाए। रहिमन मूल ही सीचबौ, फूलहि फलहि अघाय।' जड़ को सीचने से ही पत्ते और शाखाए सभी फल जाएंगे। शिक्षा के सही उद्देश्य की दिशा में कारगर उपायों को क्रियान्विती देने से गरीबी, भ्रष्टाचार, अनैतिकता व असतोष जैसे क्रूर राक्षसों के खिलाफ लड़ाई अपने आप छिड़ जाएगी। वास्तविक शिक्षा के उद्देश्यो को प्राप्त करके ही हम जीवन मे आनंद और सुख की प्राप्ति कर सकते हैं। शिक्षा में क्रान्ति की जरूरत है। शिक्षा के वास्तविक उद्देश्यों की पूर्ति करना महती आवश्यकता है। वर्तमान शिक्षा बारूद का ढेर है। इसकी प्रगति हमारी पूरी मानव सम्भ्यता को एक दिन जरूर नष्ट कर देगी। प्यार, शांति, मानवता के इस देश को सच्ची शिक्षा को तलाशने की जरूरत नहीं है। असल में हमारे युग पुरुषो ने यह काम पहले से ही कर लिया है। ऐसी सच्ची शिक्षा को व्यावहारिकता का, कर्म का अमली जामा पहनाना जरूरी है। इसके लिए दृढ राजनीतिक व सामाजिक इच्छा शक्ति की प्रबल आवश्यकता है। ☐☐

जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान
मसूदा, अजमेर, राजस्थान

हिन्दी अध्यापन में नवाचार

❑ युक्ति बैनर्जी

आज की शिक्षण पद्धति प्राचीन शृंखलाबद्ध नियम, कानूनो पर आधारित नही है। आज के विद्यार्थी का परिवेश पहले से पूर्णरूप से भिन्न है। विद्यार्थी का व्यक्तित्व अपने परिवेश से प्रभावित है। जहां एक ओर वह दूरदर्शन पर चलने वाले अच्छे बुरे कार्यक्रमों से प्रभावित है तो वही दूसरी ओर हमारी शिक्षा व्यवस्था के चक्र में, पाठ्यक्रम की धुरी पर घूमने वाला मात्र एक खिलौना बनकर रह गया है। उसका बचपन खेलकूद तथा कलात्मक गतिविधियो के लिए छटपटाता-सा रह जाता है। इस अवस्था में जब अध्ययन, पाठ्यक्रम माता-पिता की आज्ञा का दबाव उस पर पड़ता है तो वह शिक्षा को आनंदित मन से स्वीकार नहीं कर पाता।

अध्यापिका होने के नाते बच्चों की इस विकल स्थिति को लेखिका ने भी अनुभव किया है। आजकल विद्यार्थी प्राइमरी कक्षाओ से ही हिन्दी भाषा के अध्ययन से जी चुराता नजर आता है। ऐसे अनेको विद्यार्थी जिनकी मातृ-भाषा हिन्दी है लेकिन उनकी शिक्षा-दीक्षा पब्लिक स्कूलों में हो रही है, ऐसे विद्यार्थी केवल अंग्रेजी मे बातचीत करना पसद करते हैं। इसका कारण है हिन्दी भाषा के प्रति अरुचि। अन्वेषक के अनुसार हिन्दी भाषा न तो सहज है और न ही सरस। इस अरुचि के मूल मे है भाषा की दुरुहता। भाषा की दुरुहता के निम्नलिखित कारण है–

- ❑ स्वरों की ध्वनि तथा व्यजनो की ध्वनि को पकड़ने मे कठिनाई।
- ❑ सयुक्त व्यंजनो को समझने मे कठिनाई।
- ❑ मात्राओ को समझने में कठिनाई।
- ❑ स्वरों की ध्वनियो को तथा मात्राओं की ध्वनियों को समझने के लिए भाषा लेखन मे कठिनाई।
- ❑ शब्दो के अर्थो तथा विन्यास को समझने मे कठिनाई।

हिन्दी भाषा का शिक्षण बहुत ही सुगम तथा मनोरजक साबित हो सकता है। यदि इसके अध्यापन में थोड़ा-सा बदलाव लाया जा सके। बदलते हुए समय के साथ-साथ अध्यापन पद्धति मे थोडा बहुत परिवर्तन करके यदि उसे और अधिक मनोरजक बनाने का प्रयत्न करें, तो उसका फल यह होता है कि विद्यार्थी अपनी भाषा कक्षा मे रुचि लेने लगते है।

अध्यापक की कुशलता विशेष रूप से इस पर निर्भर है कि अध्यापन को कैसे रुचिकर तथा प्रभावशाली बनाया जाए। हिन्दी भाषा-शिक्षण को परिवेश में उपलब्ध सहायक सामग्री से स्वरों व व्यंजनों की उपमा के माध्यम से, मात्राओं के उच्चारण में क्रियात्मक गतिविधि से, कहानी व नाटकीय विधि से वर्तनी अभ्यास, शब्द भंडार बढ़ाने का अभ्यास, वाक्य विन्यास को समझने के प्रयोगों का विवरण प्रस्तुत लेख में दिया गया है। यह अध्यापकों के भाषा अध्यापन को मनोरंजक बनाने में सहायक होगा।

भाषा-शिक्षण करते समय उसमें क्रियात्मकता का समावेश करना जरूरी है। जिन ध्वनियो का उच्चारण करने मे अथवा समझने मे कठिनाई हो उसको भी भाषा विज्ञान के अनुसार बताए गए मुख की विभिन्न अव्यवों द्वारा उचित स्थानो का स्पर्श बताते हुए– स्पष्ट करना जरूरी है।

प्रत्येक दुरुहता का निवारण करने के लिए विभिन्न क्रियाकलापों तथा खेलों का अथवा क्रियात्मक गतिविधियों का प्रयोग किया जाना जरूरी है।

स्वर तथा व्यंजनों की ध्वनि समझने में कठिनाई

भाषा विज्ञान के अनुसार जब भी हम किसी स्वर अथवा व्यंजन का प्रयोग करते है तो मुख का प्रत्येक अव्यव

ञ्याशील रहता है। जैसे स्वर "आ" अथवा आ की ात्रा "ा" बोलते समय हमे अपना मुख पूरा खोलना ड़ता है। यदि पढाते समय इस बात को स्पष्ट करके ताया जाए तो यह बात विद्यार्थी के दिमाग में बैठ ाएगी। विभिन्न मात्राएं भी अपनी-अपनी विशेषताएं व्रती है और व्यजन भी। अतः छोटी से छोटी कक्षा आरंभ करके तीन-चार वर्ष तक यदि स्वर तथा व्यंजनो , केवल उच्चारण की ओर न ध्यान देकर उच्चारण यत्नो तथा स्थानो का विवरण देते हुए क्रियात्मक तिविधियो द्वारा अभ्यास कराया जाए तो विद्यार्थी प्रत्येक र्ण का उचित उच्चारण कर सकेंगे।

ंयुक्त अक्षरों को समझने में कठिनाई का नेवारण

ार्वप्रथम स्वरो को पेड़ की उपमा देकर समझाना चाहिए के जिस प्रकार पेड बिना सहारे के खड़ा रहता है उसी कार स्वरों को भी उच्चारण करते समय किसी सहारे ी आवश्यकता नहीं होती।

व्यंजनो की तुलना बेलों तथा लताओं से करते हुए ताना चाहिए कि वे पेड़ों की सहायता के बिना नहीं व्रड़ी रह सकतीं। व्यंजनो को भी बिना स्वर के प्रयोग ाही किया जा सकता।

- जो व्यंजन बिना स्वर के बोला जाता है उसमे से "अ" निकालकर दूसरे व्यजन मे जोडकर जल्दी से बोला जाता है ताकि दूसरे व्यंजन के "स्वर" का सहारा उसे मिल सके।
- स्वर रहित व्यंजन जब स्वर सहित व्यंजन से मिलता है तो सयुक्त रूप में लिखा गया बोला जाता है। जैसे स्वर स् = वर।
- उच्चारण करते समय बच्चो को यह दिखाना बहुत जरूरी है कि "स्वर" शब्द मे कौन से वर्ण उन्हें पूरे सुनाई दिए। "स्वर" मे "वर" पूरा सुनाई देता है इसमे "स्" भी यदि पूरा सुनाई देता तो स्वर बोला या लिखा जाता। परन्तु "स" पूरा नहीं होने के कारण "स" मे से "अ" को निकालकर "स" बोला जाना चाहिए और क्योकि स्वर रहित व्यंजन का उच्चारण नहीं किया जा सकता इसलिए अगले वर्ण "वर" को "स" के साथ मिलाकर फौरन स्वर बोला जाना चाहिए।

शब्दों में प्रयुक्त मात्राओं की ध्वनियों के अंतर को पहचानने की कठिनाई का निवारण

इसके लिए भी मुख विवर के अव्यवों की ओर इंगित करना बहुत आवश्यक है। जैसे "ओ" बोलते समय होंठो का खुलना अग्रेजी के ओ के समान होगा। यदि एक उगली मुख मे डाली जाए तो "ओ" का उच्चारण ठीक होगा। यदि मुख मे एक उंगली से अधिक उंगली डालने का स्थान हो तो "ओ" के स्थान पर "औ" का उच्चारण होगा।

क्रियात्मक गतिविधि

"ओ" अथवा ओ की मात्रा का उच्चारण करवाइए और पहले एक उगली मुह मे डालने का स्थान छोड़कर उच्चारण करवाइए।

अब दो या दो से अधिक उंगलियां को मुंह में डालकर "औ" को बोलने का प्रयत्न करवाइए।

फल

एक उगली का स्थान होने पर ओ का सही उच्चारण हो सकेगा। (एक उंगली एक मात्रा) एक से अधिक उगलियां मुह में डालकर "ओ" का उच्चारण करेगे तो "औ" का उच्चारण ही सुनाई देगा— एक से अधिक उंगलियां — दो मात्राए (इसी प्रकार की क्रियात्मक गतिविधियां बच्चों में मात्राओं की त्रुटियां दूर करने मे सहायक होती हैं।

शब्दों के अर्थ तथा वाक्य विन्यास को समझने में कठिनाई होने पर उसका निवारण कैसे करें

इसके लिए सांचा अभ्यास तथा शब्द अभ्यास किया जाना चाहिए। वाक्य विन्यास को समझने के लिए कार्डो द्वारा वाक्यों के टुकड़े अलग-अलग लिखकर उन्हें जोडा जाता है।

अन्वेषक ने अपने द्वारा प्रयुक्त की गई कुछ क्रियात्मक पद्धतियों के विषय में लिखा है। इन सभी

पद्धतियो द्वारा विद्यार्थियों में एकाग्रता, रुचि तथा मनोरंजन का सचार हुआ है। ये अभ्यास बहुत ही कारगर सिद्ध हुए तथा बच्चों में भाषा के प्रति रुचि पैदा हुई।

क्रियात्मक पद्धति
"स्मृति परीक्षा" अथवा
"वर्तनी अभ्यास"

यह क्रियात्मक गतिविधि बहुत ही सफलतापूर्वक विद्यार्थियों को एकाग्रचित होने का अभ्यास कराती है।

- ☐ इसमे अध्यापिका पहले पाठ पढ़ाती है तथा उसमें आए कठिन शब्दो को रेखांकित करवाती है। रेखांकित करवाते समय उन शब्दों के क्रमांक लिखवा दिए जाते है।
- ☐ गृहकार्य में बच्चे उन्हीं क्रमांकों के अनुसार छोटी-छोटी पर्चियो पर पाठ पढ़कर वे ही शब्द लिखते हैं।
- ☐ अगले दिन कक्षा कार्य के रूप मे बच्चो को वही कार्य दो तरह से करवाया जा सकता है।

● अध्यापिका पहले "तीन" शब्द श्यामपट्ट पर लिखती है। इस समय विद्यार्थी अपनी-अपनी पेंसिलें डेस्क पर रखकर ध्यानपूर्वक शब्द पढ़ते है।

इसके पश्चात् अध्यापिका तीनों शब्दों को मिटाकर बच्चो से पेंसिल उठाने के लिए कह कर शब्द लिखने का इशारा करती है।

इस अभ्यास के लिए नियमित समय दिया जाता है। शब्द का क्रमांक यदि आगे पीछे हो जाए तो कोई अंतर नही पड़ता है।

इसी प्रकार दूसरी बार में अगले तीन शब्द तथा अन्त में "प" शब्द दे दिए जाते हैं।

इस अभ्यास द्वारा बच्चों की स्मृति, एकाग्रता बढ़ती है। यह अभ्यास बच्चों को काफी मनोरजक भी लगता है।

इस अभ्यास के बाद उन्हीं शब्दों के सम्मुख उनकी चेकिंग भी की जाती है। यदि अध्यापिका उन्ही में से कुछ का अर्थ लिखवाना चाहे तो लिखवा सकती है।

● यही स्मृति परीक्षा दूसरी तरह से भी ली जा सकती है। अध्यापिका यदि किसी अन्य कार्य में फसी हो तो वह केवल क्रमांकों (जैसे 1,3,5) (2, 6, 8) (4, 7, 9, 10) को श्यामपट्ट पर लिख देती है और बच्चे अपने आप पर्चियां निकालकर "आत्मपरीक्षा" के रूप में वर्तनी अभ्यास करते हैं।

इस परीक्षा को करने में बच्चों को बहुत आनंद आता है। अध्यापिका द्वारा शब्दो को लिखना और मिटाना तथा फौरन उनके द्वारा पेंसिल उठाकर शब्दों को पुनः लिखने का उत्साह देखते ही बनता है।

क्रियात्मक पद्धति

(शब्द-भंडार बढ़ाने का अभ्यास)

इस विधि द्वारा बच्चो का शब्द-भंडार बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है। यह विधि बच्चो में शब्दों के अर्थ, पर्याय, शुद्ध शब्द चयन, विलोम शब्द, लिंग, वचन आदि सभी प्रकार के अभ्यासों के लिए प्रयोग में लाई जा सकती है।

इस विधि के अन्तर्गत हमें अपना विषय क्षेत्र संकुचित ही रखना चाहिए अर्थात् यदि हम "विलोम शब्दों" का अभ्यास करवाना चाह रहे हो तो केवल शब्दों के विलोम शब्द और दोनों के अर्थ ढूंढ़ने का अभ्यास एक साथ दे सकते हैं।

3 × 4" कार्ड बनाकर लगभग 15 शब्दों को उनके अर्थो, विलोम शब्दों सहित तथा विलोम शब्दों के अर्थो सहित कुल मिलाकर 60 कार्ड बना ले।

उदाहरण –

उदय × अस्त
निकलना × छिपना

इन कार्डो को प्रत्येक बच्चे में एक-एक कार्ड बांट दिया जाता है।

विधि

- ☐ अब पहला बच्चा कार्ड को पढ़ना आरंभ करेगा। मान लीजिए उसके पास "अस्त शब्द का कार्ड आता है।
- ☐ जिस बच्चे के पास इसका अर्थ वाला कार्ड हो वह बच्चा खड़ा होकर अर्थ वाला कार्ड दिखाएगा।
- ☐ अब विलोम शब्द वाला बच्चा खड़ा होकर अपना कार्ड दिखाएगा।
- ☐ अंत मे विलोम शब्द का अर्थ जिस बच्चे के पास हो वह बच्चा अपना कार्ड लेकर पूरी कक्षा को दिखाएगा।

इस पद्धति द्वारा पूरी कक्षा के छात्रों को अपने-अपने कार्ड लेकर कक्षा के सम्मुख आने का अवसर मिलेगा

तथा सभी छात्र-छात्राओ के शब्द भण्डार में 60 शब्दों का समावेश हो जाएगा।

विशेष— इसी प्रकार पुल्लिंग, स्त्रीलिंग, एकवचन, बहुवचन आदि बनाए जा सकते हैं।

वाक्य विन्यास को समझने में कठिनाई

वाक्य विन्यास को न समझ पाने का सर्वप्रमुख कारण है शब्द-भंडार का अभाव। इस कारण बच्चे दो प्रकार की परिस्थितियों की ओर उन्मुख होते है।

- ☐ दूसरी भाषा मे अथवा दूसरी भाषा से कुछ शब्दो का चयन कर उनको हिन्दी भाषा के वाक्यों में मिलाकर खिचड़ी भाषा का प्रयोग करते हैं।
- ☐ मौन साध लेते हैं— अपनी भाषा द्वारा अपनी जिज्ञासा प्रस्तुत करने में हिचकिचाते हैं।

इस समस्या के समाधान के लिए वैसे तो अनेकों विधियों का प्रयोग किया जा सकता है परन्तु प्राइमरी के विद्यार्थियो के लिए कहानी सुनने और सुनाने की विधि सबसे अधिक सफल सिद्ध हुई है। कहानी सुनाते समय बच्चो की एकाग्रता, विस्मय तथा प्रसन्नता की बौछार देखते बनती है। चुप रहने वाले बच्चों के बोल भी फूट भी पड़ते हैं। उनके मन में उपजे प्रश्न भी भाषा का रूप ले लेते हैं।

अनुभव— प्रिपरेटरी कक्षा में हिन्दी पढ़ाते समय जब अन्वेषक के मन से बनाई गई एक कहानी सुनाई तो बच्चों के प्रश्न सुन कर दंग रह गई। कहानी एक बंदर के बच्चे तथा हाथी के विषय में थी। कहानी पशु-पात्रों का चयन बच्चो द्वारा ही किया गया। कहानी का साराश था कि कैसे एक बंदर का बच्चा शैतानी करते हुए दिल्ली से बम्बई पहुंचा और किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, कैसे उसने हाथी को अपना मित्र बनाया और किस प्रकार वह अपनी मा के पास वापस आ सका।

परिणाम— कहानी सुनने के पश्चात् बच्चों में कौतुहल था, जिज्ञासा थी तथा समाधान भी उन्ही के पास था। इस अनुभव के बाद से कहानी सुनाने का क्रम बढ़ता गया। बच्चों के मुख से निकले वाक्यों को उचित समय पर मात्र शुद्ध कर देना ही काफी था।

कुछ प्रश्नों तथा जिज्ञासाओं को अध्यापिका ने भी उनके सम्मुख रखा और उसका परिणाम भी अच्छा ही रहा। उनके प्रश्नो का उत्तर भी प्रिपरेटरी कक्षा के बच्चो ने बहुत साफ भाषा मे दिया।

कथा चयन कैसे हो?

कहानी का चयन करते समय यह देखना या समझना बहुत आवश्यक है कि बच्चे किन विषयों पर कहानी सुनना पसंद करते हैं। प्रकृति से लिए गए पात्र अथवा उनके जाने-पहचाने वातावरण से लिए गए पात्र उनकी वाणी को अधिक मुखर कर सकते है।

वाक्य विन्यास अभ्यास

कहानी सुनाने के पश्चात् विभिन्न सांचो को ध्यान रखते हुए प्रश्नों की सूची बनाई जा सकती है। जिनके अतर्गत हम "कब, कहा, कैसे, क्यो, कौन, क्या आदि युक्त प्रश्नोत्तरी बना सकते हैं। ● सांचों के अभ्यास के लिए वाक्यों को दो टुकड़ों अथवा तीन टुकडों में बाटकर करवा सकते है अथवा ● बच्चो को विभिन्न ग्रुपो मे बांटकर कहानी के पात्रो की भूमिका दे दी जा सकती है। प्रतिक्रियात्मक गतिविधियो के लिए पात्रों की भूमिका देने के साथ उनको कुछ सामग्री भी दे देनी चाहिए जिसका प्रयोग कहानी के पात्रों ने किया हो।

परिणाम— नाटकीयता के कारण बच्चो का परिवेश बदल जाता है और वे अपने विचारों को अथवा मनोभावों को प्रस्तुत करने में हिचकिचाते नहीं।

प्रिपरेटरी कक्षा के पश्चात् प्रथम, द्वितीय तथा तीसरी कक्षा तक भी इसी प्रकार की पद्धति अपनाई जा सकती है। केवल प्रत्येक वर्ष कहानी के विषय में विचारों में तथा भाषा में और अधिक परिपक्वता का समावेश किया जाना चाहिए। बच्चों में रचनात्मकता को भी प्राथमिकता दी जाए।

समाज के प्रति उपयोगिता की दृष्टि से यदि देखा जाए तो यही कहा जा सकता है कि शुद्ध हिन्दी भाषा का अध्ययन तथा प्रशिक्षण की दिशा में उठा यह कदम न केवल बच्चों में हिन्दी भाषा के प्रति अरुचि को दूर करता है बल्कि उनमे भाषा के प्रति सम्मोहन पैदा करता है। अभिभावको का भी यही कहना है। ☐☐

कैम्ब्रिज प्रारम्भिक विद्यालय
ए-ब्लाक, न्यू फ्रैन्ड्स कालोनी
नई दिल्ली

शिक्षा गारंटी शालाओं के शिक्षकों की दक्षता : छत्तीसगढ़ में राजनान्दगांव जिले का अध्ययन

□ युगल किशोर तिवारी

प्राथमिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण में मध्य प्रदेश की शिक्षा गारटी योजना अत्यत प्रभावी सिद्ध हो रही है। "ई जी एस" के रूप मे चर्चित शिक्षा गारटी योजना आर्थिक रूप से प्रभावी, आवश्यकता आधारित शिक्षा, सुविधा विहीन बसाहटों मे समुदाय की माग पर 90 दिन मे शिक्षा सुविधा उपलब्ध कराने का प्रयास है। बशर्ते 1 किमी. की परिधि में कोई शिक्षा सुविधा उपलब्ध न हो और न्यूनतम 25 बच्चे आदिवासी क्षेत्रों मे और 40 बच्चे सामान्य में 6-14 आयु-वर्ग के उपलब्ध हो।

अकेले वर्ष 97 में औसतन 40 केन्द्र प्रतिदिन की दर से 20,000 से भी अधिक केन्द्र राज्य में प्रारंभ हुए। 24 देशों की 121 प्रविष्टियो के बीच मध्य प्रदेश की शिक्षा गांरटी योजना को सर्वोत्तम नवाचार का "कॉमनवेल्थ अंतर्राष्ट्रीय नवाचार स्वर्ण पुरस्कार" प्राप्त हुआ। जो नवाचार प्रभावशीलता, सामयिकता, महत्व और संन्दर्भो में उपयुक्तता हेतु प्रदान किया गया। भारत सरकार ने "सर्व शिक्षा अभियान" के माध्यम से प्रारभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण हेतु शिक्षा गारटी मॉडल को अपनाया है। इसलिए इस योजना की कमजोरियो और प्रभावशीलता का अध्ययन सामयिक है। विशेपकर शिक्षको की दक्षता के सन्दर्भ मे। इस योजना मे शिक्षक नियुक्ति हेतु स्थानीय व्यक्ति को प्राथमिकता दी जाती है। ऐसी नियुक्ति नीति के अनेक फायदे हैं। जिनमे अधिक समर्पित स्थानीय व्यक्ति शिक्षक के रूप मे प्राप्त हो जाता है जो अपने ही लोगो के उत्थान हेतु सकल्पित होता है। वहीं मुक्त प्रतिस्पर्धा के अभाव मे दक्ष शिक्षक के रूप में बेहतर व्यक्ति मिल पाने की संभावना धूमिल होती है।

कई अवसरो पर नियुक्ति हेतु न्यूनतम योग्यताधारी व्यक्ति भी उपलब्ध नहीं हो पाता है विशेषकर शिक्षिकाओ के नियुक्ति के मामले में। फलस्वरूप हाईस्कूल से भी कम उत्तीर्ण व्यक्ति शिक्षक के रूप मे नियुक्ति पा जाते हैं। शिक्षण में गुणवत्ता के मार्ग मे यह बडी बाधा के रूप मे सामने आती है।

मध्य प्रदेश की "शिक्षा गारंटी योजना" अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत योजना है। इसकी सराहना नवाचार, प्रभावशीलता, सामयिकता, महत्व और सन्दर्भो में उपयुक्तता के लिए की गई है। प्रारंभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण हेतु "सर्वशिक्षा अभियान" कार्यक्रम में इस योजना के मॉडल को अपनाया गया है। संदर्भित लेख में इस योजना में कार्यरत शिक्षकों की विषयगत दक्षता का परीक्षण, उनके प्रशिक्षण की प्रभावशीलता का अध्ययन, शिक्षकों की कमी व उनके कारण तथा सुधार संबंधी उपयुक्त सुझाव आदि का सविस्तार उल्लेख है।

राज्य शासन द्वारा प्राथमिक शिक्षा सुविधा उपलब्ध कराने का प्रयास सराहनीय है। स्थानीय समुदाय का विद्यालय और शिक्षक पर नियत्रण का अधिकार भी प्रशसनीय है। किन्तु शिक्षक नियुक्ति मे गुणवत्ता सुनिश्चित करने के प्रावधान की कमी ही इसकी सबसे बड़ी खामी के रूप मे सामने आ रही है।

हालांकि शिक्षक नियुक्ति के बाद सघन प्रशिक्षण का प्रावधान किया गया है। आरभिक 21 दिवसीय *प्रशिक्षण के बाद प्रतिवर्ष न्यूनतम 10 दिवसीय प्रशिक्षण* दिया जाता है। कार्यक्रम क्रियान्वयन के चार वर्ष पूर्ण होने के उपरान्त शिक्षकों की दक्षता परीक्षण सबंधी शोध परिणाम आश्चर्यजनक रूप से विचारणीय है।

अध्ययन के उद्देश्य

- □ शिक्षा गारटी शालाओं के शिक्षको की तीनों विषय क्षेत्रो पर विषयगत दक्षता का परीक्षण।

- शिक्षा गारंटी शालाओं के शिक्षको को अब तक दिए गए प्रशिक्षण की प्रभावशीलता का अध्ययन।
- यदि शिक्षको मे कमी सामने आती है तो उनके सभावित कारणो का पता लगाना तथा उपयुक्त सुझाव देना।
- यदि आवश्यक हो तो शिक्षक प्रशिक्षण की वैकल्पिक विधि सुझाना।

विधि एवं उपकरण

शिक्षको की दक्षता का परीक्षण तीनो विषयों पर आधारित तीन प्रश्न-पत्रो के माध्यम से किया गया। प्रश्न-पत्र कक्षा पांचवी बोर्ड की परीक्षा हेतु निर्धारित पुस्तक की विषय-वस्तु के ज्ञान दक्षता पर आधारित था। प्रत्येक प्रश्न-पत्र 100 अक के थे। इसके अलावा शिक्षक संबंधी भिन्न जानकारी हेतु शिक्षक जानकारी प्रपत्र भी विकसित किया गया था।

अध्ययन मे जिले में कार्यरत 600 से भी अधिक शिक्षकों में से ठीक 100 शिक्षक/शिक्षिकाओं का परीक्षण किया गया जो शिक्षको की संख्या का लगभग 16 प्रतिशत है। अध्ययन हेतु जिले के सभी 10 विकास खंडों से आनुपातिक रूप से शिक्षक/शिक्षिकाओं का चयन किया गया। शिक्षिकाओं की संख्या कम होने पर भी उन्हें तुलनात्मक दृष्टि से समुचित प्रतिनिधित्व दिया गया ताकि सभी वर्ग के शिक्षको का समावेश हो सके।

परीक्षण एवं जानकारी एकत्र करने हेतु विकास खण्डो मे आयोजित समीक्षा बैठक के दिन शिक्षकों का निर्धारित सख्या मे रैण्डम टेबल के माध्यम से चयन किया गया।

अध्ययन हेतु चुने गए शिक्षक/ शिक्षिकाओं की संख्या

शिक्षक	शिक्षिकाएं	योग
62	38	100

शिक्षकों की शैक्षिक योग्यता संबंधी जानकारी

8वी	10वी	12वी	स्नातक	स्नातकोत्तर	योग
21	12	52	06	09	100

शिक्षक जानकारी प्रपत्र से उभरे तथ्य निम्नानुसार हैं– जिले मे सचालित शिक्षा गारटी शालाओं मे कुल करीब 600 शिक्षक/शिक्षिकाओ मे से 21 प्रतिशत केवल प्रारंभिक शिक्षा 8वी उत्तीर्ण है एवं 12 प्रतिशत शिक्षक/शिक्षिकाए केवल हाईस्कूल उत्तीर्ण हैं। इस तरह 33 प्रतिशत शिक्षक/शिक्षिकाएं निर्धारित न्यूनतम योग्यता से भी कम योग्यताधारी हैं। जबकि उच्च माध्यमिक परीक्षा उत्तीर्ण शिक्षक 52 प्रतिशत, स्नातक 06 प्रतिशत और स्नातकोत्तर उपाधिधारी 09 प्रतिशत हैं। इस तरह 67 प्रतिशत शिक्षक वांछित अथवा उससे अधिक अर्हता रखते है।

कुल 42 प्रतिशत शिक्षको ने सेवा में आने के बाद अपनी शैक्षिक योग्यता में वृद्धि की है, जो कि शिक्षा गारंटी शालाओं के शिक्षको मे उच्च शिक्षा के प्रति रुचि दर्शाता है। शैक्षिक योग्यता मे वृद्धि मे प्रमुख बाधा आर्थिक परिस्थिति के रूप मे सामने आई है। चूकि ये सभी शिक्षक मात्र रु. 1000/- प्रतिमाह मानदेय के रूप मे पाते है ऐसी दशा में स्वय के व्यय पर उच्च अध्ययन नि.सदेह दुरूह कार्य है। करीब 87 प्रतिशत शिक्षक उच्च शिक्षा हेतु इच्छुक प्रतीत हुए है।

65 प्रतिशत शिक्षकों ने अब तक प्राप्त विभिन्न प्रशिक्षणों मे. से स्व-अधिगम सामग्री से प्राप्त प्रशिक्षण की सराहना की है जो शिक्षक के विकास हेतु कारगर एव प्रभावी विकल्प दर्शाता है।

अध्ययन के दौरान भाषा, गणित एव पर्यावरण अध्ययन कें प्रश्न-पत्रो में शिक्षक/शिक्षिकाओं के प्रदर्शन का विस्तृत विश्लेषण किया गया है। विशेषकर पर्यावरण अध्ययन के क्षेत्र मे यह तथ्य उभर कर सामने आया है कि स्थानीय शिक्षक को जहां स्थानीय परिस्थिति को समझने और उसके अनुरूप कार्य करने में सुविधा होती है वहीं उन्हीं कारणों से शिक्षण कमजोर भी होता है। उदाहरणार्थ– देश के दो प्रमुख रेल मार्ग और उन पर पडने वाले तीन स्टेशनो के नाम लिखने के प्रश्न पर दूरस्थ वनाचलों मे कार्यरत स्थानीय शिक्षकों में से मात्र 7 प्रतिशत शिक्षक/शिक्षिकाए संतोषप्रद उत्तर दे पाए। शेष ने केवल हवाई अनुमान लगाने की कोशिश की व स्थानीय आसपास के स्टेशन यथा रायपुर, बिलासपुर, दुर्ग के नाम ही लिख पाए। बाहरी दुनिया के ज्ञान से सर्वथा वंचित शिक्षक/शिक्षिकाओ का प्रदर्शन अपेक्षित

लिए गए परीक्षण में शिक्षक/शिक्षिकाओं की उपलब्धि

क्रमांक व विषय		शिक्षक/शिक्षिकाओं की उपलब्धि							
		20 से 30	31 से 40	41 से 50	51 से 60	61 से 70	71 से 80	81 से 90	90 से अधिक
1	हिन्दी	02	08	13	30	26	15	05	01
2	पर्यावरण अध्ययन	15	16	27	22	13	05	02	—
3	गणित	01	05	04	14	28	28	17	03

अनुमान के अनुरूप ही निकला।

सम्पूर्ण अध्ययन से जो तथ्य उभर कर सामने आया है वह कुछ इस तरह है—

- करीब-करीब सभी शिक्षक/शिक्षिकाओं मे व्यवस्थित अध्ययन आदतों की कमी है; वे सीखने के वाछित कौशलों से भी वचित हैं।
- जिला मुख्यालय/शहर से दूर वनांचलो, ग्रामीण क्षेत्रो मे बच्चो के लिए उपलब्ध पुस्तको के अलावा अन्य पठन-सामग्री से वे सर्वथा वचित हैं। चूकि वे मात्र रु. 1000/- मानदेय पाते हैं। अतः किसी तरह की पठन-;सामग्री क्रय कर पाने की अपेक्षा बेमानी है और यदि क्रय करना भी चाहे तो शिक्षको के लिए आवश्यक वाछित सामग्री का भी अभाव है। उन्हें कोई सन्दर्भ ग्रंथ या स्रोत सामग्री भी उपलव्ध नही कराई जाती है।

निष्कर्ष

- स्थानीय शिक्षक नियुक्ति की नीति नि·संदेह शिक्षक अनुपस्थिति, बाहरी शिक्षक और ऐसी ही अन्य समस्याओं की दिशा मे कारगर विकल्प के साथ ही समय की माग है। साथ ही शिक्षक नियुक्ति मे न्यूनतम शैक्षिक योग्यता संबधी पर्याप्त सावधानी बरतने की सतत् आवश्यकता है। प्राथमिक शिक्षक किसी भी दशा में कक्षा 12वीं से कम न हों।
- अध्ययन मे कई क्षेत्रो में शिक्षक की उपलब्धि अत्यत असंतोषप्रद पाई गई है। शिक्षक की विषय पर गहरी पकड एवं समझ आवश्यक है। अतएव विशेष रूप से विकसित लम्बी अवधि की विषय-वस्तु आधारित सुदूर शिक्षा के माध्यम से ऐसे शिक्षक विकास कार्यक्रम की व्यवस्था से महती आवश्यकता है जो उपयुक्त डिग्री/डिप्लोमा प्रदान करे। इस प्रकार के शिक्षको में उत्तरोत्तर विकास हेतु अध्ययन करते रहने की प्रवृत्ति का विकास होगा।
- सबके लिए एक ही समान प्रशिक्षण कार्यक्रम से शिक्षक/शिक्षिकाओ की व्यक्तिगत कमजोरी दूर नहीं हो पाती है। अतएव शिक्षकों की योग्यता/दक्षता एवं खामियो पर आधारित सामग्री का समुचित समूहीकरण कर अलग-अलग प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
- शिक्षक/शिक्षिकाओ मे परस्पर अन्त·क्रिया को बढावा देने, अन्तर स्कूल, अन्तर विकास खण्ड विनिमय कार्यक्रम का समय-समय पर आयोजन प्रभावी प्रयास होगा।
- प्रस्तावित स्व-अधिगम पर विचार-विमर्श हेतु मासिक समीक्षा बैठके कारगर भूमिका निभा सकी हैं।
- शिक्षक की भूमिका का विस्तार भी समय की महती आवश्यकता है, मामला चाहे पठन-सामग्री विकास, प्रशिक्षण सामग्री की तैयारी हो या विद्यालय/शिक्षक संबंधी कोई भी गतिविधि। शिक्षक की सक्रिय सहभागिता/अवसर एवं दायित्वों का विस्तार उसकी समझ विकास मे सहायक होगा। अन्यथा वे सामग्री के महज उपभोक्ता होते रहेंगे और वांछित लक्ष्य प्राप्ति से वंचित रह जाएंगे। शिक्षक की भूमिका का विस्तार ही उसे एक सतत् गतिशील एवं जिम्मेदार शिक्षक के रूप में परिवर्तित करेगा अन्यथा शीघ्र ही वह अपने शैक्षिक सरोकारों से मुक्त एक परम्परागत शिक्षक की ओर अभिमुख ही होगा। ❑❑

जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान
खैरागढ़, राजनान्दगांव, छत्तीसगढ़

बच्चों में आत्मगौरव की भावना का विकास--प्राथमिक शिक्षक के लिए एक चुनौती

❐ मंजीत सेन गुप्त

स्वस्थ, सुन्दर और सफल जीवन जीने के लिए व्यक्ति मे आत्मगौरव की भावना का होना नितान्त आवश्यक है। आत्मगौरव ही आत्मविश्वास की जननी है और आत्मविश्वास के सहारे ही जीवन में उपस्थित कठिन से कठिन परिस्थिति से जूझने का आत्मबल मिलता है। बच्चो मे आत्म-गौरव का संचार करने, आत्मगौरव की भावना को पोषित करने व उसे निरन्तर बनाए रखने तथा उसमें वृद्धि करने मे प्राथमिक अध्यापको/अध्यापिकाओं का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

यह आत्म-गौरव क्या है? इसके प्रेरक तत्व कौन-कौन से हैं? तथा एक प्राइमरी अध्यापक/अध्यापिका इस प्रक्रिया को किस प्रकार प्रभावित तथा उत्प्रेरित कर सकती है, यही इस लेख की मुख्य अभिधारणा है। आत्मगौरव से तात्पर्य अपने आप मे या अपनी क्षमताओं के प्रति अति-विश्वास का होमा कदापि नहीं है। एक आत्मगौरव युक्त व्यक्तित्व वह होता है जो अपने आप को जानता है, अपनी विशिष्टताओं व क्षमताओं से परिचित होता है तथा उसे अपनी कमजोरियों व सीमाओं का अहसास भी होता है। स्वस्थ आत्मगौरव के विकास में प्यार, दुलार, सवेदना, स्वीकृति, स्वतत्र अभिव्यक्ति, सुरक्षा का ध्यान, लगाव, प्रोत्साहन, भरोसा और दिखावा-मुक्त सम्बन्ध जैसी भावनाओ व प्रतिक्रियाओं का विशेष योगदान होता है। जिस प्रकार पौधों के विकास के लिए जल या नमी की उपस्थिति अनिवार्य है ठीक उसी प्रकर बच्चो के स्वस्थ और सम्पूर्ण विकास के लिए आत्मगौरव रूपी भावनात्मक पोषण अत्यावश्यक है। आत्मगौरव युक्त व्यक्तित्व अपने को मूल्यवान और सुयोग्य देखने की क्षमता रखता है। वह आत्म केन्द्रित नही होता, उसे अपने बारे में वास्तविक और सही ज्ञान होता है। वह अपने अधिकारों के प्रति सजग होता है, अपने जीवन को भगवान का दान मानता है तथा इसी कारण अपने निरालेपन की इज्जत करता है। आत्म-गौरव वाला व्यक्ति सामान्यतया आत्मविश्वासी होता है। ऐसे व्यक्ति दूसरों के साथ स्वस्थ सम्बन्ध जोड़ने में समर्थ होते हैं तथा उत्तरोत्तर अपने को सफल होता हुआ देखते है।

आत्मगौरव युक्त व्यक्ति को अपनी विशिष्टताओं व क्षमताओं का ज्ञान होता है साथ ही उसे अपनी कमजोरियों तथा सीमाओं का भी अहसास होता है। आत्म-गौरव के विकास में प्रेम, संवेदना, स्वीकृति, स्वतंत्र अभिव्यक्ति, सुरक्षा, लगाव, प्रोत्साहन, विश्वास, बनावटीपन से युक्त जैसी भावनाओं और प्रतिक्रियाओं का विशेष योगदान होता है। अतः अध्यापक अपनी बुद्धि, अनुभव व विवेक द्वारा बच्चों में इस गुण का विकास कर उन्हें सफल नागरिक बनाने का प्रयास करें।

इसके विपरीत निम्न आत्म-गौरव वाले व्यक्ति साधारणतः नकारात्मक स्व-बिम्ब और कमजोर स्व-अभिधारणा वाले होते हैं। इसके फलस्वरूप उनकी आपसी सम्बन्ध स्थापित करने की योग्यता, सफलता के अनुभव तथ स्वतत्र आत्माभिव्यक्ति मे बाधा उत्पन्न होती है। ऐसे बच्चे कई बार अपने आत्मविश्वास की कमी छिपाने के लिए उग्र व्यवहार का परिचय देते हैं। जहां एक ओर इन्हें सामाजिक वातावरण प्रभावित करते है वही अपनी नकारात्मक सोच के द्वारा वे अपने आस-पास के वातावरण को प्रभावित करते हैं। उदाहरणार्थ एक क्रोधी और निराश बच्चा अपने परिवार और विद्यालय दोनो मे क्रोध और निराशा के वातावरण की सृष्टि करता है। साथ ही जब कोई अध्यापक/अध्यापिका किसी बच्चे को समस्यात्मक बच्चे की संज्ञा देती है तो उसका आत्मगौरव निम्नतम् स्तर पर पहुंच जाता है तथा उसके

मन में निराशा की भावना और बलवती हो जाती है।

इस संदर्भ में यह भी स्मरण योग्य है कि आत्मगौरव के विकास की प्रक्रिया सामान्यतः धीमी होती है। अध्यापक/अध्यापिकाएं और माता-पिता जो आमतौर पर आत्मगौरव की भावना के विकास में सहायक होते हैं उनमें धीरज और अध्यवसाय जैसे गुणों का होना अत्यावश्यक है। प्राइमरी स्तर पर बच्चों और अध्यापक/अध्यापिकाओं के बीच एक ऐसा अनूठा सम्बन्ध होता है कि अध्यापक/अध्यापिका अध्यापन कर्म के साथ ही साथ एक शिक्षार्थी की भूमिका भी अनायास ही ग्रहण कर लेती है। बच्चे अपने व्यवहार और हाव-भाव द्वारा सदैव उन्हें सिखाते रहते हैं कि उन्हें किस प्रकार सिखाना चाहिए। उनके 'दुख-दर्द' पर कैसे महरम पट्टी की जाए, उन्हें मार्गदर्शन और परामर्श कैसे दिया जाए। बच्चों के निकट सम्पर्क में रहकर ही अध्यापक/अध्यापिका की सृजनात्मकता का विकास होता है, वह पढ़ाना, मातृवत् प्यार देना, डांटना, परामर्श देना सीखती है।

वास्तव में विद्यालय परिवेश मे वयस्क अध्यापक/अध्यापिकाएं और नन्हें-मुन्ने बच्चे भावनात्मक और आध्यात्मिक रूप से एक-दूसरे से जुड़े रहते हैं। वे एक-दूसरे को तथा परिवेश को निरन्तर प्रभावित करते रहते हैं। बच्चो में आत्मगौरव की भावना के विकास क्रम को समझने के लिए निम्न सिद्धान्तों पर अमल करने की आवश्यकता होगी।

आत्म-गौरव के विकास की प्रकिया में पहला कदम है बच्चों के साथ मधुर सम्बन्ध स्थापित करना। अध्यापक/अध्यापिका को यह समझना होगा कि सौहार्द्रपूर्ण आपसी सम्बन्धो पर ही मानव जीवन केन्द्रित है। बच्चों के साथ निर्मित यह सम्बन्ध प्यार, विश्वास और देख-रेख की नींव पर टिका होता है। इस सदर्भ मे एक उत्तम सिद्धान्त है– 'आप हमेशा बच्चों को उपलब्ध रहे। उन्हे जब भी आपकी आवश्यकता हो आप तक सुगमता से पहुंच सके। जब भी कोई बच्चा आपका ध्यान आकर्षित करे तो यदि आप उस समय दूरभाष पर हो, दूरदर्शन पर कार्यक्रम देख रही हों, कुछ लिख रही हो या फिर पुस्तक अथवा समाचार-पत्र पढ़ रही हों उन सबको अस्थायी तौर पर छोड़ कर बच्चे की बात को सुनें, उसकी मदद करे। यदि आपका कार्य अत्यावश्यक हो तो बच्चे से पांच मिनट का समय मांग ले तथा उन्हें आश्वस्त कर दें कि तत्पश्चात् आप उनकी ओर पूरा ध्यान देंगे। जब बच्चों को यह विश्वास हो जाता है कि आप उनके साथ रहने के लिए उनकी बात सुनने के लिए, उनकी मदद करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं तो उनके आत्मगौरव मे बढ़ोत्तरी होती है।

बच्चो की बात सुनते समय एक अच्छे श्रोता का परिचय दें। बच्चे क्या कर रहे हैं, कैसा महसूस कर रहे है आदि। वे आपको बताना चाहें तो उनकी बात सुनने के लिए आप न केवल तत्पर रहें अपितु बिना कोई राय दिए उनकी बात को पूरी तरह सुनें। ऐसा होने पर वे आपका भी सम्मान करेंगे और अपने को भी मूल्यवान समझने लगेंगे। उनकी बात को ध्यानपूर्वक सुनने मात्र से उन्हें अपने टूटे हुए आत्मगौरव को पुनः स्थापित करने में मदद मिलती है।

इसी क्रम में एक अन्य महत्वपूर्ण सिद्धान्त है बच्चों का नाम याद रखना और उन्हें नाम से ही सम्बोधित करना। और भी अच्छा हो यदि उनके नाम के साथ-साथ उनके दोस्तों, भाई-बहनो के नाम भी याद रख सकें, वार्तालाप में इनका समुचित प्रयोग करने पर वे आश्वस्त होते हैं कि आप उनके जीवन से कितनी निकटता से जुड़े हैं। उन्हें तथा उनसे स्थापित सम्बन्धों को आप कितना महत्व देते हैं।

सम्बन्ध स्थापना की यह प्रक्रिया द्विपक्षीय होनी चाहिए। जहां आप उनकी हर बात सुनने को तैयार हैं वहीं उन्हें भी आपकी बातों को ध्यानपूर्वक सुनना है। अपने विचारों,. सूचनाओं और सुख-दुःख की बातों का आदान-प्रदान दोस्ती या विश्वास का वातावरण तैयार करने में सहायक और मूल्यवान सिद्ध होता है। बच्चों के आत्मगौरव में विशेष वृद्धि तब होती है जब उन्हें यह अहसास होता है कि आप उनके विचारों या सुझावो को उचित महत्व देते हैं और उन पर भरोसा कर अपनी निजी बातों को भी उनसे बांटते है।

बच्चो का प्रेम और विश्वास अर्जित करने के लिए उनके समक्ष सदैव अपनी वास्तविक छवि ही प्रस्तुत कीजिए, बनावटीं कदापि नहीं। किसी भी प्रकार का मुखौटा ओढ़ना सम्बन्ध के बीच दरार उत्पन्न कर सकता है। बच्चो को धमकाने या डराने की प्रवृत्ति से बचें।

आत्मगौरव को चोट पहुंचाने वाला सबसे बड़ा कारक है– भय। अपने प्रश्नों से, व्यवहार से, बातचीत से ऐसा परिवेश बनाएं जिसमें बच्चे अपने को सुरक्षित महसूस कर सकें। उनमें किसी भी प्रकार के अनावश्यक भय का संचार न हो। कोई भी ऐसी परिस्थिति का सृजन न करें जिसमे उन्हें उलाहना का सामना करना पडे, उलझन में पड़ना पड़े या फिर लज्जित होना पड़े। साथियों के सामने लज्जित होने के दूरगामी दुष्परिणाम हो सकते हैं। यह बच्चे के स्व-बिम्ब और आत्म-गौरव को तहस-नहस कर सकता है।

आत्मगौरव की भावना में वृद्धि का एक निश्चित और प्रमुख कारक है– सफलता जो आत्मगौरव की वृद्धि के लिए सबसे प्रभावशाली पोषण जुटाती है। अतः दैनिक पठन-पाठन तथा अन्य क्रियाकलापों मे ऐसी परिस्थितियां जान-बूझ कर उत्पन्न करें जहां सफलता प्राप्ति की संभावनाएं प्रचुर हों तथा असफल होने की आशका नहीं के बराबर हो। किसी सफल क्रिया की समाप्ति पर उन्हें सांकेतिक तोहफे देना उनके प्रति स्नेह और चिंता का द्योतक होता है।

बच्चो के आत्म-गौरव के लिए यह भी महत्वपूर्ण है कि आप यह समझे कि वे प्यार के पात्र इसलिए भी है क्योकि उनमें अपनी कुछ क्षमताएं हैं जिनका वे प्रयोग कर सकते हैं। उनको महत्व केवल इसलिए नही दिया जाता क्योंकि वे छोटे हैं अपितु इसलिए भी कि वे भी कुछ बनने की क्षमता रखते हैं, कुछ उपयोगी कार्य के सम्पादन में हाथ बंटा सकते हैं तथा सुलेख, चित्रकला, भाव-भंगिमाओं के माध्यम से अपनी रचनात्मक व सृजनात्मक प्रतिभाओं का प्रदर्शन भी कर सकते हैं। अध्यापक/अध्यापिका को चाहिए कि बच्चो की रचनाओं को महत्व दें, उनके नाम, दिनांक इत्यादि लिखकर उनकी प्रशंसा भी करें। बच्चे यह अनुभव करें कि वे उत्तरोत्तर प्रगति कर रहे हैं। सफलता के ऐसे मापदण्डो का जो प्रत्यक्ष है, स्वीकृत किए जाते है तथा प्रोत्साहित होते हैं उनका आत्म-गौरव पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

बच्चों को समय-समय पर ऐसे मौके दीजिए जब वे आपका छोटा-मोटा काम कर सकें। आपकी मदद करके उन्हें आत्म सतोष मिलेगा, साथ ही उन्हें अपनी योग्यता पर भी भरोसा होगा। बच्चो पर आप द्वारा आरोपित भरोसा या विश्वास आत्मगौरव को स्थायी करने मे मददगार साबित होगा।

बच्चो मे भावनाओं का ज्वार सा होता है। आवश्यकता है इन भावनाओं को दिशा देने की। बच्चों को अबाध रूप से भावनाओं को व्यक्ति करने दें। प्रत्येक भावना जैसे क्रोध, दया, प्रेम, घृणा आदि का जीवन मे महत्व होता है अतः उन्हें कुंठित न होने दें। उदाहरण के लिए क्रोध अपने आप मे एक खराब भावना नहीं है। जीवन में कई ऐसे अवसर आते हैं जब क्रोध के बिना वाछित फल की प्राप्ति नही होती। परन्तु क्रोध पर उचित नियंत्रण आवश्यक हो जाता है। क्रोध कब, किस पर, कितनी मात्रा में किया जाए यह निर्धारित करने की योग्यता होनी चाहिए।

उपर्युक्त विवेचन द्वारा बच्चों में आत्म-गौरव के महत्व और उसके सृजन की प्रक्रिया मे अध्यापक/अध्यापिका की भूमिका पर इंगित भर किया गया है। अपनी बुद्धि और विवेक का प्रयोग कर वे अन्य अनेक नवीन परिस्थितियों, उपायों तथा सम्बन्धों का सृजन कर सकते हैं जिनका जिक्र स्थानाभाव के कारण नहीं किया जा सका। इस प्रचेष्टा में हास-परिहास, कथा-कहानियां, रोचक व प्रेरणात्मक घटनाएं आदि का भी सहारा लिया जा सकता है। बच्चो के आत्म-गौरव की सृष्टि व वृद्धि में अध्यापक/अध्यापिकाओं का योगदान चुनौती भरा काम है। समस्या की ओर सकारात्मक रुख रखते हुए विश्वास के साथ अग्रसर होकर ही इस दिशा में अनुकरणीय उपलब्धि प्राप्त की जा सकती है। ❑❑

पं. सुन्दर लाल शर्मा केन्द्रीय व्यावसायिक
शिक्षा संस्थान, 131, जोन-II एम. पी. नगर
भोपाल, म.प्र.

बच्चों की शैक्षिक असफलता व अधिगम विकलांगता

❒ अर्चना श्रीवास्तव

विद्यालयों में शिक्षक जब अध्यापन करते है तब कक्षा के वातावरण मे उन्हे विभिन्न विद्यार्थियो से विविध अनुभव मिलते है। विद्यार्थियो के लिए पूर्ण प्रयत्न करने के उपरान्त भी सम्पूर्ण कक्षा से उन्हे अपेक्षित परिणाम नही मिलते। यहां अपेक्षित परिणाम से तात्पर्य विद्यार्थियो की शैक्षिक सफलता है। शिक्षक अपनी कक्षाओं मे बच्चों का जब मूल्यांकन करते है तो बच्चों की असफलता न केवल शिक्षक को परेशान करती है बल्कि बच्चों के अभिभावक एवं विद्यार्थी स्वय भी निराशा का अनुभव करते है। अभिभावक और शिक्षक दोनों ही स्वयं इस निष्कर्ष पर पहुंचने लगते है कि शायद बच्चा मद बुद्धि है अथवा परिश्रम की कमी है। सामान्यत विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि के पीछे कई कारकों का योगदान रहता है। इन कारको मे मुख्यत· वातावरण, साधन, पाठ्यक्रम एव विद्यार्थी की बुद्धि क्षमता अथवा बुद्धिलब्धि, उसका परिश्रम इत्यादि पर ही विचार किया जाता है। परन्तु इनके साथ अन्य कुछ कारक भी बच्चो की शैक्षिक सफलता-असफलता एवं उपलब्धि पर अपना प्रभाव डालते है।

बच्चो की शिक्षा पर अब मनोचिकित्सकों, मनोवैज्ञानिकों, समाज सुधारको का ध्यान जाने लगा है, वे सदैव इस सबंध मे खोज करते रहते है। मंद गति से सीखने वाले बच्चो की श्रेणी इसी का परिणाम है। ये बच्चे अपनी कक्षा मे कई बार अनुत्तीर्ण होते है। मनोचिकित्सकों से जाच कराने पर पाया गया कि वे "स्लो लर्नर्स" (Slow-learners) या मंदगति से सीखने वाले बच्चों की श्रेणी मे आते हैं। इस सदर्भ में इससे पूर्व शिक्षकों एवं अभिभावको मे भी अब तक कोई जागरूकता दिखाई नही देती। इस श्रेणी के अतिरिक्त एक और श्रेणी होती है– 'अधिगम विकलांगता या लर्निग डिसएबिलिटी' (Learning disability)। यहा बच्चों की शैक्षिक असफलता के सदर्भ मे इसी कारक की चर्चा की गई है।

अधिगम विकलांगता किसी भी सामान्य अथवा उच्च बुद्धि स्तर के छात्र में हो सकती है। ऐसे छात्रों की वास्तविक बौद्धिक क्षमता तथा उपलब्धि स्तर के बीच में सार्थक असंगति होती है। अधिगम विकलांग बच्चों में भी व्यक्तिगत भिन्नता पाई जाती है। शिक्षक का यह दायित्व है कि वह अपनी कक्षा में इस तरह के बच्चों की शीघ्र ही पहचान कर, उनकी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए निदानात्मक कार्यक्रम बनाए ताकि उनकी शैक्षिक असफलता को मंदबुद्धि वाले या कम परिश्रमी होना न समझा जाए।

यह किस प्रकार की मंद बुद्धिता या पिछडापन नहीं है। इसमे बच्चे मदगति से भी नही सीखते। अधिगम विकलागता इस शब्द से अधिकांश अभिभावक एव शिक्षक अपरिचित है। वास्तव में इस स्थिति में बच्चा मद बुद्धि नही होता बल्कि सामान्य बुद्धि स्तर अथवा सामान्य से भी उच्च बुद्धि स्तर का हो सकता है। इस तरह से ये बच्चे अलग श्रेणी में आते है। एक तरह से कह सकते हैं कि बच्चे बुद्धि क्षमता होते हुए भी नही सीख पाते हैं। जब ऐसे बच्चो की सख्या बढ़ गई जो पढने, लिखने व गणित के कुछ विशिष्ट कार्य करने मे असमर्थ थे तो 1960 के लगभग इस ओर लोगो का ध्यान आकृष्ट हुआ, तब शिक्षाविदों ने इस ओर ध्यान देना शुरू किया। 6 अप्रैल, 1963 में डा सेम्युअल किर्क ने शिकागो में ऐसे ही चिन्तित अभिभावकों के सम्मेलन मे 'अधिगम विकलागता' शब्द का प्रयोग किया। सामान्य रूप से अधिगम विकलाग बच्चे उन्हें कह सकते है जिनकी –

– बौद्धिक क्षमता सामान्य या सामान्य से अधिक होती है।

– किसी प्रकार का दृष्टिदोष नही होता। (दृष्टि 6/6)
– किसी प्रकार का श्रवण सबधी दोष नहीं होता। (श्रवण शक्ति 20 डी.बी.)
– किसी प्रकार का शारीरिक दोष नही होता। (हाथ-पैर, ऊगलियो की गति सामान्य)
– किसी प्रकार का सवेगात्मक विघ्न नही होता।
– किसी प्रकार का सांस्कृतिक, आर्थिक, वातावरणीय कुप्रभाव नही होता।

लेकिन–

– उनकी वास्तविक बौद्धिक क्षमता तथा वास्तविक उपलब्धि स्तर के बीच में सार्थक असगति होती है।
– पर्याप्त सुविधा, रुचि व प्रेरणा के बावजूद पढने-लिखने या वर्तनी या गणित मे सदैव गलतियां करते है।

अक्सर देखा गया है कि माता-पिता अपने बच्चो के सदर्भ में कहते हैं कि उनका बच्चा बहुत बुद्धिमान है, विभिन्न क्षेत्रों मे उनके बच्चे की बुद्धिमता प्रदर्शित भी होती है, इसके बावजूद बच्चा किसी विशिष्ट विषय में असफल होता है।

एक छात्रा द्वारा विद्यालय में मिले गृहकार्य को न करने की वजह थी "गॉड" की वर्तनी 'डॉग' लिख देना। उसके माता-पिता का कहना था कि वह कविता बिना अटके सुनाता है पर लिखते समय इतनी साधारण सी गलती कर दी।

इसी तरह कक्षा आठ का एक छात्र गणित विषय में इसलिए असफल हो गया, उसके शिक्षक ने देखा कि वह बालक अक्सर गुणा करते समय इकाई के स्थान पर दहाई का अक लिख दिया करता है।

इस सदर्भ में तत्रिका मनोविज्ञानी का कहना है ये बच्चे पाठन उच्चारण दोष–डिस्लेक्सिया (Dyslexıa) के शिकार है। अल्बर्ट आइंस्टिन, थॉमस अल्वा एडीसन और लियोनार्दो द विची भी इसके शिकार थे। लगता है ऐसे विशिष्ट प्रतिभाशाली लोग भी विद्यालयीन शिक्षा में कुछ कारणों से असफल रहे थे।

अत. यह आवश्यक है कि प्राथमिक स्तर पर ही अधिगम विकलाग बच्चो की पहचान कर ली जाए। जिससे बेहतर विशेष शिक्षण के द्वारा इन बच्चों की शिक्षा मे बौद्धिक क्षमता के अनुरूप उपलब्धि प्राप्त हो सके। प्राथमिक स्तर पर शिक्षक एव अभिभावक अपने बच्चो में अधिगम विकलागता पहचानने के लिए निम्न सामान्य लक्षणो का ज्ञान महत्वपूर्ण है।

अधिगम विकलांग बच्चों द्वारा कक्षा मे सामान्य रूप से प्रदर्शित किए जाने वाले व्यावहारिक व शैक्षिक लक्षण –

सामान्य व्यवहारगत विशेषताएं

- ☐ बच्चो की बौद्धिक क्षमता और उनकी शैक्षिक उपलब्धि में भिन्नता।
- ☐ क्रियात्मक विकास सही तरीके से होने के बावजूद मासपेशयों में आपस में समन्वय नहीं पाया जाता। कुछ शारीरिक व क्रियात्मक कौशलो को ठीक से नहीं कर पाते जैसे– गेद पकडना, लिखने के लिए पेन्सिल नियंत्रण इत्यादि।
- ☐ दिशा के संबंध में कमजोर समझ, दाएं और बाएं का भ्रम।
- ☐ समय की समझ में कमजोर होना।
- ☐ अवधान केन्द्रित करने मे कमजोर। वातावरण मे होने वाली कोई भी आवाज से शीघ्र विचलित हो कर कक्षा मे ध्यान केन्द्रित नही कर पाते।
- ☐ इन बच्चों की स्मरण शक्ति में गड़बडी होती है। यह अक्षर, शब्द/वर्तनी (Spellıng), अकगणित की संक्रियाओ और दिशाओ को जल्दी भूल जाते है।
- ☐ कभी-कभी जब इन बच्चो का ध्यान एक ही कार्य पर स्थिर हो जाता है जबकि इसकी आवश्यकता नहीं होती जैसे– कोई अक्षर या शब्द लिखना शुरू किया तो उसी से पूरा पृष्ठ भर दिया।
- ☐ इस तरह के बच्चों में आवेग अधिक देखा जाता है। परिणाम की चिन्ता किए बिना बोल देना इन बच्चो के व्यवहार में देखा गया है।
- ☐ इन बच्चो में वाणी संबधी दोष न होते हुए भी ये अपनी बात को स्पष्ट रूप से नहीं कह पाते हैं। कभी-कभी ऐसे आवेग का कारण भी देखा जाता है।

- इन बच्चो मे प्रत्यक्षीकरण की समस्या भी देखी जाती है। देखने-सुनने के बाद भी वस्तुओ को समझ नही पाते।

पढ़ने संबंधी समस्या

- हिचकिचाहट के साथ धीमी गति से पढना।
- पढ़ते समय बीच-बीच में शब्द छोड़ना, कभी-कभी पूरा वाक्य छोड़ देना या फिर से वही भाग पुन. पढ़ देना।
- पढ़ते समय होने वाली सामान्य गलितयां– एक जैसे दिखने वाले वर्णों मे भ्रम जैसे– d/b, P/d, m/w, या क/फ/छ/ध।
- उल्टा शब्द पढ़ना जैसे– on/no, saw/was, act/cat या कल/लक, बस/सब इत्यादि।
- शब्दो का उच्चारण गलत तरीके से करना या गलत क्रम मे शब्दों को पढना। जैसे– felt/left, act/cat, कमल/कलम, गरम/मगर इत्यादि।
- पढ़ते समय अक्षरों को छोड़ देना जैसे– कमल को कल पढ़ना।
  प्रारम्भिक वर्णों का गलत उच्चारण करना जैसे– buck/duck, Put/but, या दवा/हवा इत्यादि।

गणित सम्बंधी समस्या

- विभिन्न माप (बड़ा/छोटा) विभिन्न आकृति (ΔO□▭), मात्रा (कम/अधिक) मे अन्तर करने की समस्या।
- अकों को पहचानने मे भ्रमवश अन्तर नहीं कर पाते जैसे– 6-9, 3-8, 5-2 इत्यादि।
- स्थानीय मान पहचानने में भ्रम।
- जोड़, घटाव, गुणा और भाग की मूलभूत संक्रियाए करने मे कठिनाई।
- भिन्न को समझने मे कठिनाई। भिन्न के जोड़, घटाव करने मे कठिनाई।
- दशमलव की बड़ी व छोटी सख्या पहचानने में कठिनाई।
- पहाड़े याद करने की समस्या।
- अको को गिनने की समस्या।
- अंको का क्रम उलटकर लिख देना जैसे 21-12, 51-15 इत्यादि।
- जिस तरह से उच्चारण करता है उसी तरह अंकों को लिखता है। जैसे 150050 (पन्द्रह सौ पचास)।
- अकगणित की शब्दावली और चिन्ह समझने में कठिनाई।
- समस्या को विश्लेषित करने मे शब्दों के चयन की कठिनाई।

लिखने सम्बन्धी समस्या

- मांसपेशियों में आपसी समन्वयन ठीक से नही होने के कारण कुछ क्रियात्मक कौशलो को ठीक से नही कर पाते– जैसे लिखने के लिए पेन्सिल नियत्रण। इस कारण लिखावट वहुत खराब होती है।
- लिखते समय दाए व बाए का भ्रम होता है।
- शब्द / वाक्यो को नकल करने मे कठिनाई।
- लिखते समय कुछ अक्षर/शब्द छोड़ देता है।
- एक ही वाक्य/शब्द से पूरा पृष्ठ भर देता है।

सामान्य बच्चो की तरह अधिगम विकलांग बच्चो में भी व्यक्तिगत भिन्नता पाई जाती है। आवश्यक नही है कि उपरोक्त सभी लक्षण सभी अधिगम विकलांग वच्चों मे दिखाई दे। सभी अधिगम विकलांग बच्चो के लक्षणों मे भिन्नता देखी जाती है। एक शिक्षक की जिम्मेदारी हो जाती है कि वह अपनी कक्षा में इस तरह के बच्चों को पहचाने और उनकी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए निदानात्मक कार्यक्रम बनाए। इस क्षेत्र मे शोध कार्य किए जा रहे है। शिक्षाविदो, मनोचिकित्सको का ध्यान इस ओर जाने लगा है। शोध कार्यो के आधार पर निदानात्मक कार्यक्रमों से भी बच्चो के उपचार संभव है। इसके अतिरिक्त यहां दिए गए लक्षणों के आधार पर उपचारात्मक कार्यक्रम बना सकते हैं ताकि बच्चो की शैक्षिक असफलता को उनकी कमजोर बुद्धि अथवा परिश्रम की कमी के रूप में न देखा जाए। □□

लोकमान्य तिलक शिक्षा महाविद्यालय
उज्जैन, म.प्र.

भाषा-अधिगम में मस्तिष्क की भूमिका

❐ उषा शर्मा

भाषा स्वय मे एक जटिल किन्तु व्यवस्थित प्रक्रिया है। भाषा की उत्पत्ति, भाषा का मस्तिष्कीय आधार, भाषाई क्षमता– कुछ ऐसे प्रश्न है जिनके सबंध मे अनेक अनुसधान हुए एव हो रहे है। अनेक भाषाविद्, तंत्रिका वैज्ञानिक, मनोवैज्ञानिक अपने-अपने ढंग से इन प्रश्नों के उत्तरों की खोज में व्यस्त हैं।

मनुष्य के जीवन मे भाषा के महत्त्व से हम सभी परिचित है। भाषा विचारो की अभिव्यक्ति का एक सशक्त माध्यम है। फिर, चाहे यह अभिव्यक्ति मौखिक हो अथवा लिखित। भाषा हमारे शैक्षिक जीवन में भी एक विशिष्ट महत्व रखती है। इसका कारण है– भाषा शिक्षा अर्जित करने के माध्यम के रूप मे भी प्रयुक्त होती है। विद्यालयी जीवन मे हम भाषा को न केवल एक विषय के रूप मे पढ़ते है अपितु अन्य विषयो को पढने-पढाने का माध्यम भाषा ही है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि भाषा की सही समझ, भाषा पर अधिकार अन्य विषयों को पढने मे सहायक है।

यह तो हम सभी जानते है कि विश्व में अनेक भाषाएं बोली जाती है। इन भाषाओ मे अतर होते हुए भी अनेक समानताए दृष्टिगत होती हैं। उदाहरण के लिए– सभी भाषाए बोली जाती है, उनमे वाक्यो का प्रयोग होता है, वाक्यो को सार्थक खडो मे विभक्त किया जा सकता है, वाक्यो मे एक निश्चित व्यवस्था होती है आदि। विभिन्न भाषाओ के वाक्यो, शब्दो और ध्वनियो मे से सर्वाधिक समानता ध्वनियों में प्राप्त होती है क्योकि मनुष्य का वाग्यत्र (जिसके द्वारा हम बोलते है, उच्चारण करते है) सर्वत्र समान है। शब्द-भडार मे सबसे अधिक अतर प्राप्त होता है। वाक्य-रचना का स्थान बीच में है। इसका कारण है किसी भी भाषा का शब्द-भडार असीमित होता है। उसमे नवीन शब्द आते रहते हैं और अनेक शब्दो का रूप भी परिवर्तित होता रहता है। जबकि किसी भी भाषा मे वाक्य-रचना के नियम भी सीमित होते हैं। भाषाओ की यह समानता इस बात का प्रमाण है कि भाषा सबधी क्षमता का कोई न कोई ऐसा आधार अवश्य है जो सर्वत्र समान है। (हेमचंद्र पाडेय, भाषा, मस्तिष्क और चेतना)

भाषा की दृष्टि से मस्तिष्क के गतिक वाक् क्षेत्र, वर्निक क्षेत्र, कोणीय कर्णक, चापाकार पूलिका महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं। गतिक वाक् क्षेत्र को ब्रोका क्षेत्र भी कहते हैं। यह वाक्-उत्पादन का कार्य करता है। वर्निक क्षेत्र वाक्-बोधन एवं अनुश्रवण का कार्य करता है। कोणीय कर्णक, प्राथमिक श्रवण एवं दृष्टि क्षेत्रों को जोड़ता है। चापाकर पूलिका ब्रोका एवं वर्निक क्षेत्रों को जोड़ती है। यदि मस्तिष्क के इन क्षेत्रों को किसी प्रकार की क्षति पहुंचती है तो भाषाघात नामक भाषा-विकार उत्पन्न होता है। शैक्षिक प्रक्रिया में भाषा-विकारों की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए और सही कारण का पता लगाते हुए उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए।

इस सदर्भ मे एक अन्य ध्यातव्य बिदु यह भी है कि किसी भी भाषा को सीखने के कतिपय निश्चित नियम अथवा प्रक्रियाएं है। उदाहरण के लिए भाषा अपने आसपास के वातावरण से ग्रहण की जाती है। एक छोटा

बालक जो कुछ सुनता है उसे ग्रहण करता चला जाता है और उस सुनी गई सामग्री को ही बोलने का प्रयास करता है। यह भाषा-अर्जन की स्थिति है। बालक सुनी गई भाषाई सामग्री के आधार पर भाषा संबंधी अपने कुछ नियम बनाता चलता है। जिसे लघु व्याकरण कहते हैं। उसके इस "लघु व्याकरण" मे भाषा-प्रयोग संबधी सीमित नियम होते है। कालातर में जब वह और अधिक भाषा-प्रयोग से परिचित होता है तो उसका यह लघु व्याकरण विस्तृत होता चलता है। वह आवश्यकतानुसार उसमें आवश्यक परिवर्तन अथवा संशोधन करता चलता है। भाषा का सार्थक प्रयोग करने के लिए वह क्रमश अनेक लघु व्याकरणो की रचना करता है। यही लघु व्याकरण भाषा-प्रयोग मे उसकी सहायता करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि मनुष्य मे कोई न कोई ऐसी क्षमता अवश्य विद्यमान है जिसकी सहायता से वह लघु व्याकरण की रचना करता है।

मनुष्य की भाषिक क्षमता के तीन पक्ष है— तत्रिकीय, श्रव्य, औच्चारिक। श्रव्य पक्ष का सबंध सुनने से है। अपने कथन को भी और किसी दूसरे के द्वारा कहे गए कथन को भी। औच्चारिक पक्ष का सबध भाषा को बोलने से है। तत्रिकीय पक्ष का सबंध मस्तिष्क, उसकी बनावट अथवा सरचना एव तंत्रिका-कोशिकाओ से है। सक्षेप में कहा जा सकता है कि भाषा एव मस्तिष्क का एक अनिवार्य संबध है। भाषा-अधिगम अथवा भाषा सीखने में मस्तिष्क एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है। (हेमचद्र पांडेय, भाषा, मस्तिष्क और चेतना)

आइए, अब यह जानें कि मस्तिष्क की संरचना किस प्रकार की है। मस्तिष्क का स्थान केद्रीय तंत्रिका-तंत्र के अंतर्गत है। सामान्यतः मानव मस्तिष्क का वजन 1380 ग्राम तथा आकार 1400 घन सेंटीमीटर माना जाता है। यह अत्यन्त कोमल होता है तथा वलि रूपी आभास देता है। मस्तिष्क अनेक प्रकार की क्रियाएं करता है, जैसे— सूचनाओं को प्राप्त करना, उनका सग्रह करना तथा उनका विश्लेषण करके आवश्यक सदेश संप्रेषित करना। मस्तिष्क का सबसे बडा भाग प्रमस्तिष्क है। यह प्रमस्तिष्क दो गोलार्धो अथवा भागो मे विभक्त होता है— दाया गोलार्ध एवं बाया गोलार्ध। ये दोनों गोलार्ध किनारे से एक-दूसरे से अलग होते है। परन्तु बीच मे महाततु जाल से परस्पर एक-दूसरे से सबद्ध होते है। इस महाततु जाल में बीस करोड तंत्रिका-कोशिकाएं होती हैं। प्रमस्तिष्क के ऊपर दो प्रकार की परत होती है। ऊपरी परत को प्रमस्तिष्क वल्कुट कहा जाता है जो एक प्रकार से भूरे पदार्थ की 2-4 मिलीमीटर घनी होती है। इस भूरे पदार्थ की परत के नीचे सफेद पदार्थ की परत होती है। प्रमस्तिष्क वल्कुट पर अनेक संवलन तथा नलिकाएं अथवा गड्ढे होते हैं। ऊंचे उठे हुए संवलन को सेरिब्रल जाइरी (एकवचन मे जाइरस) तथा दबी हुई नलिकाओं अथवा दरारों (विदर) को सेरिब्रल सल्सी (एकवचन मे सल्कस) कहा जाता है। यह प्रमस्तिष्क विभिन्न भागो मे बटा होता है। केंद्रीय दरार तथा पार्श्व दरार प्रमस्तिष्क को विभिन्न भागों में विभक्त करती है।

जैसा कि स्पष्ट किया जा चुका है कि मस्तिष्क में दो गोलार्ध होते है। प्रत्येक गोलार्ध पांच विभिन्न खडों में विभाजित होता है। जिनमे से प्रथम चार को प्रमस्तिष्क की सतह पर देखा जा सकता है। शेष पांचवा स्थान प्रमस्तिष्क की सतह पर दृष्टिगत नहीं होता। यह प्रमस्तिष्क का एक गहरा क्षेत्र है। ये पांच खंड इस प्रकार है— ललाट खंड (Frontal Lobe), पार्शिवका खड (Parietal Lobe), शख खड (Temporal Lobe), पश्चकपाल खंड (Occipital Lobe) तथा इंसुला (Insula)। प्रत्येक खड प्रमुख रूप से कुछ विशिष्ट कार्यो को सचालित करता है। जिसका विवरण इस प्रकार है—

ललाट खंड — प्रमस्तिष्क गोलार्ध के अग्रभाग को ललाट खंड कहते हैं। यह प्रमुख रूप से कंकाल पेशियो की ऐच्छिक गतिक क्रियाओं को नियंत्रित करता है। यहीं से स्वर यंत्र, कठ, जीभ, जबड़ों और मुख की पेशियो के संचालन का नियत्रण होता है। इसके अतिरिक्त यह उच्च बौद्धिक प्रक्रियाओं जैसे— चिंतन, अवधान, तर्क, योजना- निर्माण, निर्णय लेना, मौखिक सप्रेषण, स्मृति, संवेग सबंधी अनुक्रियाओ मे भी सहयोग करता है।

पार्शिवका खंड— यह मस्तिष्क का ऊपरी भाग है। यह खड स्पर्श, पीड़ा, तापमान, सतुलन तथा स्वाद जैसी संवेदी

सूचनाओं को ग्रहण करता है तथा उनका मूल्याकन करता है। इसके अतिरिक्त यह खंड वाक्-अवबोधन, विचारों तथा सवेगों के मौखिक उच्चारण का कार्य करता है। वस्तुएं जिस रूप में हाथ मे आती हैं, यह खड उन वस्तुओ की बनावट तथा आकार के सबध मे भी बताता है।
शंख खंड— यह खड ललाट के पश्च क्षेत्र मे होता है। जो लगभग कान के आसपास का मस्तिष्कीय हिस्सा है। शंख खंड मे श्रवण केन्द्र होते हैं। जो कान के भीतरी प्रकोष्ठ से संवेदी "न्यूरॉन्स" ग्रहण करते है। यह खंड श्रव्य एवं दृश्य अनुभवो की स्मृति को भी संग्रहीत करता है। प्राथमिक श्रवण क्षेत्र शख खंड में स्थित है।
पश्चकपाल खंड— यह मस्तिष्क के पीछे वाले भाग मे स्थित है। यह खड प्रमुख रूप से चक्षुओं से सबधित क्रियाओ को संचालित करता है। यह नेत्रो को दिशा देते हुए तथा उसे केंद्रित करते हुए आखो की गति को समन्वित करता है। यह खंड नेत्रों की उत्तेजनाओं को ग्रहण करता है तथा दृश्य उत्तेजनाओं की व्याख्या करता है। प्राथमिक दृष्टि क्षेत्र इसी खंड मे स्थित है।
इंसुला— यह प्रमस्तिष्क का गहन क्षेत्र है जो प्रमस्तिष्क की सतह पर दिखाई नहीं देता। इसके कार्यो के विषय में बहुत कम जानकारी उपलब्ध है। इसकी प्रमुख भूमिका अन्य प्रमस्तिष्कीय गतिविधियों को समन्वित करना है तथा कुछ भूमिका स्मृति से भी संबद्ध है।

यद्यपि प्रत्येक खंड के अपने क्षेत्रीय प्रकार्य हैं तथा अपनी-अपनी सीमाएं है तथापि इनके विषय मे स्पष्ट व निश्चित रूप से कुछ भी कहना कठिन है। विद्वानो का स्पष्ट मानना है कि मस्तिष्क के विभिन्न कार्यो की समझ अधूरी है। प्रमस्तिष्क के संबंध में निम्न बिदु ध्यातव्य हैं—

- मस्तिष्क का प्रत्येक गोलार्ध अथवा भाग सूचनाओ को ग्रहण करता है तथा शरीर के विपरीत भाग से संबंधित गतिक प्रकार्यों को नियत्रित करता है। बायां भाग अथवा गोलार्ध शरीर के दाए भाग को नियंत्रित करता है तथा दायां गोलार्ध शरीर के बाए भाग को नियत्रित करता है।
- यद्यपि दोनों गोलार्ध शरीर-रचना विज्ञान की दृष्टि से लगभग समान प्रतीत होते हैं तथापि प्रकार्य की दृष्टि से दोनों में भिन्नता दृष्टिगत होती है।
- प्रमस्तिष्क के विभिन्न क्षेत्रो के विशिष्ट प्रकार्यो को निश्चित सीमा में नही बांधा जा सकता क्योकि इनकी सीमाएं स्पष्ट रूप से पृथक न होकर परस्पर अतिक्रमित रहती हैं। किसी भी एक क्षेत्र के अनेक भिन्न-भिन्न कार्य हो सकते हैं।

मस्तिष्क का एक रोचक अभिलक्षण यह है कि दोनो गोलार्धो के मध्य एक प्रकार का श्रम-विभाजन होता है। हमारे मस्तिष्क का बाया गोलार्ध सूचनाओं पर तर्क सम्मत ढंग से काम करता है और जटिल गतिक प्रकार्यो, भाषा संबधी क्षमता, गणितीय और वैज्ञानिक समस्याओ को हल करने की कुशलता के लिए उत्तरदायी है। दाए गोलार्ध का संबध सराहना, व्यापक सरचनाओं के प्रत्यक्षीकरण तथा मिलान, अश-पूर्ण का संबंध, देशीय उन्मुखता, सृजनात्मक संवेदनशीलता, सगीत सरचनाओं तथा संवेगात्मक अभिव्यक्ति अथवा अभिज्ञान सबधी प्रक्रियाओ से है। सामान्यत· विश्लेषण परक प्रक्रियाएं बाएं गोलार्ध से और सश्लेषण परक प्रक्रियाए दाए गोलार्ध से जुड़ी हैं।

विभिन्न अध्ययनों ने इस संदर्भ मे यह विचार व्यक्त किया है कि यह श्रम-विभाजन बाए हाथ से कार्य करने वाले व्यक्तियों की अपेक्षा दाए हाथ से कार्य करने वाले व्यक्तियो में अधिक स्पष्ट रूप से प्रकट होता है। यह भी सत्य है कि दोनो गोलार्धो के प्रकार्यों के मध्य एक निश्चित रेखा नही खीची जा सकती।

यहां एक प्रश्न उठता है कि भाषा मस्तिष्क के कौन-से गोलार्ध से संबधित है। सामान्यतः यह माना जाता है कि भाषिक प्रकार्य मुख्य रूप से बाए गोलार्ध के द्वारा संपन्न होते हैं। दाएं गोलार्ध को जो सूचना मिलती है जब यह सूचना ततु-बधों द्वारा बाए गोलार्ध में पहुचती है— बाएं हाथ अथवा बाएं दृष्टि-क्षेत्र को प्राप्त सूचना भी पहले दाएं गोलार्ध में पहुचती है फिर बाएं गोलार्ध मे।

भाषा की दृष्टि से मस्तिष्क के निम्न क्षेत्र महत्वपूर्ण माने जाते हैं—
गतिक वाक् क्षेत्र— वाक् केन्द्र को गतिक वाक् केद्र अथवा ब्रोका क्षेत्र भी कहा जाता है। यह ललाट खड

के निचले संवलन (जाइरस) में स्थिर होता है। ब्रोका क्षेत्र वाक्-उत्पादन (Speech Production) का कार्य करता है।

वर्निक क्षेत्र— यह शख खंड मे स्थित है। इसका स्थान प्राथमिक श्रवण-क्षेत्र तथा कोणीय कर्णक के बीच मे है। यह प्रमुखतः वाक्-बोध एव अनुश्रवण का कार्य करता है।

कोणीय कर्णक (Angular Gyrus)— यह मस्तिष्क के प्राथमिक श्रवण और दृष्टि क्षेत्रो को जोड़ता है।

चापाकार पूलिका (Arcuate Faciculus)— ये ब्रोका और वर्निक क्षेत्रों को जोडने वाला तंत्रिका ततु है।

मस्तिष्क में भाषा सबधी कार्य किस प्रकार सपादित होते हैं— इसका विवरण निम्न प्रकार से है— वागुत्पादन की प्रक्रिया इस प्रकार है— भाषिक संदेश का ढाचा पहले वर्निक क्षेत्र मे तैयार होता है जो चापाकार पूलिका (Arcuate Faciculus) से होकर ब्रोका क्षेत्र में पहुंचता है। ब्रोका क्षेत्र में इस सदेश को उच्चरित या लिखित रूप देने का कार्यक्रम तैयार किया जाता है। फिर यह कार्यक्रम गतिक क्षेत्र (Motor Area) को भेजा जाता है। जहा पेशियों के संचालन का निर्देश दिया जाता है। इसके बाद सदेश उच्चरित या लिखित रूप में अभिव्यक्त होता है। वाक्-पेशियों की एक विशेषता यह है कि उच्चारण में सक्रिय होने के साथ-साथ प्रतिश्रवण की व्यवस्था भी उनके द्वारा होती है। बोलने के साथ-साथ स्वयं अपने कथन को सुनकर उसकी जांच कर लेना भी आवश्यक होता है। अतः वाक्-पेशियां तंत्रिका-आवेगों के द्वारा वर्निक क्षेत्र को संकेत भी भेजती हैं और इस प्रकार प्रतिश्रवण मे भी सहायक होती हैं। (हेमचंद्र पांडेय, भाषा, मस्तिष्क और चेतना)

वाग्बोध (सुनकर समझना) की प्रक्रिया इस प्रकार है— उच्चरित संदेश पहले प्राथमिक श्रवण-क्षेत्र में जाता है तथा लिखित संदेश (यदि लिखित रूप में किसी बात को कहा गया है) प्राथमिक दृष्टि क्षेत्र को जाता है। फिर यह संदेश कोणीय कर्णक से होकर वर्निक क्षेत्र को जाता है। तब सदेश को सुनने वाला या पढ़ने वाला समझकर ग्रहण करता है। लिखित सदेश को समझने के लिए वर्निक क्षेत्र मे शब्दों का श्रव्य रूप जागृत होना आवश्यक है अर्थात् लिखित भाषा को उच्चरित भाषा से जुड़ना चाहिए। इन्हें जोडने का कार्य कोणीय कर्णक करता है जो दृष्टि क्षेत्र और वर्निक क्षेत्र के मध्य सचार का माध्यम है। (हेमचंद्र पांडेय, भाषा, मस्तिष्क और चेतना)

उच्चरित शब्द को लिखित रूप देना हो तो भाषिक संदेश प्राथमिक श्रवण-क्षेत्र से वर्निक क्षेत्र को जाता है, फिर कोणीय कर्णक को, वहां से ब्रोका-क्षेत्र को और फिर गतिक वल्कुट (क्षेत्र) को।

भाषा से विशिष्ट रूप से संबधित ब्रोका और वर्निक क्षेत्रों की जानकारी का प्रथम श्रेय क्रमशः पाउल ब्रोका (1861) तथा कार्ल वर्निक (1874) को जाता है। इनके द्वारा खोजे गए भाषा संबधी क्षेत्रो को इन्ही का नाम देते हुए उन्हें ब्रोका क्षेत्र तथा वर्निक क्षेत्र कहा गया है।

उपर्युक्त चर्चा से यह स्पष्ट होता है कि भाषा एवं मस्तिष्क का एक अनिवार्य सबंध है। यदि मस्तिष्क के विभिन्न क्षेत्रो को किसी प्रकार की क्षति पहुंचती है तो उसका प्रभाव भाषा पर आवश्यक रूप से पड़ेगा। मस्तिष्कीय क्षति के कारण उत्पन्न भाषा-विकार को "भाषाघात" (Aphasia) की संज्ञा से अभिहित किया जाता है। "भाषाघात" नामक यह भाषा-विकार अन्य भाषा-विकारों की तुलना में विशिष्ट है। अन्य भाषा-विकारों, जैसे— हकलाना, तुतलाना, विलम्बित वाक् विकास आदि का कारण शारीरिक अथवा मनोवैज्ञानिक है जबकि "भाषाघात" का कारण स्नायविक है। "भाषाघात" एक व्यापक भाषा विकार है जिसमें भाषा के एकाधिक पक्ष नकारात्मक रूप से प्रभावित होते हैं। अन्य शब्दों मे कहा जा सकता है कि भाषाघात मस्तिष्क क्षति के कारण उत्पन्न विभिन्न प्रकार के भाषा-विकारो की शृखला का एक समन्वित रूप है।

नार्मन गैश्विड भाषाघात तथा तत्रिका-तंत्र की सरचना के संबंध में दो प्रकार की विचारधाराओं का वर्णन करते हैं। प्रथम विचारधारा क्षेत्रीकरण संबधी विचारों को प्रश्रय देती है कि प्रत्येक बौद्धिक प्रक्रिया मस्तिष्क

के एक क्षेत्र विशेष से सबद्ध होती है। इसके विपरीत द्वितीय विचारधारा संपूर्णता मे विश्वास व्यक्त करते हुए उन विचारों को प्रश्रय देती है, जिनके अतर्गत क्षेत्रो के समान क्षमता की चर्चा की गई है। डी. फ्रेंक बेन्सन ने भी अपने लेख "द न्यूरल बेसिस ऑफ स्पोकन एड रिटन लैंग्वेज" के अन्तर्गत इन्ही बिंदुओ को उल्लिखित करते हुए यह मत प्रतिपादित किया है कि यद्यपि दोनो उपागम अथवा विचारधाराएं मस्तिष्क तथा भाषा की दृष्टि से महत्वपूर्ण सूचनाए प्रदान करती हैं परंतु कोई भी उपागम पृथक रूप से सर्वथा सही नही है। प्रथम अर्धशताब्दी के समय जब भाषाघात संबंधी चर्चा उभर रही थी, तब कोई भी विचारधारा प्रधान नहीं थी। वर्निक (1874) ने उपर्युक्त दोनों मतो के प्रति अस्वीकृति व्यक्त की। उनके अनुसार वल्कुट (क्षेत्रो) में सरल प्रक्रियाओ के लिए तो विशेषीकरण होता है, परंतु उच्च प्रकार्य सामान्य कार्य करने वाले विभिन्न क्षेत्रो के परस्पर आपसी सपर्को के परिणामस्वरूप संपन्न होते हैं। यह भी ध्यान देने योग्य बिंदु है कि शरीर-रचना के क्षेत्रों को ज्ञात करने पर भी उनसे सबंधित अक्षमता व विकारो के संबंध मे पूर्णतः पूर्वानुमान लगाना प्रायः कठिन-सा प्रतीत होता है।

जैसा कि स्पष्ट किया जा चुका है कि भाषा की दृष्टि से दो क्षेत्र अत्यत महत्वपूर्ण हैं— ब्रोका क्षेत्र तथा वर्निक क्षेत्र। यदि ब्रोका क्षेत्र क्षतिग्रस्त होता है तब वाक् अथवा उच्चारण सबंधी समस्याए उत्पन्न होती हैं, परतु अर्थ पक्ष अथवा अवबोधन प्रायः सुरक्षित रहता है। वर्निक क्षेत्र को क्षति पहुचने से उच्चारण संबधी प्रक्रिया मे अर्थपरक त्रुटियां होती हैं। शब्दो का उचित चयन नही होता और अनेक बार निरर्थक शब्द भी वाक्य में आ जाते है। लिखित अथवा मौखिक सदेश को समझने मे कठिनाई होती है। इसी प्रकार मस्तिष्क के अन्य भाषिक क्षेत्रो के क्षतिग्रस्त होने पर अनेक भाषिक विचार उत्पन्न होते है।

भारतीय संदर्भों में यह विशिष्ट तथ्य है कि सवैधानिक परिप्रेक्ष्य मे कक्षाओं मे "सबके लिए शिक्षा" के अतर्गत बच्चो को प्रवेश तो दिया जाता है। परन्तु प्रवेश के समय बच्चों मे पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के विकारों या दोषो की जाच भली प्रकार से नही की जाती और न ही इन 'भीड़ भरी कक्षाओं' मे उनकी ओर पूरा ध्यान दिया जाता है। राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964-66) के सर्वेक्षण के आधार पर यह पाया गया कि सामान्य कक्षाओं में सामान्यत. कुछ विद्यार्थी अनेक विकारो से युक्त होते हैं। विभिन्न विकारो में भाषाघात की विकलांगता अथवा वाक्-विकार एक प्रमुख विकार है। ऐसे विकारयुक्त बच्चो के लिए भिन्न प्रकार की व्यवस्था होनी चाहिए।

भाषा-शिक्षण के सदर्भ मे यह और भी आवश्यक है कि भाषा-विकार के साथ-साथ उसके कारण, भाषा और मस्तिष्क के आपसी सबंधो के बारे मे गहन रूप से जानकारी प्राप्त की जाए। जिससे हम अपने शिक्षण-कार्य मे तदनुसार परिवर्तन करते हुए उसे और अधिक प्रभावी व सार्थक बना सकें। ❑❑

'डाइट', मोती बाग
नई दिल्ली

शिक्षक प्रशिक्षण की प्रासंगिकता

❑ तिलक राज पंकज

'मानव मे अन्तर्निहित पूर्णता अभिव्यक्ति ही शिक्षा है'
— स्वामी विवेकानन्द

शिक्षक प्रशिक्षण सीखने एव सिखाने की एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा हम अल्प अवधि मे शिक्षकों में ज्ञान, समझ एव विभिन्न कौशलो को सुनियोजित तरीके से विकसित कर सकते हैं। इन प्रशिक्षणों से हम शिक्षको मे शिक्षा के विभिन्न पहलुओ का अपेक्षित दृष्टिकोण विकसित कर सकते है।

शिक्षको की सोच मे परिवर्तन करने, उनकी कार्यशैली व कार्यो की गुणवत्ता मे वृद्धि करने, नई शिक्षा-तकनीको एव शिक्षण विधाओं से परिचित कराने, पाठ्यक्रम, मूल्याकंन विधाए तथा शैक्षिक नवाचारो की जानकरी प्रदान करना आदि को शिक्षक प्रशिक्षण का आधार बनाया जा सकता है।

शिक्षक प्रशिक्षण की आवश्यकता

शिक्षको का उत्साहवर्धन करने, उनका मनोबल बनाए रखने, शिक्षा व नैतिक मूल्यों के प्रति समर्पण की भावना बनाने, उनको स्वय के कार्यो के प्रति जवाबदेह, प्रतिबद्ध एवं सवेदनशील बनाने मे शिक्षक प्रशिक्षण सहायक हो सकता है।

शिक्षा में राजनैतिक दखलअदाजी, बेअसर होता शिक्षा प्रवधन, समाज का शिक्षा के प्रति बदलता नजरिया, ससाधनो की कमी, शिक्षकों की गैर-शैक्षिक कार्यो में प्रतिनियुक्ति, निम्न से निम्नतर होता बच्चो का उपलब्धि स्तर इत्यादि कुछ ऐसी वजह है, जिससे आम आदमी की सोच, शिक्षा व शिक्षा व्यवस्था के प्रति नकारात्मक बनती जा रही है। इसका सबसे ज्यादा खामियाजा शिक्षक को भुगतना पड़ रहा है और उसे समाज व स्थानीय समुदाय के आक्रोश का शिकार होना पड रहा है। इससे शिक्षक की छवि, उसका व्यक्तित्व, उसका सम्मान व विश्वसनीयता का ग्राफ खतरे के निशान के करीब जा रहा है।

शिक्षक प्रशिक्षणों के सभी पहलुओं पर गहन विचार-विमर्श होने के बावजूद भी अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो रहे हैं जिससे संसाधनों का अपव्यय हो रहा है। प्रशिक्षणों का उद्देश्य शिक्षकों को समय-समय पर अपनी कमजोरियों, उपलब्धियों व कार्यक्षमताओं को समझने, अपने व्यक्तित्व व कार्यशैली में निखार लाने का अवसर प्रदान करना है।

ऐसे मुश्किल दौर मे शिक्षकों मे आत्मविश्वास जगाने, उनकी दक्षताओ एव क्षमताओं को बढ़ाने, उनमें आपसी सहयोग व समाज के साथ समन्वयन बनाने मे शिक्षक प्रशिक्षण उल्लेखनीय भूमिका अदा कर सकता है।

शिक्षक प्रशिक्षण के उद्देश्य

सार रूप में शिक्षक प्रशिक्षण को तीन स्तरो यथा ज्ञान, समझ तथा कौशल आधारित विभाजित कर इनके निम्न सभावित उद्देश्य तय किए जा सकते है—

- ❑ "प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण" और "गुणात्मक शिक्षा" की विस्तृत जानकारी देना एवं इस हेतु किए जा रहे राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय प्रयासो पर चर्चा करना।
- ❑ समाज मे शिक्षा व शिक्षक का स्थान व भूमिका को परिभाषित करना/ विश्लेषण करना।
- ❑ वर्तमान शिक्षा नीतियो पर चर्चा करना।
- ❑ शिक्षकों के पूर्व ज्ञान, अनुभवो, दक्षताओ, क्षमताओ की पहचान करना।
- ❑ बाल शिक्षा का महत्व, बच्चे कैसे सीखते है? बच्चे

कैसे व्यवहार करते है? उनकी जरूरते व उनके प्रति सवेदनशीलता आदि पर विस्तृत चर्चा करना।

- शिक्षको के व्यवहार करने, सोचने तथा महसूस करने के तरीको का विश्लेषण करना।
- शिक्षको की कार्य क्षमताओ व कार्यो की प्रभावशीलता मे वृद्धि करना।
- उन्हे सक्षम, निपुण, सामर्थ्यवान, नवाचार युक्त बनाना तथा उनको विभिन्न दक्षताओ, कौशलो व ससाधनो से नवाजना।
- उनमे टीम भावना, आपसी समन्वयन व नेतृत्व करने के गुणो का विकास करना।
- उनकी समस्याओ , दुराग्रहों, दुष्चिंताओं व पूर्वग्रहो को कम करना।
- उनको इस योग्य बनाना कि वे कम से कम मार्गदर्शन, सहयोग की उच्च उपलब्धियां दे सके।
- शिक्षको को अपने व्यवसाय के प्रति ईमानदार, निष्ठावान, समर्पित व सवेदनशील बनाना।

इसके साथ ही उन्हे "पाठ योजना", "पाठ प्रस्तुतीकरण", "शिक्षण विधा", "शिक्षण सहायक", "अधिगम सामग्री", "मौखिक एव लिखित अभिव्यक्ति", "मूल्याकंन विधा" आदि के महत्व पर गहन व व्यावहारिक निपुणता के स्तर तक प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए।

संदर्भ संस्था

शिक्षको को प्रशिक्षण देने के लिए विभिन्न स्तरो पर राजकीय, राजकीय मान्यता एव सहायता प्राप्त तथा स्वयं सेवी सस्थाएं जिम्मेदारी निभा रही है। इनमे राज्य शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण .संस्थान (एस.आई.ई आर टी), जिला शिक्षा एव प्रशिक्षण संस्थान (डॉयइस), जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम (डी.पी.ई पी.), लोक जुम्बिश परियोजना, गुरु मित्र योजना, शिक्षक समाख्या, दिगन्तर, एकलव्य, बोध, शिक्षाकर्मी परियोजना आदि उल्लेखनीय कार्य कर रही है।

इन सस्थाओ द्वारा एक या अलग-अलग स्तरों पर अनेक प्रकार के प्रशिक्षण जैसे—एस ओ.पी.टी., प्रेरणा प्रशिक्षण, अभिमुखीकरण, न्यूनतम अधिगम स्तर आधारित पाठ्यक्रम, शिक्षण विधा, शिक्षण अधिगम सहायक सामग्री, पाठ योजना, शैक्षिक प्रौद्योगिकी, मूल्याकन विधाएं, जेण्डर सवेदनशीलता आदि विषयों पर आयोजित किए जाते है।

इन सदर्भ सस्थाओ द्वारा हालाकि समस्त प्रकार के प्रशिक्षणो से पूर्व प्रशिक्षण के सभी पहलुओं पर गहन विचार-विमर्श किया जाता है, लेकिन इन प्रशिक्षणो से अपेक्षित परिणाम प्राप्त नहीं हो रहे है तथा ये मात्र औपचारिक कार्यक्रम बनकर रह गए हैं। जिससे ससाधनो का अपव्यय हो रहा है। इससे सदर्भ सस्थाओं को मानव व वित्त ससाधनो, समय तथा ऊर्जा का अपव्यय रोकने एव प्रशिक्षण मे निहित उद्देश्यो की पूर्ति हेतु वडे पैमाने पर अपने नियोजन मे बदलाव लाने की जरूरत है जैसे—

- शिक्षको को यह महसूस कराना कि आखिर उनको दिया जाने वाला प्रशिक्षण क्यों जरूरी है? जिससे शिक्षक की मानसिकता बने।
- सदर्भ सस्थाओ द्वारा यथा समय जिला व खण्ड शिक्षा अधिकारियों, विषय विशेषज्ञो, दक्ष प्रशिक्षको, शिक्षको आदि के साथ प्रशिक्षण के विभिन्न पहलुओ पर चर्चा करने व समन्वयन स्थापित करने की जरूरत।
- अनुभवी, क्षमतावान एव दक्ष प्रशिक्षको द्वारा ही प्रशिक्षण कराना।
- प्रशिक्षण हेतु उचित स्थल का चयन व समुचित व्यवस्थाए उपलब्ध कराने की सुनिश्चितता।
- संदर्भ सस्थाएं ससाधनो से सुसज्जित हो।
- प्रशिक्षण के पश्चात् विद्यालय स्तर पर अनुश्रवण व्यवस्था कायम करना।
- एक स्तर या अलग-अलग स्तर पर कार्यरत सदर्भ सस्थाओं मे आपसी तालमेल बनाना।
- एक शिक्षक को एक ही प्रकार के दिए जाने वाले प्रशिक्षणों मे न्यूनतम तीन वर्ष का अन्तराल रखना।
- विद्यालयो मे प्रशिक्षणानुरूप संसाधन उपलब्ध कराना।
- प्रशिक्षण का समय ग्रीष्मावकाश हो अथवा सितम्बर, अक्तूबर, नवम्बर, जनवरी, फरवरी महीनों मे ही कराया जाए।

उपसंहार

शिक्षक प्रशिक्षण को सीखने, सिखाने, शिक्षकों के व्यक्तित्व को निखारने, शिक्षा मे गुणात्मकता लाने का सशक्त

माध्यम बनाने हेतु संदर्भ सस्थाओं को सकल्प करना होगा। प्रशिक्षण मे शिक्षकों को अपनी उपलब्धियों, कमजोरियो व कार्यक्षमताओं को समझने, तुलनात्मक अध्ययन करने, अपने व्यक्तित्व व कार्यशैली में निखार लाने का मंच मिलता है।

प्रशिक्षण मे प्रयोग की गई विधाओ से शिक्षकों में रचनात्मकता, आपसी सहयोग व सम्मान, अनुशासन व समता की भावना का विकास होने की सभावनाए मौजूद रहती है।

अन्ततः समाज मे शिक्षा व शिक्षक के सम्मान, महत्व व गरिमा एवं विश्वास को सजोए रखने के लिए शिक्षक प्रशिक्षणो की निरन्तरता बनी रहनी चाहिए। ❑❑

अवर उप जिला शिक्षा अधिकारी
आबू रोड (सिरोही), राजस्थान

आध्यात्मिक शिक्षा के प्रणेता स्वामी विवेकानन्द

❑ जगदीश दान कविया

स्वामी विवेकानन्द के अनुसार हमारी निरन्तर हो रही आध्यात्मिक हानि की समस्या का एकमात्र हल शिक्षा का प्रसार है। शिक्षा द्वारा ही मनुष्य में आत्मविश्वास जागृत होता है। उनके विचारा में शिक्षा का वास्तविक अर्थ है– व्यक्ति में कर्म की आकांक्षा एवं कुशलतापूर्वक करने की पात्रता उत्पन्न करना जिससे वह देश के प्रति अपने कर्तव्य को भली-भांति निभा सके।

हमारे पूर्वजो का स्मरण सदा प्रेरणा का अखण्ड स्रोत रहा है। न केवल भारत अपितु विश्व की समस्त मानव जाति के लिए हमारी यह सास्कृतिक सपदा शिक्षाप्रद, मार्गदर्शक एव आकर्षण का विषय रही है। इन्ही मे से महान विभूति स्वामी विवेकानन्द का नाम अग्रणियों मे रखा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। ससार के इतिहास मे 12 जनवरी, 1863 ई. का दिन स्वर्णिम अक्षरों मे एक पुनीत पर्व के रूप मे मुखरित है। क्योकि इस दिन युगाचार्य विवेकानन्द ने जन्म लेकर माता त्रुवनेश्वरी देवी की गोद को सुशोभित किया था। अन्नप्राशन के समय पिता ने पुत्र का नाम नरेन्द्र रखा था। यह नरेन्द्र भविष्य मे विवेकानन्द के नाम से विश्व प्रसिद्ध हुआ।

बचपन से ही नरेन्द्रनाथ मे "होनहार बिरवान के होत चीकने पात" सदृश असाधारण प्रतिभा का आलोक रहा। वृद्ध कुटुम्बीजन के मुख से सुन-सुन कर 'मुक्त बोध' व्याकरण के सभी सूत्रो को बालक ने कंठस्थ कर लिया था। इस तरह बालक नरेन्द्रनाथ मेधावी, निर्भीक, रहस्य प्रिय, श्रुति एवं स्मृतिधर थे। जब कभी फुरसत मिलती पिता विश्वनाथ दत्त अपने पुत्र को हित वचन सुनाया करते थे। जब तक हम सत्य तथा धर्म का पालन करते हैं, किसी से डरने की जरूरत नही। धमकी के सामने कभी नही झुकना। आत्म-गौरव को नहीं छोड़ना। स्वजाति के अभिमान के कारण अन्य जातियो से द्वेष नहीं करना। मानव कल्याण के लिए देशभक्ति आवश्यक है। विदेशी देश को दास बना सकते है, परन्तु सत्त्वपूर्ण

प्राचीन सस्कृति का अपहरण नही कर सकते। ऐसी सारयुक्त शिक्षा निरन्तर देने तथा पुत्र के कण्ठ की मधुरता पर मुग्ध हो जाते थे। भक्तिगीतो को गाते समय नरेन्द्र के चेहरे पर प्रकट होते दिव्य तेज को देखकर गद्‌गद् हो जाते थे। माता-पिता पर उन्हें अपार गौरव था। बालक नरेन्द्र माता-पिता को देवता के समान मानते थे, परन्तु उस गौरव भाव ने उनकी स्वतन्त्र विचार शक्ति को कभी कुंठित नही किया।

एक बार स्वामी विवेकानन्द के गुरु श्री रामकृष्ण परमहंस ने *कहा था कि 'नरेन्द्र लोक शिक्षा देगा'। वास्तव* मे स्वामी विवेकानन्द भारतीय शिक्षा दर्शन मे एक शिक्षक के रूप में आए। रामकृष्ण कहते थे "खाली पेट धर्म नही होता"। स्वामी विवेकानन्द ने इस कथन का अनुभव किया। वे भारत की पहाडी जातियो के निकट सम्पर्क मे आए। वहा उनको दरिद्रता दृष्टिगोचर हुई। उन्होने बताया कि प्रथम तो व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओ की पूर्ति होनी चाहिए। भूख-प्यास से त्रस्त मानव आध्यात्मिक विकास के बारे मे क्या सोचेगा? सतुष्ट मनुष्य को ही ज्ञान व धर्म की ओर अग्रसर किया जा सकता है, तभी चरित्र का गठन हो सकता है और तभी नैतिकता अपने यौवन को प्राप्त कर सकती है। स्वामी विवेकान्द ने कहा कि शिक्षा का प्रसार ही एकमात्र हल है हमारी निरन्तर होती हुई आध्यात्मिक हानि की समस्या का। उन्होने शिक्षा से आत्मविश्वास की दृढ़ता बताते हुए पूछा— कौन-सी शक्ति है जिसके द्वारा जर्मन मजदूर, अंग्रेज मजदूर की जमी हुई जड़ों को हिलाने मे समर्थ हो सका?"

शिक्षा, शिक्षा केवल शिक्षा चाहिए। यूरोप के अनेक नगरों मे भ्रमण करते समय जब स्वामी विवेकानन्द ने दरिद्र लोगो के आराम और शिक्षा को देखा तो उनकी आखों के समक्ष हमारे अपने दरिद्र लोगो का चित्र आ गया और वे झर-झर रोने लगे। यह अन्तर भेद कैसे हो गया? स्वामी विवेकानन्द को एक ही उत्तर सूझा शिक्षा व अशिक्षा के द्वारा। शिक्षा के द्वारा ही व्यक्ति में आत्मविश्वास जगता है। शिक्षा ही आज महती आवश्यकता है। ज्ञानी मनुष्य भावी तीन युगों तक का दृष्टिपान स्पष्ट कर सकता है। उन्हे आशा रही कि श्री रामकृष्णदेव के आविर्भाव के समय से प्राची का क्षितिज सूर्य की प्रात कालीन किरणों से उद्‌भासित होने लगा है और शीघ्र ही सम्पूर्ण देश मध्यकालीन सूर्य के प्रखर तेज से दैदीप्यमान हो उठेगा, इसमे सदेह नही।

स्त्री शिक्षा पर बल हम चाहते है कि भारत की स्त्रियो को ऐसी शिक्षा दी जाए, जिससे वे निर्भय होकर भारत के प्रति अपने कर्तव्य को भली-भांति निभा सके और सघमित्रा, लीला, अहिल्याबाई व मीराबाई आदि भारत की महान देवियो द्वारा चलाई गई परम्परा को आगे बढा *सके एव वीर बन सकें। भारत की स्त्रिया पवित्रता व* त्याग की मूर्ति है क्योकि उनके पास बल और शक्ति है।

इस प्रकार के उद्‌घोष करने वाले स्वामी विवेकानद के निर्मल चित्त मे अतीत, वर्तमान तथा भावी समाज का जो चित्र फलित हुआ था, उसका सनातन रूप काल के विपर्यय से भी नही हुआ। नारी समाज से सम्बन्धित उक्तिया आज भी उसी समभाव से उज्ज्वल व प्रकाशित हैं। 'आमूल सस्कारक' के द्वारा वे समाज की जीवन शक्ति को प्रबुद्ध करना चाहते थे।

स्वामीजी के विचारो मे शिक्षा का अर्थ केवल रटना नही था। उनके विचारों में शिक्षा का वास्तविक अर्थ है— "व्यक्ति में कर्म की आकाक्षा एवं उसको कुशलतापूर्वक करने की पात्रता उत्पन्न करना"। वे चाहते थे कि भारत के प्रति अपने कर्त्तव्य भली-भाति निभा सके।

भारतीय नारी की शिक्षा उनके अनुसार धर्म, शिल्प, विज्ञान, गृहकार्य, स्वास्थ्य, पाक-कला, सीना-पिरोना आदि सब विषयों का स्थूल मर्म सिखलाना था। केवल पूजा पद्धति ही नहीं छात्राओ के सामने सीता, सावित्री, दमयन्ती, लीलावती, मीरा आदि के जीवन चरित्र कुमारियो को समझाकर उन्हे अपने जीवन को इसी प्रकार गढ़ने का उपदेश ही शिक्षा का उद्देश्य था। स्वामी जी स्त्री शिक्षा प्रसार के समय मे लोगों को मनु महाराज का कथन याद दिलाते थे— यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता। यत्रैवास्तु न पूज्यन्ते, सर्वास्तत्राफलाः क्रिया-।।" भारत मे स्त्री शिक्षा की व्यापकता हेतु स्वामी विवेकानन्द ने बाग बाजार मे बालिका विद्यालय की स्थापना की

जिसका कार्यभार भगिनी निवेदिता को सौंपा। उनका मत था कि स्त्रियो के सम्बन्ध में हमारा हस्तक्षेप करने का अधिकार बस उनको शिक्षा देने तक ही सीमित रहना चाहिए। उनमें ऐसी योग्यता लानी चाहिए जिससे वे अपनी समस्याओं को स्वयं ही अपने ढंग से सुलझा सके। हमारी भारतीय स्त्रिया समस्याओं को हल करने मे ससार के किसी भी भाग की स्त्रियो से पीछे नही है। हम चाहते है कि भारत की स्त्रियो को ऐसी शिक्षा दी जाए जिससे वे निर्भय होकर भारत के प्रति अपने कर्त्तव्य को भली-भांति निभा सकें। स्वामीजी ने न्यूयार्क में भाषण देते समय भी कहा था "मुझे बडी प्रसन्नता होगी यदि भारतीय स्त्रियो की ऐसी ही बौद्धिक प्रगति हो।" स्वामी जी ने स्त्रियो को सन्देश रूप मे कहा– "मेरा तो इस देश की स्त्रियो को वही सन्देश है जो पुरुषो के लिए है। भारत मे और भारतीय धर्म मे पूर्ण श्रद्धा व विश्वास रखो, तेजस्वी बनो, अपने गौरवशाली भविष्य में विश्वास रखो।" स्त्रियां जब शिक्षित होंगी तभी तो उनकी सन्तान द्वारा देश का मुख उज्ज्वल होगा और देश मे विद्या, ज्ञान, भक्ति जाग उठेगी।

विश्व धर्म सम्मेलन में 11 सितम्बर, 1883 को दुनिया के अनेक राष्ट्रो से हजारों प्रतिनिधि आए थे उनमे आयु में सबसे छोटे थे विवेकानन्द। जब उन्हें भाषण करने को कहा गया तब उनका हृदय कांपने लगा। जिह्वा सूख गई। अन्य लोगों के समान उन्होंने अपना भाषण लिखकर तैयार नहीं किया था। उन्होंने अध्यक्ष से कहा, सभी का भाषण होने के बाद अंत मे वे बोलेगे। वह अंतिम क्रम भी आ गया। मां शारदा व रामकृष्ण को मन ही मन नमन कर उठ खड़े हुए। उनके मधुर कण्ठ से "अमेरिका के भाइयो और बहनों" ये शब्द निकलते ही सभा भवन तालियो से गूंज उठा। दो-तीन मिनट तक तालियां बजती रही। अभी तक कोई भी इतनी आत्मीयता से नहीं बोला था। सभा मे शान्ति छाते ही उन्होंने अपना भाषण शुरू किया। कई अलग-अलग स्थानो से बहने वाली नदियां अंत मे समुद्र मे ही मिलती है। उसी प्रकार अलग-अलग धर्म के जन्म के लिए मनुष्य अंत मे परमात्मा के पास पहुचते हैं। कोई भी धर्म छोटा (निम्न) नहीं और कोई भी श्रेष्ठ (उच्च) नही। सभी जगहो पर, पत्र-पत्रिकाओं मे सस्था-सगठनों मे उनकी मुक्तकंठ से प्रशसा होती है। तब तक लोगों की धारणा थी कि भारत के लोग कम विद्वान है। मूढ़ आचार-विचार के हैं। स्वामीजी के सतत् प्रयास से अमेरिका मे ही नही सभी प्रगतिशील राष्ट्रो मे भारत को गौरव का स्थान प्राप्त हुआ।

बढते हुए काम और जिम्मेदारी से स्वामीजी का स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। शिष्यों के आग्रह पर भी वे विश्रांति नही लेते थे। धीरे-धीरे वे अन्तर्मुखी बनते गए। बाह्य क्रियाएं बंद होने पर भी आतरिक क्रियाओं को विश्रांति नहीं थी। 4 जुलाई, 1902 को स्वामीजी ने नित्य के अनुसार अपना दैनदिन कार्यक्रम समाप्त किया। रात को 9 बजे उन्हे थकावट मालूम हुई। हाथ-पैर कांपने लगे। फिर वे चिरनिन्द्रा मे लीन हो गए। शिष्य व गुरु-बन्धु रोने लगे। मानो वे सब अनाथ हो गए हो, परन्तु उनकी वाणी आज भी अमर है। भारतीयों को आशीष दे रही है। भारत तथा विश्व के लिए उनका पवित्र जीवन एक आदर्श रहा है। उनके उदात्त विचार एक दैदीप्यमान आलोक स्तम्भ है और उनका नाम एक स्फूर्तिमान मन्त्र है। आइए, हम अपने समस्त विवादों एवं आपसी कलह को समाप्त कर स्नेह की इस भव्य धारा को सर्वत्र प्रवाहित करें। ❑❑

राजकीय प्राथमिक विद्यालय, झलालड़
पोस्ट मेखास वाया तरनाऊ
जिला नागौर, राजस्थान

आदिवासी विद्यार्थियों के शैक्षिक दृष्टिकोण का अध्ययन

❑ अश्वनी कुमार गर्ग

आदिवासी भारत के मूल निवासी है। ये प्रारम्भ से ही दूरस्थ एवं निर्जन स्थानो पर निवास करते रहे है। परिणामस्वरूप आदिवासियो पर शहरी सभ्यता एव विकास का बहुत कम प्रभाव पड़ा है, इसी कारण ये सदैव ही प्रगति के नवीन साधनों के अभाव से ग्रस्त रहे है। आदिवासियो में पिछड़ेपन का मुख्य कारण उनकी शिक्षा है। आदिवासियो को अन्य लोगों की बराबरी मे लाने के लिए आदिवासी क्षेत्रो में आदिवासियो की शिक्षा के लिए प्राथमिक, माध्यमिक, हाईस्कूल, हायर सैकेण्डरी शालाए तथा पूर्व-माध्यामिक छात्रावास, मैट्रिकोत्तर छात्रावास तथा आश्रम शालाए खोली गईं। इसके अलावा आदिवासी विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति देने की भी व्यवस्था शासन स्तर से की गई। इन सभी सुविधाओ के बाद भी आज आदिवासी परिवार ज्यादातर अशिक्षित है। आदिवासियो के शिक्षित न होने से आज भी वे देश की मुख्य धारा से कटे हुए देखे जा सकते हैं।

अध्ययन की आवश्यकता

आदिवासी जो समाज की मुख्यधारा से कटे हुए है, इनमे शिक्षा का प्रसार नहीं हुआ है, अभी भी विकास की ज्योति इन तक नहीं पहुंची है। इसके परिणामस्वरूप इन जातियो में मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक पिछड़ापन आता चला गया है। इनकी सामाजिक एव शैक्षिक उन्नति नही हो पाई है।

इस अध्ययन मे सामान्य एवं आदिवासी विद्यार्थियो के शैक्षिक दृष्टिकोण का अध्ययन किया है, क्योंकि व्यक्ति के व्यक्तित्व निर्माण मे इस गुण का महत्वपूर्ण योगदान होता है।

उद्देश्य

अध्ययन के निम्नलिखित उद्देश्य निर्धारित किए गए–

आदिवासी एव गैर-आदिवासी विद्यार्थियों मे–

- ❑ जाति, लिग, परिवार की मासिक आय एवं इनके बीच अंतर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर प्रभावो का अध्ययन करना।
- ❑ जाति, परिवार के आकार, परिवार के व्यवसाय एव इनके बीच अंतर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर प्रभावो का अध्ययन करना।

मानव के व्यक्तित्व निर्माण में शैक्षिक दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण योगदान है। देश के आदिवासी समाज की मुख्यधारा से आज भी कटे हुए हैं क्योंकि इनकी सामाजिक एवं शैक्षिक उन्नति नहीं हो पाई है। संदर्भित अध्ययन आदिवासी एवं गैर-आदिवासी विद्यार्थियों के जाति, लिंग, आय, परिवार का आकार, व्यवसाय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया का उनके शैक्षिक दृष्टिकोण पर प्रभावों का निरीक्षण है।

अध्ययन की विधि

इसके लिए चोपड़ा (1982) द्वारा निर्मित प्रश्नावली का उपयोग किया गया। इसमे शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण से सबधित 22 प्रश्न थे। इसमें प्रत्येक प्रश्न पर हा एव नहीं में उत्तर देना था। सभी प्रश्न विद्यार्थियों द्वारा किए जाने अनिवार्य थे। उत्तर सिर्फ एक ही देना था। इस प्रश्नावली के उपयोग करने का उद्देश्य विद्यार्थियो का शिक्षा के प्रति दृष्टिकोण जानना था। साथ ही साक्षात्कार अनुसूची के माध्यम से विद्यार्थियो एवं पालकों से जानकारी प्राप्त की गई, जिसके अतर्गत परिवार का आकार, परिवार का व्यवसाय, परिवार की मासिक आय आदि थे।

न्यादर्श एवं चयन प्रक्रिया

न्यादर्श का चयन सुविधानुसार यादृच्छिक विधि से किया है, जिसमें मध्य प्रदेश के बैतूल जिले के हायर सैकेण्डरी स्कूल के कक्षा 11 स्तर के 800 विद्यार्थियो को लिया गया जिसमें आदिवासी, गैर-आदिवासी छात्र एवं छात्राए शामिल थीं।

क्र.	जाति	छात्र	छात्रा	योग	प्रतिशत
1.	गैर-आदिवासी	194	188	382	47 75
2	आदिवासी	212	206	418	52 25
	योग	406	394	800	100

प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु प्रयुक्त सांख्यिकी

प्रदत्तों के विश्लेषण हेतु "माध्य" प्रसरण विश्लेषण एव (Duncan's Multiple Range) परीक्षण का उपयोग किया गया।

परिकल्पनाएं निष्कर्ष एवं व्याख्या

इस शोध कार्य में निम्न उद्देश्यों को लेकर परिकल्पनाए निर्धारित की गई। उद्देश्यवार व्याख्या निम्नानुसार है–

शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति,लिंग, आय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभाव का अध्ययन

इस शोध कार्य का उद्देश्य शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, लिग, आय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभावों का अध्ययन करना है। इसमे भी जाति (गैर-आदिवासी एवं आदिवासी) एव लिग (छात्र एव छात्रा) के दो-दो स्तर एव आय (उच्च आय समूह जिसकी मासिक आय 5000 रु या उससे अधिक है, मध्यम आय समूह जिसकी मासिक आय 5000 रु से कम तथा 3000 रु से अधिक है तथा निम्न आय समूह जिसकी मासिक आय 3000 रु या इससे कम है) के तीन स्तर है। इसको ध्यान मे रखते हुए प्रदत्तो का विश्लेषण 2×2×3 Factorial Design ANOVA साख्यिकी विधि के द्वारा किया गया है। इसके परिणाम तालिका मे दिए है।

तालिका
शैक्षिक दृष्टिकोण के लिए प्रसरण विश्लेषण की 2 × 2 × 3 की Factorial Design का सारांश

प्रसरण का स्रोत	मुक्तांश	वर्ग योग	औसत वर्ग योग	F अनुपात
जाति (A)	1	23863.95	23863 95	110.99**
लिंग (B)	1	250.14	250 14	1 16
आय (C)	2	829.52	414 76	1 93
A × B	1	271.79	271.79	1.26
A × C	2	1603.24	801 62	3 73*
B × C	2	64.44	32.22	0.15
A × B × C	2	1194 40	597.20	2 78
त्रुटि	788	169438 15	215 02	
योग	799			

** 0 01 स्तर पर सार्थकता, * 0.05 स्तर पर सार्थकता

तालिका से ज्ञात होता है कि –

- जाति के लिए 'F' का मान 110.99 है, जो कि 0 01 स्तर पर सार्थक है। इसका अर्थ है कि शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति का सार्थक प्रभाव पड़ता है। शैक्षिक द्रष्टिकोण के माध्यो का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि गैर-आदिवासी विद्यार्थियो के शैक्षिक दृष्टिकोण का माध्य 104.74, (N = 382) है जब कि आदिवासी विद्यार्थियों का माध्य 91 79 (N = 418) है, जो अकों की तुलना में सार्थक उच्च है। अत' कहा जा सकता है कि गैर-आदिवासी विद्यार्थियो का शैक्षिक दृष्टिकोण आदिवासी विद्यार्थियों की तुलना में सार्थक अधिक है।
- लिग के लिए 'F' का मान 1 16 है जो कि सार्थक नही है। इसका अर्थ है कि लिग का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव नही पडता है।
- परिवार की आय के लिए 'F' का मान 1 93 है, जो कि सार्थक नहीं है। इसका अर्थ है कि परिवार की आय का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव नही पड़ता।
- जाति एव लिंग के वीच अन्तर्क्रिया के लिए 'F' का मान 1 26 है, जो कि सार्थक नहीं है। इसका अर्थ है कि जाति एव लिंग के बीच की अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव शैक्षिक दृष्टिकोण पर नहीं पडता।
- जाति एव परिवार की आय के बीच अन्तर्क्रिया के लिए 'F' का मान 3 73 है जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। इसका अर्थ है कि जाति एव परिवार की आय के बीच की अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव शैक्षिक दृष्टिकोण पर पडता है।

जाति एव परिवार की आय के बीच अन्तर्क्रिया के शैक्षिक दृष्टिकोण माध्यो का अवलोकन करने से स्पष्ट है कि गैर-आदिवासी विद्यार्थियो का शैक्षिक दृष्टिकोण माध्य आय के आधार (उच्च आय माध्य = 105 50, N = 115, मध्यम आय माध्य = 103.50, N = 110; निम्न आय माध्य = 105 07, N = 157) पर आदिवासी विद्यार्थियो की तुलना मे सार्थक अधिक (उच्च आय माध्य = 76.77, N = 36, मध्यम आय माध्य = 90 64, N = 44, निम्न आय माध्य = 98 35, N = 338) है। इस प्रकार कह सकते है कि जाति एवं परिवार की आय के बीच अन्तर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

- लिग एव परिवार की आय के बीच अन्तर्क्रिया के लिए 'F' का मान 0 15 है, जो कि सार्थक नही है। इसका अर्थ है कि लिग एवं परिवार की आय के बीच की अन्तर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव नही पडता।
- जाति, लिग एव परिवार की आय के लिए 'F' का मान 2.78 है, जो कि सार्थक नही है। इसका अर्थ है कि जाति, लिग एव परिवार की आय के बीच की अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव शैक्षिक दृष्टिकोण पर नही पडता है।

निष्कर्ष

जाति, लिग, आय एव इनके बीच अन्तर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर प्रभावो का अध्ययन करने पर शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति तथा जाति एव परिवार की आय के बीच की अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव दिखाई पडता है, जबकि लिंग, परिवार की मासिक आय तथा जाति एव लिग, लिंग एव परिवार की आय तथा जाति, लिग एवं परिवार की आय के वीच की अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव दिखाई नही देता है।

शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, परिवार के आकार,परिवार के व्यवसाय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभाव का अध्ययन

इस शोध का उद्देश्य शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, परिवार के आकार, परिवार के व्यवसाय एव इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभावो का अध्ययन करना है। इसमे जाति के दो स्तर (गैर-आदिवासी एव आदिवासी), परिवार के आकार के तीन स्तर (परिवार मे सदस्यो की संख्या 7 से अधिक को बडा परिवार, परिवार मे सदस्यो की सख्या 7 या 6 है उसे मध्यम परिवार और परिवार मे सदस्यों की सख्या 6 से कम है उसे छोटा परिवार) एव परिवार के

व्यवसाय के चार स्तर (मजदूर, कृषक, व्यापारी, नौकरी) है। इसको ध्यान में रखते हुए प्रदत्तों का विश्लेषण 2 × 3 × 4 Factorial Design ANOVA सांख्यिकी विधि द्वारा किया गया है। इसके परिणाम तालिका मे दिए गए है।

से ज्ञात होता है कि छोटे आकार के परिवार के विद्यार्थियों की शैक्षिक आकांक्षा माध्य सार्थक उच्च (माध्य = 101.23, N = 315) है तथा बड़े आकार के परिवार के विद्यार्थियों की शैक्षिक आकाक्षा माध्य सार्थक निम्न (माध्य = 93.92, N = 149) स्तर का है। इस प्रकार हम कह सकते है कि छोटे आकार के परिवार के

तालिका
शैक्षिक दृष्टिकोण के लिए प्रसरण विश्लेषण की 2 × 3 × 4 की Factorial Design का सारांश

प्रसरण का स्रोत	मुक्तांश	वर्ग योग	औसत वर्ग योग	F अनुपात
जाति (A)	1	24221 59	24221 59	116.11**
परिवार का आकार (B)	2	1654.68	827 34	3.97*
परिवार का व्यवसाय (C)	3	5751 75	1917 25	9 19**
A × B	2	836.38	418 19	2 01
A × C	3	134.75	44 92	0.22
B × C	6	1262 08	210.35	1 01
A × B × C	5	1519 04	303 81	1 46
त्रुटि	777	162086.04	208.61	
योग	999			

** 0.01 स्तर पर सार्थकता, * 0.05 स्तर पर सार्थकता

तालिका से ज्ञात होता है कि–

- जाति के लिए 'F' का मान 116.11 है जो कि 0.01 स्तर पर सार्थक है। इसका अर्थ है कि शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति का सार्थक प्रभाव पड़ता है।
- परिवार के आकार के लिए 'F' का मान 3.97 है जो कि 0.05 स्तर पर सार्थक है। इसका अर्थ है कि शैक्षिक दृष्टिकोण पर परिवार के आकार का सार्थक प्रभाव पडता है।

शैक्षिक दृष्टिकोण के माध्यो का अवलोकन करने

विद्यार्थियों की शैक्षिक आकाक्षा माध्य उच्च स्तर की है। परिवार का आकार क्रमश बढ़ने से शैक्षिक आकांक्षा माध्य का मान क्रमश· घटता जाता है।

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि 0.05 स्तर पर मजदूर परिवार एव कृषक परिवार तथा मजदूर परिवार एवं व्यापारी परिवार के मध्य शैक्षिक दृष्टिकोण के बीच सार्थक अतर है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शैक्षिक दृष्टिकोण पर परिवार के आकार का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

तालिका
तीन स्तर के परिवार आकार के विद्यार्थियों के शैक्षिक दृष्टिकोण के लिए Duncan's Multiple Range परीक्षण

परिवार का आकार समूह	माध्य शैक्षिक आकांक्षा	N	बड़ा परिवार आकार समूह-1	मध्यम परिवार आकार समूह-2	छोटा परिवार आकार समूह-3
1 (सदस्यो की सख्या > 7)	93.92	149	–	–	*
2 (सदस्यो की संख्या 7 या 6)	96.64	336	–	–	*
3 (सदस्यो की सख्या < 6)	101.23	315			

* 0.05 स्तर पर सार्थकता

तालिका
चार स्तर व्यवसाय परिवार के विद्यार्थियों के शैक्षिक दृष्टिकोण के लिए Duncan's Multiple Range परीक्षण

परिवार व्यवसाय समूह	माध्य शैक्षिक आकांक्षा	N	1 (मजदूर परिवार)	2 (कृषक परिवार)	4 (नौकरी परिवार)	3 (व्यापारी परिवार)
1. (मजदूर परिवार)	90.37	118	–	*	*	*
2. (कृषक परिवार)	96.84	354	–	–	*	*
3 (नौकरी परिवार)	101 69	278	–	–	–	–
4 (व्यापारी परिवार)	102.75	50				

* 0.05 स्तर पर सार्थकता

● परिवार के व्यवसाय के लिए 'F' का मान 9.19 है जो कि 0 01 स्तर पर सार्थक है। इसका अर्थ है कि शैक्षिक दृष्टिकोण पर परिवार के व्यवसाय का सार्थक प्रभाव पडता है।

तालिका के अवलोकन से स्पष्ट है कि 0.05 स्तर पर मजदूर एव कृषक परिवार, मजदूर परिवार एव नौकरी परिवार, मजदूर परिवार एव व्यापारी परिवार, कृषक परिवार एव नौकरी परिवार तथा कृषक परिवार एवं व्यापारी परिवार के माध्य शैक्षिक दृष्टिकोण के बीच सार्थक अंन्तर है। स्पष्ट है कि व्यापारी परिवार के विद्यार्थियों का शैक्षिक दृष्टिकोण माध्य 102 75, (N = 50) है जो कि सार्थक अधिक है। जबकि मजदूर परिवार के विद्यार्थियों का शैक्षिक दृष्टिकोण माध्य 90 37 (N = 118) है जो कि सार्थक कम है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि शैक्षिक दृष्टिकोण पर परिवार के व्यवसाय का सार्थक प्रभाव पड़ता है।

- जाति एव परिवार के आकार के बीच अन्तर्क्रिया के लिए 'F' का मान 2.05 है, जो कि सार्थक नही है। इसका अर्थ है कि जाति एवं परिवार के आकार के बीच की अन्तर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
- जाति एवं परिवार के व्यवसाय के बीच अन्तर्क्रिया के लिए 'F' का मान 0.22 है जो कि सार्थक नहीं है। इसका अर्थ है कि, जाति एवं परिवार के व्यवसाय के बीच की अन्तर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता है।
- परिवार के आकार एवं परिवार के व्यवसाय के बीच अन्तर्क्रिया के लिए 'F' का मान 1.01 है जो कि सार्थक नहीं है। इसका अर्थ है कि परिवार के आकार एव परिवार के व्यवसाय के बीच की अन्तर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव नहीं पड़ता।
- जाति, परिवार के आकार एव परिवार के व्यवसाय के बीच अन्तर्क्रिया के लिए 'F' का मान 1.46 है जो कि सार्थक नहीं है। इसका अर्थ है कि जाति, परिवार के आकार एवं परिवार के व्यवसाय के बीच की अन्तर्क्रिया का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव नही पड़ता है।

निष्कर्ष

शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, परिवार के आकार, परिवार के व्यवसाय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभावों का अध्ययन करने पर शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, परिवार के आकार तथा परिवार के व्यवसाय का सार्थक प्रभाव दिखाई देता है, जबकि जाति एव परिवार के आकार, जाति एवं परिवार के व्यवसाय, परिवार के आकार एवं परिवार के व्यवसाय तथा जाति, परिवार के आकार एव परिवार के व्यवसाय के बीच की अन्तर्क्रिया का सार्थक प्रभाव दिखाई नही देता।

सारांश—शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, लिंग, आय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभाव का अध्ययन सारांश

मूल्य	जाति(A)	लिंग(B)	आय(C)	A×B	A×C	B×C	A×B×C
F	110 99	1.16	1 93	1 26	3.73	0 15	2 78
सार्थकता	**	NS	NS	NS	*	NS	NS

शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, परिवार के आकार, परिवार के व्यवसाय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभाव का अध्ययन सारांश

मूल्य	जाति(A)	परिवार का आकार(B)	परिवार का व्यवसाय(C)	A×B	A×C	B×C	A×B×C
F	116.11	3.97	9.19	2.01	0 22	1.01	1 46
सार्थकता	**	*	**	NS	NS	NS	NS

** 0.01 स्तर पर सार्थकता, NS सार्थक नही है, * 0.05 स्तर पर सार्थकता

शैक्षिक दृष्टिकोण पर जाति, लिंग, आय, परिवार के आकार, परिवार के व्यवसाय एवं इनके बीच अन्तर्क्रिया के प्रभाव का अध्ययन करने पर जाति (F = 110 99, P = 0001), परिवार के आकार (F = 3 97, P = 0005) परिवार के व्यवसाय (F = 9.19, P = .0001), तथा जाति एव आय के बीच अन्तर्क्रिया (F = 3 73, P = 0001) का शैक्षिक दृष्टिकोण पर सार्थक प्रभाव देखने को मिलता है। गैर-आदिवासी विद्यार्थियों के शैक्षिक दृष्टिकोण माध्य का 104 74, N = 382 है, जो कि आदिवासी विद्यार्थियो के शैक्षिक दृष्टिकोण (माध्य = 91.79, N = 382) अंक की तुलना मे सार्थक अधिक है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि गैर-आदिवासी विद्यार्थियो का शैक्षिक दृष्टिकोण आदिवासी विद्यार्थियो से तुलनात्मक सार्थक अधिक है। ❑❑

उप प्रबंधक (दक्षता एवं अनुसंधान)
राज्य शिक्षा केन्द्र, भोपाल, म.प्र.

अरुणाचल प्रदेश में प्रारंभिक स्तर पर हिन्दी शिक्षण की समस्याएं

❑ **राजेन्द्र कुमार पाण्डेय**

अरुणाचल प्रदेश मे लगभग 60 भाषिक समुदाय हैं जो 32 प्रमुख भाषिक समूहो में विभक्त है। ये सभी 32 प्रमुख जनजातिया अलग-अलग 60 से लेकर 70 बोलियो मे विभक्त हैं। एक जनजाति दूसरी जनजाति से न तो जनजातीय बोलियो मे बात कर सकती है और न ही किसी मानक जनजातीय भाषा मे। यही कारण है कि बोलचाल के स्तर पर वहा हिन्दी का प्रयोग किया जाता है। हर जनजाति समूह की हिन्दी बोलने की शैली अलग होती है। बहुत कुछ यह हिंदी बंबईया बाजारू हिंदी की तरह होती है। जब अरुणाचल का साधारण बालक हिन्दी मे वार्तालाप कर सकता है तो उसे मानक हिंदी में प्रवेश आधुनिक शैक्षिक-प्रौद्योगिकी के माध्यम से दिलाया जा सकता है। इसके लिए श्रव्य माध्यम उचित तकनीक का काम कर सकता है। मुक्त शिक्षा मे जब एक साधारण शिक्षक आदर्श शिक्षक बन सकता है, तो यह जरूरी है कि मानक हिन्दी मे उन्हें अभिरचना अभ्यास (पैटर्न प्रैक्टिस) कराया जाए। यह कार्य बहुत आसान है क्योंकि अरुणाचल मे हिन्दी का प्रयोग व्यावसायिक हिदी के रूप मे होता है अर्थात् व्यापार करने के लिए एक समुदाय को दूसरे समुदाय से अंतर्क्रिया करने के लिए हिन्दी भाषा का प्रयोग करना पड़ता है।

अरुणाचल प्रदेश जनजाति बहुल प्रदेश है। वहां एक जनजाति दूसरी जनजाति से किसी जनजातीय *बोली या भाषा में बातचीत नहीं कर सकती है।* वहां हिन्दी भाषा का उपयोग विभिन्न समुदायों द्वारा आपस में व्यावसायिक क्रियाकलापों में अन्तर्क्रिया करने में होता है। प्रत्येक समुदाय की हिन्दी ध्वनि, रूप और संरचना के स्तर पर अलग है इस कारण वहां पर भाषा-व्याघात की समस्या है। अतः अरुणाचल के अध्यापकों को हिन्दी शिक्षण के लिए आधुनिक विधियों एवं तकनीकों का उपयोग उच्चारण दोष को दूर करने में करना आवश्यक है।

भाषिक स्थिति

अरुणाचल प्रदेश की सभी बोलियां और भाषाए तिब्बती बर्मन परिवार की भाषाएं और बोलिया है। केवल खाम्ती समुदाय की भाषा को छोड़कर किसी भी जनजातीय भाषा की अपनी कोई लिपि नही है। भाषा शिक्षण की पद्धति में यह अनिवार्य शर्त है कि शिक्षक को यह जानना चाहिए कि जिस भाषिक समुदाय को लक्ष्य-भाषा (हिन्दी) पढा रहा है, स्रोत भाषी समुदाय की भाषा और सस्कृति से परिचित है कि नहीं। अरुणाचल की भाषाएं शब्द और अभिव्यक्ति मे काफी धनी हैं। उनकी भौगोलिक, सामाजिक और परिवेशीय स्थिति भी काफी अच्छी है। इनके अध्ययन से वहा के लोगों की मानसिक स्थिति का भी पता चल जाता है। शोधकर्ता जब अरुणाचल प्रदेश के दौरे पर गया तो उसके मन में ये सारे प्रश्न पहले से ही थे। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने वहा के प्रारभिक बच्चो के लिए अरुण भारती का निर्माण किया है, जो कक्षा 5 तक पढाई जाती है। यह इतनी सरल पुस्तक है कि वहां का बच्चा इसे आसानी से आत्मसात् कर लेता है। इस पुस्तक में वहां के पेड़, वन तथा फलो तक के बारे में जानकारियां दी गई है। मुझे यह आश्चर्य हुआ कि हमारे जनजातीय बच्चे हिदी की कविताओ को अच्छी तरह से कंठस्थ किए हुए है। उनकी स्वरो का टेपाकन भी किया गया जो परिषद् (एनसीईआरटी) के सामाजिक विज्ञान और मानविकी शिक्षा विभाग में उपलब्ध है। सदर्भित अध्ययन मे यह भी पाया कि जनजातीय भाषाओ का अपना व्याकरण भी है जो उनकी भाषा को सीखने मे मददगार साबित होता है। तिरप जिले की तग्सा बोली मे हम शब्द के लिए दो शब्द है। एक शब्द है ई, जिसका अर्थ है "हम" (बहिर्मुखी) तथा दूसरा शब्द है हिताग, जिसका अर्थ है "हम" (अतर्मुखी)। तग्सा तिरप जिले की प्रमुख जनजाति है, जिसके 12 उपसमूह हैं। प्रत्येक उपसमूह मे सामूहिक चेतना है और यह स्वाभाविक है कि जरूरत पड़ने पर कब अन्तर्मुखी हम और कब बहिर्मुखी हम का प्रयोग किया जाए। कुछ ऐसी भी बोलिया है जिनमे "पिता", "माता" और "भाई" के लिए अलग से शब्द नहीं है। संबधो को व्यक्ति के सदर्भ में पुकारा जाता है। सिग्फो जनजाति मे अनु का मतलब होता है— मेरी मा, इनु का का मतलब होता है— तुम्हारी मां तथा ग्नु का अर्थ होता है— उसकी मां।

रुचिकर बात है कि मोपा जनजाति देखने में बिल्कुल तिब्बती प्रजाति की तरह लगती है। उनकी भाषा भी तिब्वती भाषा से प्रभावित है और वे तिब्बती लिपि को धार्मिक लिपि के रूप मे मानते हैं। विभिन्न प्रकार के झोले जनजातियों के जीवन मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है और उनके नाम भी अलग-अलग सदर्भो मे अलग-अलग है। उदाहरण के तौर पर "करन" धान ढोने का झोला है। "कुनसाग—कपड़ा ढोने का खोग चावल रखने का और फेंगपा मछली ढोने का। जनजातिय लोग प्रकृति और प्राकृतिक वस्तुओ से तादात्मय रखते है, इसीलिए भिन्न प्रकार के बादलो और भिन्न प्रकार के वर्षा के लिए उनके पास अलग-अलग नाम है। वे भिन्न प्रकार की आत्माओ मे विश्वास करते हैं। जिनका निवास पहाड़ों, जगलो और नदियो में होता है। इस प्रकार के शब्दो और आत्मिक संस्कृति को हम हिन्दी में समाहित कर सकते है। हम उनके सास्कृतिक मूल्यो की रक्षा करना चाहते हैं और उनके पास जो भी है उस पर गर्व करना चाहते है।

अरुणाचल की बोलियों और भाषाओ मे जातिवाची सज्ञा नहीं पाई जाती। इसका यह मतलब कभी नही लगाना चाहिए कि हमारे जनजातीय भाई मूर्त-विचार को धारण नही कर सकते। वे उस सस्कृति से आते है जहा प्रत्येक विशिष्ट क्रियाए प्रतीकों और साधारणीकरण से अधिक महत्वपूर्ण होती है। वे जातियाची सज्ञा शब्दों से अनभिज्ञ होते है इसीलिए विज्ञान और गणित जैसे विषयो को उन्हें समझने मे कठिनाई होती है। शैक्षिक प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल से उन्हे इससे परिचित कराया जा सकता है। इस प्रक्रिया से वे गणित और विज्ञान जैसे विषयो का भी बोधन कर सकते है। जब हम उन्हे हिदी सिखाने की बात सोचते हैं तो सामाजिक विज्ञान जैसे विषयों को पढाने के लिए हमें उनकी सामाजिक परिस्थिति को ध्यान मे रखकर पाठ्यक्रम बनाना चाहिए। उनके क्षेत्रीय लोकगीतों को हिदी मे लिप्यकृत करने से एक रुचिकर कार्य होगा। जो भी इस कार्य को करे उसे दोनो भाषाओं की सम्यक जानकारी होनी चाहिए।

इन जनजातीय भाषाओ मे आर्य-भाषाओं की तरह

काल नहीं है। कालो को हम वर्तमान, भूत और भविष्य के रूप मे समझते हैं। घटित होने वाली क्रियाओ को कई तरीकों से अभिव्यक्त किया जाता है जिसे वे व्याकरण के अनुसार कई निपातो और प्रत्ययों को हटाकर अभिव्यक्त करते है। हिन्दी मे *विशेषण-उपबंध* वाक्यों मे प्रयोग होता है जिसे गैलाग भाषिक समूह में एक प्रत्यय जोड़ने मात्र से प्रयोग किया जाता है। पाठ्यक्रम बनाते समय हमे ऐसे वाक्यो को छोड़ना चाहिए जो उनकी भाषा और संस्कृति से न मिलते हों।

निदान

जब हम लिपि की बात सोचते है तो हम पाते है कि देवनागरी लिपि को बिना किसी परिर्वतन के उनकी भाषा में प्रयोग किया जा सकता है। अरुणाचल की बहुत सारी भाषाएं अक्षर लिपि मे हैं जो कि हिन्दी के लिप्यतरण मे समस्याए पैदा कर सकती है। इसलिए उनके सास्कृतिक शब्दो को ज्यो का त्यो हिदी मे ले सकते है।

अरुणाचल सरकार ने 14 वर्ष तक के बच्चों को शिक्षा मुफ्त कर दी है। वहां पर बच्चों को जाड़े के कपडे तथा स्कूल की पौशाके भी वितरित की जाती है। औपचारिक और अनौपचारिक संदर्भो मे हिदी शिक्षण की सबसे बडी समस्या शिक्षकों के प्रशिक्षित न होने की है। यही कारण है कि बच्चे वाचन मे ठीक हैं किंतु लेखन कौशल में उनकी दक्षता अच्छी नहीं है। वर्तनी शिक्षण के लिए विडियो फिल्म का इस्तेमाल कारगर सिद्ध हो सकता है। इस दिशा मे काफी संख्या मे अभ्यास-पुस्तिकाओ का भी अभाव है। जिसकी कमी को दूर करना होगा। भाषिक व्याघात को दूर करने के लिए ऑडियो कैसेट प्रदान करना चाहिए।

निष्कर्ष

अध्ययन के दौरान यह अनुभव किया कि ईटानगर सामान्य वातावरण लिए भिन्न सामाजिक और सास्कृतिक हिदी भाषा के समुदाय के रूप मे विकसित हो रहा था। बोमडिला मे मोपा जनजाति के लोग रहते है, उनकी हिदी मे उनकी भाषा के तत्व दिखाई देते थे। सामान्य शब्दो को बच्चे प्रयोग करने मे अभ्यस्त थे और सस्कृतनिष्ठ शब्दों के उच्चारण मे अनभ्यस्त। इसलिए भाषिक कौशलों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करने की जरूरत महसूस की गई। मौखिक और लिखित दोनों कौशलो के विकास के लिए अलग-अलग सामग्री की आवश्यकता महसूस की गई। अरुणाचल मे प्रयोग होने वाली हिन्दी को प्रकार्यात्मक हिंदी के रूप मे हम देख सकते है। ध्वनि, रूप और संरचना के स्तर पर प्रत्येक समुदाय की हिन्दी अलग है। प्रकार्य के स्तर पर पुरुष और स्त्री के शव्द-प्रयोग एव उसकी आवृत्ति मे भी विभेद दिखाई दिया। यह विभेद प्रयोक्ता के व्यतिरेकी विश्लेषण पर आधारित है।

भाषा सीखने में बच्चे को जितनी सफलता मिलती है उतनी वयस्को को नहीं मिलती। बच्चे द्वितीय भाषा की ध्वनियो के उच्चारण मे सकोच नही करते। वे अपरिचित, असाधारण ध्वनियों का भी अनुकरण करते हैं।

इस तरह हम कह सकते है कि अरुणाचल प्रदेश जनजाति बहुल प्रदेश होने के कारण वहा पर भाषा-व्याघात की समस्या है। इसी वजह से वहा की हिदी का रूप ही अलग है। अध्यापको को हिदी शिक्षण के लिए आधुनिक विधियो एव तकनीक का प्रयोग करना चाहिए जिससे उच्चारण दोष न हो। ❑❑

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालय
बी-35, कैलाश कालोनी
नई दिल्ली

शैक्षिक दूरदर्शन द्वारा प्रसारित तरंग कार्यक्रम : एक मूल्यांकन

❑ अभिजीत कुमार चौबे

शिक्षा मुख्यतः दो कारकों से संबंध रखती है– विद्यालय व समाज। आज इन दोनो की अपनी कुछ विशेषताएं हैं। उदाहरणस्वरूप विद्यालय समाज का अभिन्न अंग है, और विद्यार्थी धर्म, भाषा, जाति, समुदाय तथा विभिन्न सामाजिक समूहो के संबधों को नजरअदाज करते हुए विभिन्न स्तरों से आते है। आज के समाज में निम्न प्रकार के विस्फोट दिखाई दे रहे है– ज्ञान का विस्फोट सामान्य रूप से, तथा विज्ञान व तकनीकी का विस्फोट विशेष रूप से, जनसंख्या का विस्फोट तथा विद्यार्थी जनसंख्या विस्फोट सामान्य रूप से व विद्यार्थियों की आकाक्षाओ का विस्फोट विशेष रूप से। इन विस्फोटो के परिणामस्वरूप मानवीय जीवन के विभिन्न पक्षो पर द्रुत गति से सामाजिक परिवर्तन आ रहे हैं। विद्यार्थी जब-जब समाज से अंतःक्रिया करता है तब-तब उसे नए अनुभव प्राप्त होते हैं। इसके साथ ही मूल्यों की नई संरचनाओ की आवश्यकताएं एवं समस्याएं भी मिलती हैं। इसलिए एक स्थिर पाठ्यक्रम जो शिक्षकों से मशीनो की तरह सहायता मांगता है विद्यार्थियों की आवश्यकता पर खरा नहीं उतरता है। यही कारण है कि शिक्षाविदो, विशेषज्ञो तथा नीति निर्धारको द्वारा पाठ्यक्रम मे लचीलापन लाने का प्रयास किया जा रहा है। इसी दिशा में शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम एक महत्वपूर्ण कदम है।

दूरदर्शन ने शैक्षिक जगत को आकर्षक व दृढ़ आधार प्रदान किया है। शिक्षण संस्थाओ की बढ़ती सख्या, बढ़ता हुआ छात्रों का नामांकन, योग्य व प्रशिक्षित अध्यापको का अभाव तथा निरन्तर बढ़ते हुए शैक्षिक कार्य ने शिक्षाविदों को शिक्षा जगत में दूरदर्शन का प्रयोग करने के लिए बाध्य कर दिया है। अतः दूरदर्शन ही एक ऐसा शक्तिशाली साधन है, जिसका उपयोग शिक्षा को सुरुचिपूर्ण व प्रभावशाली बनाने के लिए किया जाता है। इस कार्यक्रम के माध्यम से प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर व विश्वविद्यालय स्तर के विद्यार्थियों के पाठ्यक्रम से संबंधित कार्यक्रम प्रसारित किए जाते हैं। जो उनके अधिगम स्तर को प्रभावित करता है तथा उनके शैक्षिक स्तर को ऊंचा उठाता है।

शिक्षा जगत में दूरदर्शन ने आकर्षक व दृढ़ आधार प्रदान किया है। इसका उपयोग शिक्षा को सुरुचिपूर्ण व प्रभावशाली बनाने के लिए किया जा रहा है। दूरदर्शन का तरंग शैक्षिक कार्यक्रम दूरस्थ क्षेत्रों में विद्यार्थियों के ज्ञान में अभिवृद्धि का प्रभावी माध्यम है। बच्चों पर इस कार्यक्रम के प्रभाव का अध्ययन यहां उल्लेखित है।

शैक्षिक दूरदर्शन के तरंग कार्यक्रम

प्राथमिक कक्षाओ के लिए प्रसारित होने वाले शैक्षिक कार्यक्रम "तंरग" विद्यार्थियों के ज्ञान में वृद्धि के लिए मुख्य भूमिका निभाते है। इन शैक्षिक कार्यक्रमो के माध्यम से अपेक्षा की जाती है कि विद्यार्थियों को ऐसी जानकारियां रोचक ढंग से मिल सकेंगी, जो दूरस्थ क्षेत्रो में होने के कारण पारम्परिक माध्यम से सम्भव नही हैं। अनुकूल परिस्थितियों में शैक्षिक दूरदर्शन से प्रभावशाली ढंग से अधिगम प्राप्त किया जा सकता है। शैक्षिक दूरदर्शन पर तंरग कार्यक्रम प्राथमिक स्तर के विद्यार्थियों के लिए सुबह 10.30 से 11.00 तक प्रसारित किया जाता है। इस कार्यक्रम में विद्यार्थियों को विषय-वस्तु को आसान तरीकों के साथ सिखाया जाता है और संबंधित विषय-वस्तु का उचित उदाहरण भी बताया जाता है।

वर्तमान अध्ययन की आवश्यकता

सम्पन्न परिवारों के बच्चों की शिक्षा के लिए स्कूल तथा घर में पढ़ाने का पूरा साधन उपलब्ध है, परन्तु गरीब, निचले एवं सामान्य तबके के बच्चों के लिए विद्यालय में

भी पूरा साधन उपलब्ध नही है। इसी कमी की पूर्ति के लिए भारत सरकार ने शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम को बढ़ावा देने पर जोर दिया जाता है। जिसके तहत सरकार ने 1993-94 मे अजमेर जिले में 62 रगीन टेलीविजन उपलब्ध करा कर शैक्षिक दूरदर्शन कार्यक्रम के माध्यम से बच्चों को शिक्षित करने पर बल दिया। इस कार्यक्रम को सफल सम्पादित करने के लिए उचित सुविधा मुहैया कराने के बावजूद इस कार्यक्रम का बच्चों पर कम प्रभाव पड़ रहा है। अतः शोधकर्ता ने शैक्षिक दूरदर्शन के तंरग कार्यक्रम का बच्चों पर प्रभाव का अध्ययन करना उचित समझा।

परिसीमन

समयाभाव व सीमित साधनो के कारण शोधकर्ता ने अपने शोध कार्य को राजस्थान राज्य के अजमेर शहर तक ही सीमित रखा है। और केवल अजमेर शहर के उन प्राथमिक विद्यालयों मे जहां भारत सरकार व राज्य सरकार की तरफ से टेलीविजन सेट उपलब्ध हैं, वही कार्य किया।

अध्ययन विधि

शोधकार्य के सफल सम्पादन के लिए सर्वेक्षण विधि प्रयोग में लाई गई। इस विधि में शोधकर्ता ने स्वयं अजमेर शहर के आठ राजकीय उच्च प्राथमिक विद्यालयों जहा टी.वी. सेट उपलब्ध थे का दौरा किया। जिसके अन्तर्गत सर्वप्रथम, देखा कि जिन विद्यालयों में टेलीविजन दिखाने के लिए उचित संसाधन हैं या नहीं। उसके बाद जाना कि गणित विषय से सबंधित कार्यक्रम से बच्चे कितना अधिगम करते हैं? गणित विषय के तरंग कार्यक्रम के प्रति विद्यार्थियों के क्या विचार हैं? पुनः गणित विषय के प्रति अध्यापको के क्या विचार हैं? और अन्त मे गणित विषय के तरग कार्यक्रम के प्रति प्रधानाध्यापकों के क्या विचार है? उपरोक्त सारे बिन्दुओं पर शोधकर्ता ने अपने शोध अध्ययन के दौरान ध्यान दिया तथा इसी से संबधित बिन्दुओं को एकत्रित किया।

निष्कर्ष एवं व्याख्या

- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तंरग कार्यक्रम मे विद्यार्थियो की उपलब्धि नगण्य है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तंरग कार्यक्रम के प्रति विद्यार्थियो के विचार सकारात्मक है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तरग कार्यक्रम के प्रति अध्यापको का विचार नकारात्मक है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तंरग कार्यक्रम की शिक्षण विधि प्रभावी नही है।
- ☐ प्रधानाध्यापकों के विचार मे शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तंरग कार्यक्रम का स्तर विद्यार्थियों के मानसिक स्तर का नही है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तंरग कार्यक्रम की विषय-वस्तु विद्यार्थियो की कक्षा की विषय-वस्तु से सबंधित है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तरग कार्यक्रम से विद्यार्थी अधिगम के लिए अभिप्रेरित है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तरग कार्यक्रम के लिए निर्धारित अवधि कम है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तंरग कार्यक्रम नवाचार युक्त अध्यांपन के लिए आवश्यक है।
- ☐ शैक्षिक दूरदर्शन के माध्यम से प्रसारित गणित विषय के तंरग कार्यक्रम के लिए विद्यालयों में समुचित व्यवस्था नही है।

उपर्युक्त निष्कर्षो के आधार पर संक्षेप में कहा जा सकता है कि शैक्षिक दूरदर्शन द्वारा प्रसारित तरग कार्यक्रम से विद्यार्थियों में सीखने की तत्परता की कमी नहीं है लेकिन उचित मार्गदर्शन व दिशा निर्देशन की कमी की वजह से विद्यार्थियों का इस कार्यक्रम के माध्यम से अधिगम स्तर कम हो रहा है। इसका मुख्य कारण है अध्यापको व प्रधानाध्यापको का इस कार्यक्रम के प्रति नकारात्मक रवैया। इस कार्यक्रम से विद्यार्थियों का अधिगम स्तर बढ़ाने के लिए अध्यापको व प्रधानाध्यापकों के साथ-साथ माता-पिता को भी एकजुट होकर प्रयास करना होगा। साथ में अध्यापकों व प्रधानाध्यापको को परम्परागत विधि से व गैर-शैक्षिक

कार्यक्रमो की ओर कम ध्यान देकर विद्यार्थियो व इस कार्यक्रम के प्रति नियमित व सजग रहना होगा। तथा नए-नए सुझावो के माध्यम से इस कार्यक्रम को सफल बनाना होगा। तभी इस कार्यक्रम से शिक्षा के क्षेत्र में नवाचार लाया जा सकता है तथा सम्पूर्ण वातावरण मे आमूल परिर्वतन सभव है। जिससे शैक्षिक दूरदर्शन के तरग कार्यक्रम से शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है।

सुझाव

शोध के परिणाम व व्याख्या से स्पष्ट है कि शैक्षिक दूरदर्शन के तरग कार्यक्रम से शिक्षार्थी सीखने को अभिप्रेरित है, लेकिन अध्यापकगण व प्रधानाध्यापको के प्रतिकूल रवैए के कारण शिक्षार्थियो की उपलब्धि नाम मात्र की हो रही है। शैक्षिक दूरदर्शन के तरग कार्यक्रम के माध्यम से विषय-वस्तु को सरल से सरल विधि द्वारा बताया जाता है। इस कार्यक्रम के माध्यम से शिक्षार्थी आसानी से विषय-वस्तु को समझ लेता है। तरंग कार्यक्रम विद्यार्थियों की कक्षा-5 की विषय-वस्तु व वातावरण के अनुकूल है। प्रधानाध्यापको व अध्यापकगण की नकारात्मक सोच व उचित मार्गदर्शन न देने के बावजूद विद्यार्थियों का शैक्षिक दूरदर्शन के तरग कार्यक्रम से अधिगम करने की प्रेरणा शैक्षिक दूरदर्शन के तरग कार्यक्रम की सार्थकता को सिद्ध करता है।

समालोचना

शैक्षिक दूरदर्शन का तरग कार्यक्रम सभी तक शिक्षा पहुचाने के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण कदम है। इस कार्यक्रम के माध्यम से अमीर से अमीर व गरीब से गरीब सभी बच्चो के बीच भेदभाव मिटाकर उन्हे लाभान्वित किया जा सकता है। यह कार्यक्रम प्रशिक्षित शिक्षको की कमी को दूर कर रहा है। साथ मे विद्यार्थी भी इस कार्यक्रम के माध्यम से सीखने को अभिप्रेरित है। लेकिन अध्यापको व प्रधानाध्यापको के पास समय की कमी तथा गैर-शैक्षिक कार्यो की बढोत्तरी इस कार्यक्रम के लिए बाधक है और सबसे बडी बाधा इस कार्यक्रम के लिए अध्यापको व प्रधानाध्यापको को न तो किसी प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता है और न ही किस दिन कौन से विषय से संबधित कार्यक्रम प्रसारित होगा, इसकी कोई रूपरेखा पहले से उपलब्ध होती है। जिसकी वजह से यह कार्यक्रम अध्यापको की दृष्टि अपनी ओर आकृष्ट करने में अक्षम है। विद्यालय मे उचित कमरो की व्यवस्था नही है। एक या दो ही कमरा होने के कारण व विद्यार्थियो की संख्या ज्यादा होने के कारण अनुशासन हीनता का माहौल रहता है एव नियमित बिजली आपूर्ति न होना भी एक बहुत बडी बाधा है। जो इस कार्यक्रम की लोकप्रियता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

अतः उपरोक्त बिन्दुओ पर ध्यान देकर शैक्षिक दूरदर्शन के तरग कार्यक्रम से विद्यार्थियो को लाभान्वित किया जा सकता है जो कि शिक्षा के क्षेत्र मे महत्वपूर्ण कदम होगा। ❑❑

तीन लालटेन चौक
भोला बाबू कालोनी, के.पी.हाईस्कूल के पीछे
बेतिया, बिहार

प्राइमरी शिक्षक

दक्षिण भारतीय हिन्दी अध्यापकों एवं अन्य की रचनाओं का विशेषांक

वर्ष 27 | अक : 2 | अप्रैल 2002

इस अंक में

संपादक की कलम से

प्रस्तुत अक अन्य से विशेष है, क्योंकि इसमे प्रकाशित समस्त सामग्री दक्षिण भारत के चारों राज्यों के प्रतिभागियों ने तिरुवन्तपुरम में सम्पन्न कार्यशाला मे सम्मिलित होकर शिक्षा जगत के लिए अपने विचार, समस्याए व समाधान संभवतः हमारी प्रस्तुत पत्रिका हेतु सामूहिक रूप से प्रथम बार प्रस्तुत किए हैं। इस सामग्री में उन्होंने अपने-अपने राज्य में चलाए जा रहे शिक्षा कार्यक्रमो, हिन्दी के विकास से संबंधित गतिविधियों तथा अन्य जानकारिया दी है। अत. यह कहने मे कोई संकोच नही कि हमें अपने प्रयास मे सफलता मिली, जिसके लिए हम राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् के निदेशक डा. पी. एम जलील के आभारी है। इस कार्यक्रम के प्रयोग से यह सम्भावना बलवती हुई है कि भविष्य में भी इन राज्यो से अन्य की भांति हिन्दी भाषा में लिखे लेख व अन्य सामग्री हमारी पत्रिकाओ के लिए प्राप्त होती रहेगी, साथ ही प्रसार होने के कारण पाठकों की सख्या मे तो वृद्धि होगी ही, साथ ही अब तक जो पाठक इसके रसपान से वचित रहे हैं उनके समक्ष भी शैक्षिक अनुभवो, नवाचारों की नवीन ऊर्जा का स्रोत उन तक पहुंचेगा, ऐसी हमारी कामना है। ❑❑
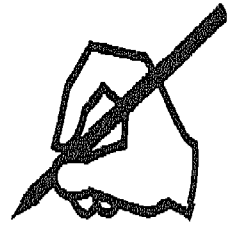
आन्ध्र प्रदेश में शिशु विकास केन्द्र

❑ टी. लीला

व्यक्ति के विकास में प्रथम पाच वर्ष बहुत ही महत्वपूर्ण है। इस सत्य को सारा संसार जानता है। इस दृष्टिकोण से स्थापित किए गए शिशु विकास केन्द्र, शिशुओ मे शारीरिक अभिवृद्धि के लिए पौष्टिक आहार द्वारा मानसिक विकास के लिए आनन्ददायक वातावरण बनाए रखकर तथा शिशुओं के अन्तर्गत शक्तियों को पहचान कर, सृजनात्मक शक्तियों को बढ़ाने मे प्रेरित करते हैं।

डी.पी.ई.पी. आन्ध्र प्रदेश द्वारा आयोजित ये शिशु विकास केन्द्र देश के भावी नागरिको को बलिष्ठ (शक्तिशाली) बुनियाद के लिए आन्ध्र प्रदेश वासी मिलकर शिशुओं को मां की ममता, मित्रों जैसे प्यार से उनकी देख-रेख कर, उन्हें आनन्ददायक वातावरण मे सम्पूर्ण मूर्तिमत्व विकसित करने की ओर आन्ध्र प्रदेश शिशु विकास केन्द्र बहुत आगे चल रहे है।

राज्य मे 2003 तक सार्वभौमिक शिक्षा प्राप्त करना डी. पी. ई. पी (DPEP) का मुख्य लक्ष्य है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कई अवरोध है। इनमे से सर्वप्रथम अवरोध छोटे बच्चों की देख-रेख में निमग्न हुए 6-11 वर्ष के बीच के बच्चे का पाठशाला जाने से इन्कार करना। इस समस्या के परिष्कार की दिशा मे बडे बच्चो के कर्तव्यों को सुलझाने के लिए 0-5 वर्षीय बच्चो की देखभाल के लिए शिशु विकास केन्द्र स्थापित किए गए है।

पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का अर्थ, आठ साल के भीतर के बाल/बालिकाओ का सरक्षण कार्यक्रम।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य

- ❑ शिशुओं का सम्पूर्ण विकास अर्थात् शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावावेश, भाषा, विज्ञान तथा सृजनात्मक विकास।
- ❑ छोटे बच्चों की देख-रेख करने वाले बड़े भाई व बहनो को पाठशाला जाने की सुविधा दिलाना।
- ❑ रोजनदारी श्रमिक माता-पिता को बच्चो के कर्तव्यो को कम करना।
- ❑ प्राथमिक शिक्षा के लिए समायव करना।
- ❑ सार्वभौमिक शिक्षा लक्ष्य प्राप्ति के लिए कृषि।

आज के नन्हें-मुन्हें, प्यारे बच्चे ही कल के सुनहरे भारत के चमकते सितारे हैं। जिन्हें चमकाना हम सब का प्रथम कर्तव्य है। खेलते-कूदते, नाचते-गाते , उचकते-फुदकते बच्चों को प्राथमिक शिक्षा के लिए तैयार करने की दिशा में ए.पी.डी.पी.ई.पी. शिशु विकास केन्द्र की आयोजना एक प्रयास है।

शिशु विकास केन्द्रों की आवश्यकता

बच्चों के जीवन मे प्रथम 6 वर्ष बहुत ही महत्वपूर्ण हैं क्योकि इस समय मे ही शिशुओ मे विकास स्थायी वेग बहुत अधिक रहता है। इसीलिए शिशुओ के सम्पूर्ण विकास के लिए प्रेरणायुक्त वातावरण बहुत प्रभावशाली साबित होता है।

सूचित जनजातियो के बच्चो के लिए तथा रोजवारी कामकाज मे नियमित हुए माता-पिता के बच्चो के लिए शिशु विकास केन्द्र आवश्यक हैं।

ये शिशु विकास केन्द्र शिशुओ को प्रारम्भिक शिक्षा के लिए तैयार करते है और उच्च श्रेणी की शिक्षा प्राप्त करने में, अच्छा जीवन बिताने के लिए सहायता करते है।

पूर्व प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम

शिक्षा विकास केन्द्र

- ❑ 3-5 वर्षीय बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा के पहले किया गया आयोजन तथा प्राथमिक कक्षाओ के लिए शिशुओ को ससिद्ध करता है।
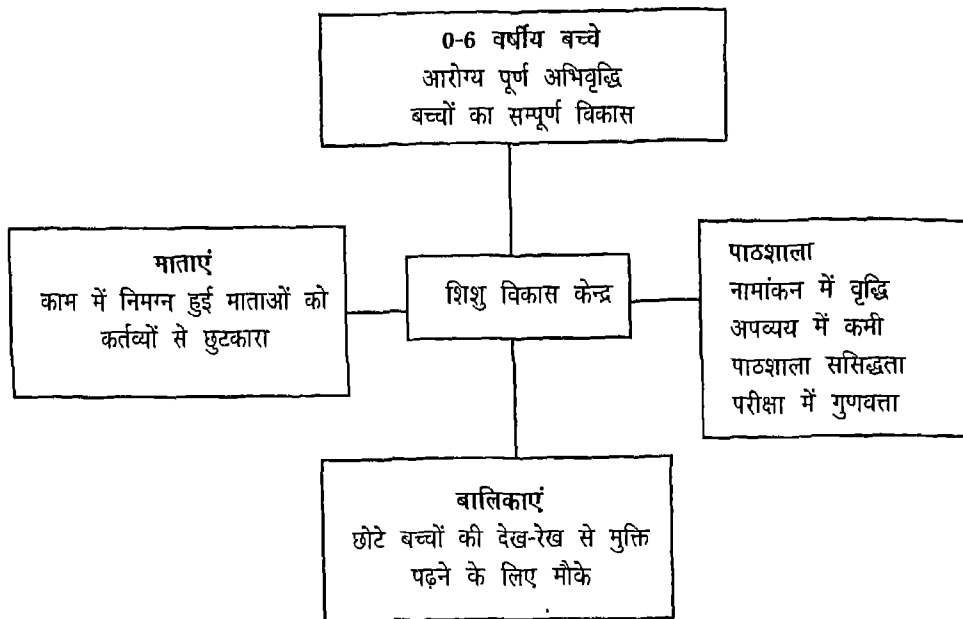
- ☐ खेलकूद, कार्यकलापो द्वारा शिशु केन्द्रित शिक्षा कार्यक्रम।
- ☐ खेलो के माध्यम से, खेलो के वातावरण से शिशुओं का सम्पूर्ण विकास अर्थात्, शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भावावेश, शिक्षा विकास इत्यादि सहायक कार्यक्रम।
- ☐ वातावरण से संबंध बढ़ाना, सृजनात्मक समस्याओं को आसानी से सुलझाना, सामर्थ्य को बढ़ाना, सभी से मैत्रीपूर्ण रहने के वातावरण को प्रोत्साहित करना।
- ☐ प्रत्यक्ष अनुभवों के द्वारा सीखने की विधियो से संबधित कौशलो को बढ़ाना।

शिशु विकास केन्द्र

खेलकूद सहज विधि

बच्चो के लिए खेलकूद एक सहज प्रक्रिया है। खेलकूद में बच्चे कई विषय आसानी से सीखते हैं।

खेल को प्रोत्साहित करने वाले

- ☐ कथा कथन।
- ☐ अभिनय गीत, बाल गीत।
- ☐ घर के खेल।
- ☐ बाहर के खेल।
- ☐ नाटकीकरण।
- ☐ कठपुतली का खेल।
- ☐ पानी के खेल।
- ☐ सृजनात्मक खेल।
- ☐ स्थानीय वस्तुओं से खेल।

शिशु विकास केन्द्र – आ.प्र. डी.पी.ई.पी. की दृष्टि

सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा को प्राप्त करने के लक्ष्य हेतु आ प्र.डी पी.ई.पी. का मुख्य लक्ष्य बालिकाओं तथा विविध सामाजिक वर्गो के बीच नामाकन, तथा सीखने के स्तर भेदों को कम करना।

आ.प्र.डी.पी.ई.पी. द्वारा आयोजित की गई योजनाएं

- ☐ GOMS No. 49 edrc Pros-1 Dept dated 2-5-2000 शिशु विकास केन्द्रों का आयोजन।
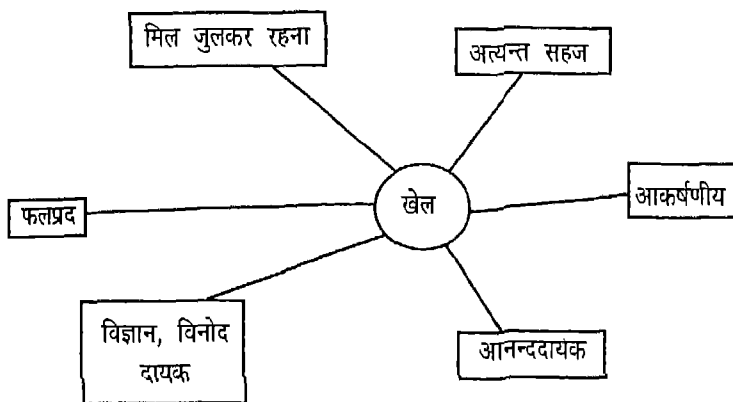
बच्चों के सहज खेल विकास की बुनियाद हैं उनकी प्रगति के लिए खेल ही एक अच्छा माध्यम हैं।

- प्रशिक्षण कार्यक्रम—दस दिन का प्रशिक्षण कार्यक्रम ई.सी.ई. शिक्षकों को दिया जा रहा है।
- पर्यवेक्षण— इसके अन्तर्गत मंडल और जिले में अधिकारियो को नियमित किया गया। ये अधिकारी, मंडल तथा जिले में पर्यवेक्षण तथा मार्गदर्शन का काम कर रहे हैं साथ ही रिसोर्स पर्सस जैसे काम भी कर रहे हैं।

उपर्युक्त कार्यक्रमों के आयोजन मे आन्ध्र प्रदेश के शिशु विकास केन्द्रों में प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप में शिशु अपने कौशलों को पूर्णरूप से विकसित करने का अवकाश पाते हैं तथा सृजनात्मक ढग से शिशुओं का सम्पूर्ण विकास हो रहा है। डी.पी.ई.पी. के लक्ष्य 2003 तक सार्वभौमिक शिक्षा, गुणात्मक शिक्षा की दिशा में, राज्य स्तरीय, जिला स्तरीय, मंडल तथा ग्राम स्तरीय रिसोर्स पर्सस की देख-रेख मे, मार्गदर्शन में शिशु विकास केन्द्र, पूर्व-प्राथमिक पाठशालाएं, आंगनवाड़ी केन्द्र जो कि प्राथमिक पाठशाला से जुड़ी हुई हैं, बहुत ही निराले ढंग से, गुणात्मकता मे सबसे आगे चल रही है। इन केन्द्रो के शिशु सर्वोतोमुख वृद्धि या सम्पूर्ण विकास पाकर शत-प्रतिशत प्राथमिक कक्षाओं मे नामांकन या दाखिला पा रहे है।

❑❑

मूल्याधारित शिक्षा की दिशा में आन्ध्र प्रदेश

किसी भी देश की प्रगति उस देश की शिक्षा पर आधारित होती है। स्वतन्त्र भारत देश में शिक्षा की दिशा मे अधिक प्रगति हुई है, और हो रही है। किन्तु साथ ही साथ मूल्यों का ह्रास भी होता जा रहा है। मूल्यो के ह्रास से परिवार की क्षति ही नहीं बल्कि समाज तथा देश की क्षति भी सम्भव हो सकती है। मूल्य सभी जातियों में एक समान हैं यह सिर्फ जातियों में ही एक समान नहीं बल्कि सभी धर्मो में भी एक समान, एक तरह के हैं। आज की पीढ़ी जो पाश्चात्य देशों के नकारात्मक

कार्यकलापों से प्रभावित हो रही है, और आज चौराहे पर खड़ी है, समझ नहीं पा रही है कि किधर जाए और कौन सा रास्ता अपनाए।

शिक्षा का मुख्य उद्देश्य बालक का सर्वागीण विकास है। (शारीरिक, मानसिक, भावावेश, सामाजिक तथा आध्यात्मिक) आज के नौजवान समाज का दर्पण है, जिसमें समाज के रहन-सहन, रीति-रिवाजों को देख सकते है। यदि हम हमारे भारत देश की प्रगति चाहते है व सारे संसार में भारत को विश्व में ऊंचा दिखाना चाहते हैं, भारत की प्रशसा चाहते है तो हमें मूल्याधारित शिक्षा का एक वृहद् कार्यक्रम (प्राथमिक शिक्षा से लेकर कलाशालाओ, विश्वविद्यालयी शिक्षा तक) बनाना होगा।

भारत देश में स्वतन्त्रता के बाद कई आयोग और कमेटियां आई जिनमे मूल्याधारित शिक्षा की सिफारिश की गई है। जैसे राधाकृष्ण कमेटी, कोठारी आयोग, नई शिक्षा नीति– 1986, राममूर्ति कमेटी तथा मूल्याधारित कमेटी इत्यादि। इन सब कमेटियों तथा आयोगों की सिफारिशे सिर्फ कागज पर ही हैं। अब तक शिक्षा विधि में बालकों को सिर्फ ज्ञान पर बल दिया जा रहा है। उनके सिर्फ ज्ञान को प्रसारित किया जा रहा है।

यदि हम भारत की प्रगति चाहते हैं, सारे भारत को विश्व में ऊंचा दिखाना चाहते हैं, विश्व में भारत की प्रशंसा चाहते हैं, तो आओ भारत-वासियो, शिक्षाविदो, शिक्षको, बालको भारत में हम एक मूल्याधारित शिक्षा की वृहद् प्रणाली बनाएं, प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालयी स्तर तक। जिससे सम्पूर्ण देशवासी मूल्यवान बनकर हमारे प्यारे भारत को सारे संसार में मूल्यवान बनाएं।

मूल्याधारित कमेटी ने यह भी सिफारिश की है कि मूल्याधारित शिक्षा का आरम्भ प्राथमिक स्तर से ही होना चाहिए क्योकि इस स्तर पर बच्चे एक कोरी स्लेट की भांति होते हैं, कोमल टहनी की भांति होते है, कुम्हार की कच्ची मिट्टी की भांति होते हैं। उनके मस्तिष्क में हम जैसी भी मुद्रा डालेगे, वह शाश्वत मुद्रा बन जाएगी। हम उन्हे जैसे चाहें वैसे मोड़ दे सकते हैं। आज के नन्हें-नन्हें सुनहरे बालक कल के सुनहरे भारत के सुनहरे नागरिक बनेंगे।

इस दिशा मे आन्ध्र प्रदेश के मुख्यमत्री श्री नारा चन्द्रबाबू नायडू जी ने एक विशिष्ट कदम उठाया है। मुख्यमंत्री जी का आशय मूल्याधारित शिक्षा के द्वारा आन्ध्र प्रदेश को स्वर्णिम आन्ध्र प्रदेश बनाना है।

आन्ध्र प्रदेश के सारे बच्चों को मूल्यवान, गुणवान बनाने हेतु निदेशक एस सी ई.आर टी. द्वारा एक वृहद् कार्यक्रम कासकेड सिस्टम के आधार पर बनाया गया। जिसके अन्तर्गत प्रथम स्तर पर (राष्ट्रीय स्तर पर) 400 विशेषज्ञो (हर जिले से 15 विशेषज्ञ, एस.सी ई.आर.टी के विशेषज्ञ) को माउंटआबू, राजस्थान जिले में, ब्रह्मकुमारी विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों द्वारा 6 दिन का प्रशिक्षण कार्यक्रम रखा गया। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम प्रातः 6 बजे खेल-खेल में योग से प्रारम्भ होता था और रात 10 बजे तक चलता था। इस प्रशिक्षण में सकारात्मक आलोचना रूपांतरण, मूल्यो को बनाए रखना, मूल्य और कक्षा अध्यापन तथा मूल्य तथा मूल्याधारित कार्यकलाप इत्यादि अंश समझाए गए जो कि सारे प्रतिभागियों के हृदयों को छू गए। प्रतिभागियों के प्रतिस्पन्दन पत्र इस प्रकार थे–

- प्रतिभागियों ने यह बताया कि इस प्रशिक्षण के द्वारा उनका विश्वास बढ़ा और उनमें सकारात्मक परिवर्तन आए जिन्हें वे समाज में पाठशाला के छात्रो मे सकारात्मकता तथा आत्मविश्वास को बढ़ाएं तथा अपने निजी जीवन में भी इसे अपनाएंगे
- विशेषज्ञ जिन्होने प्रशिक्षण पाया उनका यह अभिमत था कि मूल्य और मूल्याधारित कृत्य योग इत्यादि विषय मे वे संसाधन बन गए हैं। इनके द्वारा अपने जिले के द्विस्तरीय प्रशिक्षण केन्द्रों के अध्यापक गण को भी विशेषज्ञ बनाएगे।

- खेल-खेल मे योग प्रशिक्षण सबको भा गया जो प्रतिदिन प्रातःकाल 6 बजे से लेकर 7 बजे तक अनिवार्य रखा गया।

कई योगासन खेल-खेल में सिखाए गए जो बहुत आसान थे। प्रतिभागियो ने आत्मविश्वास के साथ यह कहा कि उन्होंने जो आसन सीखे हैं उन्हे वे अपनी कक्षा के छात्रों को सिखाएगे। उनका यह कहना था कि ये योगासन हर पाठशाला मे हर छात्र को अनिवार्य रूप से सिखाने चाहिए क्योंकि योग से रोग दूर भागते है।

राज्य का द्वितीय तथा तृतीय स्तरीय कार्यक्रम

- द्वितीय स्तर मे राज्य मे एक कार्यशाला का आयोजन किया जाएगा जिसमे 3-7 तथा 8-14 साल के बच्चो के लिए मूल्याधारित कृत्य, कहानिया, गाने इत्यादि जो अग्रेजी मे है उनका तेलुगु में अनुवाद किया जाएगा।
- जिला स्तरीय प्रशिक्षण कार्यक्रम में चार दिन का प्रशिक्षण कार्यक्रम रखा जाएगा जिसमें पूरे जिले के छात्रो को मूल्याधारित शिक्षा देने के लिए विशेषज्ञ अध्यापको को प्रशिक्षित किया जाएगा।
- मडल स्तरीय प्रशिक्षण—इस प्रशिक्षण में मंडल के अध्यापकों का प्रशिक्षण कार्यक्रम (3 दिन का) रखा जाएगा।
- इस वृहद् कार्यक्रम के द्वारा पूरे आन्ध्र प्रदेश के पाठशाला के छात्रो को मूल्याधारित शिक्षा दी जाएगी।

इस मूल्याधारित शिक्षा के द्वारा सारे आन्ध्र प्रदेश के शिक्षक गण प्रशिक्षित होंगे तथा सारे छात्रों को मूल्याधारित प्रशिक्षण दिया जाएगा, जिससे सारे के सारे बच्चे मूल्यवान बनकर आन्ध्र प्रदेश को आदर्श आन्ध्र प्रदेश बनाएगे। ❑❑

आन्ध्र प्रदेश प्राथमिक कक्षाओं में मूल्याधारित शिक्षा का एकीकरण

आज के यांत्रिकी, आधुनिक नागरिक तथा महत्वाकांक्षी इन्सान के बच्चों को तनाव मुक्त करना है। उनका मासूम बचपन खो रहा है और वे गला काट प्रतियोगी समाज के पंजों में जकड़े हुए हैं उन्हें छुड़ाने के लिए एक नया कदम एस.सी.ई.आर.टी. आन्ध्र प्रदेश हैदराबाद के मार्गदर्शन में उठाया गया है (अग्रवाल गर्ल्स हाईस्कूल, चारकमान, हैदराबाद में) वह है मूल्यों को पाठ्यांशों में सम्मिलित कर पढ़ाना। जिससे छात्र मूल्यवान व भौतिक स्तर पर कामयाब होते हुए हर्षोल्लास से भरे नव समाजीकरण में अपना योगदान करेंगे।

जीवन मूल्य क्या हैं? तुरन्त जबाब मिलेगा – ईमानदारी, सहानुभूति इत्यादि। अगर हम इसे गहराई से सोचे तब हमे पता चलेगा कि मूल्य कुछ नहीं बल्कि कार्यान्वित गुण हैं। मूल्य जीवन को गुणवत्ता व अर्थ प्रदान करते हैं और व्यक्ति को उसकी पहचान एव चरित्र।

भीतरी कार्यान्वित मूल्य जैसे प्यार, खुशी, सहनशीलता इत्यादि हृदय से उभरते है। जो बाहरी कार्यान्वित मूल्य जैसे अनुशासन, समयनिष्ठा, ईमानदारी इत्यादि की बुनियाद बनते है। ये सभी सार्वत्रिक स्वीकृत मूल्य हैं। इनको कार्यान्वित करने से इनका लाभ हमेशा बना रहेगा। ये मूल्य हमें पूर्ण रूपान्तरित कर देगे। सामाजिक सुमेल, इच्छाशक्ति बढ़ाने, मन को नियंत्रण करने में मदद करेंगे।

उपरोक्त मूल्यों के महत्व के कारण वैदिक युग से लेकर इस आधुनिक युग तक सभी शैक्षणिक कमीशन, समिति आदि ने मूल्य आधारित शिक्षा पर जोर दिया हैं। किन्तु वे बाहरी कार्यान्वित मूल्य तक ही सीमित रहे हैं।

इसलिए अब हमे जागृत होना है। आज के यान्त्रिकी, आधुनिक नागरिक तथा महत्वाकांक्षी इन्सान के बच्चों को तनाव से मुक्त करना है। वे अपने मासूम बचपन को खो रहे है और गला काट प्रतियोगी समाज के पंजो में जकड़े हुए है उन्हें छुड़ाना है।

उसका हल है मूल्यो को पाठ्यांश में सम्मिलित कर पढ़ाना। उससे अध्यापक/छात्र अधिक समय व अधिक भार से भी बच सकेंगे तथा कक्षा को अत्यन्त प्रेरित, दिलचस्प, सृजनात्मक, कौतुक बना सकते हैं। यह बच्चो के मन पर आजीवन गहरी छाप छोड़ पाता है। उनके गुणात्मक जीवन को और भी सुधारता है। इस संसार की चुनौतियों का सामना करने का धैर्य और शक्ति प्रदान करता है।

चलिए, अब हम देखेंगे कि भीतरी व बाहरी कार्यान्वित मूल्यो को आन्ध्र प्रदेश की प्राथमिक कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकों के विषयों मे कैसे सम्मिलित कर पढ़ा सकते हैं।

क्र.सं.	श्रेणी/कक्षा	विषय	पाठ	मूल्य	कहानी, कथन, गीत, खेल आदि
1.	2.	3.	4.	5.	6.
1.	तृतीय	अंग्रेजी	ए पैरेट एड द स्पेरो	1. शिष्टाचार 2. सफाई 3. पशुओं की देखभाल	
2.	तृतीय	अग्रजी	ग्रौली वीयर	1. मृदुभाषी होना 2. मुस्कुराहट से कई दोस्तों को बना सकते हैं।	**अभिनय** गीत—नकाब पहनकर सुनाना तथा बताना कि जानवर/इन्सान दोनों एक-दूसरे पर कैसे निर्भर हैं। शेर दहाड़ा हो-हो-होः गीदड़ नाचे, गाय, लोमड़ी, कुत्ता भौके भौं भौं भौ म्याऊं, म्याऊ, बिल्ली बोली और लगती वह कितनी भोली।
3	चतुर्थ	अंग्रेजी	कैन आई स्पेयर टाइम	1. ईमानदारी 2. जो बोलते है वह करें जो करते हैं वही बोले जिससे आत्मविश्वास बढ़ेगा तथा दूसरे भी	**कहानी ईमानदारी**—एक लकड़हारे की कुल्हाड़ी जिस पेड़ को वह काट रहा था, उसके ठीक नीचे नदी में जा गिरी। वह बहुत दुःखी हुआ। एक जलदेवता ने सोने की कुल्हाड़ी से प्रत्यक्ष होकर पूछा "क्या यह सोने की कुल्हाड़ी तुम्हारी है?" लकड़हारे ने कहा "नहीं"। फिर उसने चांदी की कुल्हाड़ी लाकर पूछा तो लकड़हारे ने निराश होकर कहा "नही"। जलदेवता ने

1.	2.	3.	4.	5.	6.
				आप पर विश्वास करेंगे।	लकडहारे को उसकी कुल्हाडी के साथ सोने व चादी की कुल्हाडियां भी देकर उसकी ईमानदारी की बहुत प्रशसा की। लकड़हारे ने आजीवन सुखी जीवन विताया।
4	चतुर्थ	अग्रेजी	द ग्रीडी बेगर	1. लालच बुरी वला है।	**लालची कुत्ता**— एक कुत्ते को एक हड्डी मिली। रास्ते में उसे एक नाला पार करना था। जिस पर पुल था। पुल पर पहुंचकर उसने नीचे पानी मे अपनी परछाई देखी। उसने सोचा वह एक दूसरा कुत्ता है। उसके मुंह में भी एक हड्डी है। उस हड्डी को पाने की इच्छा से भौ-भौ भौका। मुह में से हड्डी पानी में गिर गई। निराश होकर वह लालची कुत्ता चला गया।
5	प्रथम–पंचम	गणित	ज्यामिति सरल रेखा	1. सीधा साफ कहना 2. ईमानदारी	
6	प्रथम–पंचम	गणित	जोड़	1 खुशियो को जोडें 2 सकारात्मक भावों को जोड़े	
7.	प्रथम–पंचम	गणित	घटाना	1 दुखो को घटाना 2. नकारात्मक भावों को घटाना	
8.	प्रथम–पंचम	गणित	भाग	1. बाटना	
9	प्रथम–पचम	गणित	समय-मापन	1. समय का पालन करना 2 वर्तमान में जिएं, भूत, भविष्य की चिंता छोड़ें। 3 समय का सदुपयोग बहुत ही सतर्कता से करें।	घड़ी के मुखो द्वारा दिन भर का कार्यक्रम **गीत**— मुझको अच्छा लगता रोज सवेरे उठना हस कर दातुन करना और समय से पढना।

1.	2.	3.	4.	5.	6.
10.	प्रथम– पचम	सामाजिक अध्ययन	सौर मंडल पृथ्वी, परिक्रमा परिभ्रमण	1. अपने गुणों से चमकना 2. सुव्यवस्था 3. नियमितता 4. संतुलन	
11.	प्रथम– पंचम	सामाजिक अध्ययन	सड़क सुरक्षा	1 नियमों का पालन 2 अनुशासन 3. कतार मदद करती है।	**गीत**— सड़क बनी है लम्बी चौड़ी इस पर जाती मोटर दौड़ी सब बच्चे पटरी पर रहना बीच सड़क पर कभी न जाना कहीं भूल से तुम जाओगे चोट लगेगी पछताओगे।
12.	प्रथम– पंचम	सामाजिक अध्ययन	स्वराज- आन्दोलन गांधी-नेहरु आदि	1. धैर्य 2. एकता 3 देशभक्ति	**गीत**— मैं भारत का लाल नहीं किसी से डरता मीठी-मीठी बातें करता सदा प्रेम से रहता।
13.	प्रथम– पंचम	सामाजिक अध्ययन	त्यौहार-धर्म	1. एकता 2 विश्व कल्याण 3 विश्व प्यार 4. भाईचारा 5. धर्मनिरपेक्षता	**कहानी—एकता में ही बल है** — एक बार कबूतरो का एक झुण्ड आकाश में उड़ता हुआ जा रहा था। उन्होंने देखा कि उनके ठीक नीचे चावलो के चमकते दाने बिखरे पड़े थे। कबूतरों के राजा ने सबको उन दानों को चुगने के लिए कहा तब वे नीचे उतरे और दाने चुगने लगे। कहीं से उनके ऊपर एक जाल गिरा वे सभी उसमे फस गए। वे बहुत घबरा गए। उनके राजा ने साहस जुटाकर कहा "आओ सब मिलकर जोर लगाए, जाल समेत उड़ चले। बहेलिया उनका पीछा कर रहा था। यह देखकर वे और ऊंचा उड़ते हुए बहेलिये की पहुंच से दूर, अपने दोस्त चूहे के विल के पास उतरे। चूहे दोस्त के सहारे उस जाल से छूटकर उड़ गए।"

1.	2.	3.	4.	5.	6.
14.	प्रथम–पंचम	विज्ञान	पेड/पौधे	1. दोस्त हैं 2. उदारता 3 भविष्य के लिए सोपान 4 वृक्षो रक्षति रक्षित– 5. प्रकृति में सतुलन 6 एक पेड़ सहस्र पुत्रों के बराबर (वेदोक्ति)	जगदीश चन्द्र बोस जब छोटे थे उनकी माताजी ने यह बताया था कि "शाम के समय पेड़ सोते है, उनको हमें सताना नहीं चाहिए।" यह धारणा बालक जगदीश पर गहरी छाप छोड़ गई और "पेड़ों में प्राण हैं" यह साबित किया और विश्व वैज्ञानिक बन गए।
15	प्रथम–पचम	विज्ञान	पुष्प	1 गुलाब से सुन्दरता, प्यार 2 खुशी फैलाना 3. जीवन फूलो की शय्या नही 4. कमल कीचड़ में रहते हुए बताता है कि दुख में प्रसन्न और मुस्कराते रहना चाहिए।	
16.	प्रथम–पंचम	विज्ञान	पशु/पक्षी	1. एक-दूसरे पर निर्भर (मानव-पशु -पक्षी-पेड़)।	

1.	2.	3.	4.	5.	6.
				2. दोस्त हैं 3. समानता सभी (छोटे-बड़े मे अंतर नही) एक दूसरे के काम आएंगे।	एक शेर पेड़ के नीचे सो रहा था। अचानक एक चूहा शेर के ऊपर आ गिरा। शेर को गुस्सा आया। उसने चूहे को पकड़ लिया। चूहा उसे छोडने के लिए शेर से प्रार्थना करने लगा। और कहने लगा "शायद मै कभी आपके काम आ सकू!" शेर उसकी बातों पर हसा, सोचा कि "एक छोटा-सा चूहा मेरी क्या मदद कर सकता है।" और चूहे को छोड़ दिया।
				4 गाय से नम्र व्यवहार, साधु स्वभाव।	एक दिन शेर एक शिकारी के जाल मे फस गया। तब शेर को उस चूहे ने बचा लिया।
				5. पशु/पक्षी की देखभाल	एक दिन सिद्धार्थ बगीचे में पेड़-पौधों के बीच थे, एक घायल हस उनके पास आ गिरा। वे तुरंत उसकी सेवा मे लग गए। देवदत्त जिसने उस हस को मार गिराया था, वहां पहुचे और हंस को वापस देने की मांग की। सिद्धार्थ ने हस को देने से साफ इन्कार कर दिया क्योकि देवदत्त ने हस को जान से मारने की चेष्टा की थी। देवदत्त हस के बिना निराश लौट गया। हंस जो सिद्धार्थ की शरण मे था, खुश था।
				6 विद्यार्थी के पाच सूत्र. काकदृष्टि वकोध्यान श्वाननिद्रा तथैव च, अल्पाहार जीर्णवस्त्रं पञ्चेते पाठकाः गुणाः।	**विद्यार्थी को काक की तरह प्रयास करना चाहिए**— एक कौआ बहुत प्यासा था। वह आसपास पानी को ढूंढ़ रहा था। उसे पानी का घड़ा दिखाई दिया। लेकिन उस घड़े मे पानी बहुत कम था। उसे एक उपाय सूझा। वह एक-एक कंकड़ को चुनकर घड़े डालता रहा। घड़े का पानी ऊपर आ गया। कौआ पानी पीकर उड गया। विद्यार्थी कौए से मिलजुलकर रहना, बाटकर खाना सीख सकता है। जब एक कौए को कुछ खाना मिलता है तो वह कांव-कांव करते हुए सब कौओं

1.	2.	3.	4.	5.	6.
					को इकट्ठा करके बताता है कि वहां कुछ आहार है, चलो सब मिलकर खाए।
17	प्रथम—पंचम	विज्ञान	पक्षियो का प्रवास	1 नियमितता सूरज का पूरब से उगना, पश्चिम में अस्त होना।	महासमुद्र के कछुए समुद्र किनारे रेत में एक ही जगह हर वर्ष वही जगह चुनकर अंडे देकर समुद्र की गहराई मे से उनकी निगरानी करते है।
18.	प्रथम—पचम	विज्ञान	प्रदूषण	1. मौन (लाभ)	**बधिरता के कारण हल**— दिसंबर 1984 मे यूनियन कार्बाइड फैक्ट्री मे 3000 लोगों की मृत्यु हो गई और कई बीमार हो गए।
				2 प्रकृति को बचाने मे आन्ध्र प्रदेश का एक छोटा-सा प्रयास।	**आन्ध्र प्रदेश सरकार का जन्म भूमि कार्यक्रम**— स्वच्छ व हरित कार्यक्रम वर्तमान मुख्यमंत्री के आदेशानुसार सारे राज्य मे हर तृतीय शनिवार को यह कार्यक्रम हर विद्यालय तथा हर एक कार्यालय में कार्यान्वित किया जा रहा है। हर वर्ष जनवरी 1-7 तथा जून 1-7 तिथियो मे आन्ध्र प्रदेश का हर बच्चा-बूढ़ा, लिग, जाति, अमीर-गरीब, भेदभाव छोड़कर अपने-अपने सस्थानो को, सड़क, हर स्थान को साफ तथा स्वच्छ रखते हैं। पेड़/पौधे लगाते हैं। अब तक करीब करोड़ों पौधारोपण किए गए। जिससे सारे राज्य विशिष्ट रूप से हैदराबाद शहर को हरा-भरा, सुन्दर, स्वच्छ, प्रदूषण रहित बना दिया गया है।
19.	कक्षा पंचम	तेलुगू	रेडक्रास	1. दूसरों की मदद करना 2 सेवाभाव 3. रक्षा करना	
20.	कक्षा प्रथम	तेलुगू	भयमेंदुकु	1. धैर्य 2 आत्म-विश्वास	

इसी तरह नृत्य, नाटक, सगीत, योगासन, स्काउट-गाइड एन सी.सी. खेल जैसे पाठ्येतर कार्यक्रमो के द्वारा प्रसन्नता, शांति, सदाचार, अनुशासन, आत्मविश्वास, आत्मसम्मान आदि मूल्यों को आत्मसात् करने में मुख्य भूमिका निभाते हैं। जिसे छात्र न ही मूल्य भूलेंगे और न पाठ्याश को।

अब एक खेल द्वारा कैसे मूल्य सिखा सकते हैं देखिए—
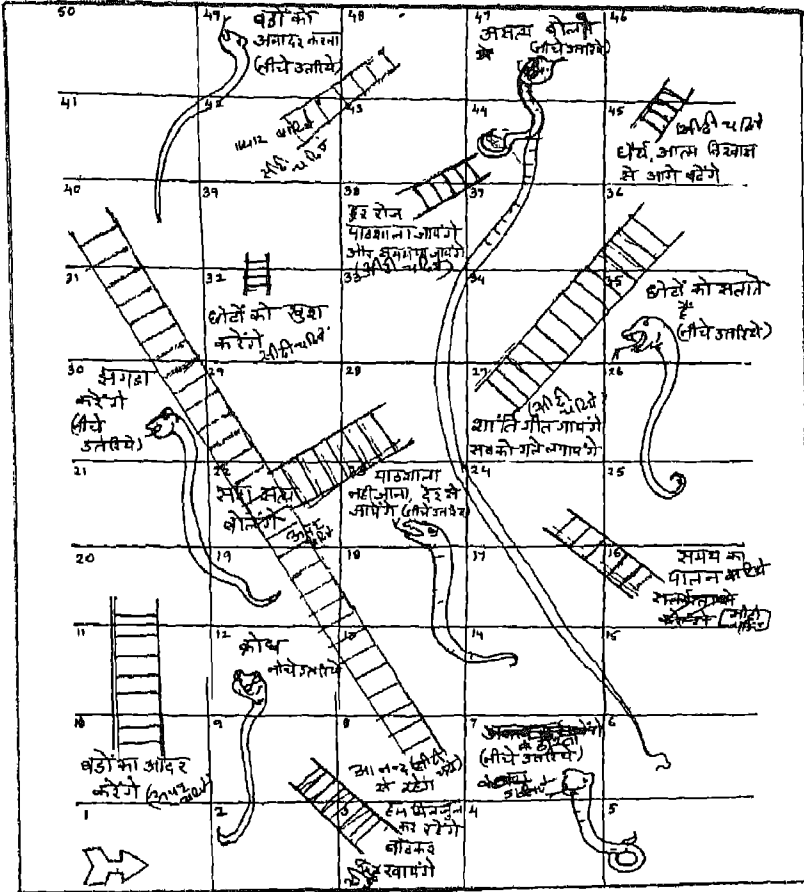
खेलिए मूल्यवान बनिए

प्रोफेसर
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
हैदराबाद, आन्ध्र प्रदेश

आन्ध्र प्रदेश में गुणवत्ता आधारित कार्यक्रम

❑ एन. सरोजनी देवी

बच्चों में शिक्षा के अनुभवात्मक मूल्यों का विकास

एक अच्छे संवेदनशील मानव बनाने वाले मूल्यों को अर्जित करके समाज में सार्वभौमिक प्रेम, भाईचारा एव शाति का सदेश पहुचाया जा सके इस उद्देश्य को लेकर आध्र प्रदेश सरकार ने बच्चो और शिक्षकों के लिए अन्तर्राज्यीय कैम्प का आयोजन किया है। जिसमे आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु (चेन्नई), राजस्थान तथा हरियाणा के छात्र तथा शिक्षको ने भाग लिया। यह कैम्प 17 मई से लेकर 31 मई, 2000 तक था। इस कैम्प के आयोजन के कारण थे– हमारे समाज मे मूल्यों का पतन, हमारे नीति परक मूल्यों को बदलना, पाठ्यक्रम मे मूल्य शिक्षा को सर्वाधिक प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

कार्यक्रम के उद्देश्य

भागीदार इस कैम्प मे निम्नलिखित को समझेगे–

- ❑ भाषा, विश्वास, मान्यताएं, भोजन और रीति-रिवाजों की विभिन्नता जीवन मे रंग भरती है न कि एक दूसरे के प्रति अच्छी भावनाओ एवं आपसी समझ के रास्ते मे बाधा बनती है।
- ❑ देश के एक भाग से दूसरे भाग की यात्रा करके एव देश की संस्कृति, प्राकृतिक सुन्दरता, समृद्धि एव विभिन्नता का अवलोकन कर सम्पूर्ण देश एव देशवासियों को जानेगे।
- ❑ कैम्प में रहने व यात्रा के दौरान वास्तविक अंतर्सबद्धियों द्वारा मेल-जोल बढाएंगे तथा एक-दूसरे का ध्यान रखेंगे और मानव में प्रेम की सहज भावना के प्रभाव का अनुभव करेंगे।
- ❑ दैनिक जीवन में विभिन्न चुनौतियो एव परिस्थितियों का सामना करने व प्रबध करने का व्यावहारिक अनुभव प्राप्त करेगे।

इस कैम्प मे दो प्रमुख क्रियाकलापो पर बल दिया गया है–

- ❑ बच्चों और अध्यापकों के लिए अन्तर्राज्यीय कैम्प।
- ❑ सामुदायिक गान।
- ❑ इस कैम्प मे ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न करना, जहा औपचारिक शिक्षा के बिना सीख सकें।
- ❑ भागीदार इन परिस्थितियो में रहकर अनुभवों द्वारा हृदय के मर्मस्थलो को पहचाने।

भाषा, विश्वास, मान्यताएं, भोजन और रीति-रिवाजों की विभिन्नता जीवन में रंग भरती है न कि एक-दूसरे के प्रति अच्छी भावनाओं एवं आपसी समझ के रास्ते में बाधा बनती है।

यह कैम्प एक बड़े परिवार मे एक साथ रहने के प्रयोग के रूप में शुरू किया गया है। यह कैम्प प्रतिभागियों के लिए, प्रतिभागियों के द्वारा तथा प्रतिभागियों का ही था।

इस कैम्प में निम्नलिखित प्रमुख क्रियाकलाप प्रस्तुत किए गए–

- ❑ भाषाएं सीखना।
- ❑ स्थानीय सामुदायिक लोगों के साथ अन्तर्क्रिया।
- ❑ खेल, शारीरिक शिक्षा, सामान्य योग।
- ❑ सृजनात्मक क्रियाए उदाहरण कहानिया, कविताए, चित्रकला, मूर्तिकला, सास्कृतिक कार्यक्रम, महत्वपूर्ण स्थानीय स्थलो का भ्रमण, सामुदायिक गान इत्यादि।

कार्यक्रम

पन्द्रह दिन का यह कैम्प वेस्ली गर्ल्स हाईस्कूल, सिकन्दराबाद में रखा गया। चारो राज्यो से आए प्रतिभागियो ने आते ही रजिस्ट्रेशन करवाया फिर नहा-धोकर कैम्प में आ गए।

कैम्प के प्रारम्भोत्सव मे भाग लिया। कैम्प का प्रारम्भोत्सव श्री रविन्द्र नाथ जी निदेशक ने किया। एन.सी.ई.आर.टी. के फील्ड ऑफीसर, एस.सी.ई.आर.टी. के प्रोफेसर्स, लेक्चरर्स, पाठशाला की प्रिन्सीपल श्रीमती सुनिला, प्रोफेसर लीला जी, लेक्चरर सम्मा रेड्डी ने कार्यक्रम के आरम्भोत्सव में हिस्सा लिया। चार राज्यो से कुल 72 प्रतिभागियो ने अपना परिचय किया।

कैम्प का कार्यक्रम प्रातः 6 बजे से रात 9 बजे तक रहता था। श्रीमती सुवार्ता जी तथा श्रीमती दीवना जी, पाठशाला के विशेषज्ञ, प्रातः काल 6-7 बजे तक योगासन सिखाती थीं। कुल 14 योगासन सिखाए गए। इस कैम्प की विशेषता यह थी कि कैम्प के पूरे भागीदारो ने खुशी से नाचते-गाते, खेलते-कूदते बालिकाए फूलों की तरह मुस्कुराती, कोयल की तरह गाती, कैम्प मे हिरणियों की भांति, न जात-पात, न उम्र, न रंग रूप सबको भूलकर एक समिष्टी परिवार के सदस्यों की भांति नए वातावरण में मिल-जुलकर 15 दिन इस तरह बिताए कि जन्म भर कभी न समाप्त होने वाली खुशी एवं भावनाओ की याद रहे जो हर एक के हृदय को छू देने वाले वातावरण में कार्य सम्पन्न हुआ।

समूह गान का नाम सुनते ही प्रतिभागी (बच्चे) भागकर समूहगान कक्ष मे इकठ्ठे हो जाते थे। प्रतिभाशाली सगीतकार श्री सुदर्शन जी ने प्रतिभागियो को 20 क्षेत्रीय गाने सिखाए। सबको एकता के बन्धन मे बाधने वाले 20 गानो को छात्राओ ने कोयल की तरह गा-गाकर कैम्पस के सारे वातावरण को रागमय, अनुरागमय बना दिया था।

एक दिन स्थानीय भ्रमण के लिए रखा गया। पूरे प्रतिभागियों ने हैदराबाद के दर्शनीय स्थल जैसे सालारजंग म्यूजियम, बिरला मन्दिर, चारमीनार, मक्का मस्जिद, गोलकोण्डा इत्यादि प्रसिद्ध देखने योग्य स्थल हिलोरें भरते हुए, एक-दूसरे का ध्यान रखते हुए हैदराबाद की सभ्यता संस्कृति, प्राकृतिक सौंदर्य, विभिन्नता का अवलोकन किया।

चित्रकला, हस्तकला, मूर्तिकला तथा सृजनात्मक क्रियाओं को श्रीमती रीटा फरिया जी, श्रीमती सोनिया जी ने बहुत ही निराले ढंग से सिखाया। निम्नलिखित क्रियाकलापो को भागीदारियो ने सीखा।

- गुलाब के फूल, पत्तिया।
- सुन्दर-सुन्दर गुड़िया।
- आभरण बक्से।
- बधाई-पत्र।
- गुलदस्ते।

कार्यक्रम में अपने-अपने राज्यों की संस्कृति को दर्शाने के लिए अवसर दिया गया जिसमें 4 राज्यों से आए प्रतिभागियो ने अपनी अध्यापिकाओ के साथ अपने-अपने कमरों को रगोली, नृत्य, संस्कृति, सभ्यता आदि के आधार पर तैयार किया। अन्त मे चारों राज्यों से आए प्रतिभागियों के लिए अपने-अपने राज्यों की सभ्यता, संस्कृति, दर्शनीय स्थल, रंगोली, नृत्य इत्यादि को प्रदर्शित करने का सुनहरा अवसर दिया गया। सबने अपने-अपने राज्यों की सभ्यता, सस्कृति को सूचित करने वाली रंगोली, नृत्य इत्यादि को प्रदर्शित किया। जिसे देखकर स्थानीय माता-पिता, विद्या वेत्ताओं को आश्चर्य चकित कर दिया। बालिकाओ ने अपने राज्यों के नृत्य– भरतनाट्यम्, कुचिपुड़ी, कथक, लोकनृत्य को मोरनियों के जैसे नाचते, 20 क्षेत्रीय गानों को कोयल की तरह गा-गाकर सारे सिकन्दराबाद वासियों, हैदराबाद वासियों के हृदयों में समा गई। ऐसा था हमारे आन्ध्र प्रदेश का 15 दिन का अन्तर्राज्यीय कैम्प।

प्राथमिक शिक्षा में लेखन कला को कैसे बढ़ाएं

सारे संसार में लगभग 3500 भाषाएं है। भारत एक ऐसा देश है जहां तरह-तरह की संस्कृतिया, जाति, धर्म और भाषाएं हैं। फिर भी हम सब आपस मे मिल-जुलकर रहते हैं। इसी विशिष्टता के कारण भारत सारे ससार में विख्यात है। हमारे देश के संविधान मे 18 स्वीकृत भाषाएं है।

भाषा मनुष्यों को आपस मे जोड़ने वाली धुरी है। भाषा के बिना हमारा जीवन सूना रहता है। इसलिए भाषा ने हमे पशु-पक्षियो से भिन्न स्थान दिया है। विलियम जेम्स ने कहा है कि "भाषा के कारण ही आदमी आदमी कहलाता है" हम अपने विचार, भावनाएं अपनी मातृभाषा में ही अच्छी तरह व्यक्त कर सकते हैं।

मातृभाषा

मातृभाषा बालक की मा की भाषा है। वह उसकी सासो मे समाई हुई होती है। वह उसमे सुदर स्वप्न देखता है, कल्पना करता है, जीवन तथा संसार का अच्छी तरह अनुभव करता है।

भाषा कौशल

सुनना, बोलना, पढ़ना तथा लिखना भाषा से संवधित कौशल है। ये चार कौशल ही भाषा के लक्ष्य हैं। अधिग्रहण और अभिव्यक्ति भाषा के पहले प्रयोजन हैं। हमें अपनी भावनाओं, अनुभूतियो आलोचनाओं की सही ढंग से सदर्भानुसार सृजनात्मक रूप से अभिव्यक्ति करना और दूसरो की भावनाओं को अभिग्रहण करना सीखना चाहिए। वड़े होने के बाद सीखना आसान नहीं है। इसलिए हमे वच्चों को प्राथमिक अवस्था से ही अधिग्रहण और अभिव्यक्ति का ज्ञान सही तरह समझाने का प्रयास करना चाहिए।

भाषा अत्यत सक्लिप्ट है। इसमें अनेक नियम, निबंधन एव सूत्र होते हैं। फिर भी छोटे बच्चे अच्छी तरह भाषा का प्रयोग करते है। यह कैसे सभव है?

भाषा आवश्यक रूप से मनुष्यों को आपस में जोड़ने वाली धुरी है। भाषा के बिना हमारा जीवन सूना रहता है। सुनना, बोलना, पढ़ना तथा लिखना भाषा से संबन्धित कौशल हैं। ये चार कौशल भाषा के लक्ष्य हैं। अधिग्रहण और अभिव्यक्ति भाषा के प्रयोजन हैं। इन चार कौशलों में तुलनात्मक रूप से लिखना बहुत ही कठिनतम है। लेखन एक कला है। हम इस कला को अनेक सृजनात्मक कार्यकलापों के द्वारा बालकों में बढ़ा सकते हैं।

सार्वत्रिक भाषा सामर्थ्य

आधुनिक भाषावेत्ताओ ओर मनोविज्ञानवेत्ताओ के अनुसार बच्चे अपने परिवेश से सहज एव अर्थवत और स्वाभाविक भाषा सीखते हैं। वे एक ही समय में दो, तीन भाषाएं सीख सकते हैं। अनुकूल वातावरण में किसी भी भाषा को वे सहज रूप मे सीखते है। यह सार्वत्रिक भाषा सामर्थ्य कहलाता है।

सुनना, पढ़ना, भाव ग्रहण के लिए उपयुक्त है और बोलना, लिखना अभिव्यक्ति के लिए उपयुक्त रहता है। इन चार कौशलो में लिखना कठिन कौशल है। प्रथम तीन कौशलों के सीखने के बाद ही लिखना सीखने का अभ्यास बच्चो से करवाना चाहिए। वास्तव में पाठशाला में यह असहज रूप में सिखाया जाता है। इसलिए हम सही माध्यम सिखाने का प्रयास करें।

केवल प्रश्नो का उत्तर लिखना ही लेखन कार्य नही होता। लेखन कौशल बढाने के लिए हमे तरह-तरह के कार्यकलाप देने चाहिए। पहले हमें यह सोच लेना चाहिए कि बच्चे क्यों और कैसे लिखें और शिक्षक लिखना सिखाने के लिए क्या-क्या प्रयास करें?

क्यों लिखें?

अपनी भावनाओं को, अनुभवो को और विचारों को दूसरो तक पहुचाने के लिए लिखना अनिवार्य है। भावी पीढ़ियो को इतिहास के ज्ञान को लिखना चाहिए। सीखे हुए विषय को अभिव्यक्त करने के लिए लिखना जरूरी है।

कैसे लिखें

लेखन एक कला है। इस कला को बढ़ाने के लिए हमें कैसे लिखना चाहिए, जानना बहुत जरूरी है।

- ☐ सुंदर लिखना।
- ☐ अपने आपके लिए लिखना।
- ☐ सुलभ शब्दों को उपयोग करते हुए लिखना।
- ☐ स्पष्ट लिखना।
- ☐ सही रूप से लिखना।
- ☐ विराम चिन्ह के साथ लिखना।
- ☐ वर्ण और पदों के भीतर सही अन्तर रखते हुए लिखना।
- ☐ भावो को या विचारो को सहज रूप से प्रकट करते हुए लिखना।

उपर्युक्त ढंग से बच्चो को लिखना सिखाने के लिए सहज वातावरण होना चाहिए। उस सहज वातावरण में बच्चे सृजनात्मक रूप से अपने भावो को व्यक्त कर सकते है। बच्चों मे सृजनात्मकता को बढ़ाने के लिए हम यह सोचे कि हम बच्चो को प्राथमिक शिक्षा में लेखन कैसे सिखाए।

कैसे सिखाएं

शिक्षक को लिखना सिखाने के लिए तरह-तरह के कार्य व कृत्यो को स्थाई स्तर के अनुसार देना चाहिए। भाषा के खेलो से यह लेखन कार्य सुलभ हो जाता है। लिखना सिखाने के लिए निम्नलिखित कार्य और क्रीड़ा बहुत ही सहायक होता है।

कृत्य

अभिनय गीत सिखाना

हमे भाषा को सिखाते समय यह ध्यान में रखना है कि सही भाषा कौशल साथ-साथ चलें। एक-एक कौशल सिखाने से बच्चो में सृजनात्मकता का अभाव पडता है। इसीलिए हम कविता या कथा किसी को भी सभी भाषा कौशलों को बढ़ाने के लिए सिखाते है। इसको हम भाषा कौशलों की सम्मिलित विधि कह सकते है। कभी-कभी सिर्फ एक ही कौशल को ध्यान में रखते हुए भी कृत्य दे सकते हैं।

अभिनय गीत से सुनने के कौशल को बढाना है। फिर भी हम चार कौशलो को ध्यान में रखते हुए कृत्य दे सकते हैं।

अभिनय गीत

- ☐ अभिनय गीत को गाकर सुनाना।
- ☐ सभी बच्चो से अभिनय कराना।
- ☐ अभिनय गीतों का चित्र प्रदर्शन करना। बच्चों से चित्र के बारे में कुछ बोलने के लिए कहना।
- ☐ एक-एक बच्चे की एक-एक पंक्ति को पहचानने मे मदद करना।
- ☐ पूरी पंक्ति पढ़ाना।
- ☐ अभिनय गीत के सभी शब्दो को पहचानने मे सहायता देना।
- ☐ कुछ अक्षरों व पदो को लिखने में मदद करना।
- ☐ गीत के कुछ अक्षरो से बनने वाले कई पदो को बोलना और लिखने में सहायता देना।
- ☐ कुछ पदो से बनने वाले वाक्यो को लिखवाना।

क्यों क्यों?

कमला बेटी बोलो
आसमान क्यों नीला नीला?
उगता सूरज क्यों है पीला?

☐ इमली क्यो है खट्टा-मीठा?
ईश्वर क्यों दिखाई नहीं देता?
उमर है क्यों बढ़ता जाता?

☐ एक ही सूरज एक ही चंदा
आसमान से क्यों नहीं गिरता?
ऊपर-ऊपर भाग क्यों जाता?

- नदी का पानी क्यो है मीठा?
  सागर का पानी क्यो है खारा?
  पेड से फल नीचे क्यों गिरता?
- रात सवेरे क्यो होते है?
  चमक सितारे दिन मे क्यो न दिखाएं?
  मछली क्यो कभी नही सोती है?
  गुड़िया रानी सोचो सोचो
  सोच के तुम मुझे बता दो।

हम ऐसे ही कथा और संभाषण को भी लेकर लेखन सिखा सकते हैं।

हम कौन से कृत्यों की कल्पना करें

नीचे दिए हुए कुछ कृत्यो से लेखन कौशल को हम बच्चो मे बढ़ा सकते हैं।

चित्रों को दिखाकर लिखाना
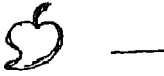
लुप्त पदो को लिखाना

- कम –
- कवि –
- सा – स

संबंधित पदों को लिखाना – कोई भी विषय-विषय व संघटना को सुना कर लिखाना। (कुछ पदों को)

पदों को बढ़ाना

अंत्याक्षरी – पद के अंतिम अक्षर से दूसरा पद बनाना। उदाहरण– विज्ञान, नाटक, कमला, लड़का, कलम, ममता।

कथा लिखाना – परिचित कथाओं को लिखाना।

कविता लिखाना – छोटी-छोटी कविताओं को लिखाना।

संघटना लिखाना – देखे हुए संघटनों को वर्णित रूप से लिखना।

पत्र लिखना – छुट्टी, पत्र आदि।

निबंध लिखाना – गाय, घोड़ा, वार्ता, पत्रिका आदि।

दिनचर्या लिखाना – प्रतिदिन के कार्यक्रमो के बारे मे दिनचर्या लिखाना।

उपर्युक्त कृत्यो के साथ-साथ हम और भी कृत्य बच्चों को दे सकते हैं। (भाषा क्रीडाएं)

कृत्य 1 (6 × 6 मात्रिका) पदों को बनाओ –

1 ग	2 क	3 चा	4 आ	5 उ	6 व
7 रा	8 अ	9 घ	10 क	11 ता	12 ला
13 स	14 द	15 ड	16 ण	17 ज	18 ट
19 य	20 च	21 र	22 बा	23 त	24 न
25 ल	26 श	27 दौ	28 प	29 म	30 का
31 ह	32 सा	33 य	34 ना	35 ष	36 भ

ऊपर दिए हुए मात्रिका से हम स्वर, व्यजन की पहचान करा सकते है।

- अल्पप्राण, महाप्राण अक्षरों की पहचान।
- पदों का निर्माण, वाक्यों का निर्माण भी करा सकते है।
- भाषा के चार कौशलों को भी बढ़ा सकते हैं।

सूचना

- 3, 21 वाले अक्षरों को पहचान कर एक अंक बनाइए।
- 8, 29, 12 जोड़ कर एक एक्टरेस तारा का नाम लिखिए।
- म, अ, क से बनने वाले पदों को लिखिए।
- आकाश का एक और नाम किन अक्षरों से होता है।
- 'ता' से बनने वाला एक पानी का सूत्र लिखो।
- 'लड़की' पद क व्यतिरेक पद क्रित्रिका में किन-किन नंबरो से बनाते हैं।
- मात्रिका से बनने वाले दो अक्षर के पद लिखो।

☐ तीन, चार अक्षर पद लिखो।

सूचनाओं को और भी बढ़ा सकते है।

कृत्य 2

☐ इस कृत्य को Dice के साथ करता है।

☐ Dice के साथ खेलते, जो नंबर आता है, उसमें होने वाले चित्रो को पहचान कर पद बोलकर दो, तीन, चार पदो को वर्गीकरण में लिखना।

☐ इस कृत्य से बच्चो को सजीव, निर्जीव की पहचान होती है।

1. दो, तीन, चार अक्षर वाले शब्दो को पहचानकर लिखिए–

दो	तीन	चार

2. वर्गीकरण कीजिए (फल, जतु, पक्षी तथा वस्तुए)

सजीव	निर्जीव

कृत्य 3

दिए गए पद मे से छोटा पद बना कर लिखो।

महाभारत

(महा, भार, भारत, यत, हार, ...)

4. सही ढंग से अक्षर मिला के पद बनाओ।

ल स्त का पु य

(पुस्तकालय)

5. वाक्य बनाओ

रहता मे रामपुर है गोपाल गाव
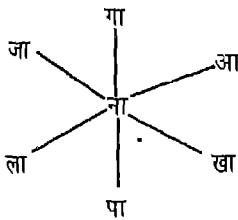
6. दो अक्षर पद बनाओ –

तीन अक्षर पद बनाईए
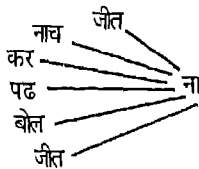
वर्णमाला क्रम में मिलाइए
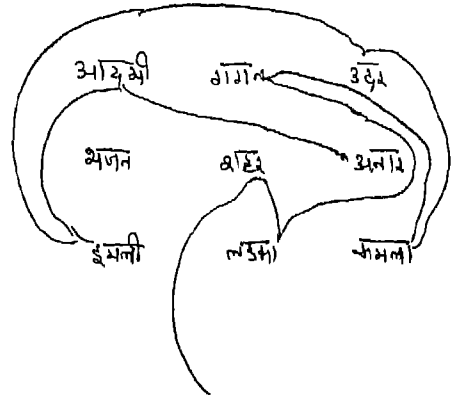
इस कृत्य से शब्द देखने का कौशल बढ़ता है।

उपर्युक्त अनेक सृजनात्मक कृत्यों से हम बच्चों मे लेखन कला बढ़ा सकते है। भाषा कौशल में लेखन ही आदमी के व्यक्तित्व पर अधिक प्रभाव डालता है। इसलिए शिक्षक प्राथमिक शिक्षा से ही चार भाषा कौशलो को बच्चो मे बढाकर मूल्यवान बनाता है।

□□

प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण– ए.पी.डी.पी.ई.पी. की भूमिका

भारत को स्वतंत्र हुए 53 वर्ष हो गए हैं। 2001 गणांक के अनुसार हमारे देश की साक्षरता दर 65 38 ही है। संपूर्ण देश में केरल साक्षरता में सव राज्यों से आगे है। रूस और चीन ने कुछ ही वर्षो में पूर्ण साक्षरता की प्राप्ति की है। वैसे कुछ ही समय मे कीनिया, तंजानिया, रुवांडा, जांविया आदि देश साक्षरता में हम से आगे हैं।

भूख, प्यास, सांस की तरह शिक्षा हर मानव के लिए अत्यन्त आवश्यक है। क्योकि किसी देश की उन्नति उसकी जनता की शिक्षा पर निर्भर है। शिक्षा ही मानव को उन्नति की ओर ले जाती है। सबको शिक्षित करना हर एक देश अपना कर्तव्य समझता है। भारत के हर नागरिक को चाहे वह किसी भी प्रान्त, वर्ग, जाति, लिंग तथा वर्ण का हो उसे कम से कम प्राथमिक शिक्षा तक का ज्ञान दिलाना देश की जिम्मेदारी है। देश के प्रत्येक वच्चे को भी शिक्षा प्रदान करना राज्य का कर्तव्य है।

संविधान की 45वीं धारा के अनुसार संविधान को

लागू किए जाने के समय से 10 वर्ष के अन्दर सब बच्चो के लिए जब तक कि वे चौदह वर्ष की आयु पूर्ण नही कर लेंगे, निःशुल्क एव अनिवार्य शिक्षा प्रदान करनी थी अर्थात् इसकी पूर्ति सन् 1960 तक हो जानी चाहिए थी। इसी दिशा मे अनेक कमीशनो, कमेटियो ने भी अपनी सिफारिशें की थीं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 1986 ने भी इस लक्ष्य को 1995 तक पूरा करने का संकल्प किया था। परंतु अनेक कठिनाईयों और बाधाओं के कारण सविधान के इस लक्ष्य की पूर्ति आज तक नही हो पाई है। मानव अधिकारों के सार्वभौमिक घोपणा-पत्र की 26वीं धारा के अनुसार प्रत्येक मानव को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार है। बालक के इस अधिकार की रक्षा करना आवश्यक है। इसी दिशा मे सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा प्राप्त करने के लिए आन्ध्र प्रदेश बहुत क्रियाशील है। विविध कमेटियो, कमीशनों की सिफारिशों के आधार पर नए कार्यक्रम आयोजित किए गए हैं। ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड, आन्ध्र प्रदेश प्राइमरी एजुकेशन प्रोजेक्ट, आध्र प्रदेश ओपन स्कूल एवं दसवां वित्तीय आयोग आदि इसी लक्ष्य प्राप्ति में प्रयत्नशील हैं।

भारत में सार्वभौमीकरण प्राथमिक शिक्षा के अभी तक के विकास से यह पता चलता है कि देश में अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा बहुत देर या बाद में प्रारम्भ की गई थी। प्रारंभ होने में ही बहुत अधिक समय लग गया प्रारंभ होने के बाद इसकी गति बहुत मंद रही और देश के बहुत कम क्षेत्रों में इसका विकास हो सका और जहां हुआ भी वहां केवल नाममात्र के लिए हुआ तथा अभी भी इसकी स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती। फिर भी आं.प्र. डी.पी.ई.पी. उस स्थिति को सुधार कर बाल/बालिकाओं में असमानता दूर करके सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा की प्राप्ति करने में एक प्रमुख भूमिका निभा रही है।

सार्वभौमिक शिक्षा लक्ष्य

सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा प्राप्ति के लिए हमें निम्नांकित लक्ष्यों को ध्यान में रखना है –

- ☐ प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण करना।
- ☐ सभी बालक और बालिकाओं को प्राथमिक शिक्षा के द्वारा स्वयं निर्णयी, आत्मविश्वासी, आत्मसम्मानी और सपूर्ण मानव बनाना है।
- ☐ प्रस्तुत 65% साक्षरता को वर्ष 2005 तक 85% प्राप्त करना और उसे 100% तक बढ़ाने के प्रयत्न करना।
- ☐ बालिकाओ, अल्पसंख्यक, पिछडे वर्गो और शारीरिक रूप से विकलांग बच्चों के लिए पाठशालाओ को सुलभता मे लाना।
- ☐ नवीन शिक्षा शासन 1998 (जन की भागीदारी) के द्वारा अमल हुई शिक्षा कमेटियो और ग्राम पचायत कमेटियो को मिलाकर शिक्षा प्रणाली बनाने में भागीदारी करना।

हमे अनिवार्य शिक्षा के विकास के कारणो पर भौतिक, सामाजिक, सास्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक तथा प्रशासनात्मक आदि दृष्टिकोणो से विचार करना है।

प्राथमिक शिक्षा सार्वभौमीकरण में आंध्र प्रदेश का प्रयास

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण एवं गुणवत्ता के लिए आन्ध्र प्रदेश, प्राथमिक शिक्षा प्रोजेक्ट का प्रारम्भ 1989 से 1993 तक किया गया। जिसमें 6 सूत्रीय तथा क्रियाओं मे शिशु केन्द्रीय विधानो द्वारा प्राथमिक शिक्षा मे गुणवत्ता लाई गई। इसी दिशा मे अब ए.पी.डी.पी ई.पी का प्रारंभ 1994 मे किया गया था।

ए.पी डी.पी ई.पी. का मुख्य उद्देश्य शिक्षा की समुदायों मे भागीदारी, सुलभता में सुधार, नामाकन, अवधारणा और साधन में ध्यान देते हुए प्राथमिक शिक्षा को प्राप्त करना है। इसमें सामाजिक, पिछड़े वर्गो, कार्यरत बच्चों की शिक्षा और लड़कियों की शिक्षा पर भी विशेष ध्यान

दिया गया। सार्वभौमिक शिक्षा प्राप्त करने मे पाठशाला सुलभता, नामाकन, अवधारणा एव साधन में निम्नलिखित कठिनाईया हैं।

सार्वभौमिक शिक्षा प्राप्ति में कठिनाईयां

पाठशाला की सुलभता में कठिनाईयां

- पाठशाला से दूर रहना।
- पाठशाला बच्चों की आवश्यकता के अनुसार न होना।
- पाठशाला न होना।
- जनसंख्या विस्फोटन।

नामांकन में कठिनाईयां

- 0–14 वर्ष के बच्चों की पूरी गणांकन नही रहना।
- इच्छुक बालक के लिए पाठशाला द्वारा साल मे किसी भी समय पर नामांकन करने से इन्कार करना।
- मां-बाप के काम-काज मे हाथ बंटाना, खेती-बाड़ी मे सहायता करना।
- लड़कियों की शिक्षा को माता-पिता द्वारा महत्व नहीं देना।
- छोटे भाई-बहनों की देखभाल के लिए लड़कियों को घर मे रखना।
- बच्चों की शिक्षा के प्रति माता-पिता की उदासीनता, अरुचि एव निरक्षरता।
- निर्धनता।
- अज्ञान और अंधविश्वास।
- भौगोलिक कारण।
- धर्म, सामाजिक और राजकीय स्थिति।

अवधारणा में कठिनाईयां

- शिक्षकों की कमी।
- पाठशाला में भवन, पानी, शौचालय इत्यादि की सुविधा न होना।
- अनाकर्षक आध्य प्रणाली।
- शिक्षकों का छात्रों के प्रति आदर, प्रेमपूर्वक व्यवहार न करना।
- बच्चों की अभिरुचियों को नही समझना।
- शिक्षकों को सही प्रशिक्षण की कमी।
- व्यक्तिगत भेदों पर ध्यान नहीं देना।
- बच्चों के मां-बाप से सबन्ध नही रखना।
- बच्चो की असफलता पर ही ज्यादा जोर देना।
- छात्रों को एक ही कक्षा में दुबारा बिठाना।

उपलब्धि में कठिनाईयां

- अनुसूचित, पिछड़े बच्चो पर ध्यान न देना।
- शिक्षक अध्यापन में नवीनतम् विधियों का न होना।
- मापन सामग्री उपयोग न करना।
- निरतर एव समग्र मूल्याकन का उपयोग न करना।

उपरोक्त कठिनाईयो के कारण सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा की गति बहुत मद रही है और देश के बहुत कम क्षेत्रों में इसका विकास हो रहा है। फिर भी आ. प्र.डी.पी.ई.पी. इसे सफलीकृत करने के लक्ष्य के लिए तथा सुलभता, नामांकन, अवधारणा और उपलब्धि को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित विभागों के सहाय सम्मेलन से आगे बढ़ रही है।

- कल्याण विभाग।
- जनजातीय कल्याण विभाग।
- महिला विकास।
- बाल कल्याण विभाग।
- आंध्र प्रदेश का जन्मभूमि कार्यक्रम।
- भारत सरकार की योजनाएं।
- स्वास्थ्य विभाग।
- शारीरिक विकलांग कल्याण योजना विभाग।

आ.प्र.डी.पी.ई.पी. ने उपर्युक्त विभागों के कार्यक्रमों के साथ-साथ सार्वभौमिक सुलभता, नामांकन, अवधारणा और उपलब्धि प्राप्त करने के लिए अनेक कार्य योजनाएं रचाई हैं।

पाठशाला सुलभता के लिए कार्य योजनाएं

- स्कूलों और अध्यापकों के आवास क्षेत्र का निर्धारण करने के साथ प्रस्तुतीकरण और पुन- निर्धारण के लिए स्कूल की रूपरेखा का कार्य कर रहे हैं।

- ☐ सभी स्कूल रहित आवासीय क्षेत्रों (20 और अधिक सामान्य बच्चे और 10 तथा अधिक जनजातीय बच्चे वाले आवासीय क्षेत्र से युक्त आवासीय क्षेत्रों) के लिए वैकल्पिक स्कूल।
- ☐ भाबडी की व्यवस्था करने के माध्यम द्वारा सुलभता को बढ़ाना।
- ☐ मजदूर बालिका के लिए दिन के आवासीय शिविर।
- ☐ स्कूल छोड़ देने वाले बच्चों और बड़ी उम्रवालों के लिए परिवर्तनीय कक्षाएं।

नामांकन के लिए कार्य योजनाएं

प्राथमिक स्कूल में नामांकन लेने वाले बच्चों का गणक हमारी आकाक्षा में नहीं है। अनेक सर्वे रिपोर्टो के अनुसार बालिकाओ का नामांकन बालकों से कम है और अनुसूचित वर्गो, पिछड़े वर्गों के नामांकन और भी कम है।

कार्य योजनाएं

- ☐ नामांकन और अवधारणा पर आधारित मडलों/आवासीय क्षेत्रों का वर्गीकरण करना।
- ☐ न्यूनतम नामाकन मण्डलो और आवासीय क्षेत्रो के लिए आधिक प्रतिबल देना।
- ☐ अध्यापकों, एम.आर.पी. (MRP), एम.ई.ओ. (MEO) को 100% नामांकन के लिए उत्तरदायित्वता के द्वारा निर्धारित किया है।

अवधारणा के लिए कार्य योजनाएं

प्राथमिक लक्ष्यों में अवधारणा प्राप्त करना प्राथमिक स्कूल में पहली कक्षा में नामांकन हुए हर 100 बाल-बालिकाओं में केवल 50 ही प्राथमिक शिक्षा पूरी कर रहे हैं और 50 बच्चे बीच में ही पाठशाला छोड़ रहे है। अनुसूचित और पिछड़े वर्ग के बच्चो में ही अवधारणा बहुत कम है। ऐसी स्थिति चलती रही तो हमें आगे के तीन दशकों मे भी सभी बच्चों को शिक्षित बनाना एक मारीचक होगा।

कार्य योजनाएं

- ☐ शिशु विकास केन्द्र को प्रारम्भ करना और अभिमुखता के माध्यम से आंगनबाडियो को समर्थन देना।
- ☐ MRC, DPO, DRG के कर्मचारियों द्वारा स्कूलों को अपनाना।

उपलब्धि के लिए कार्य योजनाएं

- ☐ बोधनाश्यसन सामग्री और गतिविधि योजना मे विकास पर प्रतिबन्ध।
- ☐ प्रभावी कक्षा कार्य के लिए कार्य समर्थन पर नियमित समीक्षन और अवलोकन।
- ☐ प्रभावी विद्यार्थी आकलन विधियो को विकसित करना और परीक्षाओं का विकास करना।

आं.प्र डी.पी ई.पी. की विविध कार्य योजनाएं प्राथमिक शिक्षा लक्ष्य प्राप्त करने मे बहुत मदद करती हैं। इन गतिविधियों से बच्चों में समानता पाना है। बालिकाएं, पिछड़ी, अनुसूचित वर्गो मे नामाकन अवधारणा और शिक्षा ग्रहण उपलब्धि में भेदभाव को पांच प्रतिशत से कम करना है। इसके लिए आं.प्र.डी.पी.ई.पी. का वर्ष 1999-2000 का स्तर और 2000-2001 वर्ष के लिए निर्धारित लक्ष्य को हम निम्नलिखित सूचीपत्र (सारणी) के साथ अच्छी तरह समझ सकते हैं और उसकी ओर आयोजन किए गए कार्यक्रमों का अवलोकन करते हैं।

डी.पी.ई.पी. से जिलों में अंतर अधिक है। इस अंतर में सुधार के लिए 2000-2001 वर्ष के लिए लक्ष्य निर्धारित किया गया।

कार्य योजनाएं

- ☐ एस.सी., एस टी., ओ.बी.सी. और अल्पसख्यकों के लिए विशेष नामाकन अभियान करना।
- ☐ अध्यापको, एम.आर.सी कर्मचारियों, डी.पी.ओ कर्मचारियों के लिए वार्डवार, आवासीय क्षेत्रवार लक्ष्य/लेखा जोखा निर्धारित करना।
- ☐ नामाकन करने और अवधारणा के लिए सकल समिति सदस्यो, युवा सगठनो और अन्य महिला समूहो को शामिल करना।

सूचीपत्र I – समानता

स्तर – 1999-2000

डी.पी.ई.पी I				डी.पी.ई.पी II		
	सभी	एस.सी.	एस टी.	सभी	एस.सी.	एस. टी.
नामांकन	94 60	95.10	90 40	94 30	99.00	103 00
अवधारणा	85.71	81.93	76.61	62 80	55 99	44.50
उपलब्धि						
कक्षा I भाषा	75.99	75.41	70.24	71 91	70 66	70.66
कक्षा I भाषा	80 45	81 24	80 84	75 83	73 95	73.95
कक्षा IV भाषा	58 27	57.17	50.49	50.37	49.98	50.80
कक्षा IV भाषा	46 61	45.17	45 92	40.58	39 16	38 79

सूचीपत्र II – समानता

स्तर – 2000-2001 वर्ष के लिए लक्ष्य

डी.पी.ई.पी. I				डी.पी.ई.पी. II		
	सभी	एस सी.	एस.टी.	सभी	एस.सी	एस.टी.
नामांकन	98.00	96.20	103 80	96.75	97.54	96.16
अवधारणा	90 70	88.50	86 00	75 30	67.50	60.25
उपलब्धि						
कक्षा I भाषा	85 99	85 41	80.24	82.79	82.86	83.57
कक्षा I भाषा	90 45	91.24	90 84	86 07	85.21	83 95
कक्षा IV भाषा	68 27	67.17	68.49	65.37	64.98	69 50
कक्षा IV भाषा	56.80	55.75	55.92	55 38	59 71	58.79

- ☐ प्रभावी कक्षा कार्यो के लिए कार्य समर्थन, नियमित समीक्षन और अवलोकन करना।
- ☐ कक्षाओ मे शिक्षा ग्रहण करने के स्थानो का विकास करना।
- ☐ सृजनात्मक गतिविधियो एस.यू.पी. डब्ल्यू. अनुभव आदि का कार्यान्वयन कराना।

आं.प्र.डी.पी.ई.पी. की इस कार्य योजनाओं से हम उन्नति की दिशा मे चले और असमानता को दूर करके सब बच्चों की पाठशाला एक सुन्दर महल बनाएगे और सार्वभौमीकरण प्राथमिक शिक्षा प्राप्ति करेंगे, यही हमारी आकांक्षा है।

☐☐

स्वतंत्र भारत में बालिकाओं की शिक्षा

वैदिक काल में महिलाओं को पुरुषो के समान शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार था। इस काल मे गार्गी, मैत्रेयी, आत्रेयी, शकुतला आदि अनेक विदुषी महिलाएं थीं। वैदिक काल के अंतिम चरण मे लगभग 200 ई. पू. में बालिकाओं की विवाह की आयु को कम करके उसकी शिक्षा प्रणाली के मार्ग में अवरोध कर दिया गया। परतु बुद्ध ने स्त्रियों को सघ में प्रवेश करने की आज्ञा देकर उनकी शिक्षा को नवजीवन प्रदान किया था।

मुगल काल में स्त्रियों की शिक्षा की उपेक्षा की गई। इस काल में हिन्दू और मुसलमान दोनों में पर्दा-प्रथा एवं बाल विवाह का प्रचलन था। फिर भी अनेक विदुषी नारियों के नाम आज भी इतिहास मे पढ़ने को मिलते हैं यथा रजिया सुल्तान, चांद सुल्ताना, जेबुन्निसा बेगम आदि और रूपमती, रानी दुर्गावती और इन्दौर की शासक अहिल्याबाई के नाम स्त्री शिक्षा के जगत मे आज भी स्मरणीय हैं।

बाद में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने स्त्री शिक्षा को अनावश्यक समझकर उसकी ओर तनिक भी ध्यान नही दिया था। इसके अतिरिक्त स्त्री शिक्षा के प्रति भारतीयों का दृष्टिकोण अत्यधिक रूढ़िवादी था। कम्पनी के शासन काल में बालिका विद्यालयो की स्थापना मिशनरियो और सरकारी एवं गैर-सरकारी मनुष्यों के व्यक्तिगत प्रयासों के फलस्वरूप हुई। 19वी शताब्दी के उत्तरार्द्ध मे आरभ हुए पुनरुत्थान के कारण स्त्री शिक्षा की प्रगति हुई।

ब्रह्म समाज, आर्य समाज, सर्वेंट ऑफ इंडियन सोसायटी जैसी अनेक सुधारवादी सामाजिक संस्थाओं ने स्त्री शिक्षा के मार्ग को प्रशस्त किया था। 1947 से स्वतत्र भारत में महिलाओ की सामाजिक स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो रहे हैं। जिन बंधनो मे वह बंधी हुई थी वह टूट रहे हैं। जिस स्वतंत्रता से वचित थी वह उसे पुनः मिल रही है। उसके सबध में पुरुषो का दृष्टिकोण बदल रहा है।

भारतीय सविधान ने भी महिलाओं को समकक्षता प्रदान करते हुए यह घोषित किया है, "राज्य किसी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म प्रजाति, जाति, लिंग, जन्म स्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नही करेगा।"

मनु ने कहा है "यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमंते तत्र देवता" अर्थात् जहां स्त्री का सम्मान होता है और वह पूजनीय है वहां देवताओं का निवास है। गांधीजी ने भी स्त्री शिक्षा पर जोर डालते हुए कहा है– "The question of the education of children can not be solved unless efforts are made simultaneously to solve the women's education." इसलिए स्त्री को पूजनीय, माननीय बताने के लिए और समाज को सुधारने के लिए स्त्री शिक्षा बहुत ही आवश्यक है।

स्वतंत्र भारत में स्त्री शिक्षा के सभी क्षेत्रों में विलक्षण क्रांति परिलक्षित हो रही है।

राष्ट्रीय महिला शिक्षा समिति 1958 (National Committee of Women's Education 1958)

भारत सरकार ने सन् 1958 मे स्त्री शिक्षा पर विचार करने के लिए श्रीमती दुर्गाबाई देशमुख की अध्यक्षता मे राष्ट्रीय महिला शिक्षा समिति की नियुक्ति की।

राष्ट्रीय महिला शिक्षा परिषद् 1959 (National Council of Women's Education 1959)

देशमुख समिति की सिफारिशों को स्वीकार करके केन्द्रीय शिक्षा मन्त्रालय ने 1959 में राष्ट्रीय महिला शिक्षा परिपद् का निर्माण किया।

हंस मेहता समिति 1962 (Hansa Mehta Committee 1962)

श्रीमती हस मेहता की अध्यक्षता में 1962 मे एक समिति की नियुक्ति हुई जिसे 'हंस मेहता' समिति कहते हैं।

कोठारी कमीशन 1964-66

1964-66 की कोठारी कमीशन ने स्त्री शिक्षा के समस्त पक्षों के विषयों मे महत्वपूर्ण सुझाव दिए हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 1986

(National policy on Education— 1986)

महिलाओ को शैक्षिक अवसर प्रदान करना शिक्षा के क्षेत्र में स्वतन्त्रता प्राप्ति से ही एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम रहा है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 1986 द्वारा लड़कियों के लिए प्रारभिक शिक्षा के समयबद्ध चरणबद्ध कार्यक्रम का लक्ष्य दोहराती है।

आचार्य राममूर्ति कमेटी 1990

1990 में आचार्य राममूर्ति कमेटी ने महिला शिक्षा पर ज्यादा जोर दिया है।

भारत में उपर्युक्त कमीशन और समितियों ने बालिकाओं की शिक्षा के लिए बहुत सी सिफारिशें की थी।

आध्र प्रदेश में इन सिफारिशों के साथ-साथ *1984-1993 की आंध्र प्रदेश प्राथमिक शिक्षा प्रोजेक्ट ने* भी बालिकाओं की शिक्षा के लिए बहुत से प्रयास किए थे। अब डी.पी.ई.पी. बालिका शिक्षा प्राप्ति के लिए अनेक नए कार्यक्रमों, नए पथकों से आगे बढ़ रही है।

इन नए पथको के बारे में जानने से पहले हमें बालिकाओं मे निरक्षरता अधिक होने के कारण जानना आवश्यक है।

उपर्युक्त कारणो को समझकर सभी बालिकाओं को साक्षर बनाना हमारा प्रथम कर्तव्य है। संविधान में स्थापित और *राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 1986* में की गई वचनबद्धता के अनुसार शैक्षिक लक्ष्यों के अनुरूप में डी.पी.ई.पी. आंध्र

बालिकाओं का पाठशाला न आने का कारण
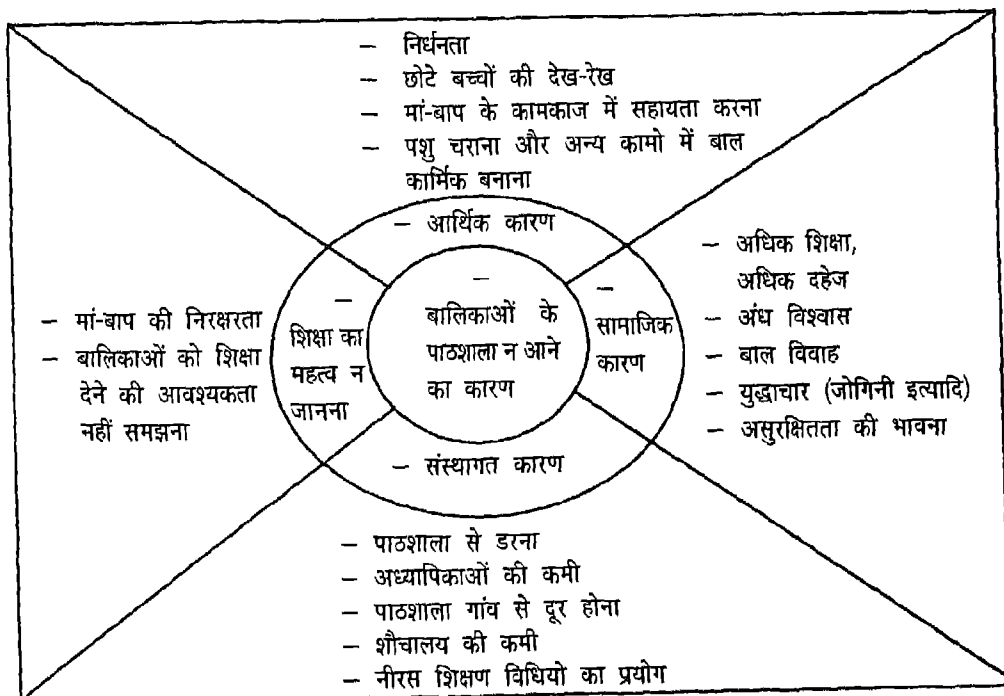
प्रदेश का उद्देश्य शिक्षा मे गुणवत्ता सुधार धारण और स्तर पर ध्यान देते हुए प्राथमिक शिक्षा वैश्वीकरण लक्ष्य की प्राप्ति करना है। इस कार्यक्रम में लडकियो की शिक्षा पर भी विशेष ध्यान दिया गया है।

अवधारणा के अंतर्गत बालिकाओं की शिक्षा के लिए आदर्श ग्राम पहुंच, गुणवत्ता सुधार के अंतर्गत ई.सी.ई. शिक्षकों को प्रशिक्षण, अध्यापिकाओं की नियुक्ति, अध्यापक केन्द्रो पर अध्यापिकाओं के लिए मासिक समावेशो का आयोजन, सीखने वाली सामग्री, विकास के लिए वित्तीय सहायता इत्यादि कार्यक्रम, स्कूल कमेटी और मातृसघो से प्रोत्साहन, मां-बेटी, वैकल्पिक स्कूलो की स्थापना इत्यादि कार्यक्रम किए जा रहे है।

प्रशिक्षण

हैदराबाद में दिनाक 4.5.1999 से 5.5.1999 तक दो दिन के जागरूकता अभियान पर एक राज्य स्तरीय अनुकूलन कार्यक्रम का आयोजन किया गया था।

डी.पी.ई.पी I-II जिलों में DGCDO एव MGCDO कार्यक्रम मे उपस्थित थे। कुल 38 सदस्य उपस्थित थे। ECE Sector के MRGs के लिए दो दिवसीय राज्य स्तरीय अनुकूलता का आयोजन किया गया था। उन्होंने स्कूल तत्परता विषय पर अनुकूल रहे व बदले में 135 MGCDO और 1706 ECE शिक्षको को प्रशिक्षण प्रदान किया।

कार्यशालाएं

नामांकित न हुए और स्कूल से बाहर वाली बालिकाओ के नामाकन के लिए जिला विशेष कार्य प्रणाली बनाने के लिए एक राज्य स्तरीय कार्यशाला का आयोजन किया गया था। दो जिलों–विजयनगरम् और नेल्लाक– के लिए जिला विशेष योजनाओं को बनाया गया।

मां-बेटी मेला

वारगल जिले में दिनांक 20 3 99 को मां-बेटी मेलों के नाम से जागरूकता अभियानों का आयोजन किया गया। इस अभियान का उद्देश्य नामाकन न किए हुए और घट गए बच्चो की माताओं मे जागरूकता पैदा करना था। इस मेले में 181 माताओ ने और 458 बालिकाओं ने भाग लिया।

इसी तरह जिले में 15 गांवो में 18 से 19 अप्रैल, 1999 तथा प्रकाशम जिले मे 18 से 29 अप्रैल, 1999 तक बालिका मेला का आयोजन किया गया था। जिसमे स्पर्धीय खेल, ड्राइंग, रंगोली प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

कार्य योजना

बालिका शिक्षा पर कार्य योजना पत्र बनाया गया था।

समीक्षण सभाएं

सभी डी.पी.ई.पी I—II जिलो में दिसंबर 1999 के महीने में दो दिवसीय समीक्षण सभा का आयोजन किया गया था। जिसमे आरंभिक परियोजना आदर्श ग्राम पहुंच पर प्रगति को नवीनीकृत किया गया और ग्राम रूपरेखाएं बनाई गई।

सेमिनार

चेन्नई मे 24 नवम्बर से 26 नवम्बर, 1999 तक शिशु देख-रेख और विकास में नवीनताओ पर क्षेत्रीय सेमिनार में तीन सदस्यों के राज्य दल उपस्थित हुए और आं प्र.डी.पी ई पी. के अन्तर्गत दी गई बालिका शिक्षा की गतिविधियो पर एक पत्र पेश किया गया।

माध्यम

डी पी.ई.पी. द्वारा बालिकाओ की गतिविधियो के बारे मे जागरूकता लाने के लिए शुभकामना पत्र, पम्फलेट, पोस्टर आदि का मुद्रण किया गया। मास पत्रिका चाडुवु को शिक्षकों और बालिकाओं को शैक्षणिक समर्थन प्रदान करने के लिए प्रदान किया गया।

डी.पी.ई पी की कार्य योजना बनाने के लिए DGCDO, MGCDO और शिक्षकों के लिए डायरी को

प्रकाशित किया गया।

विभिन्न जिलो से सकलित "सफल कहानियों" को प्रकाशित किया गया। पाठशालाओं मे TLM (Teaching Learning meterial) कार्यशाला में Video Documentation किया गया। जागरूकता अभियानों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों में मीणा (Meena) शिक्षक वाली एक विडियो कैसेट को प्रदर्शित किया गया।

शोध रिपोर्ट

शोध अध्ययन की रिपोर्ट शोधकर्ताओं से प्राप्त की गई। बालिकाओं के नामांकन मे वृद्धि पूर्व-प्राथमिक शिक्षा की भूमिका इत्यादि शोधो का अध्ययन किया गया।

उपर्युक्त कार्यक्रमों द्वारा बालिका शिक्षा में अद्वितीय प्रगति हुई। आज हम बालिकाओ को पूरा साक्षर बनाने के एक विशेष संकल्प से आगे चले और उन्नति पाएं।

प्रवक्ता

राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

हैदराबाद, आन्ध्र प्रदेश

नवसमाजीकरण में सुदृढ़ बुनियाद मंडल संसाधन केन्द्र का पात्र

❑ टी. स्वरूपारानी

मंडल संसाधन केन्द्र प्राथमिक शिक्षा के सार्वत्रीकरण को दृष्टि में रखकर की गई एक क्रियान्वयन पहुंच है। जिससे छात्रों में स्कूल का आकर्षण बढ़ेगा, सामाजिक समानता, स्वतंत्रता, सृजनात्मकता व मित्रता को उभारकर नवसमाजीकरण में सुदृढ़ बुनियाद डालने में आन्ध्र प्रदेश के मंडल संसाधन केन्द्र अग्रसर हो रहे हैं।

जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम अमल मे आने के बाद प्राथमिक शिक्षा को विशेष महत्व देने के लिए मंडल संसाधन केन्द्रों को अनुमति देकर, एक-एक भवन का निर्माण कर रहे हैं। प्रति मंडल के मंडल संसाधन केन्द्र में एक मंडल शिक्षाधिकारी, तीन मंडल संसाधनकर्ता हैं।

- ❑ मंडल शिक्षाधिकार – पर्यवेक्षक, प्रशासक, ससाधनकर्ता के रूप में भी व्यवहार कर रहा है।
- ❑ मडल को तीन क्षेत्रो में विभाजित करने के बाद प्रति क्षेत्र मे एक मंडल संसाधनकर्ता है जो शैक्षणिक सलाह तथा गुणात्मक शिक्षा के लिए उचित सलाह दे रहा है।
- ❑ मंडल संसाधन केन्द्र को पर्याप्त फर्नीचर भी मंगा दिया गया है।
- ❑ हाल ही में अध्यापकों को अंत' सेवा प्रशिक्षण देने के लिए 8 लोगो के मंडल संसाधनकर्ता समूह को नियुक्त कर प्रशिक्षित किया गया है। हाल ही मे तेलुगु व अंग्रेजी पढ़ाने वाले अध्यापकों को 7 दिन के प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन किया गया है।
- ❑ डी.पी.ई.पी. के उद्देश्यो को पूर्ण रूप से सफल बनाने, प्रधानाध्यापक की ही सुविधानुसार मंडल संसाधन केन्द्र हो, ऐसा प्रयास किया जा रहा है।

मंडल संसाधन केन्द्र का आशय

अध्यापकों को निपुण बनाना–गुणात्मक शिक्षा एवं निपुणता बढ़ाने के लिए अध्यापकों तथा प्रधानाध्यापकों को इसी केन्द्र मे प्रशिक्षित किया जाता है।

कार्यशालाएं– (**Workshops**) छात्रों के अध्ययन के अनुरूप पाठ्याश/कौशलताएं कार्यकलाप इत्यादि की मंडल संसाधन केन्द्र की कार्यशाला मे तैयारी कराना।

ग्रंथालय–मंडल ससाधन केन्द्र के पुस्तकालय में लगभग 1000 पुस्तकें हैं तथा ये पुस्तकें प्रधानाध्यापक, अध्यापक, केन्द्र सचिव, उपसचिव आदि लोग अध्यापन-अध्ययन, तैयार करने के योग्य है।

संदर्शन–प्रधानाध्यापक, सचिव, उपसचिव अन्य एम.आर. केन्द्रों मे जाकर वहां के अध्यापन-अध्ययन कार्यक्रमों का पर्यवेक्षण कर उन्हें इस केन्द्र में आचरण में लाना।

सुविधाएं

- ❑ डुप्लिकेटिंग मशीन
- ❑ रंगीन दूरदर्शन
- ❑ आर. सी. पी.
- ❑ वी. सी. पी.
- ❑ प्रशिक्षण
- ❑ फ्लैनल बोर्ड
- ❑ पुस्तकालय की 1000 पुस्तकें
- ❑ रु. 2000=00 (शैक्षणिक सामग्री के लिए)
- ❑ कन्टिन्जेन्सी रु. 9000=00
- ❑ कम्प्यूटर
- ❑ कैसेट

कर्तव्य

- ❑ अध्यापक तथा प्रधानाध्यापक मिलकर समय-सारणी

बनाएं। मडल शिक्षाधिकारी, मडल ससाधनकर्ता, ए. एम.ओ. आदि सभा मे उपस्थित होकर अकादमिक सूचना द्वारा प्रेरित करें।

- ☐ मंडल रिसोर्स केन्द्र द्वारा मिनिट्स – समाचार, नवीनतम तकनीक, पुन. परिशीलन कर, प्रधानाध्यापक को बताना, अध्यापक केन्द्र तथा मडल रिसोर्स केन्द्र के बीच प्रधानाध्यापक को वारधी बनाना।
- ☐ डि आर जी , एस आर.जी , डिएइटि लेक्चरर, अध्यापक केन्द्र सचिव, उपसचिव, हर गाव को दत्त लेकर शत-प्रतिशत – प्रविष्टी व रोक तथा विविध सामाजिक वर्ग सबधित छात्र-छात्राओ के बीच विभेद को पाच प्रतिशत कम करना।
- ☐ स्थानिक कम्यूनिटी से प्रधानाध्यापक द्वारा मदद देना।
- ☐ शाला की शैक्षणिक समिति के ठीक कार्य करने के लिए प्रधानाध्यापक जिम्मेदारी लेना।
- ☐ प्राथमिक कक्षाओ में पाठशाला मध्य मे ही छोड़ देना को 5% से कम करके प्रधानाध्यापक को भागीदार बनाना।
- ☐ छात्रों की कार्य कुशलता को 25% अधिक करने के लिए प्रधानाध्यापक को मुख्य पात्रधारी बनाना।
- ☐ ग्रामवासियों को, मुख्य लोगों, युवा-वर्ग को प्राथमिक शिक्षा में उचित भूमिका निभाने का मौका देकर "लोगो से", "लोगो के लिए", ग्रामीण शिक्षा प्रणाली, प्रधानाध्यापक द्वारा अमल करने का केन्द्र द्वारा प्रयास करना।
- ☐ अध्यापन-अध्ययन, प्रदर्शन व मूल्याकन इत्यादि आयोजन के लिए यह केन्द्र काम आना।
- ☐ प्रति आवास का शिक्षा विपय लेकर, कार्यशाला, छात्रो का प्रवेश, सर्वे इस केन्द्र के कम्प्यूटर द्वारा निक्षिप्त तथा फीड करना। गुणात्मक शिक्षा प्रदान करने, अन्य मंडल रिसोर्स केन्द्र, अन्य अध्यापक केन्द्रों को, अतर जिला अंतर राज्य केन्द्रो को प्रधानाध्यापक को भेजकर अध्यापन-अध्ययन प्रक्रिया को प्रयोगात्मक रूप में तैयार करने तथा अध्यापकों की अध्यापन-अध्ययन कौशलता वढाने में यह केन्द्र काम आना।

तेल्कपल्ली, महबूबनगर जिले की विजय गाथा

प्राथमिकोन्नत बालिका पाठशाला की प्रधानाध्यापिका ए. भारतम्मा, शिक्षा समिति के सदस्य, अध्यापक गण, गाव के शाला प्रवेश ले सकने की आयु वाली बालिकाओं को चुनकर माता-पिता को मनाकर शत-प्रतिशत पाठशाला मे प्रविष्ट करवाया है। बीच मे नहीं छोड़ें जैसा माता-पिता को मनवाएं। डिपेप रु. 85000=00 मूल्य वाले एक अतिरिक्त कमरे का निर्माण भी किया गया।

अध्यापक केन्द्र आयोजित सभाएं

अध्यापक केन्द्र, मडल रिसोर्स केन्द्र का प्रयोजन, गुणात्मक होने के लिए अध्यापको की सभा की भूमिका व महत्व का पता चलता है। प्रधानाध्यापक अपनी शाला मे शिक्षा स्तर बढाने के कौन से कार्यक्रमों को चुनना अधिक स्थानिक समाज शाला के कार्यो मे भाग लेकर उसे कैसे अग्रसर करता है यह जान सकते हैं।

अध्यापक केन्द्र

एक निर्देशित स्थान की परिधि में अध्यापको के शिक्षा सबंधी, उचित समस्या-समाधान में सहायक है ऐसी संस्था को अध्यापक केन्द्र कहते है।

सामान्यत. 5 से 10 पाठशालाए इस केन्द्र द्वारा अनुबन्धित रहती हैं। उस शाला मे कार्यरत लगभग 30 अध्यापक तथा प्रधानाध्यापिका उसके सदस्य रहते है।

इस केन्द्र को एक पाठशाला के प्रागण मे प्रत्येक जगह तथा अन्य सुविधाए उपलब्ध रहती है। स्थानिक पाठशाला के प्रधानाध्यापक के ही सचिव व अन्य प्रधानाध्यापक उप सचिव का कार्य करते है। वे जो शिक्षा कार्यक्रमों को आयोजित करते है। उन्नताधिकारियो की राय से एक सभा का आयोजन इत्यादि करते है। इस केन्द्र को सालाना रु 2000 = 00 अध्यापक कार्य सामग्री तैयारी को डिपेप से आर्थिक प्रबन्ध होता है। अध्यापक केन्द्र उस परिधि की शालाओ के अध्यापको की कार्य कौशलता को विकसित करने तथा सार्वत्रिक प्राथमिक शिक्षा हासिल करने तथा समाज मे बदलाव लाने का एक केन्द्र स्थान बनता है।
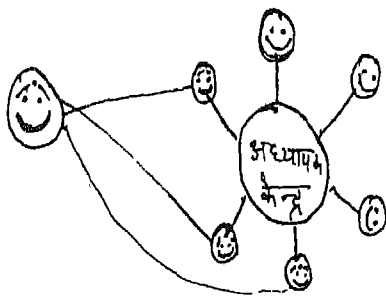
अध्यापक सभा

इनके आयोजित होने से अध्यापको में नूतनोत्साह, लाभदायक विचारक्रम आदि विकसित करने मे तथा विजय गाथाओं द्वारा प्रेरणा भी पाते हैं। अध्यापन-अध्ययन सामग्री की तैयारी मूल्याकन पद्धति में उचित बदलाव करना, सामाजिक सहायता संबंधी प्रत्येक कार्यक्रम को अपनाना इत्यादि इन सभाओं की विशेषता है। शास्त्रीय प्रयोगशाला जैसी इन सभाओं को सुधारा जा रहा है।

कई क्षेत्रो में कुशल व्यावसायिक लोगो के मार्गदर्शन मे ये सभाएं आयोजित की जा रही हैं। शिक्षा व अध्यापन के फायदो को विकसित करने मे मदद कर रहे है।

अध्यापक सभा कार्यक्रम

ये बहुत विस्तृत हैं। इन सभाओ में अध्यापन/अध्ययन प्रक्रिया व आधुनिक सामग्री तैयार कर, उनको उपयोग करते हुए प्रतिकृति पाठ्याध्यापन करना। उन पाठ्याध्यापन द्वारा अध्यापक इस आधुनिक पद्धति को विश्लेषित करते

निम्न चित्र द्वारा केन्द्र के कार्यक्रमों का खुलासा

अध्यापक केन्द्र

अध्यापकों का विनिमय केन्द्र

अध्यापको के लिए अध्यापको से अध्यापको द्वारा संस्था

प्रदर्शन का प्रयोग परिशोधन संस्था

प्राथमिक शिक्षा सबधी, समाज के मुख्य लोग व अध्यापको की एक सामाजिक सस्था

अध्यापन-अध्ययन प्रक्रिया मे अध्यापकों का सूचना केन्द्र

अध्यापन-अध्ययन कृत्यो का कोशागार/कर्मागार

अध्यापनों का चर्चा मंच

मूल्याकन विधि समीक्षा, चर्चा

प्रजा स्वास्थ्य केन्द्र

नूतन कृत्यो को बनाने की प्रयोगशाला

अध्यापकों का रैफरेन्स केन्द्र

आदर्श शिक्षक

❒ एस. तुलसीदास

शिक्षक, समाज और राष्ट्र के निर्माण का मूलाधार है। शिक्षक पर ही समाज की उन्नति निर्भर होती है। शिक्षक बालकों को समुचित शिक्षा प्रदान कर देश के भविष्य को उज्ज्वल करता है। शिक्षक का महत्व अगाध है, अवर्णनीय है। प्राचीन काल में शिक्षक को गुरु का स्थान दिया गया। गुरु को भगवान तुल्य माना जाता था। कहा जाता है कि–

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरु देवो महेश्वरा
गुरु साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः

गुरु को त्रिमूर्ति का दर्जा दिया गया है। ब्रह्मा जो ज्ञान का भंडार है, विष्णु ज्ञान दाता है और शिव ज्ञान का सदुपयोगीकर्ता है। विवेकानद का कहना है कि जो शिक्षक विद्यार्थियों के स्तर पर उतरकर उनकी आत्मा का परीक्षण करके शिक्षा देता है वही सच्चा शिक्षक है। जवाहरलाल नेहरु के अनुसार चार प्रकार के शिक्षक होते हैं। सामान्य शिक्षक वह है जो केवल कहता है। अच्छा शिक्षक वह है जो समझाता है। उत्तम शिक्षक वह है जो प्रदर्शित करता है। और महान शिक्षक वह है जो विद्यार्थियों को प्रेरणा देता है। अध्यापक का महत्व एक निम्न उक्ति से हमें प्राप्त होता है – 'भवन निर्माण मे जो स्थान ईटों का है, राष्ट्र निर्माण में वही स्थान शिक्षक का है।

शिक्षक मे विभिन्न प्रकार की विशिष्टताएं होनी चाहिए। कुछ प्रमुख विशिष्टताओ का वर्णन नीचे किया गया है।

अपने विषय का ज्ञाता

शिक्षक को अपने विषय का कुशल ज्ञाता होना चाहिए नहीं तो समुचित शिक्षण नही कर सकेगा। अध्यापक का कर्तव्य है कि वह प्रमुख ग्रन्थो का गहन अध्ययन करे। प्रमुख ग्रन्थो का सूक्ष्म अध्ययन किए बिना विषय के गुण और दोषो का ज्ञान बालकों को प्रदान नहीं कर पाएगा।

शिक्षक के कंधों पर अनेकानेक कर्तव्य सदैव रहे हैं। उन्हें केवल पढ़ाना ही नहीं बल्कि बच्चों को मार्गदर्शन देना, सहायता करना रहे हैं। लेकिन आज आधुनिक समय में शिक्षक को कक्षा में दृश्य-श्रव्य आदि साधन सामग्री को विनियोग द्वारा शिशु केन्द्र विधियों को अपनाना होगा। बच्चों को कान पकड़कर नहीं हाथ पकड़कर चलाना होगा। बच्चों के स्तर पर उतरकर हाथों में हाथ मिलाकर चलना पड़ता है।

अन्य विषयों का भी ज्ञाता

प्राथमिक अध्यापक को अन्य विषय भी पढ़ाना होगा। शिक्षक के लिए आवश्यक है कि अपने विषय में कुशल होने के साथ-साथ उसे अन्य विषयो का भी ज्ञान होना चाहिए तभी वह अपने अध्यापन मे सह-सम्बन्ध का समावेश कर सकेगा। अपने अध्यापन में अन्य विषयों का समन्वय रोचकता और आकर्षण ले आता है।

मनोविज्ञान का ज्ञान

अध्यापक को मनोविज्ञान का सम्यक् ज्ञान होना चाहिए। मनोविज्ञान का ज्ञान होने पर अध्यापक स्तरानुकूल शिक्षण कर सकेगा। आधुनिक शिक्षण-प्रणालियां मनोविज्ञान का आधार लिए हुए हैं। अध्यापक इन मनोवैज्ञानिक आधार वाली पद्धतियों का प्रयोग तभी कर सकता है जब उसे मनोविज्ञान का यथेष्ट ज्ञान हो तभी अध्यापक का शिक्षण रोचक, आकर्षक और प्रभावपूर्ण हो सकेगा।

उन्नत व्यक्तित्व

अध्यापक का शारीरिक, मानसिक और नैतिक स्तर उच्च होना चाहिए। उन्नत व्यक्तित्व वाला अध्यापक छात्रों को

प्रभावित कर लेता है। अच्छे व्यक्तित्व वाले अध्यापक की ओर बालक आकृष्ट होते हैं और उसके गुणों को अपने मे ज़ाग्रत करने का प्रयास करते है। अध्यापक में प्रेम, दया, बन्धुत्व, सद्‌भावना, सहानुभूति आदि गुण होने चाहिए। शिक्षक प्रसन्नचित्त, हसमुख होना चाहिए। मस्तिष्क सदैव खुला हुआ होना चाहिए। स्फूर्ति का होना भी बहुत जरूरी है।

मधुर वाणी

शिक्षक का स्वर मधुर, आकर्षक और प्रभावशाली होना चाहिए। अध्यापक को भावानुकूल स्वर का प्रयोग करना चाहिए। स्वर की अनुकूलता शिक्षण को रोचक बनाती है और छात्रो को प्रभावित करती है।

शिक्षण विधियों का ज्ञान

प्रभावशाली शिक्षण के लिए यह आवश्यक है कि अध्यापक को शिक्षण विधियो का ज्ञान हो। शिक्षक चाहे कितना ही बडा विद्वान और अपने विषय का ज्ञाता क्यों न हो परन्तु वह तब तक समुचित शिक्षण नही कर सकता जब तक इसे उत्तम शिक्षक नही कहा जाता। शिक्षक को प्राथमिक कक्षा के लिए शिशु केन्द्र विधि उपयोग मे लानी होगी। जिसमे कृत्याधार विधि उत्तम और सरल है। शिक्षक को किसी एक विधि पर सीमित नहीं होना चाहिए। विद्यार्थियों के स्तर के अनुकूल, विषय के अनुसार आवश्यक विधियो का उपयोग करना होगा। शिक्षण विधि का अर्थ यह है कि शिक्षक अपने विचारों को विद्यार्थियों के उत्तम अभ्यास के लिए अभिव्यक्त (प्रकट) करता है। यदि विद्यार्थी सुनने, देखने के बजाय स्वयं अपने हाथो से करेगा तो बहुत दिन तक उसे याद रहेगा और विशिष्ट अभ्यास होगा।

अभिव्यक्तिकरण में कुशलता

शिक्षक के लिए आवश्यक है कि वह भावों के अभिव्यक्तिकरण में कुशल और योग्य हो। यदि कोई शिक्षक विषय का ज्ञाता होने पर भी अपने भावो को प्रकट नही कर पाता तो वह शिक्षण कार्य मे कदापि सफलता प्राप्त नही कर सकता। अनुभव से यह कुशलता बढ़ती है। निरतर प्रयत्न से यह कुशलता विकसित होती है।

नेतृत्व का गुण

शिक्षक के लिए नेतृत्व का गुण आवश्यक है। जिस शिक्षक मे नेतृत्व की कुशलता होती है वह बालकों को प्रभावित करने और अध्ययन के लिए प्रेरित करने मे सफल हो सकता है। शिक्षक यदि कुशल अभिनेता होगा तो वह *कक्षा मे अनुकूल वातावरण की सृष्टि कर सकेगा और* छात्रो को अनुशासन में रख सकेगा।

सहयोग

आज की मनोवैज्ञानिक शिक्षण-विधि की सफलता के लिए शिक्षक मे सहयोग का भाव होना बहुत जरूरी है। क्रियाओ को करते समय छात्रों के सामने अनेक समस्याएं आती है तब वे सहयोग चाहते है। शिक्षक को सहयोगी, मार्गदर्शी, फेसलिटेटर और दार्शनिक के जैसा व्यवहार करना पड़ता है।

सहानुभूति

छात्र उसी अध्यापक से अधिकाधिक सम्पर्क रखते है जो उनके प्रति सहानुभूति का प्रदर्शन करते है। ऐसे अध्यापको के सामने अपनी समस्याओ को रखने में छात्र तनिक भी नहीं हिचकते और अध्यापक को छात्रो की समस्याओ से अवगत होना बहुत जरूरी है।

अनुकूलता

विभिन्न परिस्थितियो के अनुकूल अपने को बनाने की क्षमता या कुशलता को ही अनुकूलता कहते हैं। यदि अध्यापक परिस्थितियो के अनुकूल अपने को बना नहीं पाएगा तो उसे अपने काम मे सफलता नहीं मिल पाएगी। अध्यापक के सामने विभिन्न रूप-रंग, विभिन्न योग्यता और विभिन्न समस्या वाले छात्र आते है। इस सब छात्रों से अच्छा सम्पर्क स्थापित करना होगा।

आकृति का आकर्षण

जो अध्यापक आकृति मे आकर्षक होता है उन्हे छात्रो से पर्याप्त सम्मान मिलता है।

रुचियों की विभिन्नता

एक सफल अध्यापक केवल अध्यापन मे ही रुचि नहीं लेता वह सामुदायिक क्रियाएं, समाज सेवा, सहगामी, क्रियाओ आदि सब में बराबर रुचि लेता है। रुचि विभिन्नता अध्यापक के लिए एक अनिवार्य गुण है।

व्यवहार में एकरूपता

छात्र उसी अध्यापक पर अधिक विश्वास रखते है जिनके व्यवहार में एकरूपता होती है। क्षण मे रुष्ट और क्षण में प्रसन्न होने वाला अध्यापक छात्रो से कभी भी सम्मान नहीं पाता।

सावधानी

एक अध्यापक को अपने काम के प्रति सदैव सावधान रहना चाहिए। छात्रों की निगाहें हमेशा उसके ऊपर लगी रहती है। वह जो कुछ कक्षा में बोले वह नपा-तुला और निश्चित होना चाहिए।

उत्सुक

एक अच्छा अध्यापक अपने कार्य के प्रति उत्साही होता है। वह अपने विषय तथा शिक्षण प्रणालियों के सम्बन्ध में अपने ज्ञान की वृद्धि करने मे निरन्तर सावधान रहता है। वह अपने ज्ञान को ताजा और समय के अनुसार बनाने के लिए उत्सुक रहता है।

वाक्पटुता

वही अध्यापक अपने विचारों को छात्र के सामने व्यक्त कर सकता है जो भाषण देने में पटु है।

परिश्रम और ईमानदारी

एक अध्यापक को हमेशा अपने कार्य की चिन्ता होनी चाहिए। अध्यापक की कार्य करने की लगन से छात्र प्रभावित होते है और एक अध्यापक अपनी ईमानदारी का परिचय वह छात्रों के साथ किए जाने वाले व्यवहार, अपने कर्त्तव्य तथा अन्य लोगो के सम्पर्क में आने पर ही दे सकता है।

आत्मविश्वास

एक सफल अध्यापक में आत्मविश्वास का होना नितान्त आवश्यक है।

प्रगतिशीलता

समाज प्रगतिशील होता है उसकी प्रगति के साथ-ही-साथ शिक्षक को भी प्रगतिशील होना चाहिए।

श्रव्य-दृश्य साधनों के प्रयोग में रुचि

शिक्षक के लिए यह आवश्यक है कि उसे श्रव्य-दृश्य साधनो के सफल संचालन का ज्ञान होना चाहिए साथ ही इन साधनो का प्रयोग करने में उसकी रुचि होनी चाहिए। सस्कृति और सभ्यता का ज्ञान शिक्षक मे होना जरूरी है।

बाल प्रकृति का ज्ञान

प्लेटो ने कहा है "एक अच्छे शिक्षक को बाल-प्रकृति का ज्ञान होना चाहिए।"

व्यक्ति और समाज की आवश्यकता का ज्ञान

अध्यापक बालक को शिक्षा उसकी और समाज की आवश्यकताओ के अनुसार देता है। इसलिए उसे बालक और समाज दोनों की आवश्यकताओ का अध्ययन कर लेना चाहिए।

शिक्षक के पात्र में पर्याप्त परिवर्तन आ गया है। शिक्षक उपाधि का महत्व बढ़ गया है। शिक्षक के भुजस्कंदो पर अनेकानेक कर्तव्य है। शिक्षक को न केवल विषय को पढ़ाना है बल्कि उन्हे मार्गनिर्देशन करना, सहायता एव सरलीकृत करना है। शिशु केन्द्र विधियो को अपनाना ताकि बच्चे अनेक क्रियाओ मे भाग लेकर विषय को

पूर्ण रूप से समझ सके। आधुनिक दृश्य-श्रव्य साधन सामग्री का विनियोग करना होगा। शिक्षक केवल पढ़ाना ही नहीं बल्कि बच्चो को स्व-अध्ययन करने मे सहायक बने। बच्चो को कान पकड़कर नही हाथ पकड़कर चलाना होगा। उत्तम शिक्षा प्रदान करने के लिए शिशु को केन्द्र बिन्दु बनाना होगा। ☐☐

क्रान्तिकारी परिवर्तन के लिए शिक्षा ही उत्तम साधन

जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में तीव्र गति से विकास और परिवर्तन हो रहा है। विकास की इस गतिशील प्रक्रिया में शिक्षा अपना प्रेरणात्मक योगदान दे रही है। मनुष्य स्वयं में बेशकीमती सम्पदा है, अमूल्य राष्ट्रीय संसाधन है। हमारी आधुनिक शिक्षा ऐसी हो कि प्रत्येक व्यक्ति समाज का उत्पादक सदस्य बने और देश की बहुमुखी प्रगति में योगदान दे। शिक्षा इन लक्ष्यों की ओर अविराम गति से अग्रसर हो रही है।

हम 21वीं सदी में पदार्पण कर चुके है तथा शिक्षा की चुनौतिया ज्ञान की खोज पर बल दे रही हैं ताकि आधुनिक आवश्यकताओ के अनुकूल शिक्षा व्यवस्था वनाने के सम्भव तरीकों पर कुछ प्रकाश डाला जा सके। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे तीव्र गति से परिवर्तन हो रहा है तथा भारत में अनेक परिवर्तन आ चुके हैं। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय से शिक्षा में अनेक परिवर्तन हुए है फिर भी शिक्षा का विस्तार एव स्तर का सुधार आवश्यकतानुसार नही हो सका। विभिन्न वर्गो तक शिक्षा को पहुंचाना है।

भारतीय विचारधारा के अनुसार मनुष्य स्वयं मे बेश-कीमती सम्पदा है, अमूल्य राष्ट्रीय ससाधन है। प्रत्येक व्यक्ति का अपना विशिष्ट व्यक्तित्व होता है। जीवन की प्रत्येक परिस्थिति में उसकी अपनी समस्याए एव आवश्यकताए होती हैं। विकास की इस पेचीदा और गतिशील प्रक्रिया मे शिक्षा अपना उत्प्रेरक योगदान दे सके, इसके लिए बहुत सावधानी से योजना बनाने तथा उस पर पूरी तरह अमल करने की आवश्यकता है।

ग्रामों में दिन-प्रतिदिन की सहूलियतों के अभाव में पढ़े-लिखे युवक ग्रामों मे रहने के लिए तैयार नही है। इसलिए ग्रामीण तथा नगरीय जीवन के अन्तर को कम करने तथा ग्रामीण क्षेत्रों मे रोजगार के विविध तथा व्यापक साधन उपलब्ध कराने की बहुत आवश्यकता है। आने वाले दशकों में जनसख्या की बढ़ती हुई गति पर काबू करना होगा। महिलाओ को साक्षर तथा शिक्षित करना होगा। नवीन तनावो से निपटने के लिए मानव संसाधनों को नवीन ढग से ही विकसित करना होगा। अत. इन नवीन चुनौतियों तथा सामाजिक आवश्कताओ से निपटने के लिए भारत सरकार ने एक नई शिक्षा नीति तैयार की जो सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के नाम से प्रसिद्ध है।

- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली का मूल मंत्र यह है कि एक निश्चित स्तर तक प्रत्येक विद्यार्थी को बिना किसी जाति-पांति, धर्म, स्थान या लिग-भेद के लगभग एक जैसी अच्छी शिक्षा उपलब्ध हो।
- राष्ट्रीय शिक्षा-प्रणाली के अन्तर्गत सम्पूर्ण देश के लिए 10+2+3 की संरचना को स्वीकार किया गया है।
- राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली पूरे देश के लिए एक राष्ट्रीय पाठ्यचर्या के ढांचे पर आधारित होगी जिसमें एक 'सामान्य केन्द्रिक' होगा।

सामान्य केन्द्रिक में भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन का

हैं और अध्यापन-अध्ययन को सुधारने का उचित निर्णय लेते है।

इसी तरह छात्रो के अध्ययन को दिलचस्प, कौतुक, अत्यन्त प्रेरित तथा सहज वातावरण का मौका देकर अन्तर्निहित कौशलता को उभारने के लिए नवीन ढाचों की तैयारी की जा रही है।

प्रधानाध्यापक की जिम्मेदारियां

अध्यापको के समावेशों मे नवीनतम अध्यापन विधि/पद्धति, तैयार की गई। अध्ययन-अध्यापन सामग्री, प्रधानाध्यापक अपनी पाठशाला में इसे उपयोग मे लाएं।

इस तरह ये मडल संसाधन केन्द्र प्राथमिक कक्षाओं के छात्रों को दृष्टि मे रखकर की गई क्रियान्वयन पहुंच है। जिससे सार्वत्रिक प्राथमिक शिक्षाकरण, सामाजिक समानता, स्वतत्रता, स्कूल का आकर्षण, सृजनात्मकता व मैत्रीकला उभारकर नवसमाज निमार्ण व देश के अच्छे नागरिक बनने मे सुदृढ़ बुनियाद डालने में मंडल ससाधन केन्द्र (आन्ध्र प्रदेश) मुख्य भूमिका निभा रहे है। ☐☐

प्राथमिक शिक्षा में शोध

आधुनिक शिक्षक के पात्र में पर्याप्त परिवर्तन आ गया है। शिक्षक उपाधि का महत्व बढ गया है। शिक्षक के कधो (भुजस्कंदों) पर अनेकानेक कर्तव्य है। शिक्षक को न सिर्फ विषय को पढाना है वल्कि उन्हे मार्ग निर्देशन करना, सहायता एवं सरलीकृत करना है। शिशु केन्द्र विधियो को अपनाना ताकि बच्चे अनेक क्रियाओ में भाग लेकर विषय को पूर्ण रूप से समझ सके। शिक्षक केवल पढ़ाना ही नहीं बल्कि बच्चो को स्वयं अध्ययन करने में सहायक बने। बच्चों के कान पकड़कर नही हाथ पकडकर चलाना होगा। उत्तम शिक्षा प्रदान करने के लिए शिशु को केन्द्र बिन्दु वनाना होगा। रॉडवेल के अनुसार यदि बच्चा केवल सुनेगा तो 30% याद रखेगा, सुनेगा और देखेगा तो 50% याद रखेगा और यदि स्वयं करेगा तो 70-90% याद रखेगा। प्राथमिक शिक्षा में क्रिया द्वारा अध्ययन का अधिक महत्व है। इस शिशु केन्द्र पद्धति (विधि) मे शिक्षक को अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे पाठ्य-विपय, शिक्षण विधिया, मूल्याकन एव वच्चो के व्यक्तिगत भेदो से। शिक्षक अनुसंधान (शोधन) प्रक्रिया द्वारा इन समस्याओं को सुधार कर छुटकारा पाकर अपनी उपाधि सामर्थ्य वढा सकता है।

शोध क्या है?

बार-बार खोजना ही शोध कहलाता है। मुख्य रूप से अनुसंधान तीन प्रकार के होते है।

मौलिक शोध

एक मूल सिद्धांत, सूत्र के सत्य को जानना ही मूल शोध कहलाता है। इसमें अधिक समय लगता है। प्रयोगशाला की आवश्यकता पड़ती है। यह खर्चे वाला है। निरंतर मार्गदर्शन की जरूरत पड़ती है। अधिक रूप से स्वीकृत सिद्धांत का सेकरण की जरूरत पड़ती है।

क्षेत्रीय या प्रायोगिक शोध

विषय के मूल सिद्धात का/सूत्रों का क्षेत्र मे विनियोग करना ही क्षेत्रीय/प्रायोगिक शोध कहलाता है। इस शोध में भी अधिक समय, अधिक रूप से स्वीकृत सिद्धांत का सेकरण, प्रशिक्षण एवं निरतर मार्गदर्शन की जरूरत पड़ती है। इसमे भी अधिक खर्चा होता है।

कार्य शोध

इसे उपाधि परक शोध या कक्षा शोध भी कह सकते हैं। यह कम समय, कम खर्च वाला शोध है। यह बहुत

सरल शोध है। कोई भी इसको अमल कर सकता है। अपनी उपाधि मे आई अनेक पाठ्य समस्याओ का क्रमानुसार हल कर लेना ही कार्य शोध कहलाता है। शिक्षक, प्रधानाचार्य, निरीक्षक, प्रशासक, शिक्षा शिक्षक आदि इसका प्रयोग कर सकते हैं।

शिक्षक अपनी कक्षा में शिशु केन्द्र विधि को विनियोग में अनेक समस्याओं का सामना कर सुधारना होगा। क्रिया अनुसंधान ही एक साधन है जिसके द्वारा इन समस्याओं का निवारण पाकर अपनी उपाधि सामर्थ्य पा सकते हैं। यह सरल अनुसंधान है जिसमें क्रियाओं का महत्व होता है और वास्तविक परिवर्तन होता है। यह सिद्धांत की अपेक्षा प्रयोग पर अधिक बल देता है।

शिक्षा में निम्नलिखित समस्याओं पर कार्य शोध कर सकते हैं।

- ☐ बच्चो के पठन, लेखन, उच्चारण मे दोष।
- ☐ बच्चों का गणित मे सुधार, पिछडे रहने के कारण तथा सुझाव।
- ☐ चित्रों को ठीक तरह से नहीं उतार पाना।
- ☐ बालकों का पाठशाला देर से आना।
- ☐ बालिकाओ का पाठशाला न आना।
- ☐ पाठशाला को बीच मे/मध्य मे छोड देना।
- ☐ बच्चां में अनुशासन आदि।

शिक्षकों की समस्याएं

- ☐ शिक्षक द्वारा कक्षा में कार्य पद्धति का उपयोग न कर पाना।
- ☐ बच्चों का निरंतर एवं समग्र मूल्याकन न करपाना।
- ☐ लक्ष्य आधारित मूल्यांकन पत्र न कर पाना।
- ☐ कालांश योजना न लिख सकने के कारण।
- ☐ शिक्षण मे सहायक सामग्री विनियोग न कर पाना।
- ☐ शिक्षको में अनियमितता।
- ☐ पाठ्यचर्या को पूर्ण न कर पाना।
- ☐ ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड के अन्तर्गत प्राप्त किटो का प्रयोन न करना आदि।

इस प्रकार कार्य शोध द्वारा समस्याओं को जाच कर उपाधि में गुणवत्ता पा सकते है।

कार्यशोध के सोपान

- ☐ समस्याओ को पहचानना।
- ☐ समस्या का स्पष्ट अर्थ देना।
- ☐ आंकड़ो का सकलन।
- ☐ समस्या का विश्लेषण।
- ☐ परिकल्पना करना।
- ☐ परिकल्पना का परीक्षण या जाचना।
- ☐ अतिम निर्धारण।

इन सोपानों को निम्न उदाहरण द्वारा समझाया जा सकता है। उदाहरण के लिए चौथी कक्षा के कुछ बच्चे गणित मे पिछड़े हुए है।

समस्या

"चौथी कक्षा के बच्चों का गणित मे पिछड़े रहना।"

समस्या को परिभाषित करना

यहां पर अध्यापक समस्या का निर्दिष्ट या स्पष्ट रूप देता है। बच्चे गणित के किस क्षेत्र मे/पाठ मे पिछडे हैं और क्या दोष कर रहे हैं, इसकी पहचान कर लेता है। उदाहरण के लिए "चौथी कक्षा के कुछ बच्चे अंको को जमा करने में अनेक दोप कर रहे है।

आंकड़ों का संकलन

यहां पर अध्यापक बच्चों की कापिया जाचेगा, और बच्चो को विपय पर परीक्षा लेकर, जिससे कितने बच्चे दोप कर रहे हैं, मालूम कर लेता है। इस प्रकार अध्यापक सेकरण करता है।

समस्या का विश्लेशण

यहां पर अध्यापक समस्या के सभावित कारणो को पहचानता है। उपयुक्त समस्या के निम्नलिखित कारण हो

सकते हैं।

- ☐ अध्यापक की शिक्षण विधि ठीक न होना।
- ☐ कक्षा मे साधन सामग्री का उपयोग न करना।
- ☐ बच्चो को गणित से भय होना।
- ☐ बच्चों को 'अंकों के जमा' पाठ समझ मे न आना।
- ☐ स्थान मूल्यों का बराबर ज्ञान न होना।
- ☐ अंकों के जमा पर अधिक अभ्यास न होना।
- ☐ बच्चे का कक्षा मे अनियमित रहना।
- ☐ बच्चो को अपने घरों मे कोई सहायक या मार्गदर्शक न होना।

परिकल्पना

परिकल्पना अनुसधान/शोध में मुख्य भूमिका निभाती है। यह अनुसंधान को आगे बढ़ाने मे सहायक होती है। यह जंगल में पगडडी के समान है जिससे हम लक्ष्य तक पहुच सकते है। यहां शोधकर्ता अंकों के जमा करने मे दोष के जो कारण हो सकते हैं जिसमें से एक संबधित कारण को लेकर कार्य को प्रारभ करता है। उदाहरण के लिए "अध्यापक साधन सामग्री उपयोग करके इन दोषों का निवारण कर सकता है"।

परिकल्पना

यहा शोधकर्ता उपर्युक्त परिकल्पना को जांचता है। साधन सामग्री के द्वारा पढ़ाता है और समझाता है। फिर मूल्याकन द्वारा बालको के दोषों को पहचानता है। यदि समस्या का निवारण न हुआ तो दूसरा कारण लेकर दूसरी परिकल्पना करता है फिर उसको जांचता है। इस दूसरी परिकल्पना द्वारा समस्या का निवारण हुआ तो आगे बढ़ता है।

अंतिम निर्धारण

यहां शोधकर्ता नतीजों के आधार पर सामान्यीकरण करता है और सूचनाएं देता है।

आन्ध्र प्रदेश और प्राथमिक शिक्षा में शोध

आन्ध्र प्रदेश में प्राथमिक शिक्षा मे बढ़ावा और गुणवत्ता लाने के लिए ओवरसीज डवलपमेन्ट एडमिनिस्ट्रेशन, इग्लैण्ड के आर्थिक सलाहकार द्वारा आन्ध्र प्रदेश प्राथमिक शिक्षा प्रोजेक्ट पर अमल हुआ है, जिसके अन्तर्गत अनेक शिक्षक, शिक्षा-शिक्षकों, शिक्षा अधिकारियो ने इस दिशा में अनुसंधान, व्यक्ति अध्ययन और कार्यशोध किए है।

प्रस्तुत कार्यक्रम डी पी.ई.पी. के प्रोत्साहन से लघु अनुसधानो का कार्य जारी है। शिक्षको को इस दिशा मे प्रशिक्षण भी दिया गया है।

एक कार्य अनुसंधान जो मैने किया है इस प्रकार है। एक विद्यालय के संदर्शनों से एक समस्या से अवगत हुआ। यह प्राथमिक पाठशाला हरिजन लोगों के क्षेत्र में है। यह गाव के बाहर एक पहाड़ी के पास है। गांव मे इस स्कूल के अलावा उन्नत पाठशाला भी है। इस गाव से थोड़ी ही दूरी पर लगभग 6 अनुसूचित जनजाति खेड़े हैं जहा से लगभग 80 बच्चे इस प्राथमिक पाठशाला में आते थे। ये बच्चे नियमित रूप से विद्यालय मे नहीं आते थे और कुछ बच्चों ने स्कूल भी छोड़ दिया था।

समस्या

अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति के बच्चे विद्यालय में नियमित रूप से नही आते। इस समस्या के मुख्य कारण इस प्रकार थे—

- ☐ शिक्षक शिशु केन्द्र विधि को नही अपनाते थे।
- ☐ विद्यालय के समीप कई सूअर पालन केन्द्र या सूअर बाडे थे जिससे वातावरण प्रदूषित होता था। बच्चे बीमार पड जाने से विद्यालय में नियमित रूप से नहीं आते थे।
- ☐ उस गांव मे अनुसूचित जनजाति के बच्चों के लिए आवास गृह है, जिसमे इस विद्यालय के कुछ बच्चो को प्रवेश नही मिला था। इसलिए बच्चे विद्यालय आने मे अनियमित थे और कुछ बच्चे स्कूल भी छोड़ गए थे।
- ☐ विद्यालय मे पाच कक्षाओ के लिए दो ही कमरे थे जिससे बच्चो को बैठने की समस्या थी।

कार्यशोध द्वारा इन समस्याओं का हल निम्न प्रकार किया गया।

विद्यालय के तीन शिक्षकों को शिशु केन्द्र विधि में

प्रशिक्षित तथा मार्गदर्शन दिया गया। इस विधि के उपयोग से बच्चों में स्कूल एवं पढ़ाई के प्रति श्रद्धा पैदा की गई।

बच्चों के माता-पिता, गांव के सरपच, मडल के अभिवृद्धि अधिकारी और विद्याधिकारी से मिलकर विद्यालय के निकट (आसपास) के सुअर वाड़ों को वहां से दूर हटाने का प्रबंध किया गया। इस तरह स्कूल का प्रदूषित वातावरण दूर हो गया और बच्चे नियमित रूप से आने लगे।

स्थानीय अवास गृह में अनुसूचित जनजाति के केवल 100 बच्चों का प्रवेश था। इस पाठशाला के कुछ बच्चों को (लगभग 10) प्रवेश का अवकाश नही मिला। शोधकर्ता ने उस हॉस्टल के वार्डन एव जिले के अनुसूचित जाति सचालक से मिलकर इन बच्चो को भी प्रवेश दिलाया जिससे बच्चे नियमित रूप से आने लगे एव स्कूल को भी नहीं छोडे।

विद्यालय में पांच कक्षाओ के लिए दो ही कमरे थे। मंडल विद्याधिकारी और गाव के सरपच से मिलकर एक झोपड़ी का निर्माण किया गया।

इस प्रकार अ.जा./अ.ज.जा. के बच्चे नियमित रूप से विद्यालय में आने लगे और समस्या का निवारण हुआ।

इसी प्रकार क्रिया-शोध के द्वारा अनेक समस्याओ का निवारण पाकर उन्नति की दिशा मे जा सकते हैं। क्रिया-शोध में क्रिया का महत्व होता है और वास्तविक परिवर्तन होता है।

क्रिया-शोध का महत्व

- क्रिया-शोध विद्यालय की कार्य प्रणाली में सुधार करता है।
- यह विद्यालय प्रबन्धकों, छात्रों, शिक्षको, निरीक्षको आदि की समस्याओ का समाधान करता है।
- यह शिक्षकों और प्रधानाचार्य को अपने दैनिक अनुभवो को संगठित करके, उनसे लाभ प्राप्त करने को प्रेरित करता है।
- यह छात्रो की चतुर्मुखी उन्नति करने के लिए विद्यालय की क्रियाओ का प्रभावपूर्ण विधि से आयोजन करता है।
- यह शिक्षकों, प्रधानाचार्यों, प्रबन्धको, प्रशासकों आदि को वैज्ञानिक और वस्तुनिष्ठ विधियो को अपनाने के लिए प्रेरणा देकर मूल्यांकन में परिवर्तन एवं सुधार करता है।
- यह विद्यालय में राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के सामान्य केन्द्रिक मूल्यों की स्थापना पर बल देता है।
- यह शिक्षको में प्रेम, सहयोग एवं सद्भावना की भावनाओ का विकास करता है।
- यह सिद्धात की अपेक्षा प्रयोग पर अधिक बल देता है।
- क्रिया-शोध करने वाला शिक्षक समस्याओं का समाधान करके अपनी उन्नति करता है। □□

अध्यापिका
अग्रवाल गर्ल्स हाईस्कूल
चार कमान, हैदराबाद
आन्ध्र प्रदेश

इतिहास, संवैधानिक जिम्मेदारियां तथा राष्ट्रीय अस्मिता से सम्बन्धित तत्व होंगे। इन तत्वो को इस प्रकार से संजोया जाएगा जिससे राष्ट्रीय मूल्यो को विकसित किया जा सके। इन राष्ट्रीय मूल्यो मे निम्नलिखित बातें शामिल होंगी–

- भारत की समान सास्कृतिक धरोहर।
- लोकतन्त्र।
- स्त्री-पुरुषो के बीच समानता।
- पर्यावरण का सरक्षण।
- सामाजिक अवरोधों को दूर करना।
- सीमित परिवार का महत्व।
- वैज्ञानिक स्वभाव का विकास।

- ☐ नवीन शिक्षा प्रणाली आने वाली सन्तति मे विश्वव्यापी दृष्टिकोण को सुदृढ़ बनाए, साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व की भावना का विकास करे।
- ☐ समानता के उद्देश्य को साकार बनाने के लिए राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली मे सभी को शिक्षा का समान अवसर उपलब्ध कराया जाएगा।
- ☐ प्रत्येक चरण पर दी जाने वाली शिक्षा का न्यूनतम स्तर निर्धारित किया जाएगा। ऐसे उपाय भी किए जाएंगे कि विद्यार्थी देश के विभिन्न भागो की सस्कृति, परम्पराओ तथा सामाजिक व्यवस्था को समझ सकें।
- ☐ देश मे सम्पर्क भाषा को बढ़ावा देने के लिए प्रयास किया जाएगा।
- ☐ उच्च शिक्षा सामान्य तथा खासतौर से तकनीकी शिक्षा प्राप्त करने की योग्यता रखने वाले प्रत्येक छात्र को बराबर के मौके दिए जाने की व्यवस्था की जाएगी। साथ ही एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र मे जाकर अध्ययन करने की सुविधा दी जाएगी।
- ☐ शोध, विकास तथा विज्ञान एव तकनीकी के विषयों में देश की विभिन्न सस्थाओं के बीच व्यापक तानाबाना स्थापित करने के लिए विशेष व्यवस्था की जाएगी जिससे वे अपने-अपने साधन सम्मिलित कर राष्ट्रीय महत्व की परियोजनाओ मे भाग ले सके।
- ☐ आजीवन शिक्षा शैक्षिक प्रक्रिया का मूलभूत लक्ष्य है और सार्वजनिक साक्षरता उसका अभिन्न अंग है। युवा वर्ग, गृहणियो, किसानो, मजदूरो, व्यापारियो आदि को अपनी पसद व सुविधा के अनुसार अपनी शिक्षा जारी रखने के लिए अवसर प्रदान किए जाएगे। खुली शिक्षा तथा दूरस्थ शिक्षण राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली के महत्वपूर्ण अग होगे।
- ☐ शिक्षा के पुनर्निर्माण के लिए, शिक्षा मे असमानताओं को कम करने के लिए, प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के लिए, प्रौढ़ साक्षरता के लिए, वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकी अनुसधान के लिए और अन्य लक्ष्यों के लिए साधन जुटाने का दायित्व समूचे राष्ट्र पर होगा।
- ☐ तकनीकी तथा प्रवन्ध शिक्षा का पुनर्गठन होगा। नई शताब्दी के आरंभ में जिस प्रकार की परिस्थिति की सम्भावना है, उसे ध्यान मे रखना होगा। अर्थव्यवस्था, सामाजिक वातावरण, उत्पादन तथा प्रबन्धकीय प्रक्रियाओं मे संभावित परिवर्तन, ज्ञान मे तेजी से होते फैलाव की तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मे होने वाली प्रगति को इस सदर्भ मे देखना होगा।
- ☐ जनशक्ति सूचना प्रणाली को विकसित तथा सुदृढ़ किया जाएगा।
- ☐ सगणक-साक्षरता का कार्यक्रम स्कूल स्तर से ही बड़े पैमाने पर आयोजित किया जाएगा।

शिक्षा व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए निम्नलिखित युक्तियां अपनाई जाएंगी –

- अध्यापको को अधिक सुविधाएं तथा साथ ही उनकी अधिक जवाबदेही।
- छात्रो के लिए सेवा मे सुधार तथा साथ ही उनके सही आचरण पर बल।
- शिक्षा संस्थाओ को अधिक सुविधाएं दिया जाना और इन संस्थाओ के कार्य का मूल्यांकन।
- शिक्षा की विषय-वस्तु तथा प्रक्रिया को नया मोड़ देना।

इस समय शिक्षा की औपचारिक पद्धति और देश की समृद्ध एवं विविध सास्कृतिक परम्पराओ के बीच एक खाई है जिसे पाटना अनिवार्य है। आधुनिक टेक्नोलॉजी की धुन में यह नही होना चाहिए की नई पीढी भारतीय इतिहास तथा संस्कृति के मूल से ही कट जाए। परिवर्तनपरक टेक्नोलॉजी और सतत् चली आ रही देश की सास्कृतिक परम्परा में एक सुन्दर समन्वय स्थापित करना होगा।

शिक्षा की पाठ्यचर्या तथा प्रक्रियाओ को सांस्कृतिक विषय-वस्तु के समावेश द्वारा अधिक से अधिक रूपो में समृद्ध किया जाएगा।

- ललित कलाओं, सग्रहालय-विज्ञान, लोक साहित्य आदि विशिष्ट विषयो पर उचित ध्यान दिया जाएगा।
- मूल्यों की शिक्षा की व्यवस्था की जाएगी।
- शैक्षिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग उपयोगी जानकारी के लिए, अध्यापकों के प्रशिक्षण तथा पुन. प्रशिक्षण के लिए, शिक्षा की गुणवत्ता को सुधारने के लिए तथा कला एव सस्कृति के प्रति जागरूकता और स्थाई मूल्यो के संस्कार उत्पन्न करने के लिए किया जाएगा। औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनो प्रकार की शिक्षा मे इसका प्रयोग होगा।
- बच्चों के लिए उच्चकोटि के कार्यक्रमो तथा उपयोगी फिल्मो के निर्माण के लिए सक्रिय अभियान चलाया जाएगा।
- कार्यानुभव सभी स्तरों पर दी जाने वाली शिक्षा का एक आवश्यक अग होगा।
- पर्यावरण के प्रति जागरूकता विद्यालयो तथा कालेजो की शिक्षा का अग होगी।
- गणित एव विज्ञान शिक्षा को सुदृढ़ किया जाएगा।
- विद्यालयों में कम्प्यूटर शिक्षा का प्रवेश होगा।
- खेल शिक्षा सीखने की प्रक्रिया मे अभिन्न अग होगे।
- परीक्षा मे इस प्रकार सुधार किया जाएगा जिससे मूल्याकन की एक वैध तथा विश्वसनीय प्रक्रिया उभर सके और सिखाने की प्रक्रिया मे एक सशक्त साधन के रूप में काम आ सके।

भारतवासियो की सहयोग भावना, व्यवस्थित नागरिक जीवन एव सामान्य जनता के सामाजिक कार्यो मे बुद्धिमता के साथ भाग लेने की योग्यता पर ही लोकतन्त्र राज्य की सफलता निर्भर है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि शिक्षा ऐसी हो कि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यों को अधिकारो से अधिक महत्व देने लगे और आलोचनात्मक प्रशंसा करने एव ठीक तरह से सोचने-विचारने की आदत पड़ जाए। यह भी उतना ही आवश्यक है कि शिक्षा ऐसी हो कि प्रत्येक व्यक्ति समाज का उत्पादक सदस्य बने और देश की बहुमुखी प्रगति मे योगदान दे। इन्ही लक्ष्यो को सामने रखकर भारत में पचवर्षीय योजनाओ का कार्यान्वयन किया गया है।

यह सत्य है कि उपर्युक्त लक्ष्यों की अभी तक प्राप्ति नहीं हो पाई है। किन्तु हमे यह स्वीकार करने मे संकोच नहीं करना चाहिए कि शिक्षा अपने लक्ष्यो की ओर अविराम गति से अग्रसर हो रही है। प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था, पाठ्यक्रमो मे व्यावसायिक शिक्षा का समावेश, विज्ञान पर आधारित शिक्षा, शिक्षा की सुविधाओ में विस्तार, ग्रामीण क्षेत्रों मे शिक्षा प्राप्त करने के अवसर, स्त्रियो एवं पिछडी जातियो की शिक्षा का विकल्प, शैक्षिक अवसरो की समानता और प्राविधिक एव प्रौद्योगिक शिक्षा सस्थाओं की स्थापना ने शिक्षा के कलेवर मे आशातीत परिवर्तन कर दिया है। उसने व्यक्ति को समाज का उत्पादक सदस्य बना दिया है और उसने अपने देश की प्रगति मे योगदान देने की कुछ क्षमता भी उत्पन्न कर दी है। ❑❑

वरिष्ठ प्रवक्ता
डाइट, निजामाबाद
आंध्र प्रदेश

नए दौर का नया अभियान

❑ *अनीता शर्मा*

एक बालक जो जीवन के सात वर्ष पूरे कर चुका हो, शरीर से समर्थ हो, उसकी लगन तथा कार्यक्षमता भी अन्य बालकों की तरह हो उसके माता-पिता उसे हर प्रकार की सहायता देने को तत्पर हो। किन्तु यह बालक सामाजिक आचरण का पालन ठीक से नही कर सकता, दूसरे बालको के साथ मिल कर खेल नहीं सकता, पूछे गए प्रश्नो को बार-बार दोहराता है। इसका दृष्टि सम्बन्ध भी अन्य बालको से कुछ कम है। (इस मनोदशा को ओटिस्टिक फिचरस कहते है, यह एक केन्द्रीय नाडी व्यवस्था की समस्या है।) किन्तु कुल मिलाकर बालक पाठशाला मे प्रसन्न है। क्या इस बालक को हम पाठशाला मे आने से रोक सकते है? कदापि नहीं। एक खेलता मुस्कराता जीवन हमेशा के लिए शून्यता मे खो जाएगा। तो यही वह पद्धति है जहा विशेष व साधारण बालकों को एक साथ मिलाकर शिक्षा प्रदान की जाती है, इस शिक्षा पद्धति को समेकित शिक्षा — इन्टीग्रेटेड शिक्षा अथवा इनक्लूसिव शिक्षा कहते है।

भारतीय संविधान संशोधन 1995 के 45वे अधिनियम के अनुसार 14 वर्ष तक के सभी बालक व बालिकाओ के लिए अनिवार्य तथा नि:शुल्क शिक्षा का प्रावधान है तथा विशेष बालकों के लिए एक विशेष एक्ट 'पब्लिक लॉ 1994-142 अधिनियम' मे इस क्षेत्र मे एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हुआ। कहा गया है कि "निर्बन्धित परन्तु उत्पादक शिक्षा व्यवस्था मे प्रत्येक विकलाग बालिका/बालक (शारीरिक अथवा मानसिक) को स्थान प्राप्त होना चाहिए।

आज से कई वर्ष पहले यह सम्भव नहीं था। इसके अनेक कारण थे। जिनमें से एक महत्वपूर्ण कारण था समाज इन बालकों को पूर्णतया स्वीकार नहीं करता था तथा अभिभावक भी इन बालको को समाज से छुपाकर घर मे रखते थे। परन्तु आज का अभिभावक जागरूक अभिभावक है। अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपने बालक को उचित शिक्षा अवश्य प्रदान करता है। हर राज्य इसके लिए प्रयासरत है और हर बालक स्वयं, अनुकूल व प्रतिकूल स्थिति मे जो भी उसके लिए सम्भव हो, शिक्षा प्राप्त करना चाहता है। आज हर व्यक्ति को इस भावना का सम्मान करना चाहिए। इस भावना को अपना उत्तरदायित्व समझते हुए सामान्य अथवा विशेष बालको को एक ही पाठशाला मे शिक्षा का अधिकार होना चाहिए।

समेकित शिक्षा, शिक्षा के क्षेत्र में एक नया दौर है। इस शिक्षा पद्धति का आधार हर बालक/बालिका की क्षमता, सामर्थ्य, रुचि व योग्यता की भिन्नता है। इसी आधार को ध्यान में रखते हुए समेकित शिक्षा हर बालक/बालिका को समृद्ध विद्यार्थी जीवन जीने का अवसर प्रदान करती है।

बिरिकर व बिरिकर नाम के शोधकर्ताओं ने 1971, 1972, 1973, 1976 मे पिवॉडी कॉलेज से समेकित शिक्षा के प्रभाव सम्बन्धी एक शोध किया। इस शोध कार्य में उन्होंने एक पाठशला में विशेष व साधारण बालक/बालिकाओ को एक साथ पढ़ाने की व्यवस्था रखी तो पाया कि प्रथम वर्ष मे अभिभावकों ने समेकित शिक्षा को कोई प्रोत्साहन नही दिया। वे किन्ही कारणों से अपने बालको को इस प्रकार की शिक्षा का अग नही बनाना चाहते थे। किन्तु दूसरे वर्ष मे इस पाठशाला मे बालकों की सख्या मे सुधार पाया गया और चौथे वर्ष मे जब साधारण बालकों मे भी समेकित शिक्षा के कारण अद्भुत बदलाव देखा गया तो उस पाठशाला में स्थान पाना कठिन हो गया। कारण था इस पाठशाला के साधारण बालक भी अन्य बालकों से कहीं अधिक शान्त, समझदार, सहयोगी, सहनशील तथा प्रसन्न पाए गए।

समेकित शिक्षा का आधार

समेकित शिक्षा का मूल आधार है हर बालक की क्षमता व सामर्थ्य भिन्न है। उसकी रुचि भिन्न है। समेकित शिक्षा का हर पाठ हर बालक की मानसिक व शारीरिक स्थिति व रुचि को ध्यान में रखकर तैयार किया जाता है। हर बालक व बालिका को समृद्ध विद्यार्थी जीवन जीने का अवसर प्रदान किया जाता है। कक्षा का अनुपात 10 साधारण तथा 1 विशेष बालक है। परन्तु क्या इस शिक्षा पद्धति को अपनाना आसान होगा। इस विषय को लेकर कई प्रश्न हमारे सामने खडे होते है जैसे–

बालकों से सम्बन्धित

- ☐ क्या इस प्रकार की शिक्षा सामान्य बालकों के लिए उचित है?
- ☐ क्या इस प्रकार की शिक्षा का पाठशाला के अन्य बालकों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा?
- ☐ क्या पाठशाला के दूसरे बालक इन बालकों को अपने खेल व कक्षा में स्वीकार कर पाएंगे?
- ☐ क्या हमारे विशेष बालक साधारण बालको के साथ कन्धे से कंधा मिलाकर चल पाएंगे?

अगर हा तो कहा तक ?

अध्यापिका की दृष्टि से

- ☐ क्या अध्यापिका इन बालकों के प्रति उचित व्यवहार अपना पाएंगी?
- ☐ क्या इस पद्धति को अपनाने के लिए हमारे पास प्रशिक्षित अध्यापिकाए हैं?
- ☐ क्या अध्यापिकाएं इस कार्य को समझने व करने की सवेदना रखती है?

पाठशाला संचालन समिति की दृष्टि से

- ☐ क्या पाठशाला संचालन समिति यह कार्य करने के लिए प्रेरित है?
- ☐ क्या पाठशाला संचालन समिति आने वाली अनेक चुनौतियो का सामना करने के लिए तैयार है।

समाज की दृष्टि से

यह कार्यक्रम तभी एक सफल रूप ले पाएगा जब समाज द्वारा इस पद्धति को सम्पूर्ण सहयोग प्राप्त हो। उदाहरण– सभी अभिभावक अपने बालको को इस प्रकार की पाठशाला में भेजने के लिए तैयार हो।

इन सभी प्रश्नों का उत्तर सकारात्मक पाया गया। शायद इन सभी प्रश्नो का उत्तर इस एक उदाहरण में मिल जाए।

उदाहरण– समीर एक 'सिरिबल पैलसी' का शिकार बालक है। उसके पिता रोज सुबह उसका बस्ता व भोजन रखकर चले जाते हैं। उसके मित्र उसका बस्ता उसके स्थान पर रखकर समीर को पकड़ कर खेल के मैदान में ले जाते है। घंटी बजने पर समीर अपनी कक्षा के साथियों के साथ प्रार्थना स्थल पर आ जाता है। फिर कक्षा आरम्भ होती है। समीर गणित सीखने में प्रखर है। परन्तु भाषा सीखना उसके लिए कुछ कठिन है। उसकी लिखावट पढ़ने मे उसकी अध्यापिका को विशेष ध्यान रखना पड़ता है। समीर अपने साथियो को गणित के कठिन सवाल सीखने में हमेशा मदद करता है। उसके साथी उसे छोड़कर कभी खेलने नहीं जाते, हर कार्य कक्षा के विद्यार्थी साथ मिलकर बखूबी करते हैं। (प्रोजेक्ट वर्क, पिकनिक, ड्रामा) समीर पाठशाला के वार्षिक उत्सव मे भाग लेता है। समीर की अध्यापिका समीर को जो पात्र वह बखूबी निभा सके, देती है। पिछले वर्ष समीर ने अपनी प्रजा में एक राजा का पात्र निभाया।

समीर के अभिभावक उसकी पूरी मदद करते हैं। अगर वह कक्षा कार्य पूरा न कर पाए तो आधी छुट्टी में उसकी माता कार्य पूरा कर लेती है। वह कक्षा अध्यापिका के साथ सदा सम्पर्क बनाए रखती है। विद्यालय की संचालन समिति अन्य अभिभावकों से समेकित शिक्षा से होने वाले अनेक लाभों के विषय में चर्चा कर इस पद्धति को सकारात्मक बनाने का पूरा प्रयास कर रहे हैं। पाठशाला मे विशेष अध्यापिका, सलाहकार, मनोचिकित्सक का पूरा सहयोग लिया जाता है तथा समय-समय पर समीर की उन्नति का मूल्याकन भी विशेषज्ञों द्वारा किया

जाता है। कुल मिलाकर समीर एक प्रसन्न बालक है। उसकी अयोग्यताओं के साथ उसकी अनेक योग्यताए उभर कर सामने आई। (प्रस्तुत उदाहरण को यहा तक पूर्णतया: सकारात्मक बनाने के लिए दस वर्ष लगे। इन दस वर्षो में हर तरह की सकारात्मक तथा नकारात्मक घटनाएं घटीं परन्तु आज दस वर्ष उपरान्त यह कहना उचित ही होगा कि समेकित शिक्षा पद्धति की अति आवश्यकता है। आप समझकर देखिए – अगर समीर के जीवन मे पाठशाला न हो तो उसका जीवन कितना सूना होगा? कितना निरर्थक? यूं तो अपने अनुभव के आधार पर केवल यही कहा जा सकता है कि समेकित शिक्षा अवश्य एक सफल प्रयास हो सकता है। परन्तु उसमें कुछ तैयारिया आवश्यक है तो आइए पहले यह जान ले ये कौन-सी तैयारियां हैं जो इस प्रयास को एक सफल प्रयास बनाएंगी।

बालकों की ओर

- सामान्य बालको को इन विशेष बालको के बारे में आवश्यक जानकारी अवश्य दे उदाहरण– बालक बोल व सुन क्यो नहीं सकता? आप उसके जीवन को सरल बनाने में क्या योगदान दे सकते हैं।
- सामान्य बालको को विशेष बालको की विकलांगता से होने वाली अनेक कठिनाईयों के बारे में जानकारी अवश्य दे। अकसर बालक इन बालको को चिढाते है। अगर उन्हे इनकी कठिनाईयों के बारे मे जानकारी होगी तो वह कदापि ऐसा नही करेंगे। उदाहरण– एक लंगड़े बालक को लगड़ा कहने से उसे दु:ख होगा परन्तु अगर अध्यापिका बालकों से इस विषय पर पहले से चर्चा करेगी तो बालक उसे लंगड़ा नहीं कहेगे।
- सामान्य बालक विशेष बालकों की छोटी, बड़ी कठिनाईयों मे किस प्रकार उनका साथ दे सकते हैं। ऊपर दिए गए उदाहरण मे आपने देखा कि समीर के सहपाठी किस प्रकार उसका पूरा कार्य करने मे सहायक हुए। यह उसकी कक्षाध्यापिका के प्रयास का फल था।

अध्यापिका की ओर

- अध्यापिका को इस बात की विशेष जानकारी होनी चाहिए कि विशेष बालको को किस प्रकार पढ़ाया जाए। अगर बालक एक प्रकार से पाठ न समझे तो उसे समझाने के लिए वह और क्या कर सकती है?
- अगर अध्यापिका इन विशेष बालकों को मन से स्वीकारे तभी वह उसके प्रति कार्य करने के लिए उत्साहित हो सकती है। उसकी छोटी-मोटी *अयोग्यताओ को नजरअन्दाज करते हुए बालक* के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव हो तभी इस प्रयास मे सफलता प्राप्त की जा सकती है। इसी के अन्तर्गत वह सभी विशेष गुण जो एक अध्यापिका को एक विशेष अध्यापिका बनते है, आ जाएगे।

समाज की ओर

समेकित शिक्षा को एक सफल शिक्षा पद्धति बनाने के लिए यह आवश्यक है कि समाज का नजरिया इन बालको के प्रति बदला जाए। उनको अलग रखने से उनके ऊपर होने वाले दुष्प्रभाव से समाज को अवगत करवाएं, तथा दोनों प्रकार के बालकों को साथ रखकर कार्य करने से होने वाले अनेक लाभो से समाज को अवगत करवाएं। आइए, अब एक नजर कुछ उन तथ्यो पर डाले जिनसे समेकित शिक्षा पद्धति को सफल बनाने मे और सहयोग प्राप्त हो सकता है। यह तीन 'स' से जुड़ा एक चक्र है।

सुयोजना– कार्य योजना, पाठ्यक्रम योजना।

संगठन– विशेषज्ञो का संगठन, अभिभावको का संगठन, अध्यापिकाओ का संगठन, मनोचिकित्सकों का संगठन– बालकों का संगठन।

सहयोग– ऊपर दिए गए व्यक्तियों के साथ उनका सहयोग प्राप्त होना भी अति आवश्यक है।

समेकित शिक्षा का एक प्रयास मनोहर विद्या सदन नाम की एक पाठशाला में बगलौर नामक शहर में किया जा रहा है। यहा पर विशेष बालकों को पूर्णतया स्वीकारा जा रहा है तथा समेकित शिक्षा के मूल आधार को

ध्यान में रखते हुए प्रत्येक बालक को समृद्ध विद्यार्थी जीवन जीने मे मदद देने का प्रयास किया जा रहा है। यह विद्यालय 1991 मे आरम्भ किया गया था। इस सम्पूर्ण पद्धति में सबसे अधिक महत्वपूर्ण भूमिका एक अध्यापिका की है। इन वर्षो में बालकों के साथ कार्य करते हुए कुछ मुख्य बाते जो ध्यान में रखी जा सकती हैं, जो इस प्रकार से है–

- ☐ विद्यार्थी को अपना कार्य करने के लिए अभिव्यक्ति के अनेक माध्यम दिए जाने चाहिए। उदाहरण के लिए चित्रो द्वारा अभिव्यक्ति, बोलकर, रंगों द्वारा, नृत्य गीत, या फिर ड्रामा– जिसमे कक्षा का हर विद्यार्थी अपनी सामर्थ्य के अनुसार कक्षा में भाग ले सके व प्रसन्न रहे।
- ☐ विशेष बालक को कार्य समाप्त करने के लिए अन्य बालकों से कुछ अधिक समय दिया जाना चाहिए तथा बालक को उसके बारे में सूचित किया जाना चाहिए। जिससे बालक तनाव की स्थिति में न आए।
- ☐ विशेष बालक के कार्य भार को कुछ कम किया जाना चाहिए। उसके लिए वस्तुनिष्ठ प्रश्न अधिक हो। जिससे बालक उन्हे आसानी से करे व कार्य समाप्ति की संतुष्टि प्राप्त कर सके।
- ☐ जहा विशेष बालक को पाठ समझने मे कुछ अधिक समय चाहिए, अध्यापिका को पूर्ण सहयोग देना चाहिए।
- ☐ जैसा पहले भी कहा जा चुका है समेकित शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका अध्यापिका निभाती है। अध्यापिका के लिए अति आवश्यक है कि वह बालक की जरूरतों के प्रति पूर्णतया सवेदनशील हो। वह बालक की भावनाओ को उसके विकास में प्रथम स्थान प्रदान करे। उसकी योग्यताओ व अयोग्यताओं का पूरा ख्याल रखे तथा शब्दों का प्रयोग प्रभावशाली ढग से करे।
- ☐ यह एक अति महत्वपूर्ण ध्यान में रखने योग्य बात है कि विशेष बालकों के माता-पिता अत्यधिक संवेदनशील होते हैं। इसलिए सदैव याद रखे कि बालक के विषय में चर्चा करते समय शब्दो का प्रयोग अत्यधिक सावधानी से करें। उदाहरण – "समीर पढ़ाई में बहुत कमजोर है" कहने की अपेक्षा अगर कहें– "समीर गणित के सवाल बहुत अच्छी तरह से समझ रहा है व अपने साथियों की मदद भी कर रहा है परन्तु बहुत अच्छा होगा अगर भाषा मे भी समीर कुछ और मेहनत करे तो नतीजा अच्छा होगा।
- ☐ हर विशेष बालक की कुछ कार्यक्षमता सीमा होती है तथा कुछ विशेष कठिनाईया होती हैं। प्रत्येक अध्यापिका को बालक की कार्यक्षमता को ध्यान में रखते हुए उसे कार्यभार देना चाहिए अर्थात् उससे उसकी कार्यक्षमता से अधिक कार्य कदापि न दे। इससे बालक का मनोबल बना रहेगा उदाहरण– हाइपरऐक्टिव बालक अगर 20 मिनट की प्रार्थना सभा में न आ पाए तो उसकी छूट उसको अवश्य देनी चाहिए।
- ☐ अध्यापिका को कुछ विशेष व्यवहार शोधन के तरीके अपनाने चाहिए। उदाहरण– अगर बालक अति उद्दड है तो उसका हाथ पकड़कर धीरे से पीठ सहलाकर प्यार से उसको मनाएं। बालक की आंखो मे आंखें डालकर बात करना अत्यधिक प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। स्वर कभी ऊंचा न उठाएं। सदैव मीठे व निश्चिंत भाव से बालक से वार्तालाप करे। अत्यधिक क्रोध भी आए तो उसे रोक लें। नकारात्मक भाव दिखाने से लाभ से अधिक हानि होती है।
- ☐ अध्यापिका के व्यवहार मे लचकता होनी अति आवश्यक है। कक्षा के नियम अति कठोर न बनाएं।
- ☐ ऐसी कहानियां जो बहादुरी दर्शाती हों अथवा विभिन्नताएं व कठिनाईयो की कथा कहती हो कक्षा मे अकसर सुनाएं इससे बालक को मनोबल प्राप्त होता है।
- ☐ तत्काल नाटक, स्वयं रचित नाटकों को कक्षा में अवश्य स्थान दें। प्रत्येक बालक की योग्यताओं

तथा सकारात्मक ढंग से अयोग्यताओं के बारे में चर्चा अवश्य करें। बालक एक-दूसरे की विभिन्नताओं को समझते हैं।

- अध्यापिका को शोधकार्य करने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए। अपने कार्य का विश्लेषण तथा उसमें सुधार पर हमेशा ध्यान देना चाहिए।
- अध्यापिका के लिए आवश्यक है कि वह हर किए गए कार्य को लिखती रहे तथा उसका मूल्यांकन अवश्य करे। इससे स्वयं को बल व सुधार में मदद मिलती है।

अत में हम सबको इतना समझना आवश्यक है कि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी योग्यताए व अयोग्यताए होती हैं। एक क्षेत्र में अयोग्य व्यक्ति किसी दूसरे क्षेत्र में योग्य अवश्य होगा। इसी सत्य को आधार बनाकर यदि सभी के साथ मिलकर एकजुट होकर कार्य करें तो अपने इन बालकों को हम समाज में सही स्थान अवश्य दिला पाएंगे। यह विशेष बालक भी समाज में अन्य बालको की भांति सिर उठाकर गर्व से जी पाएंगे। इन बालकों को अगर हम साथ लेकर चलें तो उनके जीवन की परिभाषा बदल सकती है व हमारे जीवन के मूल्यों में एक सुन्दर परिवर्तन लाया जा सकता है।

समेकित शिक्षा वह पूर्ण शिक्षा है जो मानव को मानव के रूप में स्वीकारती है तथा पूर्ण जीवन का सही अर्थ ही मानवता है। ▢▢

139, 2 एच.
मेन ईस्ट ऑफ एन. जी. एफ. लेआउट
कस्तूरी नगर, दूरवाणी पोस्ट
बंगलौर

कर्नाटक राज्य के परिप्रेक्ष्य में प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता

❑ बी. इन्द्राणी

मानव की मूलभूत आवश्यकताओ मे रोटी, कपड़ा व मकान के साथ प्राथमिक शिक्षा भी एक है इसकी भी पूर्ति होनी चाहिए। सभ्य मानव जीवन का मूलाधार शिक्षा है। एक देश का जीवनक्रम वहा की शिक्षा पद्धति को प्रतिबिम्बित करता है। जिस तरह अच्छी शिक्षा से भलाई और प्रगति होती है। वैसे ही दोषपूर्ण शिक्षा से कठिन और अशिष्ट जीवन भी सभव है। हमें परिपूर्ण शिक्षा चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा की नींव प्राथमिक शिक्षा है। सविधान के 45वें नियम के अनुसार 14 वर्ष तक के सब बच्चों को निःशुल्क एव अनिवार्य शिक्षा देनी है। प्राथमिक शिक्षा ही माध्यमिक शिक्षा, उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा का मूल है। प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मकता लाने से उच्च शिक्षा में परिवर्तन अपने आप आ जाता है। इससे राष्ट्र की प्रगति भी सभव है।

देश के शैक्षिक विकास के मुख्य उद्देश्यो मे प्राथमिक शिक्षा का सार्वभौमीकरण भी एक है। सन् 2000 तक प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए अनेक शैक्षिक सुविधाए दी गई। इस दिशा में कर्नाटक राज्य के प्रमुख सार्वजनिक शिक्षा विभाग द्वारा निम्न प्रमुख कार्य अनुष्ठित हैं–

- ❑ नए स्कूल खोलना।
- ❑ प्राथमिक स्कूलो में कक्षा निर्माण।
- ❑ कक्षाओं का मरम्मत कार्य करना।
- ❑ विशेष नामाकन (प्रवेश) आन्दोलन।
- ❑ बच्चो के स्वास्थ्य की जांच।
- ❑ जिला प्राथमिक शिक्षा योजना (डी.पी.ई.पी.)।

स्वतंत्रता प्राप्ति का स्वर्णमहोत्सव वीत जाने पर भी सब बच्चों को भारत देश मे शिक्षा प्राप्त नही हुई। लक्ष्य प्राप्त न होने के अनेक कारण हैं जैसे –

- ❑ सामाजिक कारण।
- ❑ आर्थिक बाधाए।
- ❑ ससाधनों का अभाव।
- ❑ प्रशिक्षित अध्यापको का अभाव विशेषकर गांव के स्कूलो में।
- ❑ केवल पुस्तकीय ज्ञान पर बल दिया जाना।
- ❑ अपव्यय अवरोधन।
- ❑ अरुचिकर पाठ्यक्रम जो विषय प्रधान मात्र है।
- ❑ अवैज्ञानिक शिक्षण पद्धति।
- ❑ निरक्षर अभिभावक जो अपने बच्चों को शिक्षित करने का महत्व नहीं समझते।
- ❑ बच्चों मे सीखने की प्रेरणा का अभाव और सरकार से दी जाने वाली सुविधाओ की जानकारी न होना।

लेकिन प्राथमिक शिक्षा की विफलता का मुख्य कारण हैं –

- ❑ बच्चो का स्कूल न आना।
- ❑ बीच मे स्कूल छोड़ना।
- ❑ स्कूल में बच्चो का विकास न होना।

मानव की मूलभूत आवश्यकताओं में शिक्षा भी एक है। संविधान में प्राथमिक शिक्षा का प्रावधान दिया गया है। प्राथमिक शिक्षा की अनेक समस्याएं हैं उनमें सुधार द्वारा गुणात्मकता लाई जाती है। गुणात्मकता लाने में सबका सहयोग चाहिए जैसे केन्द्र, राज्य सरकार, स्वयंसेवी संस्थाएं, शिक्षित वर्ग, ग्राम शिक्षा समिति, जिला शिक्षा समिति आदि। शिक्षक का पात्र महत्वपूर्ण होता है।

औपचारिक शिक्षा की पहली सीढ़ी ही प्राथमिक शिक्षा है। सार्वजनीकरण के सदर्भ में प्राथमिक शिक्षा का 3/4

भाग ही पूर्ण है तथा 1/4 भाग अपूर्ण है। यह एक सूक्ष्म संवेदनशील विचार है। प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता की ओर हमे अवश्य ध्यान देना चाहिए। इसका पूरा उत्तरदायित्व सरकार, समुदाय, स्वयंसेवी संस्थाओं तथा शिक्षित वर्ग पर है जैसे –

- ☐ निरतर गैर-हाजिरी को रोकना है।
- ☐ स्कूल का वातावरण आकर्षणीय बनाना ताकि छात्र प्राथमिक शिक्षा में रुचि ले सकें।
- ☐ **स्कूल विकास समिति** – जो भौतिक रूप से स्कूल चलाती है और स्कूल आने वाले बच्चो को प्रेरित करती है।
- ☐ **बाल केन्द्रित शिक्षा** – शिक्षा बाल केन्द्रित होनी चाहिए ताकि वे शिक्षा में रुचि लें। सहपाठ्य-क्रियाओ को स्थान देना, कक्षा आठ तक बालकों को अनुत्तीर्ण न करना।
- ☐ **ऑपरेशन ब्लैक बोर्ड** – इस योजना के अनुसार प्रत्येक प्राथमिक विद्यालय में कम से कम दो बड़े कमरे, श्यामपट, चित्र, चार्ट आदि होने चाहिए। अगर शिक्षक दो हो तो एक महिला अवश्य होनी चाहिए।
- ☐ **ग्रामीण प्रदेशों में शिशु देखभाल केन्द्र खोलना**– जिससे लड़किया अपनी स्कूली शिक्षा को जारी रख सकती हैं नही तो उन्हे स्कूल आने के बदले अपने छोटे भाई-बहन की देखभाल करनी पड़ती थी।
- ☐ पिछड़े वर्ग, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और लड़कियों की शिक्षा पर ध्यान देना।
- ☐ पूर्व-प्राथमिक तथा प्राथमिक शिक्षा के बीच संपर्क स्थापित करना।
- ☐ छात्र-शिक्षक का अनुपात कक्षाओ मे छात्रों की संख्या के अनुसार होना चाहिए।
- ☐ शिक्षा विभाग से सहायक सामग्री के निर्माण, जो अनुदान देते थे, उसके बदले सहायक सामग्री की पूर्ति उपयुक्त है।
- ☐ सतत् मूल्याकन तथा अनुसरण कार्य करना है।
- ☐ अपव्यय-अवरोधन को कम करना है।
- ☐ जिला पचायत, मंडल पंचायत द्वारा अनिवार्य शिक्षा की सफलता के लिए कार्य करना चाहिए।
- ☐ शिक्षकों की साधना पर उनकी प्रोन्नति का निर्धारण होना है।
- ☐ बच्चो के सीखने के फल पर बल देना है।
- ☐ सेवा-पूर्व तथा सेवानिरत प्रशिक्षण को दृढ़ बनाना है।
- ☐ बच्चों की नहीं उनकी क्रियाओ की प्रशसा करनी चाहिए।
- ☐ स्कूलो में सुविधाओ का विकास करके दत्तक व्यवस्था को अपनाना है कि शिक्षक को एक स्कूल अपनाकर उनके शैक्षिक विकास के लिए कार्य करना है।
- ☐ प्राथमिक स्कूल के शिक्षक की नियुक्ति प्रवेश - परीक्षा के आधार पर हो।

फिलहाल सन् 2000–2001 मे कर्नाटक राज्य मे इस प्रथा को अपनाया गया है। जिससे योग्य शिक्षक की आशा की गई है।

- ☐ स्कूल से बाहर रह गए (प्रवेश न लिए) बच्चो के लिए अनौपचारिक स्कूल खोलना है, जिससे वे भी शिक्षित बन सकें।
- ☐ प्राथमिक शिक्षा के लिए धन की व्यवस्था केन्द्र, राज्य सरकार, जिला अनुष्ठान समिति तथा ग्राम अनुष्ठान समिति के द्वारा होनी चाहिए।
- ☐ पर्यवेक्षण के लिए दक्ष, निष्पक्ष, अधिकारी की नियुक्ति हो जो शिक्षा की गुणात्मकता के लिए कार्य करे।

सरकार ने हाल में संवैधानिक संशोधित विनिमय-पत्र प्रस्तुत करने का निर्णय लिया जो प्राथमिक शिक्षा को मूल अधिकार देगा और इसे सर्व शिक्षा अभियान के अंश के रूप में लागू किया जाएगा। प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता में शिक्षक का पात्र प्रमुख होता है जैसे–

- प्राथमिक शिक्षा को सुरुचिपूर्ण बनाना।
- ध्यान में रखे कि सीखने के द्वारा बच्चों को आनंद मिले।

- सीखने में आकर्षित क्रियाओं का समावेश हो।
- पिछड़े वर्ग के अभिभावकों के मनोभाव को दृढ़ बनाना कि वे अपने बच्चों को अवश्य शिक्षा दें।
- निरक्षरता तथा सामाजिक, आर्थिक बुराईयो के उन्मूलन का प्रयास करना।
- अपने पेशे में निष्ठा होनी चाहिए।
- अभिभावकों के साथ संपर्क रखकर प्रोत्साहित करें।
- लोगो को साक्षरता तथा उसके महत्व बताना।
- सबंधित विषयों के पाठों के उपयुक्त वातावरण उत्पन्न करना।

कर्नाटक में प्रमुख शैक्षिक सुधार योजनाओ मे जिला प्राथमिक शिक्षा योजना एक है। भारत सरकार से विश्व बैंक मिशन ने करार किया कि सन् 2000 से पाच साल के लिए प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम चलाया जाएगा। जिसके अतर्गत प्राथमिक स्कूलो को न्यूनतम शैक्षिक सुविधाए दी जाती हैं– ग्राम पंचायत को सक्रिय भाग लेना है और प्राथमिक शिक्षा का संवर्धन करना है। जहां लड़कियो की शिक्षा कम है और पूर्ण साक्षरता लाने में इसका प्रयोग सार्वजनिक शिक्षा विभाग द्वारा होने लगा है।

सन् 2000–2001 से कर्नाटक राज्य मे 'समुदाय की ओर स्कूल' कार्यक्रम चल रहा है। जिसमे स्कूल की समस्या की ओर समुदाय का ध्यान आकर्षित कराया जाता है। समुदाय और स्कूल को निकट लाने के साथ सरकार से दी जाने वाली सुविधाओ की ओर समुदाय का ध्यान आकर्षित किया जाता है। अभिभावको को बच्चों की प्रगति, समस्याओ से अवगत कराया जाता है।

प्राथमिक शिक्षा की गुणात्मकता के लिए सब का सहयोग आवश्यक है जिससे देश की, समाज की प्रगति होती है। ❑❑

कर्नाटक में प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण

भारत मे प्राथमिक शिक्षा एक रुचिपूर्ण, समृद्ध, प्रयोगात्मक क्षेत्र तथा कार्य है। मानव की मूलभूत आवश्यकताओ में प्राथमिक शिक्षा भी एक है। इसकी पूर्ति हो जानी चाहिए।

सविधान के 45वें नियम के अनुसार 14 वर्ष तक के सब बच्चों को अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा का प्रावधान है। नई शिक्षा नीति– 1986 की प्रस्तावना के तीसरे भाग में राष्ट्रीय स्तर पर 10+2+3 पद्धति को हर कहीं स्वीकारा गया । भारत में प्राथमिक स्तर 1-8 कहीं-कही 1–7 तक है, फिलहाल कर्नाटक मे 1–7 है। प्राथमिक शिक्षा को एकीकृत घटक के रूप मे स्वीकार किया गया है। सन् 2000 बीत जाने पर भी शिक्षा सब बच्चो को नहीं मिली है। इस संबंध में कुछ ही काम भारत में हुआ है। स्वतंत्रता के इतने दिन बाद भी हमारे बच्चे स्कूल की धूल मे ही बैठे हैं। आज भी जनसंख्या का कुछ प्रतिशत प्राथमिक शिक्षा से वंचित है। राष्ट्र के सामने प्राथमिक शिक्षा और उसका सार्वजनीकरण एक बड़ी चुनौती बन गई है।

अनिवार्य शिक्षा को संविधान मे निदेशात्मक तत्व के रूप में मिलाया गया है। सर्वजन शिक्षा योजना, राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, 1992 की निष्पादक कार्ययोजना के अनुसार शिक्षा प्राप्त कराने मे चार प्रमुख उद्देश्यों को पहचाना गया है जैसे –

- ❑ शैक्षिक समान अवसर।
- ❑ सार्वभौमिक नामाकन।
- ❑ सार्वभौमिक रूप से छात्रों को स्कूल छोड़ने से रोकना।
- ❑ शैक्षिक गुणवत्ता मे सुधार लाना।

प्राथमिक शिक्षा बच्चो की सांस्कृतिक, संवेगात्मक, बौद्धिक, नैतिक, भौतिक, सामाजिक, आध्यात्मिक विकास की सही नींव लगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

भारत में प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण का अर्थ है कि जो बच्चे 6 से 14 वर्ष तक की आयु के हों, और 1-7 या 8वी कक्षा में हों, उन सब को शिक्षा प्राप्त करानी है इसकी पूर्ति औपचारिक या अनौपचारिक शिक्षा के द्वारा की जाती है।

जनता की प्रगति देश की प्रगति है। आज का बालक कल का नागरिक है। शिक्षा के सार्वजनीकरण से हर बालक को शिक्षा की सीमा में लाया जाता है। सरकार की सुविधाओं को समझना, समझाना, बच्चों तक पहुंचाने का कार्य आवश्यक है। इस दिशा में सरकार, समुदाय, शिक्षित वर्ग का स्वमेव प्रयास बहुत महत्वपूर्ण है।

भारत देश मे स्कूल सुविधाओं के विस्तार, नामाकन मे अत्यधिक प्रगति हुई है, फिर भी छात्रों की उपलब्धि और ठहराव की दर बहुत निम्न है इसलिए कक्षा नामांकन से अधिक सीखने वालों की उपलब्धि (साधना) और उनकी रोक सुधारने में ध्यान दिया गया।

भारत के शैक्षिक विकास में राष्ट्रीय शिक्षा नीति और क्रिया कार्यक्रम की दिशाओं को ध्यान में रखकर पहुंच की समानता को साधना की समानता में परिवर्तित कर दिया गया है। बहुत बच्चों को शिक्षा न मिलने की दिशा में सामाजिक और आर्थिक बाधाएं है। इन समस्याओ के बीच शिक्षा के सार्वजनीकरण के लिए उपलब्ध सुविधाओं के इस्तेमाल से लक्ष्य प्राप्ति संभव है।

सार्वजनीकरण के लिए नई तकनीकों का उपयोग करना है। सब की साक्षरता का उत्तरदायित्व समुदाय, सरकार और शिक्षित लोगो पर है। समाज की सारी समस्याओं की मूल जड़ निरक्षरता रूपी बुराई को दूर करने मे शिक्षक को महत्वपूर्ण पात्र निभाना है।

सार्वजनीकरण में मुख्य समस्याएं हैं–

- अपव्यय-अवरोधन की समस्या।
- शिक्षण विधि उपयुक्त नही है, सुधार आवश्यक है।
- गांवों के स्कूलों मे प्रशिक्षित अध्यापको का अभाव है।
- पाठ्यक्रम अरुचिकर है जैसे पुस्तकीय ज्ञान की अधिकता है।
- प्राकृतिक बाधाएं जैसे राजस्थान जो रेतीला प्रदेश है, पर्वतीय प्रदेश में आवागमन का अभाव है।
- संसाधनों का अभाव प्राथमिक स्कूलों में शिक्षण सामग्री नहीं जैसे श्यामपट, टाटपट्टी, पेयजल, लाइब्रेरी आदि।
- शिक्षा के लिए अत्यधिक आग्रह का मनोभाव नहीं है। अब भी कुछ पिछड़े वर्गो में अभिभावक अपने बच्चों को शिक्षित होना आवश्यक नही समझते हैं, अपव्यय अधिक है।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के लिए हर एक शिक्षक को इन अंशो पर ध्यान देना आवश्यक है–

- अपने को पूर्ण रूप से व्यवसाय में लगाना।
- सीखने मे प्रभावात्मक क्रियाओ को सम्मिलित करना।
- अभिभावक के साथ निकट संपर्क रखकर उन्हें प्रोत्साहित करना कि अपने बच्चों को शिक्षित करे।
- गाव मे हर सप्ताह, शिक्षा में रुचि रखने वालों की सभा मे प्रस्तुत शिक्षा पद्धति को कैसे प्रभावात्मक बना सकते हैं इसकी चर्चा करनी चाहिए।
- निरक्षरता का उन्मुलन करने के लिए एक गांव को अपनाकर कार्य करना साथ में गैर-सरकारी सगठन और स्वयंसेवी सस्थाओं का सहयोग भी लेना।
- सामाजिक, आर्थिक, अन्याय और बुराईयों का ज्ञान अपनाकर, उन्मूलन का प्रयास करना।
- यह ध्यान में रखना कि सरकार से प्राप्त सुविधाएं बच्चों तक तुरंत पहुंचें।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमीकरण के लिए केन्द्र और विभिन्न राज्य सरकारों के उपाय इस प्रकार है–

- स्कूलों की व्यवस्था–घर से एक किमी. की पैदल दूरी में प्राथमिक स्कूल खोलने और औपचारिक

शिक्षा देने का प्रयास किया गया।

- ☐ **सार्वभौमिक नामांकन**–इस दिशा मे कार्य तो हो रहा है फिर भी लड़कियों, जनजाति के बच्चे, निम्न सामाजिक स्तर के बच्चो के नामांकन बाकी हैं।
- ☐ **निर्धारित समय तक स्कूलों में बच्चों का ठहराव**–यह प्राथमिक शिक्षा का सबसे दुर्बल पक्ष है। इसे रोकने का प्रयास हो रहा है।
- ☐ **प्राथमिक शिक्षा में गुणात्मकता लाना**
  - बालक को केन्द्र बिन्दु बनाकर शिक्षा देना।
  - सहपाठ्य-क्रियाओं को प्रोत्साहित करना।
  - शारीरिक दण्ड का प्रयोन न करना।
  - आठवी कक्षा तक बच्चो को अनुत्तीर्ण न करना।
- ☐ **ऑपरेशन ब्लैड बोर्ड** – इसके अनुसार प्रत्येक स्कूल में मूलभूत शैक्षिक सुविधाएं हों जैसें –
  - श्यामपट।
  - मानचित्र।
  - चित्र, चार्ट।

जहा दो अध्यापक हैं वहा एक महिला होनी चाहिए।

- ☐ लड़कियां, निर्धन परिवार के बच्चों की शिक्षा को प्रोत्साहित करने, मध्यान्ह भोजन, पाठ्य पुस्तके, नोटबुक, यूनिफार्म, स्कूल बैग की व्यवस्था करनी चाहिए।
- ☐ उन अध्यापकों को पुरस्कृत करना जो अपनी कुशलता से बच्चों को स्कूल छोड़ने से रोक सकते हैं।
- ☐ ग्रामीण पंचायत समितियो को प्राथमिक शिक्षा मे सक्रिय भाग लेने का दायित्व देना।

प्राथमिक शिक्षा सार्वभौमीकरण की शिक्षा मे नामांकन, सीखने को प्रभावात्मक बनाने के लिए निम्नांकित अशो पर कार्य किया गया।

- ☐ **शाला संकीर्ण की स्थापना** – जिससे प्राथमिक स्कूल और सैकेण्डरी स्कूल के बीच सबंध होता है और सैकेण्डरी विद्यालय का सदुपयोग, मार्गदर्शन प्राथमिक शिक्षा के संदर्भ में किया जाता है।
- ☐ अभिभावक तथा बच्चों को सरकार से दी जाने वाली शैक्षिक सुविधाओं की जानकारी देना।
- ☐ स्कूल के वातावरण को आकर्षित बनाना जिससे बच्चे स्कूल आने को प्रेरित हो जाएंगे।
- ☐ प्रारंभ में अभिभावको को शिक्षा के महत्व समझाना है।
- ☐ बच्चों के पढ़ना-लिखना, भाषा, प्रतिलिपि, गणित अध्ययन को अर्थपूर्ण बनाना।
- ☐ विज्ञान पाठ के संदर्भ मे प्रयोग पर बल देना।
- ☐ **स्कूल, छोड़ी हुई बालिका का शिक्षा अनुकूल कार्यक्रम**–इसका मुख्य उद्देश्य लड़कियो की स्कूली शिक्षा जारी रखना और उनके अभिभावकों को हर महीना 25/– रुपए देना, जिसे सार्वजनिक तथा धनी लोगों से इकठ्ठा किया जाता है।
- ☐ प्रभात फेरी, बच्चो के जुलूस द्वारा अभिभावको को अपने बच्चे को स्कूल भेजने के लिए आकर्षित करना।

उपरोक्त सारे अंश अंतिम नही पर बच्चों के शैक्षिक विकास में सहायक हैं।

सन् 1990 से प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण की दृष्टि से कुछ शैक्षिक सुधार कार्यक्रम, विशेष रूप से पिछड़े राज्यो में –

- जिला प्राथमिक शिक्षा योजना।
- मूल शिक्षा योजना।
- शिक्षा कर्मी कार्य।
- अनौपचारिक शिक्षा कार्य।
- राष्ट्रीय साक्षरता मिशन आदि।

देश की उन्नति के लिए शिक्षा अनिवार्य है। इसलिए शिक्षा के सावर्जनीकरण से हर बच्चे को स्कूली शिक्षा की परिधि मे लाया जाएगा, उन्हें लाभान्वित किया जाएगा। यह प्रयास अनवरत जारी है। ☐☐

प्रवक्ता
गवर्नमेंट कॉलेज ऑफ टीचर एजुकेशन (सी.आई.टी)
जे.एल.बी. रोड, मैसूर

मलयालियों के हिन्दी उच्चारण में मातृभाषा का व्यवधान

□ के. सुकुमारन नायर

हर एक भाषा की अपनी-अपनी ध्वनियों का समूह है। इन्ही ध्वनियों के सम्यक संगठन से ही उस भाषा के शब्द एवं वाक्य बनते है। लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि एक भाषा की सभी ध्वनिया दूसरी सभी भाषाओ की ध्वनियो से भिन्न हैं, हो सकता है कि भिन्न-भिन्न भाषाओ में समान ध्वनिया हों। लेकिन हर भाषा मे ऐसी ध्वनिया भी है जो अन्य भाषाओं की ध्वनियों से मेल नहीं खातीं। वास्तव मे अन्य भाषा शिक्षण मे जो श्रवण-भाषण कौशल अपेक्षित है व ऐसी ध्वनियों को सुनकर पहचानने की एव बोलकर अभिव्यक्त करने की शक्ति को ही समझना चाहिए। अपनी मातृभाषा की ध्वनियों को अन्य भाषा में भी सुनकर समझना या पहचानना कोई कठिन काम नही है। लेकिन असमान ध्वनियो को पहचानना उतना आसान नहीं है। इसलिए लोग असमान ध्वनियो पर ध्यान न देकर ऐसी ध्वनियों से बने शब्द भी मातृभाषा की मिलती-जुलती ध्वनियों के माध्यम से सुनने, बोलने एव पढ़ने की कोशिश करते है। फलस्वरूप ऐसे शब्दों की वर्तनी में भी गलती होने की संभावना होती है।

अब हम ऐसी ध्वनियो पर विचार करेगे जो हिन्दी और मलयालम मे अलग-अलग उच्चारण वाली हैं, पर मातृभाषा के व्यवधान के कारण मलयाली उनका गलत उच्चारण ही करते हैं।

सबसे पहले स्वरों के उच्चारण पर विचार करें। अ, आ, ये दोनो स्वर (ह्रस्व एवं दीर्घ) मलयालम और हिन्दी में समान हैं लेकिन इन दोनो को जो आनुवशिक रूप "अँ और ऑ" हिन्दी के शब्दो में पाए जाते हैं उनका मलयालम मे उपयोग नही होता। स्वरो को आनुवंशिक बनाने से हिन्दी मे शब्द बदल जाते हैं एवं अर्थ भी बदल जाते हैं। जैसे "सास" स्+आ, स्+अ शब्द की दूसरी ध्वनि "आ" को आनुवंशिक बनाने से शब्द "सॉस" होता है जिसका एक अलग अर्थ भी होता है, पर मलयालम मे ऐसे आनुवंशिक स्वरो का प्रयोग नहीं होने से मलयाली लोग सॉस शब्द में आनुवंशिक "आ" का उच्चारण देने की कोशिश करते हैं। अनुस्वार का उच्चारण करने में असमर्थ होते हैं। इसके बदले चन्द्रविन्दु को अनुस्वार समझकर उच्चारण देने की कोशिश करते हैं। अनुस्वार का उच्चारण भी विधिवत होना चाहिए लेकिन मलयालम मे अनुस्वार का उच्चारण "म" कार के रूप मे व्याकरण सम्मत होने से ही वे "साम्स" कहते हैं। अतः इस प्रकार के उच्चारण में मातृभाषा का पूरा-पूरा व्यवधान बन पडा है।

हिन्दी और मलयालम में बहुत-सी ध्वनियां समान हैं। दोनों भाषाओं में असमान ध्वनियां भी विद्यमान हैं। अध्येय भाषा ध्वनियों के माध्यम से उसे सुनना, बोलना और पढ़ना चाहिए। लेकिन मलयालियों के हिन्दी उच्चारण में मातृभाषा का व्यवधान होता है। स्वर की आनुवंशिकता से शब्दों में अर्थ परिवर्तन लाने की रीति मलयालम की प्रकृति नहीं है। ऋ, ऐ, औ, के उच्चारण में मलयालम में बहुत-सी भिन्नता है। क, च, ह, त, प एवं ग, ज, ड, द, ब, य, र, ल ऐसे अलग वर्णो के समूह हैं, जिनके उच्चारण में मातृभाषा का व्यवधान पड़ता है जो व्यंजनों के उच्चारण में भी मिलता है। न, र, श, ष एवं ह का भी दोनों भाषाओं में भिन्न-भिन्न उच्चारण है। शब्दों के उच्चारण में भी भिन्नता है।

ऐ एवं औ की स्थिति भी ऐसी ही है। मलयालम मे ये दोनो अइ एवं अनु जैसे सयुक्त स्वर के रूप में उच्चारित है। ये दोनों हिन्दी में मूल-स्वर के रूप में उच्चारित

होते है। जिनके उच्चारण में केवल एक ही स्वर सुन सकें। इन स्वरो के उच्चारण मे मातृभाषा का व्यवधान स्पष्ट दिखाई देता है। ऐसा, जैसा आदि शब्दों में अइसा, जइसा आदि उच्चारण साधारण ही है।

व्यजन ध्वनियों की भी यही स्थिति है। क, च, ट, त, प ये स्वर वर्ण जब शब्दादि मे आते हैं तो मलयाली उसका व्यक्त उच्चारण करते है। लेकिन जव ये वर्ण शब्द-मध्य में या शब्दाश में आते हैं तो इन स्वर वर्णो का उच्चारण मृदु (ग, ज, ड, द, ब) जैसा करता है। फलतः हिन्दी मे भी ऐसे शब्दों का जिनके मध्य या अत मे ये वर्ण हैं उच्चारण पर ढीलापन आ जाता है। जो हिन्दी की प्रकृति से मेल नहीं खाता। यह तो मातृभाषा का व्यवधान है। तालाब, किताब, आदि शब्दों के उच्चारण में यह अन्तर स्पष्ट होता है।

ग, ज, ड, द, ब, थ, र, ल ये आठ वर्ण जव शब्दादि मे आते है, तो रा कार के साथ उसका उच्चारण किया जाता है। यह तो मलयालम भापा के प्रमुख व्याकरण ग्रंथ केरलयाणिनीयम् के अनुसार भी शुद्ध उच्चारण माना जाता है। मलयालम और हिन्दी मे ऐसे अनेको तत्सम् शब्द दिखाई देते हैं जिनका पहला वर्ण इन आठ वर्णो में से एक हो। फलस्वरूप ऐसे शब्दों के उच्चारण में मातृभापा का व्यवधान स्पष्ट सुनाई देता है। गज, गगा, जल, जगह, डर, डसना, दल, दया, बल, यव, रवि, लय आदि का उच्चारण मे गेज, गेङ्गा जैसे "ए" कार के साथ सुनाई देता है।

मलयालम मे न के दो प्रकार के उच्चारण व्याकरण सम्मत हैं। एक तो दन्त्य उच्चारण है। दूसरा वर्त्स्य। मलयालम में शब्दादि में दन्त्य उच्चारण देते हैं और अन्यत्र वर्त्स्य उच्चारण। इसका प्रभाव हिन्दी शब्दों में भी पड़ता है। नदी शब्द मे मलयालम में न का दन्त्य उच्चारण (शब्दादि में होने से) होने के कारण हिन्दी भापा मे भी यही उच्चारण देने की आदत पड़ गई है। यह तो हिन्दी भाषा के उच्चारण में मातृभाषा का व्यवधान है।

र वर्ण के भी मलयालम में दो अलग-अलग उच्चारण विद्यमान है। एक तो हिन्दी के उच्चारण के समान है लेकिन दूसरा उच्चारण संस्कृत के उच्चारण के समान है। अतः तत्सम् शब्दों में जैसा उच्चारण होता है हिन्दी के सभी शब्दो में मलयाली उसी प्रकार उच्चारण करते है। "राम" शब्द के उच्चारण में मलयाली सस्कृत के "र" का एवं हिन्दी भाषा भाषी अपनी भाषा के र का अलग-अलग उच्चारण करते हैं। यह भी मातृभाषा का व्यवधान माना जाता है।

श, ष मे दोनों मलयालम मे सस्कृत के समान अलग-अलग उच्चारण वाले है। श तालव्य एवं ष मूर्धन्य उच्चारण वाले वर्ण हैं। लेकिन हिन्दी के शब्दो मे तालव्य उच्चारण के बदले "श" का उच्चारण मूर्धन्य वर्ण "ष" का जैसा सुनाई पड़ता है। "श" युक्त शब्दो के मलयालियो के उच्चारण मे मातृभाषा का व्यवधान होता है। आशा, कोशिश आदि शब्दों के उच्चारण से यह व्यक्त होता है।

इसी प्रकार "ल" के अलावा ळ भी मलयालम मे एक अलग ध्वनि है जो द्राविड़ भाषाओ में विद्यमान है। तुलसी जैसे तत्सम् शब्दों मे मलयाली ल को ळ उच्चारण देते है, जबकि हिन्दी वाले उसका दन्त्य उच्चारण ही करते है। अत· यहां भी मातृभाषा का व्यवधान हम देख सकते हैं।

"ह" ध्वनि के उच्चारण मे भी मातृभाषा का व्यवधान पड़ता है। हिन्दी मे इस वर्ण का पूर्ण उच्चारण शब्दादि में ही होता है। शब्द के मध्य में इसके उच्चारण की शक्ति में कमी होती है और शब्दान्त में "ह" का उच्चारण बिल्कुल नहीं के समान है। लेकिन मलयालम भाषा के उच्चारण में ऐसी कोई विशेषता नही है। शब्द मध्य और शब्दान्त में भी मलयालम में ह का पूरा उच्चारण होता है। मातृभापा के व्यवधान के कारण ह युक्त शब्दो का भी उच्चारण में मलयाली ह का पूरा-पूरा उच्चारण करते हैं।

ऊपर कुछ ऐसे उदाहरण दिए हैं जिससे जाना जा सके कि मलयालम भाषा भाषी लोगो के हिन्दी उच्चारण में उनकी मातृभाषा की उच्चारण शैली का बड़ा प्रभाव पड़ा है। यदि उन्हें इस प्रभाव से मुक्त करने का कदम नही उठाया जाता तो बात और भी बिगड़ जाने की संभावना है। आशा है एन.सी ई.आर.टी. कम से कम यहां के हिन्दी

अध्यापकों के उच्चारण मे सुधार लाने की कोशिश करेगी। शब्दो के उच्चारण में भी यह बाधा आ पडती है। उदाहरणार्थ "अ" ध्वनि को लिखिए। हिन्दी मे इस ध्वनि के उच्चारण के नियम है और मलयालम मे कुछ और। शब्दात के व्यजन के साथ जो "अ" लगा हुआ है, हिन्दी मे उसे छोड़ देते हैं और उस स्थान पर शुद्ध व्यंजन का उच्चारण ही करते है। लेकिन मलयालम की ऐसी प्रकृति नही है। मलयालम भाषा में जो शब्दांत के "अ" स्वर "उ" कार का सवृत रूप देकर उच्चारण करते हैं, इससे यह दोष होता है कि हिन्दी के व्यजनात शब्दो को भी इसी प्रकार के उच्चारण देकर उच्चारण करते हैं।

शब्द मध्य में दीर्घ व्यजन के पूर्व जो अ युक्त वर्ण है उसी में अ का पूरा-पूरा उच्चारण करने की व्यवस्था है। लेकिन शब्द मध्य के "अ" वर्ण का मलयालम मे पूरा उच्चारण होता है।

इसी प्रकार शब्दों के उच्चारण मे भी दोनो भाषाओ में भिन्नता रहती है। इस कारण से मलयाली अध्यापकों के हिन्दी उच्चारण मे गलतफहमी होने की सभावना है। इसे दूर करने के लिए कदम उठाना ही चाहिए अन्यथा अगली पीढ़ी भी गलत उच्चारण ही सीखेगी। ▢▢

केरल के स्कूलों में हिन्दी शिक्षा की गुणवत्ता

केरल के स्कूलो में हिन्दी एक अनिवार्य भाषा के रूप मे पांचवी कक्षा से दसवीं कक्षा तक सिखाई जाती है। यहा के स्कूलो में पहली भाषा के रूप में मातृभाषा मलयालम, दूसरी भाषा के रूप में विदेशी भाषा अग्रेजी और तीसरी भाषा के रूप में राष्ट्रभाषा हिन्दी को सिखाने का प्रबंध है। केरल ने त्रिभाषा सूत्र के इसी रूप को अपनाया है। फिर भी यह हिन्दी प्रेमियो को खुशी की बात है कि जब कुछ पड़ोसी राज्यो मे हिन्दी के प्रति घृणा की दृष्टि है और बहुत से हिन्दी भाषा-भाषी राज्य त्रिभाषा सूत्र को लागू करने का भरसक प्रयत्न नही करते, इस अवस्था मे भी केरल राष्ट्रीय दायित्व को पूरा करने में प्रयत्नशील है। इसका यह मतलब नही कि केरल के स्कूलों मे हिन्दी का शिक्षण सम्यक् रूप से चल रहा है। यहां भाषा शिक्षण के क्षेत्र में बहुत-सी कमिया है, पर इन कमियों का कारण शिक्षकों की दायित्वहीनता मात्र समझना अनुचित ही नही अवैज्ञानिक भी होगा।

कोई भी विषय सिखाने वाले अध्यापकों को चाहिए की वे अध्येय विषय मे प्रवीण हो। यहां अध्येय विषय हिन्दी होने से उस विषय मे प्रवीण होना प्रत्येक हिन्दी अध्यापक का कर्तव्य है। इसके लिए हिन्दी भाषा पर अपना अधिकार जमाना है। भाषा केवल शब्दो का सगठन मात्र नहीं समझनी चाहिए। हर एक भाषा के ध्वनि समूह और उनसे बने शब्द और वाक्य जिस प्रकार भिन्न-भिन्न होते हैं उसी प्रकार हर एक भाषा का सांस्कृतिक परिवेश भी भिन्न-भिन्न है। अत. हिन्दी की ध्वनियों, शब्दों, मुहावरों, व्याकरण के नियमों एवं वाक्य संरचना के ढांचों से परिचय प्राप्त करना मात्र उनका कर्तव्य नहीं समझना चाहिए। हिन्दी भाषा-भाषी लोगों के सांस्कृतिक परिवेश के बारे में भी जानकारी प्राप्त करने से ही वह एक अच्छे अध्यापक बन सकते है। लेकिन केरल की स्थिति अत्यंत शोचनीय है। प्राथमिक कक्षाओं मे नियुक्ति पाने के लिए जिन परीक्षाओ मे पास होना निश्चित किया गया है वह पर्याप्त नहीं है। माध्यमिक स्तरों के अध्यापकों की स्थिति इनकी अपेक्षा बेहतर है।

शिक्षण प्रक्रिया प्रभावशाली होने के लिए भाषा पर अधिकार जमाना मात्र काफी नहीं। विद्यार्थियो में भाषा कौशल पैदा करने की रीति भी उसको जाननी चाहिए। केरल के प्राथमिक स्कूलो में हिन्दी पढ़ाने वाले अध्यापकों को प्रशिक्षण अनिवार्य नही माना गया है। इससे शिक्षण की रीति विफल होती है। उसमें एकरूपता भी नही आती। माध्यमिक स्कूलों में नियुक्ति के लिए प्रशिक्षण अनिवार्य

केरल ने त्रि-भाषा सूत्र को अपनाया है। यहां के हिन्दी अध्यापकों को अध्येय भाषा पर अपेक्षित मात्रा में अधिकार नहीं है। प्राथमिक स्कूलों में हिन्दी अध्यापकों की नियुक्ति के लिए प्रशिक्षण अनिवार्य योग्यता निश्चित करनी चाहिए। केरल के हिन्दी अध्यापकों को थोड़े दिन हिन्दी भाषियों के संपर्क में रहने का अवसर देना चाहिए। स्कूलों में हिन्दी सिखाने के लिए निर्धारित तीन कालांशों में पढ़ाई होनी चाहिए।

माना गया है।

लेकिन खेद की बात है कि हिन्दी विद्यालयो मे जहां से परीक्षा पास करके लोग बाहर आते है, हिन्दी का शुद्ध रूप उनको प्राप्त नही होता। भाषा पर उनका पूरा अधिकार न होने से विद्यार्थी भी भाषा के शुद्ध रूप से वचित रहते हैं। जो हिन्दी वे अपने अध्यापकों के मुह से सुनते हैं, उसकी अशुद्धता उसे तभी मालूम होगी जब वह हिन्दी भाषा-भाषी लोगो से असली भाषा सुन सके।

अत. केरल में हिन्दी शिक्षण प्रभावशाली बनाने के लिए यहां के हिन्दी अध्यापको को हिन्दी भाषा के शुद्ध रूप, उसके अपने सास्कृतिक परिवेश में सुनने एव बोलकर अभ्यास करने का अवसर प्रदान करना चाहिए। इस कार्य मे एन.सी.ई.आर.टी. को भी अपनी भूमिका निभानी चाहिए। हर साल यहां के सौ, दौ सौ या उससे अधिक अध्यापको को हिन्दी क्षेत्र के किसी केन्द्र मे बुलाकर एक या दो महीने के अन्तःसेवा कार्यक्रम में भाग लेने का अवसर दे तो अच्छा होगा। अथवा ऐसा भी हो सकता है कि हिन्दी भाषा-भाषी प्रतिभावान हिन्दी अध्यापको को केरल भेजकर यहा एस.सी.ई.आर.टी. में ऐसा कार्यक्रम चलाएं। इससे यहां के हिन्दी अध्यापकों मे हिन्दी ध्वनियों एवं शब्दों के उच्चारण में आने वाली गलतियों को दूर किया जा सकता है। सांस्कृतिक भिन्नता के कारण भाषा के प्रयोग मे होने वाली गलतियां भी दूर हो जाएगी।

सक्षेप में कह सकते है कि भाषा पर कम अधिकार होने से, हिन्दी भाषा के ठीक उच्चारण पर अभ्यास न होने से एवं हिन्दी क्षेत्र के सांस्कृतिक परिवेश के बारे में अनभिज्ञता होने से यहां का हिन्दी अध्ययन-अध्यापन प्रभावशाली नहीं बन पाया है। इन कमियो को दूर करने मे एन.सी.ई.आर टी ही कदम उठा सकती है।

केरल के स्कूलो की माध्यमिक कक्षाओं में हिन्दी सिखाने के लिए हफ्ते में केवल तीन ही कालाश निश्चित हैं। एक वर्ष मे कुल मिलाकर 110 कालांशो से अधिक कभी नहीं मिलेगा। इनमें भी दस-बीस कालांश परीक्षा आदि मे चले जाएंगे। अत भाषा कौशलों को बढ़ाने के लिए कोई 90 कालांशों के कार्य ही साध्य हैं। इतने कम समय मे माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों में अन्य भाषा मे भाषा कौशलों को बढ़ावा देना सुसाध्य नहीं क्योकि आजकल शिक्षा परीक्षा केंद्रित रूप में चल रही है। इस रीति से मुक्ति पानी है और साथ-साथ कालाश मे वृद्धि भी लानी है तभी केरल के स्कूलो मे विशेषकर माध्यमिक स्तर की कक्षाओं मे हिन्दी शिक्षा का स्तर ऊपर उठा सकते है। □□

प्रारंभिक शिक्षा का सार्वजनीकरण

सभी प्राणियों में सीखने की शक्ति विद्यमान है। शिक्षा प्राप्त करना मानव का जन्मजात अधिकार है। शिक्षा प्राप्त व्यक्ति उत्तम नागरिक बनता है। अशिक्षितों का अनुचित कार्य समाज को हानि पहुंचाता है। सभी सभ्य देशों ने शिक्षा के सार्वजनीकरण को मान लिया है। बदली हुई दुनिया के साथ आगे बढ़ने के लिए शिक्षा की आवश्यकता है। केरल ने संपूर्ण साक्षरता के पद को प्राप्त किया है। पिछले सौ वर्षो में यहां शिक्षा के क्षेत्र में जो कार्य हुए थे वही इस पद-प्राप्ति का आधार बने।

शिक्षा का मतलब सीखना ही है और यह सामर्थ्य सभी प्राणियो मे विद्यमान है। यहां तक कि ऐसे पेड़-पौधे भी होते हैं जिन्होने जंतुओं या भोज्य प्राणियो के छूने से अपने पत्ते समेटकर उसे फदे में डालने की कला सीखी है। अतः मेरे मत में सभी चर एवं अचर प्राणियो में सीखने की शक्ति विद्यमान है। इसलिए मै ऐसा कहना चाहता हूं कि मानव प्राणियो को शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार स्वय ईश्वर ने ही प्रदान किया है। फिर इस अधिकार से उसे वंचित रखने का अधिकार किसी को भी नही मिला है। अत॰ शिक्षा प्राप्त करने का मानव को जन्मजात अधिकार है ही।

लेकिन बच्चे सब कुछ स्वयं नहीं सीख सकते। इसके लिए अपने माता-पिता, परिवार के अन्य सदस्य, समाज एव देश की सहायता की आवश्यकता है। यह शिक्षा बच्चो के शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास के लिए सहायक होनी चाहिए। शिक्षा से व्यक्ति पूर्ण मानव का रूप धारण करता है। वह स्वयं पूर्ण व्यक्ति होकर अपने लिए, परिवार के लिए, समाज के लिए एव देश के लिए उपयुक्त नागरिक बनता है।

शिक्षा से एक ओर व्यक्ति की जन्मजात होशियारियो की पुष्टि होती है तो दूसरी ओर वह मानव जीवन के उपयोगी बहुमुखी क्षेत्रों पर जानकारी प्राप्त करता है। सभी बच्चों को शिक्षा देना इसलिए आवश्यक हो जाता है कि हर बच्चा समाज का अभिन्न अंग है। समाज रूपी शरीर का वह एक उपयोगी अंग है। जैसे शरीर के एक अंग मे चुभे कांटे का दर्द सारे शरीर को पीड़ा पहुचाता है उसी प्रकार समाज के हर अशिक्षित व्यक्ति का अनुचित कार्य सारे समाज को दोष पहुंचाता है। अत॰ समाज के सभी व्यक्तियो को शिक्षित बनाना हर सभ्य समाज का कर्तव्य माना जाता है।

इस कार्य में माता-पिता, परिवार वाले, समाज एवं देश को अपनी-अपनी भूमिका निभानी है। इसलिए सभी देशों ने इस तत्व को स्वीकार कर लिया है कि प्रारंभिक शिक्षा का सार्वजनीकरण परमावश्यक है।

भारत एक ऐसा विशाल देश है कि यहां हर साल सवा करोड़ नए बच्चे पैदा हो रहे है। स्वतंत्रता प्राप्ति के समय हमारे देश की जो आबादी थी, पिछले पचास वर्षो में वह दुगुनी हो गयी है। अतः भारत जैसे एक विशाल देश मे शिक्षा का सार्वजनीकरण कोई आसान बात नहीं है। फिर भी पारदर्शी भारतीयों ने यह हमारा कर्तव्य मान लिया है। करीब सबके सब प्रान्त चौदह वर्ष की आयु तक के अपने बच्चों को नि·शुल्क शिक्षा देने का प्रयास कर रहे है। इसका यह अर्थ होता है कि भारतीय समाज ने प्रारंभिक शिक्षा के सार्वजनीकरण को प्रधानता दी है।

लेकिन शिक्षको एव शासकों के प्रयत्न मात्र से यह काम पूरा नही हो सकता। भारत के कुछ प्रान्तो मे अशिक्षित माता-पिता अब भी अपने बच्चों को स्कूल भेजने में कोई विशेष रुचि नहीं रखते। समाज सेवा में रुचि रखने वाली सामाजिक संस्थाए इस ओर अधिक काम कर सकती हैं। समाज के शिक्षित व्यक्ति ऐसी संस्थाओं का नेतृत्व करें। वे अशिक्षित माता-पिता को अपने बच्चों को स्कूल भेजने की प्रेरणा दें। सौभाग्य से केरल जैसे कुछ प्रांतों में माता-पिता अपने बच्चों को स्कूल भेजने में पूर्ण रूप से निष्ठावान हैं।

आजकल दुनिया के देशों के बीच पारस्परिक संबंध की मात्रा बढ़ गई है। वैज्ञानिक आविष्कारों ने देशों की

आपसी दूरी को कुछ कम कर दिया है। अत. बदलती हुई दुनिया के साथ हम भारतीयो को भी आगे बढ़ना है। इसके लिए हर भारतीय को सुशिक्षित बनाने की आवश्यकता है। आगे के दिनो में अशिक्षित समाज पीछे पड़ जाएगा। भारतीय समाज की यह स्थिति नही होनी है। अतः माता-पिता, समाज, सामाजिक सस्थाएं, शिक्षित लोग एव प्रान्तीय तथा केन्द्रीय सरकार एक मन से भारत के सभी बच्चो को शिक्षित बनाने के प्रयत्न मे जुट जाए। इसी से यहां शिक्षा का सार्वजनीकरण सफल होगा। इसी से भारत का भविष्य उज्ज्वल होगा।

प्राथमिक शिक्षा के सार्वजनीकरण के क्षेत्र में केरल पूर्णरूप से सफल हुआ है। इस सफलता का आधार ढूंढ़ते हुए हम पहुंचते है केरल की पुरानी पाठशालाओ के इतिहास में। अब हम पिछले सौ वर्षो मे केरल मे शिक्षा के क्षेत्र में हुए परिवर्तनों पर नजर डालेगे।

1947 के पहले केरल नामक एक राज्य का अस्तित्व ही नहीं था। यहां तीन छोटी-छोटी रियासत थी– तिरुविताकूर, कोची और मलबार। मलबार तो उस समय मद्रास (आज तमिलनाडु) का ही अंश था। अतः तिरुविताकूर एव कोची का इतिहास ही हमारे विषय से जुड़ा हुआ है। इनमें भी तिरुविताकूर का प्रभाव अधिक है क्योकि यहां के राजाओ ने अपनी प्रजा को शिक्षित बनाने के लिए बहुत कुछ काम किए है। उनके इस काम का प्रजा पर अधिक प्रभाव पडा। राज्य के कोने-कोने मे पाठशालाएं खोली गई थी। इनमें से अधिक पाठशालाएं गांव-गांव के प्रमुख व्यक्तियों की देन हैं।

पाठशालाए तीन स्तर की थीं। पहले स्तर की पाठशाला मे चौथी या पाचवीं कक्षा तक थी। दूसरे स्तर की पाठशालाओ में सातवीं कक्षा तक थी। इन्हें क्रमश· मलयालम प्राइमरी स्कूल, मलयालम मिडिल स्कूल एव मलयालम हाई स्कूल कहते थे। जहां एक ओर इस प्रकार की पाठशालाए अपनी पूरी गरिमा के साथ चल रही थीं तो दूसरी दिशा मे संस्कृत पाठशालाएं भी खोली गई थीं जहां "प्रथमा" से "शास्त्री" तक की कक्षाएं चल रही थी। ये सभी विद्यालय तिरुवितांकुर के गांव-गांव में रहने वाले विद्यार्थियो को अच्छी से अच्छी शिक्षा देने मे निष्ठा रखते थे। पर इससे भी अधिक ध्यान देने की बात तो यह है कि स्कूलो मे भर्ती होने से पहले ही (पाच साल की उम्र के पहले ही) बच्चे कलरी नामक छोटी पाठशाला मे प्रवेश पाते थे। प्राय. तीन साल की अवस्था में कलरी में प्रवेश पाते हैं, जहा वहा के अध्यापक जो "आशान" नाम से पुकारे जाते थे – विद्यार्थियों को दो साल के अदर मलयालम की वर्णमाला से अच्छी तरह अवगत कराते थे। स्वर, व्यंजन, स्वर संयुक्त व्यजन, संयुक्ताक्षर, भाषा के मूलभूत तत्वो को वहां के विद्यार्थी समझते है। इनको पढ़ने एवं लिखने मे विद्यार्थी समर्थ निकलते थे। गणित का भी थोड़ा-बहुत अश वे स्वायत्त करते थे। गिनती, चतुष्क्रियाएं, भिन्न सख्याएं– यहा तक कि 1 से 16 तक कि सख्याओ के पहाड़े मात्र नहीं भिन्न संख्या के पहाडे भी वे हृदयस्थ करते थे। ये कलरिया ही जो आजकल के प्री-प्राइमरी स्कूलो का पूर्वरूप माना जाता है– केरल की साक्षरता का मूलभूत कारण समझना चाहिए।

इन सबके रहते हुए भी एक ऐसा मनोभाव केरल के लोगों में शुरू से ही विद्यमान रहा जो केरल के अधिकाश बच्चों को साक्षर बनाने में सहायक हुआ। अपने बच्चों को स्कूल भेजने मे केरल के माता-पिता बहुत ही तत्पर थे। यहां के जमींदारो मे भी बहुत से ऐसे महान व्यक्ति थे जो अपने पैसे से पाठशाला चला रहे थे। इन सब कारणों से आजकल के अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लोग भी स्वतंत्रता के पहले ही साक्षर बनने के मार्ग मे आगे चल रहे थे।

अत. इस प्रकार कहना जरूर अनुचित होगा कि आजादी के बाद की सरकारो के प्रयत्नो से ही केरल को यह ऊंचा पद मिला है। वास्तव में यहां के राजा एवं प्रजा, दोनों ने जो मजबूत नीव डाली थी उस पर मकान बनाना ही सरकारो का काम रहा। यहां की जनता की भागीदारी ही सबसे प्रमुख साधन बना जिससे केरल पूर्ण रूप से साक्षर होकर अपना सिर ऊचा किए खड़ा है। अतः प्रारभिक शिक्षा का सार्वजनीकरण केरल में आजकल पूर्ण हुआ जिसकी नींव एक सौ वर्ष पहले ही डाली गई थी। ▢▢

पंचावाडी
पोस्ट–कुज हिमायीकाडू
जिला– कोल्लन, केरल

मेरी परवाह किसे है ?

❑ एन. मुइद्दीन कुट्टी

"मई के महीने का अंतिम सप्ताह था, एस.एस.एल.सी. *परीक्षा का परिणाम आया है, समाचार-पत्र वालों ने नतीजा* अपने दफ्तर से बाहर लटकाया है। सभी लोग बेसब्री से नम्बर देख रहे थे। मै भी उस भीड़ में घुसकर नम्बर देखने की कोशिश मे था कि मुझे एक औरत बहन परेशान सी दिखाई दी, देखने में किसी बड़े घराने की मालूम हो रही थी। उसकी परेशानी देखकर मुझे उस पर तरस आया, और मैंने उससे नम्बर मांगा, नम्बर लेकर मैंने बडी कोशिश करके नतीजा देखा तो वह नम्बर सबसे ऊपर Distinction पाने वालों मे था मैं खुश हुआ, औरत को खुश करने के लिए उसके पास आया और यूं कहा कि आपको परेशान होने की कोई जरूरत नहीं आप की बेटी Distinction लेकर पास हुई है। यह सुनकर भी उसका चेहरा खिल न सका, वह उदास ही दिखाई दी और कहती रही – 'She is lost' मैने बड़ी उम्मीद की थी मगर उसने सब कुछ बरबाद कर दिया।"

यह परीक्षा परिणाम निकलने का एक वृतांत है। कभी आपने उस बेचारी लड़की के बारे में सोचा है कि जो Distinction पाकर भी अपनी मां को खुश न कर सकी – यह कोई इक्का-दुक्का प्रसंग नहीं है, हर जगह इस प्रकार की बाते हुआ करती हैं। क्योकि माता-पिता अपने बच्चों के रेज और नम्बर दिखाकर खोखली प्रसिद्धी पाना चाहते है। बच्चों पर क्या गुजरती है, कितना जोर दबाव पड़ता है इस पर क्या किसी ने सोचा है?

बचपन का यह जमाना भी कितना प्यारा है मगर माता-पिता कभी-कभी बच्चों को कोई आजादी नही देते, खेल-कूद में भाग लेने भी नही देते, बचपन के बारे में डायर ने क्या खूब कहा है –

"उड़ने दो परिन्दो को अभी शोख हवाओ में
फिर लौट के बचपन का जमाना नहीं आता"

इस जमाने में ऐसे आजाद पक्षी की तरह बच्चे घूमना-फिरना चाहते हैं क्योकि बालक/बालिकाओ की यह इस उम्र की विशेषता है। इस बात पर उस बेचारी लड़की को कितनी ग्लानि हुई होगी कि आखिर यह सब क्या होता है? मैने कितनी मेहनत से पढ़ा, मगर मुझे प्रोत्साहित करने के बजाय उल्टे मेरी निन्दा की है।

परीक्षा में असफल रहने वालों की गिनती बढ़ती जाती है, और दसवीं में पहुंचते-पहुंचते यह पचास प्रतिशत के करीब होती है। तब भी समाज इस पर ध्यान नहीं दे रहा है। अध्यापक वर्ग चन्द होशियार बच्चों को पढ़ाकर उनके फर्स्ट क्लास और रेंज से खुश होते हैं, और समझ बैठते हैं कि हमारा उत्तरदायित्व पूरा हो गया। अब हमें यह सोचना चाहिए कि इन पचास प्रतिशत बच्चों का क्या होगा? उनको काफी अवसर देने में अध्यापक और शिक्षा व्यवस्था असफल हुई तो इसमें उन बेचारों का क्या भाग है?

यह अगर वच्चे की सोच है तो इस पर बडे क्या कर सकते है? यह सोचने की बात है। बच्चो का दिल कभी भी उदास नही करना है इस प्रकार उनसे व्यवहार करना माता-पिता का भी कर्तव्य है अगर इस प्रकार जोरे-दबाव देकर बच्चों को पालेंगे तो बाद मे जाकर पछताना पड़ेगा। बच्चों के व्यक्तित्व के विकास के लिए यह जोर-दबाव बहुत बड़ी रुकावट बन जाता है, और उन्हें किसी भी काम को करने मे आत्मविश्वास नही होगा। चन्द बच्चे इतने उदास और चिड़चिड़े हो जाते हैं कि वे बाद मे खुदकुशी (आत्महत्या) करने पर उतारू हो जाते है।

एक और अफसोस जनक बात याद आती है, चन्द साल पहले एक स्कूल टीचर (अध्यापिका) की बेटी ने

आत्महत्या कर ली। पूछताछ से पता चला कि अध्यापिका के जोर-दबाव में आकर ही इस बेचारी ने अपनी जिन्दगी बरबाद की थी। यह अध्यापिका भी अपनी लड़की को रेंज मिलने के लिए पढ़ाती थी। जोर जबरदस्ती से सुबह के चार बजे बच्ची को जगाती और पानी के नल के नीचे खड़ा कर देती और जोर से नल खोलती ताकि बच्ची को नींद से छुटकारा मिल सके। पानी के दबाव से भी अधिक उसके मन पर अपनी मां का आघात था। बेचारी ज्यादा दिन वह सह न सकी और उसने आत्महत्या कर ली।

दोस्तो यहां सोचने की बात यह है कि अध्यापक और अध्यापिकाओ से समाज क्या उम्मीद रखता है? यह लोग अन्धकार से उजाले की तरफ समाज को लोग लाएगे। जब उजाला अंधेरों के बादलो मे छुप गया है तो लोगों को रोशनी कहा मिलेगी।

अगर अध्यापिका अपनी बेटी के साथ ऐसा सलूक कर सकती है तो दूसरो के बच्चो के साथ क्या-क्या न करती होगी? उससे चिन्तनीय बात यह है कि पढ़ी-लिखी अध्यापिका वर्ग के कुल लोगों मे इस प्रकार का धूर्तपन हुआ करता है तो बेचारे अनजाने अनपढ़ की क्या बात है?

जोर-जबरदस्ती के दो शिकार हमने देखे--एक का जीवन समाप्त हो गया और दूसरा दयनीय हो गया। हम चाहते है कि दुनिया के किसी भी बच्चे पर ऐसी बात न हो जाए।

अध्यापकों को क्या करना चाहिए

- स्कूल के पूरे बच्चो को कक्षा मे पढ़ाई के काम-काज मे भाग लेने का अवसर हो।
- अध्यापक यह समझे कि विभिन्न तरह के बच्चे होते हैं और उनकी कामनाए भी विभिन्न होती हैं। इन विभिन्न कामनाओ की तरक्की के लिए विभिन्न प्रकार की Learning activities भी दे।
- अध्यापिका यह समझ ले कि आधुनिक मनोविज्ञान ने Multiple Intellegent जैसी बातो पर जोर दिया है इसलिए मानसिक कामनाओ के साथ-साथ बच्चो की गाने, नाच दिखाने, भाषण देने, नाटक करने आदि कलाओ पर भी जोर दें।
- कक्षा मे सभी बच्चो को कुछ न कुछ काम करने का अवसर प्रदान करें।
- अध्यापिका भी बच्चो में एक बनकर साथ रहें।
- समूह मे करने के लिए भी कुछ क्रियाकलाप हों।
- पढ़ाई के साथ-साथ चन्द मूल्य की बातें भी अनजाने तौर पर उनमे पैदा करने के लिए कार्यकलाप कराया जाए जैसे – गांधी जयन्ती, हिन्द दिवस, वन सप्ताह, साक्षरता दिवस, बाल दिवस आदि।

आज के सरकारी स्कूलो का क्या हाल है? पूरे बच्चों पर वे लोग ध्यान नही दे पा रहे है। चन्द बच्चो को पढ़ाकर वे खुश होते है और समझ बैठते है कि हमारा उत्तरदायित्व पूर्ण हो गया, यह बिल्कुल गलत है।

यहां अध्यापकों की लापरवाही के कारण बहुत से बच्चे पढ़ाई पूरी नहीं कर पाते हैं, और समाज मे अच्छे स्थान पर नही आते हैं। यह जानकर हम को अचरज होता है कि चन्द बदकिस्मत बच्चे ऐसे भी है जिनसे किसी ने कोई सवाल नही पूछा। इसलिए उन्होंने कोई जबाब भी नहीं दिया, यानि उनको बोलने का अवसर नही दिया गया।

पहली से लेकर दसवीं कक्षा तक पढ़ने के बाद भी अगर किसी बच्चे को कुछ कहने का अवसर न मिला तो वह अवश्य मिर्जा गालिब की कविता पढेगा--

मैं भी मुंह मे जबान रखता हू
काश पूछो कि मुद्दआ क्या है

इसी प्रकार के बच्चे कक्षा में अकेलेपन का शिकार बन जाते है, और उनकी रही-सही उत्सुकता भी जाती रहती है।

परीक्षा में असफल रहने वालो की गिनती बढ़ती जाती है, और दसवीं मे पहुचते-पहुंचते यह पचास प्रतिशत के करीब होती है। तब भी समाज इस पर ध्यान नही दे रहा है। अध्यापक वर्ग चन्द होशियार बच्चों को पढ़ाकर उनके फर्स्ट क्लास और रेंज से खुश होते है, और समझ

बैठते हैं कि हमारा उत्तरदायित्व पूरा हो गया। अब हमें यह सोचना चाहिए कि इन पचास प्रतिशत बच्चों का क्या होगा? उनको काफी अवसर देने मे अध्यापक और शिक्षा व्यवस्था असफल हुई तो इसमे उन बेचारो का क्या भाग है?

ये भी कई क्षमताए प्रकट कर सकते थे मगर ऐसे अवसर पाठ्यचर्या मे कम है। सब बच्चों को भाग लेने के मुनासिब कार्यकलाप देना उसकी सही जांच पडताल करना भी हमारा कर्तव्य बन जाता है।

हो सकता है कि कोई बच्चा गणित में पीछे है हालाकि अग्रेजी, विज्ञान, सामाजिक शास्त्र आदि विषयों में वह सबसे आगे भी हो सकता है।

बच्चो की अभिरुचि के अनुसार विषय पढ़ने का अवसर देना चाहिए। आजकल सबसे बड़ा दुर्भाग्य यह है कि असफल लोगों को उभारने के प्रति बातें और चर्चा कम होती है। उल्टे जीतने वालो पर ही थोड़ी चर्चा, रिपोर्ट, तस्वीरे आदि से समाचार-पत्र भर जाते है।

समाज में भी इस प्रकार के बच्चो की प्रगति और उन्नति पर सोचने की एक आदत नहीं है। यहां अध्यापक का कर्तव्य और बढ़ जाता है। अध्यापक की ओर से शिक्षा को सभी बच्चों तक पहुंचाने के लिए नीचे लिखी गई बातों पर ध्यान देना अच्छा रहेगा।

- पढ़ाई का वातावरण प्यार भरा और स्नेह भरा बनाए रखें।
- सभी बालकों को भाग लेने के लिए अनेक अवसर प्रदान करे।
- पढ़ाई तथा मनोरंजन को एक साथ बढ़ावा दें।
- परीक्षा इस प्रकार करने का प्रबंध किया जाए जिसमे मानसिक विकास जांचने के साथ-साथ सामाजिक मूल्यों का भी मूल्याकन कर सकें।
- अध्यापको और अधिकारियों को बच्चों के अधिकार, उनकी उम्र और सविशेषतओं पर प्रशिक्षण दे।
- शिक्षा पूर्णतः बाल केन्द्रित हो।
- मूल्याकन के अनुसार हर बच्चे के लिए कोई न कोई सुधारात्मक कार्य करे।
- पढाई को आकर्षक बनाने के लिए कम्प्यूटर, टीवी, इन्टरनेट आदि आधुनिक उपकरणो की सहायता लें और बच्चों को अधिक से अधिक दृश्य अनुभव दें।
- बच्चो के माता-पिता से कम से कम महीने में एक बार मिल बैठने का कार्यक्रम रखे ताकि बच्चो की परेशानियों पर चर्चा करके मदद कर सकें।
- बच्चो को कई जिम्मेदारियां बांट कर दे।
- मिलकर समूह मे काम करने का अवसर दे। ताकि उनमें मेलजोल और प्यार बढ़ जाए।

आज के बदले हुए परिवेश में जब पूरी शिक्षा व्यवस्था ही एक कठिन दौर से गुजर रही है इससे पहले कि कल का भविष्य बनाने वाले बालक टूटकर बिखर जाएं, हमें शीघ्र ही उस दिशा मे कोई कारामद कदम उठाकर उनके भविष्य को बचाना है।

अनुसंधान अधिकारी (उर्दू)
राज्य शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
पूजापुरा, तिरुवनंतपुरम, केरल

केरल के शिक्षा पाठ्यक्रम में बाल विकास एवं व्यक्तित्व पर प्रभाव संबंधी विचार

☐ सी. सुरेशन

केरल में जिस नए पाठ्यक्रम का अविष्कार हुआ है उसका स्वागत सब जगह किया गया है। इसके आधार पर नई अध्यापन विधि को भी लोकप्रिय बनाने का कार्यक्रम चल रहा है इस में ज्ञान को स्वयं अपनाने का अवसर बच्चों को देना है। छात्रों की प्रकृति और क्षमता को मान्यता देती है केवल परीक्षा में पास हो जाना शिक्षा का लक्ष्य नहीं है। जो नया पाठ्यक्रम अब केरल में लागू है इसकी विशेषताओं पर ध्यान देने पर ही इसकी आवश्यकता समझेंगे।

केरल मे जो नए पाठ्यक्रम का अविष्कार शुरू हो गया है। इस गुणात्मक मोड़ का सबने स्वागत किया है। ये तो शैक्षिक नवाचार का भाग है। यदि व्यक्ति को समाज का सृजनात्मक सदस्य बनना है तो उसको तदनुसार शिक्षा प्राप्त करनी है। इससे केवल अपने ही विकास की नही वरन् समाज के विकास मे योगदान देने की क्षमता भी मिलती है।

केरल मे दो तीन सालो से नई अध्यापक विधि को लोकप्रिय बनाने का कार्यक्रम चल रहा है। इसके पहले जो शिक्षा पद्धति केरल में लागू थी वह तो केवल शिक्षकों का ज्ञान छात्रों पर थोपने पर आधारित थी। ज्ञान स्वय अपनाने का अवसर नहीं देता था। छात्र की प्रकृति और क्षमता की कोई मान्यता नही थी। शिक्षा का लक्ष्य तो इस प्रकार बदल गया था कि केवल परीक्षा में पास हो जाना। इसलिए जोर इन बच्चो पर दिया था। छात्रो की स्मरण शक्ति को परखना और इस के लिए उपयुक्त पाठ्यपुस्तको का निर्माण करना और उसी प्रकार शिक्षण विधि भी देना। शिक्षा माने पाठ्य-सामग्री का रटना और उसका पुनः स्मरण करना ही नही है।

नया पाठ्यक्रम सिखाने को लाभदायक बनाने में सफल हुआ है। इसमें छात्रों की बात को अपने ही शब्दो मे व्यक्त करने की, अपनी कला या कविता को प्रस्तुत करने की क्षमताओ को प्राप्त करने का अवसर है। इसके द्वारा भाषाई दक्षताएं, गणित की दक्षताए, वैज्ञानिक मनोभाव, सृजनात्मकता, सहभागिता, उत्तरदायित्व आदि पर जोर देता है। इस प्रकार बच्चा स्कूल जाना बहुत पसन्द करता है।

नए पाठ्यक्रम की विशेषताएं क्या-क्या हैं

- ☐ बच्चे को एक अलग व्यक्तित्व के रूप में स्वीकार करना।
- ☐ बच्चा सदा सक्रिय है इसलिए प्रक्रिया मे भाग लेने मे उत्सुक बच्चे की प्रकृति को सिखाने के लिए उपयुक्त करता है।
- ☐ हर बच्चे की पढ़ने की क्षमता अलग-अलग है और इसकी गणना भी करनी है। नए शब्द, आशय आदि की सृजन की क्षमता बच्चों मे है, उसके विकास के लिए अवसर देता है।
- ☐ बच्चे को आसपास की वस्तुओ, जीव-जन्तुओ और वनस्पतियो को जानने का, निरीक्षण करने का अवसर परिस्थिति विज्ञान मे देना है।
- ☐ पाठ्यपुस्तको का निर्माण बच्चे को स्वयं शिक्षा प्राप्त करने लायक रूप में है।
- ☐ मूल्यनिर्धारण की रीति को इस प्रकार बदल दिया है कि इसके द्वारा बच्चे की कई प्रकार की क्षमताओ की जाच करने मे एव निरन्तर और समग्र मूल्याकन करने मे भी सक्षम है।
- ☐ कक्षा मे बच्चे को खुशी का वातावरण मिलता है।
- ☐ बच्चों के बीच प्रतियोगिता के बदले सहकारी कार्यक्रमों की सुविधा है।

ये विशेषताए कक्षाई कार्यक्रमो की समस्याओं का समाधान भी देती हैं। हमारा विश्वास है कि इन विषयों पर संगठित और योजनानुसार किए गए प्रयास वाछित परिणाम देगे।

इस विषय पर कोई खास मतभेद सामने नहीं आया है। फिर भी कुछ लोगो के मन मे शका है। क्या इन कार्यक्रमों का कोई फायदा हुआ है? क्या आम अध्यापको के कक्षा कार्यक्रमो मे इसका असर देखने लायक है? इस प्रकार की कक्षाई गतिविधियों से छात्रों मे उचित रूप से पाठ-पठन पूर्ण रूप से होता है? कक्षा में दर-असल ये सब गतिविधियां शैक्षिक क्रियाएं है या नहीं? खेल, गीत, कला आदि के आकर्षक अंशों को जोड़कर ही ये शैक्षिक क्रियाएं तैयार करता है। इन कारणों से बच्चे इस तरह की प्रक्रियाओ में भाग लेगे और सक्रिय रहेंगे। शैक्षिक विषयों के विकास मे ऐसी प्रक्रियाओं का आयोजन जरूर प्रत्येक अध्यापक को जानना है। जरूर कक्षा में जाना है। पाठ्यचर्या मे जो-जो विषयो की प्राप्तियो के बारे मे सूचना दी है तद्नुकूल प्रक्रियाओं का आयोजन करके अध्यापक बच्चों को देकर उनको सक्षम बनाते है। इस प्रकार बच्चो को ज्ञान की ओर बढ़ाने के लिए शैक्षिक परीक्षण करते हैं। कई परियोजनाओ का आयोजन करते हैं, कक्षाई पत्रिकाओ का प्रकाशन कराते है। उपर्युक्त सभी बातों का उल्लेख जरूरी है, नई प्रणाली में यही है। अध्यापको को अपने अध्यापन के प्रयासों को और तेज करना है और हमारे सामने आई चुनौतियो का सामना करने मे केरल के अध्यापक सक्षम होगे। ❑❑

भाषा शिक्षण में सहगामी क्रियाकलापों का आयोजन

भाषा तो केवल आदान-प्रदान के लिए ही नही बल्कि अपने को स्वयं अभिव्यक्त करने की उपाधि भी है। वच्चो में मातृभाषा अर्जन स्वाभाविक ढंग से होता है क्योंकि इसका स्वाभाविक वातावरण बच्चो को जन्म से ही मिलता है। माता-पिता, रिश्तेदार और साथियों से इसका अनुकूल माहौल मिलता ही रहता है। अनुभव इसका बुनियादी प्रमाण है, वह सूक्ष्म मनोभावों की अभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करता है।

लेकिन दूसरी भाषा को अपनाने मे बिल्कुल ऐसा मौका नहीं मिलता है। इधर तो मुख्य रूप मे अध्यापक ही छात्रों के लिए उपलब्ध है। श्रवण, भाषण, वाचन, लेखन और सृजनात्मक संबंधी क्रियाओं से भाषार्जन का अनुभव छात्रों को मिलता है। भाषा शिक्षण का अर्थ केवल लिखना, पढ़ना सिखाना नही वरन् कुछ और भी है। अन्य भाषा अर्जन मे बच्चो को सक्षम बनाने के लिए एक समर्थ अध्यापक अनेक कार्यकलापों का अविष्कार कर सकते है। इसके लिए प्रथम स्थान एक ऐसे वातावरण का सृजन करना है इससे भाषा की ओर बच्चो की रुचि अधिक उत्तेजित करे। शिक्षण के अर्थ का एक आवश्यक अग है रोचकता। जितनी अधिक रोचकता होगी उतनी अधिक सीखने की प्रक्रिया होगी। इस बात पर अध्यापक का प्रयास, सहगामी क्रियाओं के सहारे से हो तो वह बिल्कुल सफल होगा। विभिन्न कलाओ का प्रयोग कर जब शिक्षण कार्य होता है, तब शिक्षण रुचिकर भी बनता है और साथ ही छात्रो मे सीखने की आतुरता उत्पन्न होती है। इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक कल्पनाशील हो।

प्रारंभिक कक्षाओं मे शिक्षण को रुचिकर बनाए रखने के लिए एक विधा के रूप मे अभिनय का भी प्रयोग किया जा सकता है। यदि अध्यापक पाठ्य-वस्तु को कला के रूप मे, अभिनय के अश जोड़कर हाव-भाव के साथ या अगविक्षेपो के साथ प्रस्तुत करें तो बच्चे ध्यान से

सुनेंगे, समझेंगे और इसको ग्रहण करेंगे। इस प्रकार के प्रस्तुतीकरण का असर तो बहुत बड़ा है। ऐसी गतिविधियों की संभावना कक्षा मे होनी चाहिए।

भाषार्जन स्वाभाविक ढंग से होता है। मातृभाषा के लिए स्वाभाविक वातावरण बच्चों को जन्म से ही मिलता है। अनुभव ही इसका बुनियादी ढंग है। दूसरी अन्य भाषा को अपनाने में बिल्कुल ऐसा मौका नहीं मिलता। इधर मुख्य रूप में अध्यापक ही छात्रों के लिए उपलब्ध है। श्रवण, भाषण, वाचन, लेखन और सृजनात्मक क्रियाओं से भाषार्जन का स्वाभाविक अनुभव छात्रों को मिलता है। बच्चों को इस बात में सक्षम बनाने के लिए एक समर्थ अध्यापक को अनेक कार्यकलापों का आविष्कार कक्षा में करना है। शिक्षण में जितनी अधिक रोचकता होगी उतनी अधिक सीखने की क्षमता बढ़ेगी। इसका प्रयास सहगामी कार्यकलापों के सहारे करें तो वह बिल्कुल सहज होगा।

अभिनय

एकाभिनय, छोटी कहानी का नाटकाविष्कार, हाव-भाव से कला का प्रस्तुतीकरण, विविध पक्षी, जानवर, जीवजालों का शब्दानुकरण, दल में एक घटना का प्रस्तुतीकरण, अभियन के साथ गायन।

संगीत

संगीत भी बच्चों के लिए रुचिकर है। वह मन के लिए उल्लास-विलास, विश्रान्ति, शिथलीकरण आदि के लिए अवसर प्रदान करता है। इसके अंतरमन सरल रूप से कविताओ का तालात्मक प्रस्तुतीकरण, ताल, लय और सगीत के साथ प्रस्तुतीकरण सगीत और अभिनय के साथ सरल कविताओं का प्रस्तुतीकरण, शब्दों का आवर्तन रसीले ढंग से किया जाता है आदि।

चित्र

उचित चित्र दिखाकर पाठ्य-वस्तु को सजीव बनाना, चित्र दिखाकर कथा या घटना का पूर्तिकरण, चित्र के सहारे भाषाई खेलो का अविष्कार, सरल रेखाचित्रों को खींचकर विविध भाषाई कौशलों का प्रयोग तथा रचना कार्यक्रम और गृहकार्य का आदेश आदि।

सृजनात्मक क्रियाएं

पद खेल, कई तरह के भाषाई व्यवहारों का अविष्कार, भाषा सम्बन्धी सृजनात्मक प्रक्रियाए – वाक्य पूर्ण, पदपूर्ण कविता पूर्ण, नामकरण आदि– पत्रिका निर्माण भी एक और तरीका है।

विद्यालय मे भाषा शिक्षण को अधिक उत्तेजित करने के लिए सहगामी क्रियाकलापो का उपयोग जरूर होना चाहिए। भाषा अध्यापकों के दलों को समूह-चर्चा के माध्यम से इस पर बल देने का प्रयास करना चाहिए। विशेष दिनो का आचरण और विशिष्ट व्यक्तियो के बारे मे भाषण आदि भी भाषा शिक्षण के लिए स्वीकार्य है।

इस तरह की क्रियाओं के द्वारा बच्चों में भाषा की ओर रुचि बढ़ती है, जिज्ञासा जगती है और आवश्यकता बोध भाषा के प्रयोग की भूमिका भी बनती है।

सृजनात्मक प्रक्रियाओं के बारे में कुछ सूचनाएं

पदखेल (शब्द खेल)(अक्षर खेल)

न	य	ख	ग	ह
ज	क	य	स	न
य	र	भ	प	व
ष	ल	श	म	च

इन ऊपर दिए गए अक्षर के चार्ट से अक्षर चुनकर स्वर चिन्हों को जोड़कर शब्द बनाना। दो या चार दलों में छात्रों को विभाजित करके, चारों दलों में यह आदेश
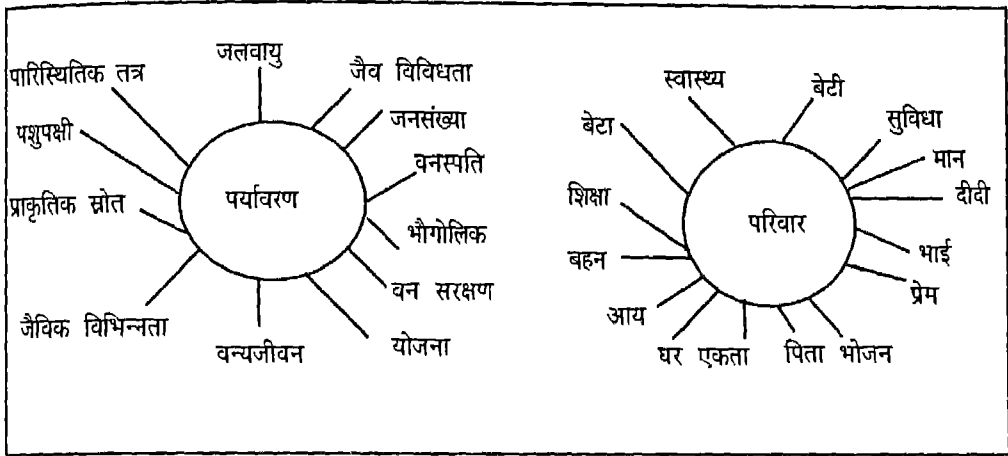
देना है। जितने शब्द इससे बना सकें उतने लिख दे। जो दल पाच मिनट के अंतर्गत अधिक शब्द लिखता है उसको पुरस्कार भी देना है– इस प्रकार लिखे हुए शब्दों से वाक्य भी बना सकते है। इन वाक्यो को जोडकर और भी सबन्धी क्रियाए कर सकते हैं।

भाषा व्यवहार की ओर

किसी एक घटना के बारे मे प्रत्येक छात्र को एक-एक वाक्य कहने और लिखने का अवसर देना। सभी वाक्यों को मिलाकर इस घटना का एक रसीली आविष्कार रचना के रूप में सृजन करेगे।
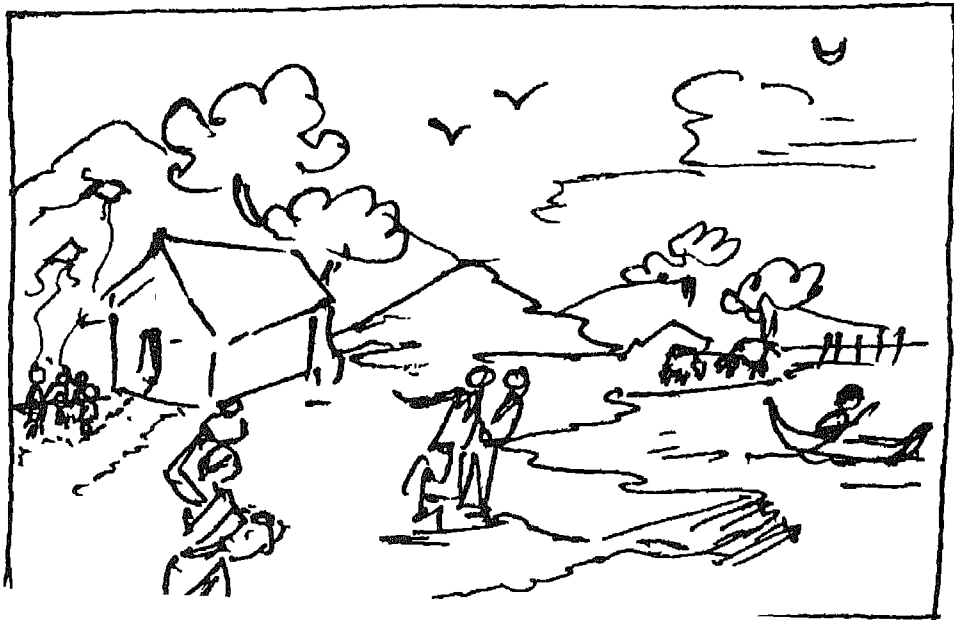
पदसूर्य (शब्द सूर्य)

एक विषय के संबन्ध मे जितने शब्द बनाए जा सके, उतने शब्दो का शब्द सूर्य बनाना। उसके बाद उन शब्दों से वाक्य बनाना। इस प्रकार शब्द पहचानता है शब्दों से वाक्य और इससे लेखन की ओर जा सकता है। यह तो चालीस मिनट के अंतर्गत बच्चो की भागीदारी के साथ ऐसा कार्यक्रम का आयोजन कर सकता है।

इन शब्दो से छोटी-छोटी कविता का सृजन भी हो सकता है। जहां-तहां शिक्षक की सहायता की आवश्यकता है, वहां देनी है। इस प्रकार छोटी कहानी, वार्तालाप, विवरण, लेखन आदि का भी स्थान है।

चित्र की सहायता

इस चित्र से सबधित कितने शब्द लिख सकें ये तो व्यक्तिगत रूप से या दलो मे लिखवाना। चित्र के सहारे वाक्य बनाने का, कहानी विवरण, कविता, लेखन, नाटक, वार्तालाप आदि अन्य भाषाई व्यवहारों का भी अवसर मिलता है। इसके बाद कविता को संगीत देना, उचित शीर्षक देना, गृहकार्य देना आदि भी हो सकता है। ❑❑

वरिष्ठ प्रवक्ता
डाइट, तिरुवनंतपुरम
पी.ओ. अट्टीनगल
केरल

केरल की नई पाठ्य पद्धति में हिन्दी भाषा का उपागम

❑ डी. राजेन्द्र बाबू

केरल में अभी-अभी प्राथमिक स्तर पर शिक्षा मे कुछ नया परिवर्तन आया है। यह परिवर्तन अनेक शिक्षाविदों के सिद्धान्तो के आधार पर ही हुआ है। इसके अनुसार पाठ्य पद्धति में कुछ बदलाव भी आया है। शैक्षिक सिद्धांतों के आधार पर बच्चा एक 'कोरा कागज' नहीं है। वह विविध प्रकार की क्षमताओं को लेकर जन्म लेता है। उसमे निहित क्षमताओं के विकास से ही अध्ययन प्रक्रिया सम्पन्न होती है। उसके लिए आवश्यक मार्गदर्शन देना मात्र शिक्षक का कार्य होता है। इससे बच्चो को स्वय पढ़ने का अवसर मिलता है। स्वय मूल्याकन करने का भी अवसर मिलता है। दलों मे बाटकर समस्याएं हल करने का अवसर इस पद्धति द्वारा मिलता है। इससे उनमें सहकारिता का भाव बढ जाता है यह तो सामाजिक जीवन के लिए बड़ा उपयोगी है।

भाषा उपागम

बच्चा भाषा कैसे सीखता है?— हिन्दी औपचारिक ढंग से सीखने के पहले ही बच्चो को हिन्दी सुनने का अवसर जैसे टी.वी. आदि से मिलता है। स्कूल आने के बाद अनुकूल वातावरण पाने से वह स्वयं हिन्दी बोलने की कोशिश करता है। वह अपने भावो और विचारो को हिन्दी में प्रकट करने के लिए स्वाभाविक रूप से लालायित होता है।

भाषा अनुकरण मात्र से नहीं सीखता। वह अपनी इच्छा की पूर्ति के लिए भाषा का सृजन करता है। इसके लिए उसे अनुकूल वातावरण कक्षा में मिलना चाहिए।

बच्चों और बड़ों की संगति

अध्यापक एवं बड़ो के बीच बातचीत होने से बच्चा भाषा का प्रयोग करता है। माता-पिता एव बड़ों के साथ बातचीत से पढ़ाई में खुद भाग लेने की तत्परता होती है। बच्चो की त्रुटियो को देखकर आलोचना न करें और उन्हें ठीक रूप दिखाकर सुधारना अध्यापक का कर्तव्य है।

केरल में प्राथमिक स्तर की पाठ्य पद्धति में समूल परिवर्तन हुआ है। यह परिवर्तन शिक्षा के सही पहलुओं पर हुआ है। भाषा उपागम से लेकर मूल्यांकन तक इस परिवर्तन के अंतर्गत आता है। बच्चों में सभी दक्षताएं विद्यमान हैं उन्हें विकसित करना मात्र शिक्षा का लक्ष्य होता है। नई पद्धति के अनुसार बच्चों को स्वयं पढ़ने का अवसर प्राप्त करना है पाठ्यपुस्तक पर ज़ोर नहीं, दक्षता पर ज़ोर देना है। पाठ्यपुस्तक एक सहायक सामग्री मात्र है और अध्यापक एक पथ प्रदर्शक। कक्षा गतिविधि शिशु केन्द्रित हो। मूल्यांकन निरंतर एवं समग्र होना चाहिए जिसके द्वारा अध्यापक को स्वयं मूल्यांकन करने का भी अवसर मिलता है।

आशय प्रस्तुतीकरण रीति

अक्षर प्रस्तुतीकरण की अपेक्षा भाषा मे आशय प्रस्तुतीकरण रीति मातृभाषा के समान अन्य भाषा शिक्षण मे भी अपनाई है। कक्षा में भी पढ़ाई में स्वाभाविकता पर जोर देना चाहिए। आशय प्रस्तुतीकरण द्वारा बच्चा भाषा इस प्रकार प्राप्त करता है आशय→ वाक्य और शब्द पहचानता है। शब्द से अक्षर पहचानता है। इन अक्षरों से वह नए शब्दों का सृजन करता है। बनाए शब्दों को नए संदर्भ मे प्रयोग करके वह नूतन आशय पर पहुंचता है।

रसदायी अनेक क्रियाओं से बच्चों का आशयों से परिचय कराना पहला कर्म है। बच्चा इन परिचित एवं लिखित आशय रूपो से नए वाक्य और शब्द पहचानता है। बाद में इसका लिखित रूप दृढ़ीभूत होता है। इसके लिए अनेक आवर्तन क्रियाएं देना है। इस संदर्भ में बच्चा अक्षर पहचानता है और पढ़ता है बाद मे लिखता है।

इसी प्रकार पहचानते हुए अक्षरों के जरिए नए-नए शब्द पहचानता है, पढ़ता है, लिखता है और अभिव्यक्त करता है। इस प्रकार नए-नए संदर्भ और आशय बच्चा स्वीकार करता है बाद में अभिव्यक्त करता है और भाषा की दक्षता प्राप्त करता है।

सृजनात्मक अभिव्यक्ति

- ☐ अभिनय के साथ कविताओं को प्रस्तुत करना।
- ☐ अपनी कल्पना के अनुसार कविता की पूर्ति करना।
- ☐ चित्रों के सहारे छोटे-छोटे वाक्य बनाना।
- ☐ बहुत सरल परियोजना करना।
- ☐ शिष्ट भाषा का प्रयोग करना।

पढ़ना (वाचन)

पढ़ना स्वाभाविक नही है। आशयों को ग्रहण करना ही पढ़ने का लक्ष्य है। अक्षर, शब्द या वाक्य ग्रहण करना नहीं। अध्यापक और बच्चो के सहयोग से आशयों को बच्चा ग्रहण करता है।

लिखना (लेखन)

लिखना कैसे शुरू करे? 'आशय से अक्षर की ओर' के मनोवैज्ञानिक तत्व को आधार बनाकर 'लिखना' शुरू करें।

- ☐ पहले पहल बच्चे अपनी मनपसंद की चीजे और व्यक्तियों के नाम हिन्दी में लिखें, जिससे लेखन में बच्चे की दिलचस्पी बढ़े।
- ☐ छोटे-छोटे विचारों वाले वाक्यों से छात्र शब्दों को पहचाने। बाद में वे शब्द लिखना सीखें फिर वर्ण पर आ जाएं।
- ☐ अध्यापक हमेशा बच्चों के सामने मानक रूप का उच्चारण एवं लेखन करें।
- ☐ अध्यापक ऐसे शब्दों को मिलाकर सहज भाव से छात्रों से बातचीत करें ताकि छात्र इन शब्दों को सुने, पहचानें एवं लिखें।

पाठ्यपुस्तक की भूमिका

प्रत्याशित दक्षताए बच्चो को अर्जित कराने के लिए आज अध्यापक पाठ्यपुस्तक को साध्य के रूप मे लेते है, साधन के रूप में नहीं। उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पाठ्यपुस्तक केवल एक सहायक सामग्री मात्र है। दरअसल भाषाई कौशलों की पूर्ति का चालीस प्रतिशत ही पाठ्यपुस्तक मे होता है। शेष भागों की पूर्ति के लिए आवश्यक सामग्रियां अध्यापक एव छात्रों के दैनिक जीवन के अनुभवो पर आधारित बातों से हों।

हिन्दी भाषा अध्ययन का उद्देश्य

भाषाध्ययन का मतलब है— विचारो का आदान-प्रदान। विचार- विनिमय से तात्पर्य, विचार-ग्रहण एवं विचारों की अभिव्यक्ति दोनों है। अपने मन के भावो को दूसरों तक पहुंचाने के लिए बालक जहां भाषण और लेखन का सहारा लेता है वहीं दूसरों के भावों को समझने के लिए श्रवण और वाचन का। इन सबके अतिरिक्त चिंतन एवं सार्वजनिक दक्षताए अर्जित करने की दक्षता भी बच्चों मे सुप्त रूप में पड़ी है। इसको भी जगा देने का माहौल कक्षा के कृत्रिम वातावरण में स्वाभाविक रूप से बनाए रखना चाहिए।

शिक्षा प्रक्रियाएं—दूसरी भाषा के रूप में केरल के छात्र हिन्दी सीखते है। इसलिए हिन्दी अध्ययन की सफलता के लिए कौन-कौन-सी रीतियां अपनायी जाएं, इस पर विचार करना है। क्रमबद्ध रूप से कुछ विषयों की जानकारी प्राप्त करना मात्र अध्ययन का लक्ष्य नहीं। अपने व्यावहारिक जीवन के विभिन्न पहलुओं पर हिन्दी में विचारों का आदान-प्रदान करने की क्षमता हासिल करना इसका लक्ष्य है। नैसर्गिक रूप में प्राप्त दक्षताओं को स्वतंत्र रूप से तलाश करना, अमल में लाना, उनका प्रयोग करना तथा ढूंढ़ निकालना इसका लक्ष्य है। हम यह नहीं भूलें कि लक्ष्य की प्राप्ति छात्रों को मिलनी चाहिए। इसके लिए

शिक्षा शिशु केन्द्रित हो, गतिविधि युक्त भी हो यानि कक्षा अर्थात् गतिविधियुक्त शिशु केन्द्रित कक्षा। इसका मतलब यह है कि शिक्षा बालकों के निजी जीवन के अनुभवों पर आधारित हो। क्रियाकलापो द्वारा बच्चो में अनुभव बढ़ाएं।

बच्चे की प्रकृति—नई पाठ्य पद्धति बच्चे की प्रकृति पर केन्द्रित है। बच्चा खेलने के लिए इच्छुक है। वह हमेशा कुछ न कुछ करता रहता है। पर्याप्त अवसर मिलने पर अपने आप कोई भी भाषा सीखने की क्षमता नैसर्गिक रूप से बच्चो में विद्यमान है। बच्चे जिज्ञासु रहते हैं। इसी के जरिए बच्चे ज्ञानार्जन करते हैं। बच्चो की इस प्रकृति से लाभ उठाना चाहिए।

सभी बच्चों में वैयक्तिक भिन्नताएं है। उनमें विभिन्न स्वभाव वाले, रुचि वाले एवं दक्षता वाले बच्चे हैं। आज सारे छात्रो में एकरूपता लाने का प्रयास किया जा रहा है। प्रत्येक बच्चे की अध्ययन गति विभिन्न होती है और रीति भी भिन्न है। बच्चे स्वभावत. काल्पनिक भी होते हैं। अतः उनकी इन दक्षताओ को उचित दिशा मे मोड़ने का भरपूर अवसर अध्ययन सामग्रियो में हो। उनको ऐसी सामग्रिया प्रदान करनी चाहिए जिनसे वह ज्ञात से अज्ञात की ओर, सरल से कठिन की ओर, मूर्त से अमूर्त की ओर जाने में सक्षम हो।

अध्यापक की भूमिका—बच्चे अध्यापकों से, साथियों से और अकेले करके सीखते हैं। अध्यापक केवल मार्गदर्शक बनकर भूमिका निभाता है। इसलिए वह कक्षा में ऐसी परिस्थितियां पैदा करे जिसमें बच्चा स्वयं पढ़े और गलतियां स्वयं सुधारे। किसी भी हालत में बच्चों मे हीनभावना पैदा न हो। बच्चों और अध्यापको में आत्मविश्वास बढ़ने लायक कार्य किया जाए। अध्यापक पूरे आत्मविश्वास के साथ कक्षा का सचालन करना और बच्चे की अंतर्निहित संभावनाओं को उभारने का प्रयास करें।

अध्यापकों को याद रखना चाहिए कि पाठ के अभ्यास उदाहरण मात्र हैं। इन उदाहरणों के द्वारा अध्यापक नए उदाहरण रचें व नई गतिविधियों, सदर्भो आदि की रचना करें और चर्चा द्वारा नए से नए अभ्यासों को बनाकर बच्चो को पाठ के मुख्य उद्देश्यो की प्राप्ति में सहायता प्रदान करे।

अध्यापक इस पर पूरा बल दे कि हमारे सामने का सवाल पाठ्यपुस्तक नहीं बच्चा है, पाठ नहीं दक्षताएं है। प्रत्येक कक्षा मे किसी न किसी पाठ्यचर्या प्रस्तावनाओ को सामने रखकर ये दक्षताएं बच्चों में पैदा करने के उद्देश्य से कक्षा का संचालन करना चाहिए। मूल्यांकन मे भी इस प्रकार के परिवर्तन आए है। केन्द्र करिकुलम समिति से भी इस पद्धति को मान्यता प्राप्त हुई है। □□

शिक्षा में मूल्यों का स्थान

शिक्षा का मूल उद्देश्य है– बच्चों का सर्वागीण विकास करना। अपने भविष्य के जीवन मे उत्तम नागरिक बनकर अपनी और समाज की आवश्यकताओ की पूर्ति करना उसके दायित्व के अंतर्गत आती है। इन आवश्यकताओं की पूर्ति कब सपन्न होती है? उत्तम नागरिक बनने से इसकी पूर्ति होती है। उत्तम नागरिक माने मूल्यवान नागरिक। यहां मूल्य से क्या तात्पर्य है?

मूल्य क्या है?

मूल्य शब्द से अभिप्राय भावात्मक दृष्टि से मानव के गुणों को अभिव्यक्त करना है। हिन्दी में मूल्य शब्द के पर्याय में 'आदर्श', 'शील', 'गुण' आदि शब्दों का प्रयोग

हुआ है।

अब तक मूल्य शब्द की कोई पूर्ण परिभाषा नहीं हुई है। शिक्षा वैज्ञानिक आलपोर्ट के अनुसार–"मूल्य एक मानव विश्वास है जिसके आधार पर मनुष्य वरीयता प्रदान करते हुए कार्य करता है।"

भारत देश महान है। यह जगद्गुरु भारत है। दुनिया भर के देशों को ज्ञान की प्राथमिक किरणें भारत से ही प्राप्त हुई हैं। भारत को इतना उच्च स्थान इसलिए प्राप्त है क्योंकि यहां के व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में मूल्यों पर ज़ोर लगाया था। इसलिए भारत की संस्कृति एक जाज्वल्य तारे के रूप में आज भी जगताकाश में खड़ी है। लेकिन बीच-बीच में कुछ बाहरी शक्तियों के जान-बूझकर किए कामों से इसमें दरार पड़ी। मूल्य को क्षति पहुंची। ऐसे हमारे बच्चे मूल्यों से, संस्कृति से वंचित हुए। समाज के मन से मूल्य निकल गया। इसके उपचार के रूप में हमारी पाठ्य पद्धति में मूल्यों को काफी महत्व देने की जरूरत है।

पी सी. कटियार का मत है–"मूल्य मानव व्यक्तित्व के अतरतम भागो मे निहित होते है। व्यक्ति को जानना, उसके मूल्यो को जानना है।" मूल्य मानव व्यवहार को नियत्रित करते है। मूल्य ही मानव को पशु स्तर से पृथक करते है। मानव को मूल्याभिमुखी जीवन की ओर उन्मुख करने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। प्रत्येक नागरिक को समाज के कुछ नियमो का पालन करना पड़ता है। ये नियम समाज के नैतिक जीवन के लिए बहुत आवश्यक हैं। इनसे ही व्यक्ति एवं समिष्टि की उन्नति संभव है।

प्राचीन भारतीय शिक्षा में मूल्य का स्थान

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियो मे से एक है। इसके साथ संसार मे जन्मी अन्य अनेक संस्कृतियां अब नाममात्र बन चुकी है। लेकिन भारतीय संस्कृति आज भी पूर्ण प्रभाव से विद्यमान है। इसका कारण यह है कि भारतीय सस्कृति मूल्य पर आधारित है। ये मूल्य भारतीय शिक्षा-व्यवस्था में भी प्रचलित थे। प्राचीन काल में जो गुरुकुल शिक्षा रीति थी इसमे मानव मूल्यों को प्रमुखता दी जाती थी।

बड़ो का आदर, छोटों से प्यार, दीनों पर प्रेम, सहजीवियों से प्यार, दया, क्षमा, ममता, भक्ति, सहनशीलता, अहिंसा आदि-आदि मूल्य के आचरण के अंतर्गत आती है। इनके पालन से गुणवान व्यक्ति मूल्यवान भी बन जाते है।

अब प्रश्न उठता है कि ये सब मूल्य कहा से प्राप्त करें? कब से प्राप्त करे और कैसे प्राप्त करे? मलयालम मे एक कहावत है "चोटयिले शीलम् चुटल वरे" अर्थात् छोटी उम्र में ही जो-जो आदतें हम पर आ पड़ती हैं वही मृत्यु पर्यन्त रहती हैं। अर्थात् जो-जो मूल्य वाछित हैं विद्या की शुरुआत से ही होने चाहिए। अतः किन्डरगार्टन शिक्षा की पाठ्य पद्धति से लेकर प्रत्येक स्तर की पाठ्य पद्धति में इसका पर्याप्त स्थान देना चाहिए।

इन्हें कैसे प्राप्त करें? ये आचरण से प्राप्त करें। पहले भारत के अध्यापक आचार्य रहे थे। आचार्य माने आचरण कर दिखाने वाला। आचार्य लोग मूल्यों को किसी विषय के रूप मे पढ़ाते नही थे वे स्वयं अपने जीवन में आचरण कर दिखाते थे।

मूल्य क्षति कहां तक

आज सब कहीं मूल्यहीनता का या अनैतिकता का बोलबाला है। दूधवाला दूध में पानी मिलाकर बेचता है। सौदागर चावल में छोटे-छोटे सफेद कंकड मिलाकर बेचता है। इजीनियर पुल बनाते समय सीमेंट की जगह बालू मिलाकर कमजोर पुल बना देता है। सरकारी कार्यालयो में आसानी से कार्य नहीं चलता। ऊपर के विवरणों से स्पष्ट है कि आज विश्व को जिन कठिनाईयों का सामना करना पड़ रहा है वे सब मूल्यों की क्षति के कारण ही हुआ है।

इस प्रकार आज समाज में चारों ओर नैतिक,

सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यो में गिरावट देखने को मिल रही है। इस गिरावट के फलस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में भी गिरावट देखने को मिलती है। इसके कारण अनुशासनहीनता, उदासीनता, अनुत्तरदायित्व आदि का जन्म हुआ है। अतः मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा के अभाव मे शिक्षा मे गुणात्मक सुधार की आशा एक मृग मरीचिका ही सिद्ध होगी।

परिहार/उपचार

उपर्युक्त क्षति का नाश अनिवार्य है। अतः बच्चों में मूल्य परक शिक्षा का प्रभाव होना चाहिए। हमारा देश भारत महान है। आर्षभारत है, जगद्गुरु भारत है। यहा की सांस्कृतिक संपत्ति ने दुनिया में ज्ञान का प्रकाश फैलाया है। अब दुनिया के वरिष्ठ देशों का मुख हमारी ओर मुड़ा है। फिर भी हम अपनी सस्कृति और परंपरा से अनभिज्ञ रहते हैं। कस्तूरी की सुगंध का स्रोत जाने बिना कस्तूरी की खोज में फिरने वाले कस्तुरी मृग के समान हो गए है भारतवासी! लेकिन हमारे बच्चे इससे वंचित न हो पाएं। इस विचार से हमारी पाठ्य पद्धति में अवश्य मूल्यों को पर्याप्त स्थान देना चाहिए।

बच्चों में राष्ट्रीय एकता की भावना बढ़ाने में, हिंसा, अंधविश्वास व भाग्यवाद को समाहित करने मे यह सहायक बनेगी। इसके जरिए बच्चों मे आत्मसम्मान बढ़ेगा। 'स्वय' का परिचय मिलेगा और भारत का भविष्य उज्ज्वल रहेगा। ❑❑

अध्यापक
गर्वनमेंट मॉडल बी.एच.एस. स्कूल
चलाय, तिरुवनंतपुरम, केरल

प्राथमिक शिक्षक में समेकित तकनीकी का महत्व

□ एस. शमीम

ब्रिक एशबे (1967) की दृष्टि मे "अध्यापन में समेकित तकनीकी का बड़ा महत्व है। फुइन (1970) ने जोर देकर कहा था कि "बाल केन्द्रिक शिक्षा सीखने वाले को तकनीकी मदद" उसे अनेक इन्द्रियां देती है।

लक्ष्य का उद्देश्य

- □ भाषाई कुशलता की साधना में सुधार करना।
- □ बच्चों को गुणात्मक शिक्षा प्राप्त करने की प्रेरणा देना।

इन तकनीकी सामग्रियों के उपयोग से बच्चे भाषाई कुशलता और चित्र बनाने की अधिकतम कुशलता प्राप्त करते हैं। सारे बच्चे तकनीकी सामग्रियों का इस्तेमाल करना बहुत पसद करते हैं।

बाल केन्द्रिक शिक्षा सीखना– एक आनंददायक क्रिया के लिए अनेक रुचिपूर्ण क्रियाओ का गठन कर सकते हैं।

- □ Story telling — कहानी सुनाना।
- □ Picture caros$ — चित्र के कार्ड।
- □ Coloured alphabets — रंगीले अक्षर।
- □ Word card — अक्षर के कार्ड।
- □ Songs cassettes — गीत केसेट।
- □ Toys — खिलौने।
- □ Narration of events — घटनाओं का उल्लेख।
- □ Peer group discussion — संख समूह चर्चा।
- □ Word game — पद बंध खेल।
- □ Caros$ with division of alphabets — अक्षर विभाजन कार्ड।
- □ Preparation of woros$ with one unit — एक घटक के रूप मे शब्द।
- □ Drama — नाटक।
- □ Dialogue audio cassette — संवाद ऑडियो केसेट।
- □ Question-answer — प्रश्न-उत्तर।
- □ Quiz Competitions — क्विज स्पर्धाएं।
- □ Riddles — पहेलिया।
- □ Picture dictionary — चित्रकोश।
- □ Compact disc — संहत डिस्क।
- □ Motion pictures — चलचित्र।
- □ Providing real life experiences — जीवन का सीधा व्यवहार ज्ञान देना।

छात्र को भाषाई कुशलता की साधना में सुधार करना महत्वपूर्ण है। तकनीकी सामग्रियों से छात्र भाषाई कुशलता को अधिक प्राप्त करते हैं। इसके सम्बन्ध में एडगर डेल (1969) ने 'सीखने का व्यवहार ज्ञान के शंकु' का विश्लेषण किया गया है और प्राथमिक शिक्षक में तकनीकी समेकित का महत्व समर्पित किया गया है।

इन तकनीकी सामग्रियों के उपयोग से कक्षा अध्यापन में बाहर के अनुभव असली रूप से मिलते हैं। अनेक सीखने का अनुभव भी दे सकते हैं।

एडगर डेल (1969) ने सीखने का व्यवहार ज्ञान के शंकु के रूप में विद्यमान किया है। तकनीकी सामग्रियों का उपयोग छात्र के सीखने के आचरण का महत्व परिवर्तन देती है। सीखने में नयापन, विविधता भी देता है। बालक के मन मे हमेशा कुछ नया करने की ललक होती है। 'सीखने का अनुभव शंकु' में सब से ऊंचा बिन्दु कम व्यवहार ज्ञान देता है। आधार के बिन्दु सीधा, मूर्त अनुभव देते हैं। उचित रूप से योजनाबद्ध तैयार किया हुआ कार्यक्रम अध्यापक की सहायता से सीखने के स्तर में

असरदार सहायता करता है।

एडगर डेल ने सीखने की तीन रीति बताई हैं–

अधिनियम बनाने का अनुभव

अधिनियम काम जो प्रत्यक्ष करने से अनुभव मिलता है। उदाहरण– एक बालक को अनार खाने के अनुभव से अनार की शक्ल, बीज की रुचि, पहला अनुभव होता है।

प्रतिभा मूर्ति का अनुभव

जो ज्ञान चित्र देखने से प्राप्त होता है, इस अनुभव को प्रतिभा अनुभव कहते हैं। उदाहरण के लिए एक बालक को अनार का चित्र देखने का अनुभव, चित्र देखने से 'अनार' का विशिष्ट, रूप गठन, लासा, स्वाद, गन्ध की मानसिक मान्यता प्राप्त कर लेता है।

प्रतीकात्मक अनुभव

तीसरी रीति में बालक एक शब्द को पढ़ता है और उसका अर्थ विशिष्ट आकृति की मानसिक मान्यता प्राप्त कर लेता है। उदाहरण के लिए बालक 'अनार शब्द पढ़कर उसकी विशिष्ट आकृति की मान्यता प्राप्त कर लेना।

एडगर डेल की 'सीखने का व्यवहार ज्ञान का शंकु'

एडगर डेल का 'सीखने की व्यवहार ज्ञान का शंकु' Edgar Dale's 'Cone of learning experiences'

Verbal Symbols — अक्षरशः लक्षण
Visual Symbols — दर्शन लक्षण
Recordings Radio still pictures — प्रामाणिक वर्णन रेडियो
Motion pictures — गति चलचित्र
Educational Television — शैक्षिक दूरदर्शन
Exhibits — प्रकाशित करना
Study trips — अध्ययन फेरा
Demonstrations — सार्वजनिक प्रदर्शन
Dramatised Experiences नाटक से उपस्थित करने का अनुभव
Contrived Experiences आविष्कार करने का अनुभव
Direct purposeful experiences सीधा उद्देश्य कार्य का अनुभव

प्राइमरी शिक्षक

र्ष · 27 | अक : 3 | जुलाई 2002

इस अंक में

शिक्षकों ने लिखा है

वेचार

संपादक की कलम से

प्रायः यह सुनने को मिलता है कि टेलीविजन की रंगीनी से पठन-माध्यम पर कुप्रभाव पडा है। लेकिन सच यह है कि पठन-माध्यम की शक्ति और सार्थकता का महत्व कभी कम न होगा। विद्यार्थियों में पठन-रुचि पैदा करके पठन माध्यम को विद्या प्राप्ति का प्रभावी साधन बनाया जाता है। वस्तुतः पुस्तकों की उपयोगिता कभी कम न होगी। मुझे एक साधु की नीति कथा याद आ रही है। एक मां अपने बेटे को उसके पास लेकर आई। उसने कहा महात्मा जी, मेरा बेटा गुड़ बहुत खाता है। इसने अपने दांत भी खराब कर लिए है। साधु ने उस महिला से कहा देवी, आप कल इस लड़के को लेकर आना उसने ऐसा ही किया।
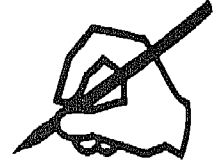
महात्मा ने उस दिन उस लडके से सप्रेम गुड छोड़ देने को कहा और उसने गुड खाना छोड़ दिया। उनके एक शिष्य ने पूछा– गुरु जी, आपने कल ही इसे गुड़ खाने से मना क्यों नही किया। वे बोले कल तक मैं भी गुड खाता था। मैने गुड़ खाना छोड़ दिया अब अधिकारपूर्वक कह सकता हूं। मुझे सोच मिली कि मैं स्वयं पठन-रुचि रखता हूं, पुस्तकों से प्रकाश प्राप्त करता हूं तो छात्रो को पठन-प्रेमी बना सकता हूं।

शिक्षकों का प्रमुख कार्य बच्चो के व्यक्तित्व का सर्वागीण विकास करना होता है। अतः सीखने-सिखाने के कार्यो में अध्यापन कला, शिक्षण-क्षमता और शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए प्रतिबद्धता अपेक्षित है। प्राइमरी शिक्षक राष्ट्र के अध्यापक-अध्यापिकाओं को व्यावसायिक योग्यता के लिए तरोताजा विषयों पर ज्ञानवर्द्धक और उपयोगी सामग्री प्रस्तुत करता है। इस क्षेत्र में गणित शिक्षण, कम्प्यूटर सहायक शिक्षण, विद्यार्थियों के लिए प्राणायाम का बहुआयामी महत्व, प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों के नियंत्रण केन्द्र एवं मूल्यांकन का तुलनात्मक अध्ययन, जनजाति क्षेत्र मे शिक्षा, दशा, दिशा और दिग्दर्शन, शिक्षकों से जुड़े संदर्भ और विवरण की पठनीय सामग्री संकलित की गई है।

आशा है इस उपयोगी सामग्री का शिक्षण मे अनुप्रयोग किया जाएगा।

□□

खेल-खेल में गणित सीखें

❐ फतह सिंह गुप्ता

मैं अपने 83 वर्षो के अनुभव के आधार पर स्कूली बच्चों के लिए ऐसी कुछ समस्याएं उनके सामने रखना चाहता हू जो उनके हर रोज के जीवन मे काम आती हैं, इनकी मदद से उनमें सोचने की शक्ति का विकास होगा। हमारे समय मे हमारे उस्ताद साहिबान हमें इसी प्रकार की दैनिक जीवन की समस्याएं देकर हमारा ज्ञानवर्धन करते थे और हम खेल-खेल में गणित की कठिन से कठिन समस्या को हल कर लेते थे, आपस में सलाह-मशविरा करके। मै देख रहा हूं कि आजकल बच्चे न ही तो पहाडे याद करते है और न ही दैनिक जीवन की समस्याओ से सबंधित सवाल हल करने की कोशिश करते है। जब हम लोग घर में इकट्ठे बैठते है तो मैं अपने लड़को, लड़कियों और पोते-पोतियो को गणित के ऐसे सवाल हल करने को देता हूं जो दिलचस्प तो होते ही है साथ-साथ इनकी मदद से उनका दिमाग भी बढ़ता है। जब मैं अपने बेटे से मिलने भोपाल/अजमेर की यात्रा करता हूं तो रेल में बैठे मुसाफिरो को हर रोज की दिनचर्या से सबधित सवाल बोल देता हूं जिससे मुसाफिरो का सफर तो हंसते-बोलते कट ही जाता है परन्तु इसके साथ-साथ उनका दिमाग भी बढता है। मैं अपने अनुभवो को आज के शिक्षकों के साथ भी बांटता आया हूं। मेरी आज के शिक्षक वर्ग और छात्र-छात्राओं से यही प्रार्थना है कि वे गणित जैसे रोचक विषय को बोझ न समझे, इसे नीरस न बनाए बल्कि इसे बच्चों के दैनिक जीवन, उनकी हर रोज की समस्याओं के साथ जोड़ने की कोशिश करें जिससे बच्चे इस विषय मे रुचि लें और उनका दिमाग भी वढ़े। हमारे गणित का इतिहास बहुत पुराना है। शून्य का ज्ञान हम ही ने विश्व को दिया है। भारतीयों का गणित अच्छा होने के कारण ही आज हमारा पूरे विश्व में नाम है परन्तु धीरे-धीरे मैं देख रहा हूं कि बच्चे खासतौर से लडकियां गणित जैसे रोचक विषय से मुह मोड़ रही हैं। इसलिए इसे और रोचक बनाने की आवश्यकता है और वह भी प्राथमिक स्तर से। बच्चो को 20 तक के पहाड़े तो याद करने ही चाहिए जिससे हम अपने दैनिक जीवन के गुणा-भाग के प्रश्नों के लिए कैल्कुलेटर का इस्तेमाल न करके मौखिक रूप से कम समय मे हल कर सकें। मै अपने अन्तिम समय में अपने अनुभवो को अपने साथ न ले जाकर देश के बच्चो के साथ बाटना चाहता हू। इस कार्य के लिए मैने पत्रिका प्राइमरी शिक्षक को चुना है। इस अंक में मैने ग्रामीण परिवेश के प्राथमिक स्तर के बालको/बालिकाओं के लिए उनके आंगन/खेतो/पर्यावरण से सबधित दस प्रश्न दिए हैं। बच्चो के अतिरिक्त उनके बडे भाई-बहन और उनके माता-पिता भी अपना दिमाग लगा सकते है। इन दस प्रश्नों के सचित्र हल इसी अक में दिए गए हैं।

हमारे गणित का इतिहास बहुत पुराना है। शून्य का ज्ञान हम ने ही विश्व को दिया है। भारतीयों का गणित अच्छा होने के कारण ही आज हमारा पूरे विश्व में नाम है,परन्तु धीरे-धीरे मैं देख रहा हूं कि बच्चे खासतौर से लड़कियां गणित जैसे रोचक विषय से मुंह मोड़ रही हैं। इसलिए इसे और रोचक बनाने की आवश्यकता है और वह भी प्राथमिक स्तर से। बच्चों को 20 तक के पहाड़े तो याद करने ही चाहिए जिससे हम अपने दैनिक जीवन के गुणा-भाग के प्रश्नों के लिए कैल्कुलेटर का इस्तेमाल न करके मौखिक रूप से कम समय में हल कर सकें।

प्रश्न 1. तीन पौधे तीन कतारों मे इस प्रकार लगाइए कि हर कतार में दो पौधे रहें।

प्रश्न 2. चार पौधो को छः कतारों मे इस प्रकार लगाइए

कि हर कतार मे दो पौधे रहें।

प्रश्न 3. सात पौधों को छः कतारों में इस प्रकार लगाइए कि हर कतार में तीन पौधे रहें।

प्रश्न 4. 25 पौधों को बारह कतारों मे इस प्रकार लगाइए कि हर कतार में 5 पौधे रहें।

प्रश्न 5. एक समान अन्तर पर तीन कतारों में तीन-तीन पौधे लगे हुए हैं जिन पर क्रमश. 1, 2, 3, ... 9 तक के अक लिखे हुए हैं। इन 9 पौधों को बिना पैन्सिल उठाए केवल चार रेखाएं खींच कर परस्पर मिलाइए।

प्रश्न 6. पांच कतारो में दस पौधे इस प्रकार लगाइए कि हर कतार में चार पौधे आ जाएं।

प्रश्न 7. एक दुकानदार को 1 से 40 किलोग्राम तक का सामान तोलना है। वह किस-किस वजन के चार बाट बनाए जिनकी मदद से वह 1 से 40 किलोग्राम तक की वस्तुएं तोल सके।

प्रश्न 8. 100 रुपयों को आप सात बटुओ में इस प्रकार रखो कि जो आदमी जितने रूपए मांगे आप उसे उतनी रकम बिना बटुआ खोले केवल बटुए उठाकर दे सकें।

प्रश्न 9. एक पेड़ पर बहुत सारी चिड़िया बैठी थी। दो दोस्त पेड़ के नीचे से गुजर रहे थे तो एक दोस्त ने ऊपर नजर डालकर दूसरे दोस्त से कहा कि ये चिड़िया 100 होंगी। यह सूनकर एक चिड़िया बोली—नही, हम 100 नही हैं। जितनी हम हैं, उतनी ही चिड़िया और आ जाए फिर उनकी आधी आ जाएं, फिर आधी की आधी आ जाए और फिर एक चिड़िया और आ जाए तो हम 100 चिड़िया हो जाएंगी। बताइए पेड़ पर कितनी चिडिया बैठी है।

प्रश्न 10. राशन की दुकान पर इन्सपैक्टर आ गया और उसने दुकान के मालिक से पूछा कि आपकी दुकान मे कितनी बोरी गेहूं है? दुकानदार ने कहा कि हिसाब मुनीमजी के पास है। हां मुझे एक बात मालूम है कि यदि हम बोरियों को 2-2, 3-3, 4-4, 5-5, 6-6 की ढेरियों में लगाते हैं तो हर बार एक बोरी बच जाती है परन्तु 7-7, की ढेरी बनाने पर कोई बोरी नहीं बचती। बताइए दुकान मे कितनी बोरिया हैं?

इन प्रश्नों के हल

प्रश्न 1. तीन पौधे तीन कतारो में इस प्रकार लगाइए कि हर कतार में दो पौधे रहे।

हल— यदि तीन कतारे अलग-अलग होतीं तो तीन कतारों में 6 पौधे चाहिए। हमारे पास पौधे केवल तीन ही हैं इसका अर्थ हुआ कि कतारे आपस में मिली होंगी ताकि एक पौधा दो कतारों मे साझा हो सके। यदि तीन कतारो को आपस में चित्र 1 के अनुसार मिलाया जाता है तो भी पौधे चार चाहिए। परन्तु हमारे पास तो तीन ही पौधे हैं। यह तभी सभव है जब हम तीसरी कतार के बिन्दु स, द को इस प्रकार उठाए कि द बिन्दु अ के ऊपर आ जाए। यह बन गई एक त्रिभुज अ ब स की आकृति जैसा चित्र 2 में दर्शाया गया है। अब देखिए आपके पास तीन कतारें हैं और तीन ही पौधे हैं परन्तु हर कतार में दो पौधे है।
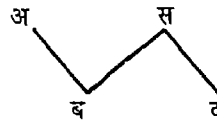
चित्र 1 (तीन कतारें, चार पौधे)
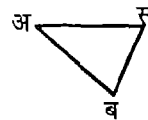
चित्र 2 (तीन कतारें, तीन पौधे और हर कतार में दो पौधे)

प्रश्न 2. चार पौधों को छः कतारों में इस प्रकार लगाइए कि हर कतार मे दो पौधे रहें।

हल— इस बार कतारों की संख्या 3 और बढ़ गई है परन्तु पौधों की संख्या उस अनुपात में नहीं बढ़ी है जिस अनुपात में कतारों की संख्या बढ़ी है। इसलिए एक पौधा दो से अधिक कतारो में साझा होगा। यह

है जब हम एक पौधा त्रिभुज की आकृति
े स्थान मे लगाएं जैसा नीचे चित्र मे दर्शाया
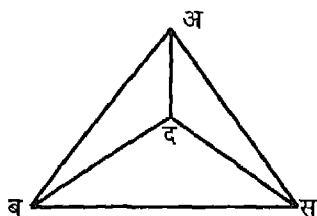
(छः कतारें, चार पौधे और हर कतार में तीन पौधे)

ात पौधों को छः कतारों में इस प्रकार लगाइए
ार में तीन पौधे रहें।

2 की तुलना में कतारों की संख्या तो छः
पौधे तीन बढ़ गए हैं क्योकि कतारों की
बढ़नी है इसलिए नई कतारें तो नही बनेंगी।
लम्बाई तो बढ़ सकती है इसलिए यदि हम
मिलने वाली कतारो को विपरीत दिशा में
ओर बढ़ाए तो कतार अ, द कतार ब स
पर काटेगी जहां पर हम पाचवा पौधा और
हैं। इस प्रकार कतार अ, द, य में बिन्दु
र तीन पौधे लगाए जा सकते हैं। इसी प्रकार
को आगे बढ़ाने पर यह कतार अपने सामने
र अ स को बिन्दु ल पर काटेगी जहा पर
ौधा और लगा सकते हैं। इसी प्रकार कतार
ागे बढ़ाने पर यह कतार अपने सामने वाली
को बिन्दु र पर काटेगी जहां पर हम सातवां
सकते है। इस प्रकार द पर मिलने वाली
उनके विपरीत दिशा वाली कतार की ओर
नए बिन्दु य, र, ल प्राप्त होंगे जहां पर तीन
लगाए जा सकते हैं। कतारों की संख्या छः
रन्तु उनकी लम्बाई बढ़ जाएगी। हर कतार
धे होगे। इस प्रकार हम छ· कतारों में सात
पौधे लगा सकते है और हर कतार में पौधे होंगे तीन
जैसा कि नीचे चित्र में दर्शाया गया है।
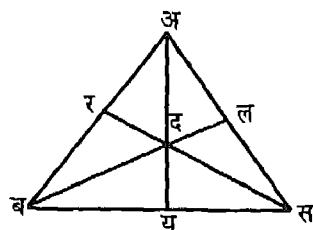
चित्र 4 (छः कतारें, सात पौधे और हर कतार में तीन पौधे)

प्रश्न 4. 25 पौधों को बारह कतारों में इस प्रकार लगाइए कि हर कतार में 5 पौधे रहें।

हल— पांच कतारें खड़ी और पांच कतारें पड़ी समान अन्तर पर इस प्रकार खीचिए कि ये कतारें एक ग्रिड का रूप ले लें। इन कतारो के परस्पर काटने वाले स्थान पर एक-एक पौधा लगा दीजिए। इस प्रकार 25 पौधे लग जाएगे और 10 कतारें बन जाएगी। इस ग्रिड के विपरीत शीर्ष बिन्दुओं अ और स को तथा ब और द को रेखाएं खींचकर परस्पर मिलाइए। अब आप पाएंगे कतारो की बारह संख्याएं और हर कतार में होंगे 5 पौधे। इस प्रकार 25 पौधों को आप 12 कतारो में लगा पाएंगे जैसा कि नीचे चित्र में दर्शाया गया है।
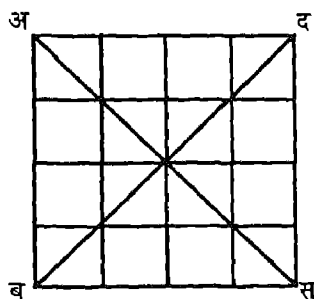
चित्र 5 (25 पौधे, 12 कतारें और हर कतार में 5 पौधे)

प्रश्न 5. एक समान अन्तर पर तीन कतारों मे तीन-तीन पौधे लगे हुए हैं जिन पर क्रमश: 1,2, 3, ... 9 तक के अंक लिखे हुए हैं। इन 9 पौधों को बिना पैन्सिल उठाए केवल चार रेखाएं खीच कर परस्पर मिलाइए।

1	2	3
4	5	6
7	8	9
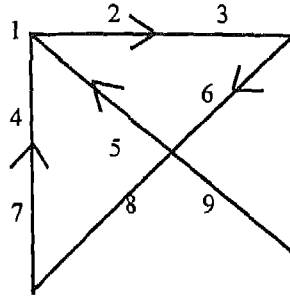
हल– अधिकतर बच्चे इन 9 पौधो को नीचे दर्शायी गई विधि से मिलाने का प्रयास करेगे परन्तु ऐसा करने में रेखाएं हो जाएंगी पांच और आपको कलम भी उठानी नही पड़ेगी।
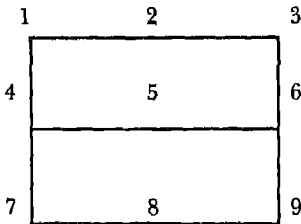
तो क्या करे? जरा सोचिए? आप पौधे क्रमांक 9 से प्रारम्भ करे। पौधे क्रमाक 9, 5, 1, 2, 3 को मिलाते हुए पौधे क्रमांक 3 से इतना आगे बढ़िए ताकि बिन्दु अ से खींची गई रेखा पौधे क्रमांक 6 और 8 को मिलाती हुई आगे निकल जाए पौधे क्रमांक 7 के बिल्कुल नीचे बिन्दु ब तक। अब बिन्दु ब से चौथी रेखा पौधे क्रमाक 7, 4, 1 को मिलाते हुए खीचिए जैसा चित्र 6 मे दर्शाया गया है। इस प्रकार हमने केवल चार रेखाएं खींचकर 9 पौधों को परस्पर मिला दिया।

प्रश्न 6. पांच कतारो में दस पौधें इस प्रकार लगाइए कि हर कतार में चार पौधे आ जाएं।

हल– एक कतार में चार पौधों के हिसाब से पांच कतारो

चित्र 6 (नौ पौधों को चार रेखाओं से मिलाते हुए)

में 20 पौधे चाहिए परन्तु हमारे पास केवल 10 ही पौधे है। इसलिए स्वाभाविक है कि हर कतार में कुछ पौधे साझे होंगे और कतारें भी अलग-अलग न होकर एक-दूसरे से मिली होंगी। दिमाग लगाइए। आप सही है यदि आप चित्र क्रमांक 7 के अनुसार पौधे लगाते है और यह आकृति हो जाएगी एक पाच कोनों वाले सितारे की। आप ध्यान से देखिए कि हर कतार मे चार पौधे हैं।
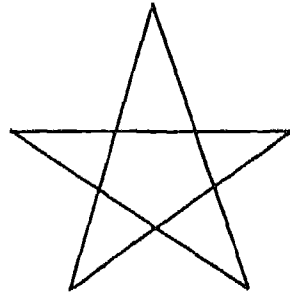
चित्र 7 (पांच कतारें, दस पौधे और हर कतार में चार पौधे)

प्रश्न 7. एक दुकानदार को 1 से 40 किलोग्राम तक का सामान तोलना है। वह किस-किस वजन के चार बाट बनाए जिनकी मदद से वह 1 से 40 किलोग्राम तक की वस्तुए तोल सके?

हल– कम से कम 1 किलोग्राम तोलने के लिए उसके पास 1 किलोग्राम का बाट तो होना ही चाहिए। फिर 3 किलोग्राम का बाट चाहिए जिससे 1 किलोग्राम का बाट तुला में आगे पीछे लगाकर वह 2, 3 और 4 किलोग्राम तक का सामान तोल सकता है। अब एक ऐसा बाट चाहिए जिसकी मदद से 1 और 3 किलो के बाट लगाकर 5 किलोग्राम सामान तोला जा सके तो वह बाट होगा 9 किलोग्राम का (9-3-1)। अब देखिए 1, 3 और 9 किलो के बाटों की मदद से 1 से 13 किलोग्राम तक का सामान तोला जा सकता है। अब 14 किलो सामान तोलने के लिए उसे चाहिए 13 + 14 अर्थात् 27 किलो का बाट। तो इस प्रकार बाट हुए 1, 3, 9 और 27 किलो के।

इसे हम इस प्रकार भी हल कर सकते हैं–

पहला बाट 1 किलोग्राम

दूसरा बाट 1+2 = 3 किलोग्राम

तीसरा बाट 1+3+5 (1 और 3 के योग से अगला अंक अर्थात् 5 और उसका पहले बांटों में जोड़)

9 किलोग्राम

चौथा बाट 1, 3, 9, 27 (1, 3, 9 के योग से अगला अंक और उसका पहले बाटों मे जोड़)

अर्थात् (1, 1×3, 1×3×3, 1×3×3×3) अर्थात् (1, 3, 9 और 27 किलोग्राम के बाट)

उत्तर– 1, 3, 9, 27 किलोग्राम।

इस प्रश्न को हम आगे भी बढ़ा सकते हैं। अब अगला बाट होना चाहिए 1×3×3×3×3, का अर्थात् 81 किलोग्राम का या 1+3+9+27 = 40+41 = 81 या 27×3 किलोग्राम का। इस प्रकार 1, 3, 9, 27, 81 किलोग्राम के पांच बांटों से 1+3+9+27+81 = 121 किलोग्राम तक का सामान तोला जा सकता है। बताइए अब अगला बाट किसका होगा? आप सही हैं यदि आपने सोचा है 81×3 = 243 या 1×3×3×3×3×3, किलोग्राम का बाट। इस प्रकार आप इस प्रश्न को और भी आगे बढ़ा सकते है।

40+81=121 किलोग्राम के लिए पांच बाट 1, 3, 9, 27 और 81 किलोग्राम

121+243 = 364 किलोग्राम के लिए छः बाट 1, 3, 9, 27, 81 और 243 किलोग्राम।

प्रश्न 8. *100 रुपयो को आप सात बटुओं में इस प्रकार रखिए कि जो आदमी जितने रुपए मागे आप उसे उतनी रकम बिना बटुआ खोले केवल बटुए उठाकर दे सके।*

हल– एक बटुए मे आप केवल 1 रु. का सिक्का/नोट रख दीजिए। दूसरे बटुए में 2 रु रखने होंगे। इस प्रकार आप 1, 2, 3 रु. दे सकते हैं। अब तीसरे बटुए में आपको 4 रु. रखने होगे। 1, 2, 4 रु. वाले बटुओ की सहायता से आप 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7 रु. दे सकते हैं। 8 रु. देने के लिए आपको चौथे बटुए में 8 रु. के सिक्के या नोट रखने होगे जिसकी मदद से आप 1 से 15 रु. तक दे सकते है। 16 रु देने के लिए आपको पांचवे बटुए में 16 रु. के सिक्के /नोट रखने होंगे। इन पांच बटुओ मे रखे रुपयो की मदद से आप 31 रु. तक दे सकते हैं। अब छटे बटुए मे आपको 32 रु. रखने होंगे जिसकी मदद से आप 63 रु. तक दे सकते हैं। सातवें बटुए मे 100-63 अर्थात् 37 रु. रख दीजिए। इस प्रकार आप सात बटुओ में रखे हुए 1, 2, 4, 8, 16, 32 और 37 रु. की मदद से बिना बटुआ खोले 1 रु. से लेकर 100 रुपए तक दे सकते हैं।

100 रुपए के सात बटुए
1, 2, 4, 8, 16, 32, 37

यदि हम उत्तर पर नजर डालें तो पता चलता है कि आखिरी बटुए को छोड़कर शेष छः बटुओं में रुपयों की संख्या दुगुनी होती गई है।

अब आप 200 रु. तक के आठ बटुए इसी प्रकार से तैयार कीजिए। आप सही हैं यदि आपने 1, 2, 4, 8, 16, 32, 64, 73 (200-1 से 64 रु. तक के बटुओ की संख्या का योग अर्थात् 200-127) के बटुए तैयार किए हैं।

200 रुपए के आठ बटुए
1, 2, 4, 8, 16, 32, 64, 73

इसी प्रकार आप 300 रु. के नौ बटुए तैयार कीजिए।

प्रश्न 9. एक पेड़ पर बहुत सारी चिड़िया बैठी थीं। दो दोस्त पेड़ के नीचे से गुजर रहे थे तो एक दोस्त ने ऊपर नजर डालकर दूसरे दोस्त से कहा कि ये चिड़िया 100 होंगी। यह सुनकर एक चिड़िया बोली—नहीं, हम 100 नहीं हैं। जितनी हम है, उतनी ही चिड़िया और आ जाए फिर उनकी आधी आ जाए, फिर आधी की आधी आ जाए और फिर एक चिड़िया और आ जाए तो हम 100 चिड़िया हो जाएंगी। बताइए पेड़ पर कितनी चिड़िया बैठी हैं।

हल— इस सवाल को हल करने के लिए हमें मानकर चलना होगा। मान लीजिए पेड़ पर क चिडिया बैठी हैं तो प्रश्न के अनुसार क चिड़िया और आ जाएं, फिर क/2 आ जाएं और फिर क/4 आ जाएं और फिर 1 आ जाए तो इन सबका योग 100 होगा। इसे नीचे दी गई समीकरण द्वारा प्रदर्शित किया जा सकता है—

क + क + क/2 + क/4 + 1 = 100........(1)

अब 2 और 4 के पहाड़ों में कम से कम साझी संख्या हुई 4.

समीकरण 1 को 4 से गुणा करने पर पूर्ण सख्याएं प्राप्त हो जाएंगी और समीकरण नीचे दिया गया रूप ले लेगी।

4क + 4क + 2क + क + 4 = 400

या 11क = 400-4 = 396

क = 36

इसीलिए पेड़ पर बैठी हुई चिड़ियाओ की संख्या 36 है।

प्रश्न 10. राशन की दुकान पर इन्सपैक्टर आ गया और उसने दुकान के मालिक से पूछा कि आपकी दुकान में कितनी बोरी गेहूं है? दुकानदार ने कहा कि हिसाब मुनीमजी के पास है। हां मुझे एक बात मालूम है कि यदि हम बोरियों को 2-2, 3-3, 4-4, 5-5, 6-6 की ढेरियों में लगाते है तो हर बार एक बोरी बच जाती है परन्तु 7-7 की ढेरी बनाने पर कोई बोरी नहीं बचती। बताइए दुकान में कितनी बोरियां है?

हल— इस प्रश्न को हल करने के लिए हमें लघुत्तम के सिद्धान्त को लगाना होगा अर्थात् 2, 3, 4, 5, 6 के पहाड़ों मे आने वाली छोटी से छोटी संख्या ज्ञात करनी होगी। वह होगी 60। 2. 3, 4, 5, 6 का लघुत्तम 60 आता है। अब 60 और उसके गुणनफल में 1 जमा करके 7 से भाग देते जाइए। जिस संख्या को 7 से भाग देने पर 1 न बचे, वह संख्या गोदाम में रखी हुई बोरियों की संख्या होगी।

60 × 1 + 1 % 7 पूरा भाग नहीं

60 × 2 + 1 % 7 पूरा भाग नहीं

60 × 3 + 1 % 7 पूरा भाग नहीं

60 × 4 + 1 % 7 पूरा भाग नहीं

60 × 5 + 1 % 7 पूरा भाग (300 + 1 = 301 ÷ 7 = 43)

इसलिए गोदाम मे गेहूं की बोरियों की संख्या 301 है।

प्रश्न 11. पाच परस्पर काटने वाली रेखाओं की मदद से आप एक पांच कोनों वाला सितारा बनाइए और इसमें कोनों और रेखाओ के परस्पर काटने वाले स्थानो पर क्रमशः 1 से 10 तक के अक लिखिए। आप किसी भी अक से शुरू कीजिए और तीसरे स्थान पर X का चिन्ह लगाइए। X के चिन्ह वाले स्थान के अतिरिक्त आप कहीं से भी फिर से आगे बढ़िए और X का चिन्ह लगाते रहिए। इस प्रकार आपको 10 अकों में से किन्हीं भी नौ अंकों पर X के चिन्ह लगाने हैं।

नोट— इसका उत्तर स्वयं हल करके देखिए।

□□

6/382, महावीर कालोनी
सोनीपत, हरियाणा

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण : एक अभिनव प्रयोग

❐ नौशाद हुसैन
❐ बीना शाह

शिक्षा का पर्याय है अधिगम अथवा सीखना तथा जिसका मुख्य उद्देश्य है छात्रों के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाना। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु एक अध्यापक अनेक प्रकार की शिक्षण विधियो तथा तकनीको का उपयोग करता है तथा कुछ बातो का विशेष ध्यान रखा जाता है, जैसे उपयुक्त विषय-सामग्री का चयन, अधिगम के लिए वातावरण का निर्माण, प्रभावशाली शिक्षण विधियो तथा प्रविधियों का प्रयोग आदि। कक्षा में शिक्षण कार्य करते समय प्रत्येक शिक्षक का प्रयास रहता है कि कक्षा के अधिकाश छात्र उसके द्वारा पढ़ाई गई शिक्षण सामग्री को समझ लें अर्थात् जिस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु शिक्षक शिक्षण कार्य कर रहा है उसमें वह पूर्ण रूप से सफल हो।

एक प्रभावशाली शिक्षक होने के उपरान्त भी एक शिक्षक के लिए विभिन्न क्षमता युक्त छात्रों के एक बड़े समूह वाली कक्षा में निम्न क्रियाओं को करना कठिन होता है—

- कक्षा के प्रत्येक छात्र को उसकी व्यक्तिगत आवश्यकतानुसार अधिगम सामग्री प्रदान करना।
- कक्षा के प्रत्येक छात्र को उसके सीखने की गति के अनुकूल विषय-सामग्री प्रदान करना।
- कक्षा के प्रत्येक छात्र को उस समय तक अधिगम सामग्री प्रदान करना, जब तक कि छात्र उस अधिगम सामग्री का अध्ययन करना चाहता है।
- कक्षा के प्रत्येक छात्र की अधिगम प्रक्रिया का सूक्ष्म निरीक्षण करना तथा उनकी व्यक्तिगत प्रगति का आलेख तैयार करना।
- छात्रों को उनकी व्यक्तिगत विभिन्नता के अनुकूल शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करना।
- शिक्षण के दौरान पाठ के प्रति छात्रों की रुचि को बनाए रखना तथा प्रत्येक चरण पर छात्रों को पृष्ठपोषण (Feedback) तथा पुनर्बलन (Reinforcement) प्रदान करना।

विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में तथा अनुप्रयोगों ने शिक्षा के क्षेत्र में "शैक्षिक तकनीकी" को जन्म दिया है। आज शिक्षा के क्षेत्र में चार्ट, मॉडल, प्रोजेक्टर के अलावा वीडियो फिल्म, रेडियो, टेलीविजन, कम्प्यूटर जैसे माध्यमों का प्रयोग किया जा रहा है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में गुणात्मक सुधार लाने के लिए उपरोक्त सभी माध्यमों में से कम्प्यूटर, सम्प्रेषण के साथ-साथ शिक्षण के क्षेत्र में भी सबसे अधिक सशक्त व शक्तिशाली माध्यम के रूप में स्थान बना चुका है।

परम्परागत शिक्षण में शिक्षक का ध्यान अपनी पाठ्य-वस्तु के प्रस्तुतीकरण पर अधिक होता है। पाठ को प्रस्तुत करने की प्रक्रिया में वह अध्ययन-अध्यापन के उद्देश्यो के अनुसार छात्र के व्यवहार में उद्देश्योन्मुख परिवर्तन लाने में संलग्न रहता है। कक्षा के प्रत्येक छात्र ने शिक्षक की बात को कितना समझ लिया है, इस बात का पता लगाना एक शिक्षक के लिए असम्भव नहीं पर अत्यन्त कठिन अवश्य है। परम्परागत शिक्षण, कक्षा के औसत विद्यार्थी के आधार पर किया जाता है। इस तरह के शिक्षण में धीमी गति से सीखने वाले विद्यार्थियों तथा साथ ही तेज गति से सीखने वाले विद्यार्थियो का ध्यान नहीं रखा जाता है। फलस्वरूप इन दोनों प्रकार के विद्यार्थियों के लिए शिक्षण अधिगम प्रक्रिया अरुचिकर बन जाती है। इस प्रकार की शिक्षण अधिगम व्यवस्था में एक शिक्षक

कक्षा की औसत बाधाओं का पता तो लगा सकता है परन्तु व्यक्तिगत कठिनाइयों को जानने मे वह असफल रहता है।

विज्ञान तथा तकनीकी के क्षेत्र में तीव्रता के साथ हो रहे परिवर्तनों ने शिक्षा के क्षेत्र मे बहुत क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिए है। विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में अनुप्रयोगो ने शिक्षा के क्षेत्र मे "शैक्षिक तकनीकी" को जन्म दिया है। आज शिक्षा के क्षेत्र में चार्ट, मॉडल, प्रोजेक्टर के अलावा वीडियो फिल्म, रेडियो, टेलीविजन, कम्प्यूटर जैसे माध्यमो का प्रयोग किया जा रहा है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में गुणात्मक सुधार लाने के लिए उपरोक्त सभी माध्यमो में से कम्प्यूटर, सम्प्रेषण के साथ-साथ शिक्षण के क्षेत्र मे भी सबसे अधिक सशक्त व शक्तिशाली माध्यम के रूप में स्थान बना चुका है।

टेलर (1981) के अनुसार "एक माइक्रो कम्प्यूटर एक निजी शिक्षक, एक माध्यम और छात्रो को एक अन्वेषक के रूप मे कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के साधन के रूप में कार्य कर सकता है।" जब कम्प्यूटर को एक ट्यूटर (निजी शिक्षक) की भाति प्रयोग किया जाता है तब कम्प्यूटर एक योग्य शिक्षक की तरह छात्रों को शिक्षण प्रदान कर सकता है। कम्प्यूटर का यह कार्य कम्प्यूटर सहायक शिक्षण (Computer Assisted Instruction : CAI) कहलाता है। जब कम्प्यूटर को एक टूल (सहायक) की तरह प्रयोग में लाया जाता है, तब यह छात्र को किसी कार्य को सम्पन्न करने मे मदद करता है।

कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी और व्यक्तिगत शिक्षण/अधिगम

व्यक्तिगत विभिन्नता के अनुकूल शिक्षण तथा अधिगम की बात हमेशा ही उठाई जाती रही है, परन्तु पूर्व अनुच्छेद से यह सुस्पष्ट है कि परम्परागत कक्षा मे बालक की वैयक्तिकता का ध्यान रखना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है किन्तु कम्प्यूटर प्रौद्योगिकी के उपयोग से व्यक्तिगत शिक्षण/अधिगम सम्भव है। अधिगमकर्ता अपनी सुविधानुसार शिक्षण सामग्री, अधिगम-क्रम, समय आदि का चुनाव कर सकता है। कम्प्यूटर एक ऐसा वातावरण प्रदान करता है जिसमे अधिगमकर्ता अपनी व्यक्तिगत क्षमताओं का उचित प्रयोग करते हुए नई शिक्षण-सामग्री पर अपनी पकड़ बना सकता है। शोधों के परिणामो से यह स्पष्ट हो चुका है कि कम्प्यूटर सहायक शिक्षण (Computer Assisted Instruction) बालको की शैक्षिक उपलब्धि को बढाता है। इस प्रकार के शिक्षण में छात्रों की पाठ के प्रति रुचि प्रारम्भ से लेकर अन्त तक बनी रहती है तथा प्राप्त किया गया ज्ञान अधिक सार्थक तथा स्थाई होता है। शिक्षक प्रत्येक विद्यार्थी की अधिगम प्रक्रिया का सूक्ष्म निरीक्षण कर सकता है तथा भविष्य के लिए उनका व्यक्तिगत अभिलेख सुरक्षित रख सकता है। छात्रो की शैक्षिक समस्याओ का निदान करके उनका उपचार सम्भव है। शिक्षक छात्रों की व्यक्तिगत उपलब्धियों को ध्यान मे रखते हुए उनको शैक्षिक तथा व्यावसायिक निर्देशन प्रदान कर सकता है। हम यहां कम्प्यूटर सहायक शिक्षण पर विस्तार से चर्चा कर रहे हैं—

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण— जब कम्प्यूटर की सहायता से छात्रो को अनुदेशन प्रदान किया जाता है, तब इस प्रक्रिया को कम्प्यूटर सहायक शिक्षण कहते हैं। इस विधि में कम्प्यूटर तथा अधिगमकर्ता के मध्य परस्पर अन्तःप्रक्रिया होती है। कम्प्यूटर छात्रों के समक्ष छोटे-छोटे पदों के रूप में शिक्षण-सामग्री प्रदान करता है। छात्र इन पदों को अपनी सुविधानुसार पढ़कर अपनी अनुक्रिया देते हैं, जिनका विश्लेषण कम्प्यूटर द्वारा किया जाता है। कम्प्यूटर छात्रों को प्रत्येक चरण पर तुरन्त पृष्ठ पोषण तथा पुनर्बलन भी प्रदान करता है।

स्पिलटगर्बर (1979) ने कम्प्यूटर सहायक शिक्षण की परिभाषा निम्न शब्दों मे की है, "कम्प्यूटर सहायक शिक्षण, शिक्षण की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमे प्रत्येक विद्यार्थी को शिक्षण सामग्री प्रदान करने के लिए तथा उनके व्यक्तिगत अधिगम को नियत्रित करने के लिए कम्प्यूटर का प्रयोग किया जाता है।"

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण की विशेषताएं

इस प्रकार के शिक्षण में किसी भी पाठ्य-बिन्दु को तब तक बार-बार दोहराया जा सकता है जब तक वह छात्रो द्वारा आत्मसात् न कर लिया जाए।

- कम्प्यूटर सहायक शिक्षण में छात्र के कमजोर अंशो पर समुचित ध्यान दिया जाता है तथा इसके सुधार के लिए पर्याप्त अभ्यास के अवसर प्रदान किए जाते हैं।
- कम्प्यूटर पूर्वाग्रहों से रहित होता है अतः छात्र/छात्राओ की जाति, लिंग, वर्ग आदि का उस पर कोई प्रभाव नही पड़ता है।
- कम्प्यूटर अधिगमकर्ता को तुरन्त पृष्ठ पोषण तथा पुनर्बलन प्रदान करता है।
- प्राथमिक शिक्षा से लेकर विश्वविद्यालयी शिक्षा तक इसका प्रयोग शिक्षण प्रदान करने में किया जा सकता है।
- कम्प्यूटर के निर्देशन में विद्यार्थी अपने पाठ के विकास के साथ-साथ अपने सीखने की उपयुक्त गति बनाए रख सकता है।
- स्व-शिक्षण और अध्यापक नियंत्रित शिक्षण दोनो में ही इस प्रकार के शिक्षण की असीमित सम्भावनाए हैं।
- जो छात्र संकोच या भय के कारण सामान्य कक्षा में उत्तर नहीं दे पाते है उनके लिए तथा विशेष आवश्यकता वाले अधिगमकर्ताओं के लिए इस प्रकार का शिक्षण बहुत ही लाभकारी है।

कम्प्यूटर द्वारा कैसे शिक्षा प्रदान की जाती है?

कम्प्यूटर के माध्यम से व्यक्तिगत अधिगम या सामुहिक अधिगम भी सम्भव है। सामुहिक अधिगम के लिए प्रत्येक छात्र का सीधा सम्बन्ध कम्प्यूटर के हैडफोन, ध्वनि-लेख-यन्त्र (टेपरिकॉर्डर) और कुंजी पटल से कर दिया जाता है। सर्वप्रथम पाठ्य-वस्तु को लघु इकाइयों में विभाजित कर अधिक्रम के रूप में संगणक के रूप में भर देते हैं। इस शिक्षण प्रक्रिया में छोटे-छोटे पदों के रूप में पाठ्य-वस्तु को छात्रो के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है अथवा पद को ठीक से समझने के लिए आन्तरिक सामग्री पढ़ने के लिए दी जाती है। प्रत्येक छात्र इन पदों को ध्यानपूर्वक पढता है तथा इन पर आधारित प्रश्नो के उत्तर देने का प्रयास करता है। प्रश्न का सही उत्तर देने पर छात्र को तुरन्त पुनर्बलन प्रदान किया जाता है तथा दूसरा पद पढ़ने के लिए दिया जाता है। सही उत्तर प्राप्त न होने की स्थिति मे पुन. छात्र को वही पद पढने को दिया जाता है अथवा पद को ठीक से समझने के लिए अतिरिक्त सामग्री पढने के लिए दी जाती है। तत्पश्चात् उसे प्रश्न का उत्तर देना पड़ता है। कम्प्यूटर कक्षा मे प्रदान किए गए शिक्षण का अभिलेख भी रखता है। इसका सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि किसी पाठ के मध्य या अन्त में इस बात की जाच की जा सकती है कि किस छात्र ने किस प्रकार का काम किया है। वह अन्य छात्रो से आगे बढ़ा है या पीछे रहा है। कम्प्यूटर शिक्षण के दौरान छात्रो को शाखित-अभिक्रम के द्वारा विषय-वस्तु को समझने के लिए अतिरिक्त सहायता भी प्रदान करता है। कम्प्यूटर द्वारा शिक्षण में कक्षा का वातावरण एकदम शात रहता है। इससे सीखने मे सुगमता रहती है। छात्र जो कुछ सीख रहे हैं उसकी जांच साथ-साथ होती रहती है। अपनी प्रगति के सम्बन्ध में समुचित जानकारी रहने से छात्र/छात्राओं को प्रेरणा और प्रोत्साहन मिलता रहता है।

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण के प्रकार

शिक्षण के उद्देश्यों तथा छात्रो की व्यक्तिगत आवश्यकताओं को ध्यान मे रखते हुए कम्प्यूटर सहायक शिक्षण के निम्नलिखित प्रमुख रूप है–

☐ ट्यूटोरियल, ☐ ड्रिल एण्ड प्रैक्टिस, ☐ सिमुलेशन, ☐ गेमिंग

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण– ट्यूटोरियल– कम्प्यूटर ट्यूटोरियल एक प्रस्तावना खण्ड के साथ आरम्भ होते हैं। प्रस्तावना खण्ड का कार्य छात्रों को पाठ के उद्देश्यों तथा पाठ की प्रकृति से अवगत कराना है। इसके पश्चात् एक चक्र शुरू हो जाता है। सूचना को प्रस्तुत किया जाता है तथा उसकी व्याख्या की जाती है। इसके पश्चात्

इस सूचना पर आधारित एक या दो प्रश्न पूछे जाते हैं, जिनका उत्तर छात्रों को देना होता है। छात्रो की अनुक्रियाओं का कम्प्यूटर अभिक्रम द्वारा विश्लेषण किया विधि से सीखने मे अधिक रुचि दिखाई तथा वे अधिक उत्साहित दिखे (हुसैन, *1999*, *अग्रवाल*, *2000*, पाण्डेय, 1991, मोर्सण्ड, 2000, अस्कॉव, 1998)।

कम्प्यूटर ट्यूटोरियल अभिक्रम का चक्रीय स्वरूप निम्न प्रकार है
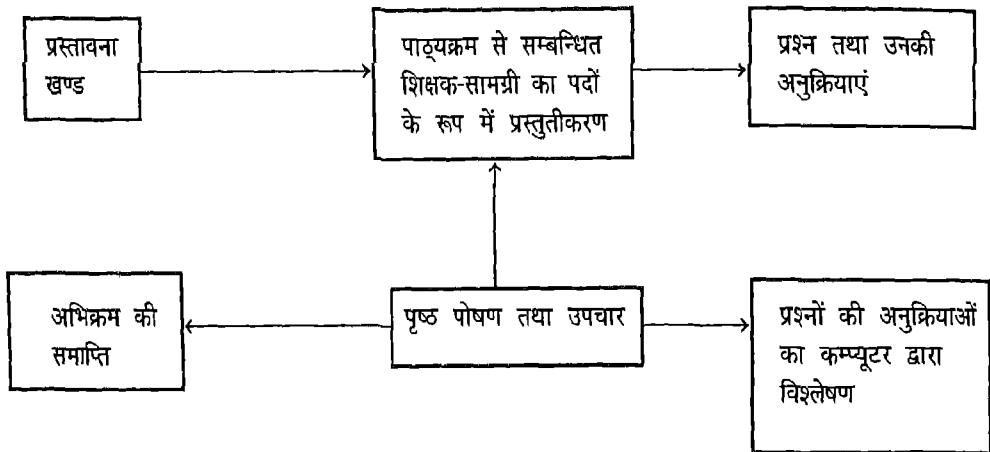
जाता है, जिसका उद्देश्य छात्रों के बोध स्तर का पता लगाना है। इसके आधार पर कम्प्यूटर छात्र के बोध स्तर में सुधार तथा भविष्य की प्रगति के सन्दर्भ मे पृष्ठ पोषण प्रदान करता है। यह चक्र तब तक चलता रहता है जब तक कि अभिक्रम की स्वयं समाप्ति नहीं हो जाती अर्थात् पूरे प्रकरण से सम्बन्धित पदों को प्रस्तुत नही कर दिया जाता या अधिगमकर्ता द्वारा बीच में ही अभिक्रम को रोक नही दिया जाता।

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण पर आधारित अध्ययन के परिणाम यह दर्शाते है कि परम्परागत शिक्षण की अपेक्षा कम्प्यूटर ट्यूटोरियल के द्वारा पढ़ाया गया पाठ छात्रो के लिए अधिक लाभकारी होता है। इसके माध्यम से प्राप्त किया गया ज्ञान अधिक स्थाई होता है। निरन्तर पुनर्बलन तथा पृष्ठ पोषण प्राप्त होने के कारण छात्रो की अधिगम प्रक्रिया में रुचि लगातार बनी रहती है। छात्रों ने इस शिक्षण

कम्प्यूटर आधारित ट्यूटोरियल में कम्प्यूटर तथा छात्र के मध्य अंत:प्रक्रिया को निम्न प्रकार भली-भांति समझा जा सकता है।

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण– ड्रिल एण्ड प्रैक्टिस—कक्षा में किसी नए ज्ञान के प्रस्तुतीकरण के पश्चात् अध्यापक का प्रयास होता है छात्रो से उस नए ज्ञान से सम्बन्धित कार्य का अभ्यास करवाना। अर्थात् छात्रो के समक्ष ऐसी नई-नई परिस्थितियां प्रस्तुत करना, जिसमे कि वह नए सीखे गए ज्ञान का समुचित प्रयोग कर सके। कम्प्यूटर सहायक शिक्षण के 'ड्रिल एण्ड प्रैक्टिस' रूप के माध्यम से यह कार्य बहुत ही सुविधापूर्वक किया जा सकता है। कम्प्यूटर के माध्यम से छात्रों को उन तथ्यो, नियमों, प्रत्ययों आदि का अभ्यास करवाया जाता है जो कि वे पहले ही सीख चुके हैं अर्थात् वे इस कम्प्यूटर-अभिक्रम के माध्यम से नई-नई समस्याओं के

आरम्भ
सूचना और प्रश्न
अधिगमकर्ता द्वारा प्रश्न का उत्तर देना
प्रश्न का उत्तर ग्रहण करना
हां
क्या प्रश्न का उत्तर ठीक है
नहीं
आवश्यक उपचार प्रदान करना
क्या प्रदान किया गया उपचार पर्याप्त है?
हां
नहीं
क्या अधिगमकर्ता प्रकरण से सम्बन्धित और अधिक जानकारी चाहता है।
हा
प्रकरण से सम्बन्धित सूचनाओं का संग्रह
निदानात्मक प्रश्न पूछना
उपचार प्रदान करना
विकल्प-1
अधिगमकर्ता को सीधे दूसरे 'प्रकरण' पर ले जाना
विकल्प-2
'प्रकरण' से सम्बन्धित नए अनुभव (उदाहरण) प्रदान करना
विकल्प-3
प्रश्नों के स्वरूप को बताना
विकल्प-4
प्रश्नों के कठिनाई स्तर मे परिवर्तन
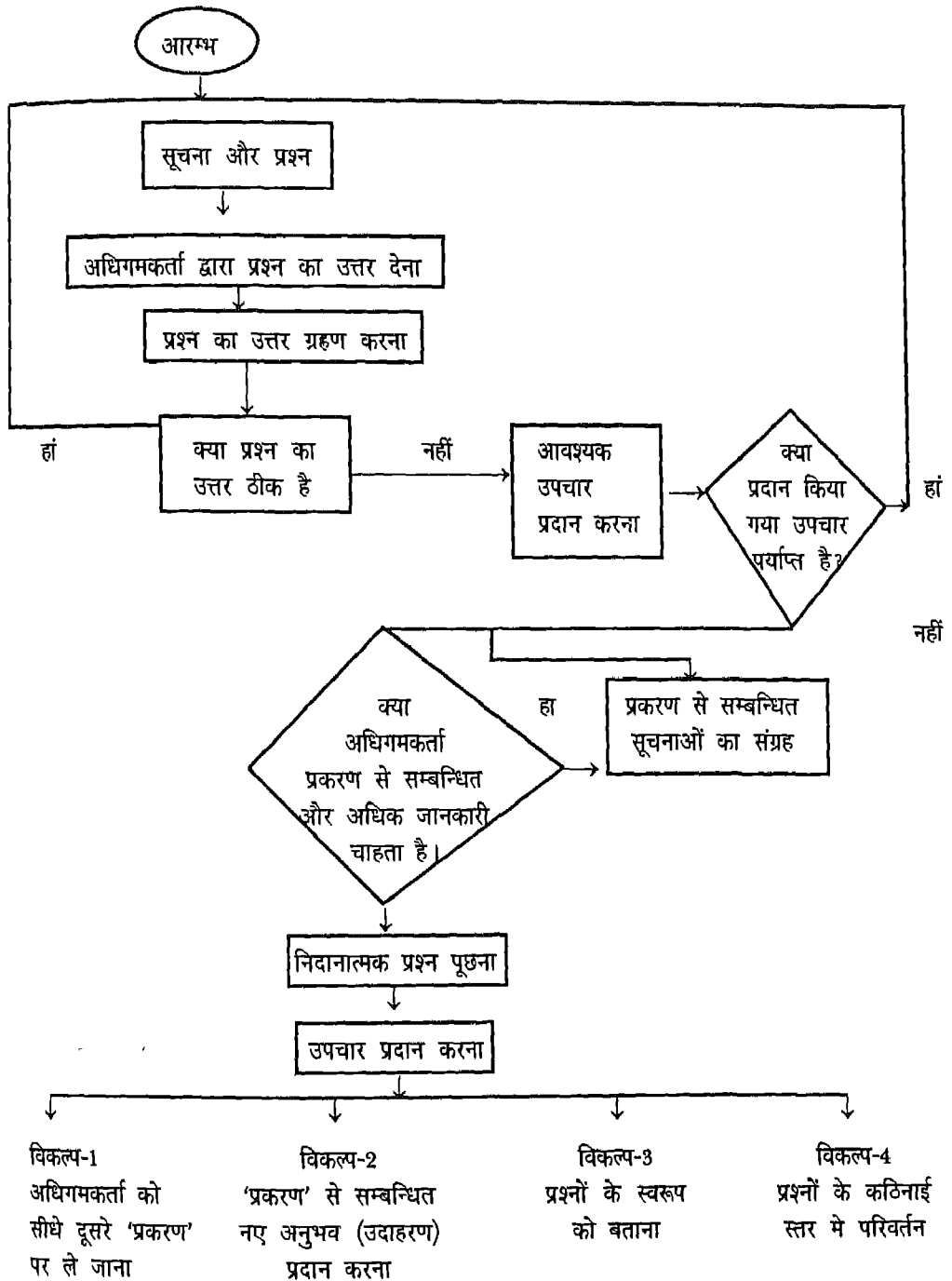
समाधान में सीखे गए ज्ञान का प्रयोग कर सकते है। इसमे छात्रों से तब तक समस्याओं (प्रश्नों) को हल करवाया जाता है जब तक छात्र पूर्ण आत्मविश्वास के साथ किसी विशेष ज्ञान का प्रयोग नवीन समस्याओं को हल करने मे न कर ले। इसमें किसी भी कार्य को तब तक करने के लिए दिया जाता है जब तक कि अधिगमकर्ता उस क्षेत्र विशेष मे पारगतता हासिल न कर ले। एक कम्प्यूटर 'ड्रिल एण्ड प्रैक्टिस प्रोग्राम' का चित्रिय स्वरूप निम्न प्रकार है–
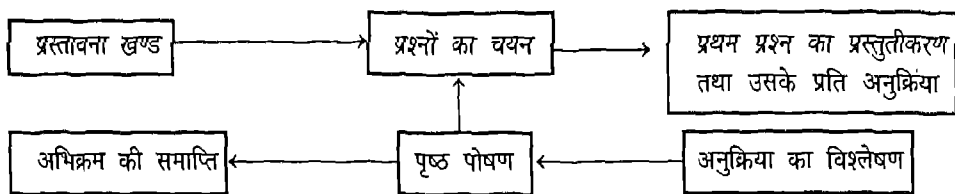
एक कम्प्यूटर आधारित 'ड्रिल एण्ड प्रैक्टिस अभिक्रम' में कम्प्यूटर और अधिगमकर्ता के बीच की अन्त प्रक्रिया निम्न प्रकार से होती है–

- छात्रों को प्रश्नो के एक समूह के साथ प्रस्तुत किया जाता है। यह प्रश्न कठिनाई के बढ़ते हुए क्रम में प्रस्तुत किए जाते हैं।
- छात्र अपनी सुविधानुसार विकल्प के रूप मे यह निर्णय लेता है कि उसे एक समय मे कितने प्रश्न हल करने है?
- ये प्रश्न एक-एक करके कम्प्यूटर की स्क्रीन पर प्रदर्शित किए जाते हैं।
- प्रत्येक प्रश्न के प्रति छात्र हां/नहीं या फिर विकल्पों को चुनकर अपनी अनुक्रिया देता है।
- कम्प्यूटर अभिक्रम इन अनुक्रियाओं का विश्लेषण करता है।
- इस विश्लेषण के आधार पर कम्प्यूटर छात्रों की व्यक्तिगत कठिनाईयों तथा आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त करता है तथा छात्रों को उचित मदद भी प्रदान करता है।
- कम्प्यूटर छात्रों की अनुक्रियाओं में त्रुटियों को ढूंढ़ता है तथा छात्रो को उचित पृष्ठ पोषण भी प्रदान करता है।
- कम्प्यूटर छात्रों को यह सिखाता है कि किसी समस्या (प्रश्न) को कैसे हल किया जाए तथा छात्रों के आग्रह पर किसी समस्या को चरणबद्ध रूप मे स्वयं हल करके भी दिखाता है।
- छात्रों की प्रगति पर तथा उनकी अनुक्रियाओ पर नियन्त्रण रखता है।
- छात्रों की प्रगति का व्यक्तिगत लेखा-जोखा भी तैयार करता है।

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण– सिमुलेशन–कम्प्यूटर के माध्यम से वास्तविक यथार्थता का आभास कराया जा सकता है। वास्तविक यथार्थता में चीजों को जिस तरह वे यथार्थ रूप मे पाई जाती हैं उसी रूप मे प्रस्तुत करने की अपार सम्भावनाएं होती हैं। वास्तविक यथार्थता हमे पूरी तरह से दूसरी दुनिया में ले जाती है। जहां हम अन्तरिक्ष में जाए बिना ही अन्तरिक्ष में होने अथवा सागर में जाए बिना ही सागर की लहरो पर खेलने की अनुभूति को महसूस कर सकते हैं। सिमुलेशन के माध्यम से कम्प्यूटर के पर्दे पर वास्तविक परिस्थितियों की हू-बहू प्रतिकृति तैयार की जाती है।

कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन के माध्यम से छात्रों को उन अनुभवो का ज्ञान कराया जा सकता है जिनको या तो कक्षा में प्रदान करना असम्भव है या फिर जिनकी व्यवस्था करना काफी खतरनाक तथा महंगा है। उदाहरण के लिए छात्रों को यह बताना कि पेड़-पौधे कैसे बढ़ते हैं? पृथ्वी सूर्य के चारों ओर कैसे चक्कर लगाती है? शरीर में रक्त का प्रवाह धमनियों के माध्यम से किस प्रकार होता है? हृदय की शल्यक्रिया कैसे की जाती है?

इन सभी अनुभवों को छात्रो को कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन के माध्यम से कम्प्यूटर स्क्रीन पर होता हुआ वर्चुअल क्लासरूम द्वारा वास्तविक रूप मे प्रत्यक्ष होते हुए दिखाया जा सकता है। स्पष्ट है कि अगर हमे छात्रों को वास्तविक परिस्थिति का अनुभव करवाना है तब कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन एक सशक्त माध्यम है। इसमें किसी भी प्रक्रिया की नकल करके छात्रों को दिखाया जाता है। विज्ञान प्रसार विभाग ने पूर्ण सूर्य ग्रहण की बहुमाध्यम प्रतिकृति दर्शाने वाली एक सी डी. तैयार की है जिसके माध्यम से सूर्य ग्रहण के दौरान होने वाले परिवर्तनों को जीवंत देखा और समझा जा सकता है। ज्यों-ज्यों ग्रहण बढ़ता है, अधेरा दिखने लगता है और तापमान में गिरावट आती है, यह सब सी.डी. के माध्यम से कम्प्यूटर के पर्दे पर देखा जा सकता है।

कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन को चित्रीय रूप में निम्न प्रकार समझा जा सकता है–
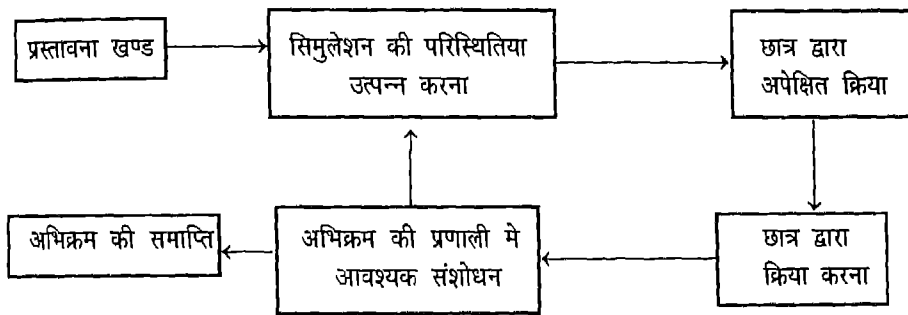
कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन के एकांकी, चक्रिय तथा जटिल रूप
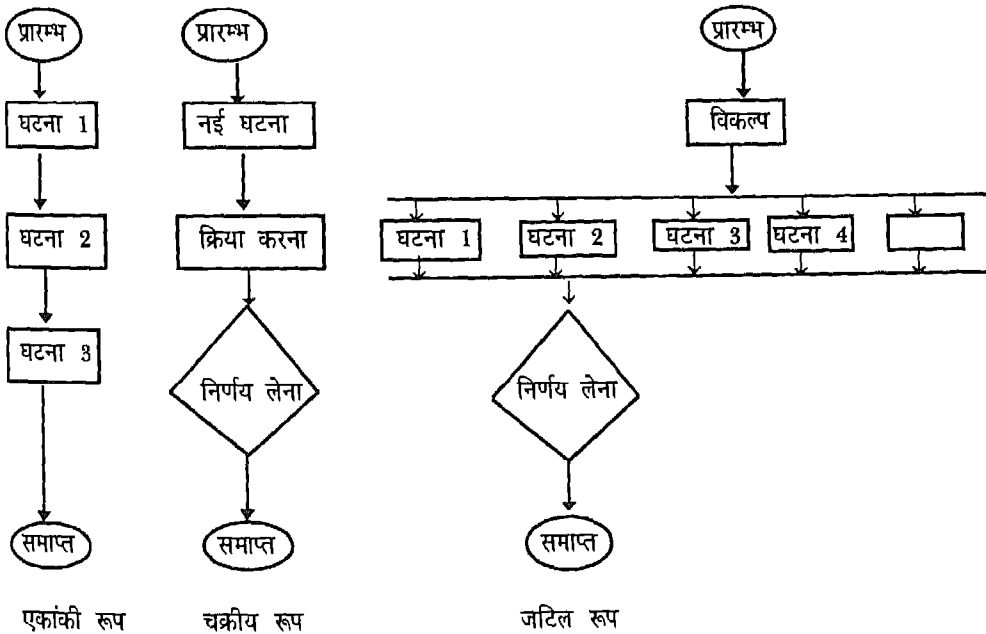
कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन के शैक्षिक लाभ

प्रेरणा— इसके माध्यम से छात्रों को सीखने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। इसमें छात्र निरन्तर सक्रिय रहकर स्वयं अनुभव करके सीखता है। एक किताब मे जहाज को कैसे उड़ाया जाता है, यह पढ़ने की अपेक्षा एक सिमुलेटेड जहाज को कम्प्यूटर-स्क्रीन पर स्वयं उड़ाना ज्यादा रुचिकर है।

अधिगम स्थानान्तरण— एक परिस्थिति में सीखे हुए ज्ञान तथा कौशलो का प्रयोग किन्हीं दूसरी परिस्थितियो में करना 'अधिगम स्थानान्तरण' कहलाता है। कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन, अधिगम स्थानान्तरण के उत्कृष्ट साधन होते है क्योंकि 'सिमुलेशन' के माध्यम से कृत्रिम परिस्थितियो मे सीखे हुए ज्ञान को वास्तविक परिस्थितियों में बहुत अच्छे ढग से स्थानान्तरित किया जा सकता है।

योग्यता— सिमुलेशन के माध्यम से ग्रहण किया गया ज्ञान अधिक स्थाई होता है तथा इसके माध्यम से छात्रो में विभिन्न मानसिक योग्यताओं, जैसे— तर्क, कल्पना, विश्लेषण, संश्लेषण तथा मूल्यांकन आदि का विकास किया जा सकता है।

कम्प्यूटर सहायक शिक्षण— 'गेमिंग' (खेल)—कम्प्यूटर आधारित सिमुलेशन तथा गेमिंग (खेलों) दोनों का उद्देश्य एक ऐसे शैक्षिक वातावरण का निर्माण करना है जिसमे अधिगमकर्ताओं की अधिगम-प्रक्रिया उचित प्रकार से संचालित हो सके तथा वे नए ज्ञान, कौशलों तथा सूचनाओं की प्राप्ति सफलतापूर्वक कर सकें। सिमुलेशन में यह कार्य किसी घटना या प्रक्रिया की नकल को कम्प्यूटर स्क्रीन पर प्रस्तुत करके किया जाता है। बहुत से सिमुलेशन कार्यक्रम मनोरंजक भी होते हैं परन्तु मनोरंजन प्रदान करना इनका मुख्य उद्देश्य नहीं होता है। इसके विपरीत कम्प्यूटर आधारित खेलों में वास्तविकता को नकल करके दिखाया भी जा सकता है और नहीं भी। इनकी सबसे प्रमुख विशेषता यह होती है कि इनमे छात्र किसी भी कार्य को मनोरंजकपूर्ण चुनौती के रूप में स्वीकार करते है।

कम्प्यूटर आधारित खेलों के द्वारा निम्न प्रकार की जानकारी छात्रों को प्रदान की जा सकती है—

- तथ्य तथा सिद्धान्त
- किसी प्रणाली का वास्तविक स्वरूप तथा उसकी गत्यात्मकता
- विभिन्न प्रकार के कौशल जैसे—समस्या का समाधान, निर्णय लेना आदि
- रणनीति के सम्बन्ध में निर्धारण
- सामाजिक कौशल जैसे सम्प्रेषण
- दृष्टिकोण

परम्परागत शिक्षण विधि की तुलना में कम्प्यूटर आधारित खेलों के अनेक लाभ है जैसे— खेलों के माध्यम से छात्रो को सीखने के लिए प्रेरित करके उनका ध्यान शैक्षिक खेलों के लक्ष्यों की ओर केन्द्रित किया जा सकता है। खेलों के माध्यम से अधिगम की मात्रा में वृद्धि की जा सकती है क्योंकि इनमें छात्र की सक्रियता अधिक होती है तथा अध्यापक का स्थान गौण होता है (अग्रवाल,
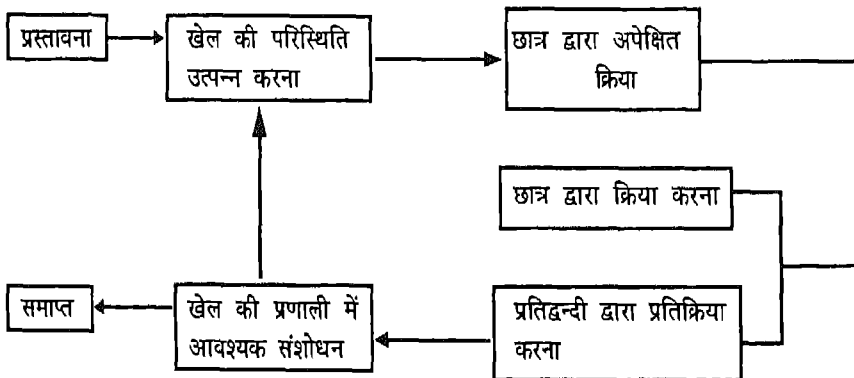
2001)। खेल छात्रो को सीखने के लिए प्रोत्साहित करते हैं और छात्र स्वतन्त्रतापूर्वक कम्प्यूटर के साथ अन्तःप्रक्रिया करता है। कम्प्यूटर आधारित खेलों को कम्प्यूटर के साथ मिलकर खेला जा सकता है या फिर दो छात्र मिलकर भी खेल सकते हैं।

कम्प्यूटर आधारित खेलों का चित्रीय (ग्राफिक्स) स्वरूप पृष्ठ 16 पर है–

कम्प्यूटर आधारित खेलों के शैक्षिक लाभ

- खेल, समूह के साथ मिलकर खेले जाते हैं। अतः इनके माध्यम से छात्रों में सामाजिक विशेषताओं, जैसे–समूह में मिल-जुलकर कार्य करना, कर्तव्यनिष्ठा, आत्मविश्वास तथा सम्प्रेषण आदि कौशलों का विकास किया जा सकता है।
- खेलों के माध्यम से छात्रों में निर्णय लेने, रणनीति तय करने, योजना बनाने तथा समस्या समाधान के कौशलों का विकास सम्भव है। कम्प्यूटर आधारित खेलो में निर्णय लेने की प्रक्रिया मे इस बात का खतरा नहीं होता कि उनके किसी गलत निर्णय से उनको कोई नुकसान उठाना पड़ेगा। किसी समस्या के समाधान के लिए विभिन्न प्रकार के मार्गों को चुना जा सकता है।
- कुछ छात्रों के साथ यह समस्या होती है कि वे अधिक समय तक किसी एक कार्य पर अपना ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाते हैं। खेलो के माध्यम से ऐसे छात्रों में अपने ध्यान को केन्द्रित करने की शक्ति का विकास किया जा सकता है।
- कम्प्यूटर आधारित खेल, शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को एक मनोरंजकपूर्ण कार्य बना देते हैं।

क्या कम्प्यूटर (संगणक) भविष्य में अध्यापक का स्थान ले सकता है?

भारत में कम्प्यूटर सहायक शिक्षण के विकास के साथ-साथ एक विचारधारा का जन्म भी हुआ है। इस विचारधारा को मानने वाले लोगों का यह मत है कि अगर वर्तमान गति के साथ कम्प्यूटर सहायक शिक्षण का प्रचार और प्रसार होता रहा तब भविष्य मे वह दिन दूर नहीं जब विद्यालयों मे कम्प्यूटर, अध्यापक का स्थान ले लेगे तथा भविष्य में विद्यालयों में अध्यापकों की आवश्यकता ही नहीं रहेगी अर्थात् शिक्षण अधिगम प्रक्रिया मे उनका स्थान शून्य हो जाएगा।

उनका यह भ्रम आधारहीन है। संगणक तो केवल एक साधन मात्र है। चॉर्ट, मॉडल, रेडियो, टी.वी. की भांति कम्प्यूटर का प्रयोग केवल इसलिए किया जाता है कि शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में गुणात्मक सुधार लाया जा सके। कम्प्यूटर द्वारा छात्रो को समाजीकरण नही सिखाया जा सकता जो कि समाज में रहने के लिए अत्यन्त आवश्यक है। यह कार्य अध्यापको द्वारा ही सम्भव है। अगर छात्र कम्प्यूटर अधिगम के माध्यम से सीखते है तो यह बात स्पष्ट है कि अध्यापक वह व्यक्ति होता है जो पाठ्य-सामग्री को अभिक्रम (प्रोग्राम) के रूप मे निर्मित कर उसे कम्प्यूटर में भरता है। अभियान्त्रिकी, चिकित्सा आदि क्षेत्रो में भी आज कम्प्यूटरों का प्रयोग किया जा रहा है परन्तु हम सभी इस बात से पूर्णतः सहमत है कि कम्प्यूटरों ने अभियंताओं और डाक्टरों को बेकार नहीं किया।

हा एक बात अवश्य है कि सूचना एवं तकनीकी के इस युग में अध्यापको को अपनी परम्परागत छवि को बदलना होगा। भविष्य में छात्रों के बीच केवल वे अध्यापक ही प्रशंसा के पात्र होगे जो केवल कक्षा में व्याख्यान देने तक ही सीमित नही रहेंगे बल्कि वे अध्यापक ऐसे अध्यापक होंगे जो छात्रों के मार्गदर्शक होंगे, मित्र होगे, चिन्तक होंगे तथा नवीन तकनीकी के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण रखने वाले होंगे।

अतः आज आवश्यकता इस बात की है कि अध्यापकगण अपने मन से भय को निकालकर कम्प्यूटर को शिक्षण सहायक के रूप में अपनाने का प्रयास करें। जिससे व्यक्तिगत विभिन्नता के अनुकूल शिक्षण प्रदान करने के साथ-साथ कक्षा के प्रत्येक विद्यार्थी का वास्तविक मूल्यांकन किया जा सके। कम्प्यूटर सहायक शिक्षण का प्रयोग कर अध्यापकगण अपने शिक्षण के स्तर में गुणात्मक सुधार ला सकते हैं तथा शिक्षा के उद्देश्यों को सफलतापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं। ☐☐

आई.ए.एस.ई, एम.जे.पी.
रुहेलखण्ड विश्वविद्यालय, बरेली

विद्यार्थियों के लिए प्राणायाम का बहुआयामी महत्व

❑ लीला पाटनी

योगाचार्यों ने मानव शरीर को पंचकोशीय माना है। प्याज की परतों की भांति एक के भीतर एक अवस्थित ये शरीर है— अन्नमय कोश, प्राणायाम कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश तथा आनंदमय कोश। बाह्य शरीर अन्नमय कोश है तो सबसे आन्तरिक एवं गहन आनंदमय कोश की सत्ता है। महर्षि अरविन्द ने शिक्षा को चेतना के आरोहण पथ पर ले जाने वाली प्रक्रिया माना है जो कि एक साधारण से मानव को महामानव मे परिवर्तित करने मे समर्थ है। वैदिक ऋषियों ने अपनी तपपूत शोध साधना में मानव चेतना के गहनतम प्रदेश में प्रविष्ट होकर कहा है—

"मरणधर्मा प्राणी ने इस चेतना शक्ति का अर्विज्ञान किया। यह शक्ति अनंत कामनाओं को अपने भीतर रखती है जिससे कि वह समस्त पदार्थो को धारण कर सके।"

वास्तव में अन्नमय कोश से आनंदमय कोश तक की यह आरोहण यात्रा मानव चेतना के असीम विस्तार यानी शिक्षा के परम लक्ष्य आत्मानुभूति पर समाप्त होती है जहां पर व्यक्ति अणु के साथ विभु के तादात्म को अनुभव कर लेता है। इस प्रक्रिया को सहज बनाने के लिए अष्टांग योग के आठ मार्गों का निगमन किया गया। ये मार्ग हैं— यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि। इनमे प्राणायाम यानि प्राणकोश की साधना का अत्यधिक महत्व है। योग विज्ञानियों का मत है कि प्राणशक्ति ही जीवात्मा की सत् सत्ता को चित्त (चेतना) से परिपूर्ण बनाती है। इन दोनों के समन्वय से ही जीवन के क्रियाकलाप संभव हो पाते है। जीवधारी को प्राणी कहने का तात्पर्य ही यह है कि सत्, चित्त, आनंद की सभावनाए उसके आगे बिखरी हुई है, परन्तु उनका अनुभव प्राणशक्ति के अस्तित्व पर निर्भर है। प्राणमय कोश की इस ऊर्जा के आकर्षण का नाम ही प्राणायाम है।

वास्तव में अन्नमय कोश से आनंदमय कोश तक की यह आरोहण यात्रा मानव चेतना के असीम विस्तार यानी शिक्षा के परम लक्ष्य आत्मानुभूति पर समाप्त होती है जहां पर व्यक्ति अणु के साथ विभु के तादात्म को अनुभव कर लेता है। इस प्रक्रिया को सहज बनाने के लिए अष्टांग योग के आठ मार्गो का निगमन किया गया। ये मार्ग हैं— यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान एवं समाधि। इनमें प्राणायाम यानि प्राणकोश की साधना का अत्यधिक महत्व है।

सामान्यत. लोग श्वास-प्रश्वास की शारीरिक प्रक्रिया को ही प्राणायाम समझ बैठते हैं। वास्तव में सांस प्राण के विस्तार को बढ़ाने का एक माध्यम है। सांस मे प्राणशक्ति को आकर्षित करने के लिए प्रबल भावना तथा संकल्प शक्ति का होना परम आवश्यक है। उसी के चुम्बकत्व से अनत ब्रह्माण्ड मे व्यापक प्राणतत्व को खीच कर लाने तथा अभीष्ठ स्थान पर पहुंचा कर उपयोग करना संभव है। प्राणायाम की क्रिया के तीन अंग है— पूरक अर्थात् सांस को भीतर खीचना, रेचक अर्थात् सांस को बाहर छोड़ना, कुंभक अर्थात् सांस को रोकना। एक— पूरक करके सांस को भीतर रोके रहना, दूसरा— रेचक करके सांस को रोकना। सामान्यतः नियम यह है कि पूरक से दुगुना समय रेचक में तथा चौगुना समय कुंभक में लगाया जाए। समय गणना हेतु औंकार या कोई मत्र घड़ी के स्थान पर प्रयुक्त किया जाता है। मानवी काया में प्राणशक्ति के विभिन्न कार्यो के आधार पर इसका दस भागों में शास्त्रीय विभाजन किया गया है। पाच मुख्य प्राण हैं—

1. **अपान**—यह मूलाधार चक्र के पास स्थित है। मलमूत्र निष्कासन में सहायक है।
2. **प्राण**—यह कंठ से हृदय तक व्याप्त है। यह सास के साथ शरीर में शक्ति सचार करती है।
3. **समान**—नाभि से हृदय तक रहने वाली वायु को समान कहते हैं। यह पाचन सस्थान तथा उससे निकलने वाले रसों को उत्प्रेरित तथा नियंत्रित करती है।
4. **उदान**—कंठ से मस्तिष्क तक व्याप्त वायु को उदान कहते हैं। इस प्राणशक्ति के द्वारा कंठ के ऊपर के अंगों—आंख, कान, नाक, मस्तिष्क आदि का नियत्रण होता है। इसके अभाव में मस्तिष्क की कार्य क्षमता समाप्त होने लगती है तथा बाह्य जगत के प्रति चेतना नष्ट हो जाती है।
5. **व्यान**—यह सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त है। इसका मुख्य स्थान स्वाधिष्ठान चक्र है। यह शरीर की अन्य शक्तियो तथा प्राणवायु मे सहयोग स्थापित कर सारे शरीर की गतियों का नियमन और नियंत्रण करती है।

उपप्राणों के प्रकरण में —

- **देवदत्त**—मुखमण्डल तथा उससे जुड़े अवयवो का प्रहरी है।
- **वृकल**—कंठ क्षेत्र तथा उसकी क्रियाओं पर नियत्रण रखता है।
- **कर्म**—उदर क्षेत्र के अवयवों की सम्भाल करता है।
- **नाग**—प्रजनन तथा कुण्डलिनी क्षेत्र पर इसका नियंत्रण है।
- **धनंजय**—इसका कार्य जंघाओं से एड़ी तक है। गतिशीलता, स्फूर्ति एवं अग्रगमन का उत्साह इसी की समुन्नत स्थिति का परिणाम है।

प्राणायाम की प्रक्रिया में नाक के बांए और दांए नथुने द्वारा श्वास-प्रश्वास की क्रिया की जाती है। दांए नथुने का प्राण सूर्य नाड़ी द्वारा तथा बांए नथुने का प्राण प्रवाह चन्द्र नाड़ी द्वारा होता है। ये दोनो प्राण प्रवाह मिल कर दोनो नथुनों से प्रवाहित होने वाला तीसरा प्राण प्रवाह बनाते है जो सुषुम्ना नाड़ी में प्रवाहित होता है।

प्राणायाम के प्रकार—शास्त्रो में लगभग 50 प्रकार की प्राणायाम क्रियाओं का उल्लेख किया गया है। विद्यार्थियों के लिए सहज रूप से होने वाली उपयोगी प्राणायाम विधियां निम्नलिखित हैं—

- **नाड़ी शोधन प्राणायाम**—ध्यान के किसी आसन में शिथिल बैठ कर चेतन को सास पर केन्द्रित करके उसके शांत होने की प्रतीक्षा करे। मध्यमा तथा तर्जनी ऊंगली को भ्रूमध्य पर रखकर अगूठे से दांए नथुने को बंद करके केवल बांए नथुने से सांस लेकर कनिष्ठा से उसे बंद करके कुंभक करें तत्पश्चात अंगूठे को नथुने से हटाकर सांस को दांए नथुने से निकाल दें। अब इसी प्रक्रिया को दांए नथुने से प्रारभ करें। इसे अनुलोम विलोम प्राणायाम भी कहते है। पूरक, कुभंक तथा रेचक की प्रक्रिया में लय तथा अनुपात का ध्यान रखना आवश्यक है। नाड़ियो के शुद्धिकरण हेतु यह अत्यंत उपयोगी है। दयानंद, विवेकानद आदि मनीषियो ने मन की एकाग्रता तथा शांति हेतु भी इसे बडा लाभदायक माना है।
- **उज्जामयी प्राणायाम**—श्वास नलिका को कुछ संकुचित करके खेचरी मुद्रा कर लें तत्पश्चात् गले से हृदय तक सास लें तथा निकालें। ग्रीवा साइनस पर इसका विशेष प्रभाव पड़ता है। रक्तचाप नियंत्रण, मिर्गी तथा अन्य दिमागी रोगों में यह लाभकारी है। टांसिल, खांसी, जुकाम, सर्दी के अतिरिक्त गले, कान, नाक के समस्त रोगों मे भी यह लाभकारी है। विचारों की बाढ़ को नियंत्रित कर यह मन को अन्तर्मुखी बनाता है।
- **भस्त्रिका प्राणायाम**—इस प्राणायाम मे फेफड़ों का उपयोग लोहार की धौकनी की भांति किया जाता है। जल्दी-जल्दी कुछ बल लगाकर श्वासोश्वास करके शरीर को अधिक मात्रा में प्राणवायु पहुंचाकर कार्बन बाहर निकाली जाती है। रक्त के शुद्धिकरण हेतु यह बहुत लाभकारी है। केन्द्रीय स्नायुमण्डल इससे प्रभावित होता है। दमा, खांसी जुकाम तथा फेफड़े के रोगो में लाभप्रद है।

☐ **कपालभाति**—कपालभाति का तात्पर्य है जोर देकर रेचक की क्रिया करके कपाल की सफाई करना। ध्यान करने के पूर्व कपालभाति करके मन बहुत जल्दी इन्द्रियों से विमुख होकर अन्तर्मुखी हो जाता है। व्यक्ति की चेतना ध्यान की गहराइयों में सहज ही उतर जाती है। मस्तिष्क की नस-नाड़ियो को तनाव मुक्त करके यह सिर दर्द में रामबाण का कार्य करता है।

☐ **अग्निसार**—नाभि स्थान अग्नितत्व का केन्द्र है। जठराग्नि मंद पड़ जाने पर समस्त शरीर रोगग्रस्त हो जाता है। बदहजमी, गैस, मोटापे के निवारण में यह उपयोगी है। इसमें रेचक करके नाभि केन्द्र पर ध्यान देते हुए पेट को आगे-पीछे किया जाता है।

☐ **सूर्यभेदी प्राणायाम**—मणिपुर चक्र पर ध्यान रख कर शीघ्रता से अनुलोम-विलोम प्राणायाम करते हुए आन्तरिक कुंभक करके जलधर तथा मूल बंध लगाएं। श्वास खोल कर पुनः यही प्रक्रिया दोहराई जाएगी। सूर्यभेदन का अर्थ है पिंगला नाड़ी को जाग्रत करना जिसमें पुरुष शक्ति निहित है। यह शरीर में ताप पैदा करता है तथा रक्त का शोधन करके लालकणों की मात्रा बढ़ाता है मन को स्वस्थ करके इच्छाशक्ति की वृद्धि करता है।

☐ **शीतली प्राणायाम**—जिह्वा को पूर्णतया बाहर निकाल कर नली की भांति बना लें। उस नली से प्रयत्नपूर्वक लम्बी गहरी सास ले तत्पश्चात् धीरे-धीरे नाक के द्वारा रेचक करें। रक्त शोधन, ताप निवारण, उच्च रक्त चाप, चर्मरोगों हेतु यह उपयोगी है। क्रोधी स्वभाव में भी यह नियंत्रण करता है।

☐ **शीतकारी प्राणायाम**—दांतों तथा जबड़ों को भीच कर ओठों के दांए-बांए से मुख के अन्दर श्वास खींचें जिससे शीतकार की ध्वनि हो। यह शीतली की ही भांति लाभकारी है। मुंख के छाले, दुर्गन्ध, पायरिया आदि रोगों में भी यह लाभप्रद है।

☐ **भ्रामरी प्राणायाम**—आज्ञा चक्र पर ध्यान केन्द्रित करते हुए दोनों हाथों के अंगूठे से दोनों कान बद कर ले, तर्जनी तथा मध्यमा से दोनो आंखें, अनामिका तथा कनिष्ठा से ओंठों को ढके। श्वास लेकर भ्रमर के तरह गुंजन करते हुए रेचक करे। भ्रामरी वास्तव में आध्यात्मिक अभ्यास है। इससे नाद ब्रह्म की सिद्धि होती है। सभी प्रकार की मानसिक उत्तेजना तथा उदासीनता दोनो का ही यह निवारण करता है। मस्तिष्क के स्नायुओं की इससे मालिश होती है। परिणामतः नाड़ी संस्थान तथा मन शांत होता है। आज्ञा चक्र के जागरण मे भी यह सहायक है।

उपरोक्त सभी प्राणायाम करना आवश्यक नहीं है। आवश्यकतानुसार किसी सिद्ध व्यक्ति से सीख कर इनका समयानुकूल अभ्यास ही उचित होगा। शिक्षा का लक्ष्य शिक्षार्थी का सर्वांगीण विकास होता है जिसका कार्य है—शरीर, मस्तिष्क, मन तथा आत्मा को सर्वोच्च सीमा तक उन्नत करना। इस विस्तार को पाने के लिए प्राण शक्ति का जागरण अति आवश्यक है। व्यासभास्य में कहा गया है—

"तपो न परं प्राणायात् ततोविशुद्धर्मलाना दीप्तिश्चज्ञानस्य"

अर्थात् प्राणायाम से बढ़ कर कोई तप नहीं। इससे मल (दोष) धुल जाते है तथा ज्ञानोदय होता है। इस तप के द्वारा शरीर, मन, और बुद्धि तीनों का निग्रह और परिष्कार संभव है। प्राण कोश की इस साधना की बहुआयामी उपादेयता है—

● **शारीरिक उपादेयता**—प्राणायाम स्वस्थ, निरोग तथा दीर्घजीवी होने में मदद करता है। यह स्पष्ट है कि दीर्घ सांस लेने वाले प्राणी दीर्घजीवी होते हैं जैसे कछुआ या सर्प आदि। प्राणायाम शरीर में व्याप्त प्राण शक्ति को उत्प्रेरित, नियंत्रित, संचारित, नियमित तथा संतुलित करता है। यह शरीर के समस्त भीतरी अंगों के शुद्धिकरण में सहायक है इसीलिए इसे अंतः स्नान माना गया है। फेफड़े, हृदय, अमाशय, लीवर, वृक, आंतें तथा पाचन संस्थान के सभी अंग शुद्ध होकर अपनी कार्यकुशलता को बढ़ाते हैं। हमारा स्नायुमण्डल (Nervous System) दोष मुक्त होकर सचेतन, सक्रिय एवं शक्तिशाली बनता है। भस्त्रिका,

कपालभाति, रक्त शुद्धिकरण, सतुलित रक्तपरिभ्रमण हेतु बहुत लाभकारी है। इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्ना में नाडी शोधन, प्राणायाम द्वारा प्राण का सन्तुलन करके आरोग्य, बल, शान्ति तथा दीर्घ जीवन प्राप्त किया जा सकता है। थकान मिटाने, चुस्ती-फुर्ती लाकर कार्य क्षमता बढ़ाने मे प्राणायाम अद्भुत कार्य करता है। भारत ही नहीं विदेशों में भी प्राणकोश-साधना के द्वारा विद्यार्थियों, खिलाड़ियों, प्रबन्धकों तथा रोगियो आदि पर इनके लाभों पर शोध चल रहे है। रूस के प्रसिद्ध व्यायाम चिकित्सक एम सारकीसोव ने 'मैन मस्ट बी हैल्दी' नामक पुस्तक में योगासन के साथ नित्य प्राणायाम की अनिवार्यता बताई है। तनाव के कारण प्रायः होने वाले सिरदर्द माइग्रेन आदि में भस्त्रिका, कपालभाति दर्द निवारक का काम करते है। मास्को के डा. कान्सटेनिटन ने दमा से पीड़ित रोगियों को दवा बंद कर प्राणायाम का अभ्यास करवाया फलस्वरूप ऑक्सीजन तथा कार्बनडाईऑक्साइड के बीच में रहने वाला असंतुलन दूर होकर चमत्कारी परिणाम मिले। पाचन सम्बन्धी विभिन्न समस्याओं के निदान में अग्निसार प्राणायाम का प्रभाव बहुत लाभकारी देखा गया है।

● **बौद्धिक उपादेयता**—ज्ञान प्राप्ति का पहला साधन है–चित्त। मनोवैज्ञानिकों ने कहा है–"ज्ञानेन्द्रिय ज्ञान के दरवाजे हैं"। ज्ञान प्राप्ति की प्रक्रिया में ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों का महत्व स्पष्ट है परन्तु चित्त की वृत्तियों के प्रवाह को रोकना अत्यत कठिन है। चंचल चित्त से ज्ञान प्राप्ति की दुखद प्रक्रिया कैसे हो? इसी प्रश्न को लेकर योगाचार्यो ने योग साधना का लक्ष्य ही बना डाला—"योगश्चित्तवृत्ति निरोधः"। चित्त को सीधे नियंत्रण में करना असंभव है क्योंकि शरीर में उसका कोई विशेष स्थान नहीं है। किन्तु नाडी संस्थान का चित्त से घनिष्ठ सबंध है एक के शात होने पर दूसरा स्वतः ही शांत होने लगता है। मानव शरीर में असंख्य नाड़ियो का जाल बिछा है। सुषुम्ना नाड़ी और उससे निकले हुए नाड़ी सूत्रों द्वारा ही टेलीफोन के तारों के समान मस्तिष्क सारे शरीर की सूचनाएं प्राप्त करता है तथा उसे नियंत्रित करता है। उत्तेजना पैदा करने वाली वस्तु संवेदना के रूप में प्रवेश करती है। तत्पश्चात तद्नुरूप प्रत्यय का निर्माण होता है तथा बुद्धि का अध्यवसाय प्रारंभ हो जाता है। बुद्धि का सकल्प क्षोभ रूप से मस्तिष्क में प्रकट होकर नाड़ी कोष्ठ द्वारा अपनी प्रतिक्रिया संबन्धित अंग तक भेज देता है। बाह्य वस्तु की क्रिया चित्त में ज्ञान रूप में तथा चित्त की प्रतिक्रिया चेष्टा के रूप मे सतत् चलती रहती है। ज्ञान ग्रहण की प्रक्रिया का वास्तविक स्रोत नाड़िया ही हैं जिन्हें प्राणायाम के द्वारा सचेत, सवेदनशील या शिथिल बनाया जा सकता है। पदार्थ (उत्तेजना) और मन का संबंध प्राण के ही द्वारा जोड़ा जाता है। स्वामी सत्यानंद सरस्वती का कथन है—

"प्राण पदार्थ और मन को चेतना से संयुक्त करने का माध्यम है। चेतना प्राणशक्ति के बिना स्वयं को बाह्य जगत में प्रकट नहीं कर सकती"।

डा. सम्पूर्णानन्द ने कहा है—"उस शक्ति को जो शरीर तथा उसमें रहने वाले सारे कार्यो का संचालन करती है प्राण कहते है।" इस प्रकार शरीर की सारी भौतिक क्रियाओं तथा चित्त की वृत्तियों का मूल आधार प्राण ही है। सुषुम्ना के द्वारा जिसकी गति होती है वह प्राण है सांस नहीं। स्वामी विवेकानंद ने एकाग्रता तथा अनासक्ति को ज्ञान के विकास हेतु परम आवश्यक माना। विद्यार्थी के लिए गूढ़ विषय पर ध्यान एकाग्र करने के लिए चलायमान चित्त पर लगाम डालना बड़ा ही कठिन कार्य हैं किन्तु किसी सुखकारी आसन पर स्थिरता से बैठ कर, शरीर को शिथिल छोड़ देने पर मन को क्षुब्ध करने वाली शारीरिक हलचलें धीरे-धीरे निस्तब्धप्रायः होने लगती हैं। हृदय की गति धीमी पड़ जाती है तथा श्वास-प्रश्वास की गति गहरी तथा धीमी हो जाती है। प्राणायाम के थोड़े अभ्यास के पश्चात् सांस की गति में संगीत की तरह आरोह-अवरोह आ जाता है। फलस्वरूप प्राण भी निश्चल तथा अक्षुब्ध हो जाता है। ध्यान के श्वास-प्रश्वास पर केन्द्रित हो जाने के कारण इन्द्रिय जन्य चंचलता भी यथासंभव रुक जाती है। प्राणों की चंचलता नियमित हो जाने से चित्त भी साधक के वशीभूत हो जाता है। विद्यार्थी के लिए यह एकाग्रता ज्ञान का परम सूत्र है। उपरोक्त मनोशारीरिक स्थिति स्मरण, धारणा, चिन्तन, मनन हेतु आदर्श स्थिति है। इसके अतिरिक्त कपालभाति, भस्त्रिका

तथा भ्रामरी प्राणायाम के द्वारा मस्तिष्क की क्षमताओं में वृद्धि होती है। बुद्धि तथा स्मरण शक्ति का भी इनके द्वारा विकास होता है।

● **मनोवैज्ञानिक उपादेयता**—शरीर की मुख्य नाड़ियों में सुषुम्ना के साथ इड़ा और पिंगला भी महत्वपूर्ण हैं। इड़ा बाए नासारंध्र से संचालित होती है तथा पिंगला का संचालन दांए नासारंध्र द्वारा होता है। पिंगला नाड़ी सूर्य का प्रतीक है जो बौद्धिकता, उत्तेजना तथा सक्रियता का द्योतक है। इड़ा चंद्रमा का प्रतीक है जिसका गुण, विचार, शांति, कोमलता तथा भावात्मकता है। प्राणायाम की प्रक्रिया द्वारा इड़ा तथा पिंगला मे प्राणारोहण संतुलित करके व्यक्तित्व का संतुलित विकास संभव है। सतत् क्रोध, उत्तेजना, संवेदन शुन्यता, भावावेग आदि कई तनावजन्य प्राणघातक रोगो को जन्म देते हैं। अति भावुक व्यक्ति भी यथार्थ जीवन में असफल रहता है। फलस्वरूप उसके जीवन में नकारात्मक दृष्टिकोण का विकास होने लगता है। मात्र प्राणायाम के द्वारा बुद्धि तथा विचारों का समन्वय होने से जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण बनने लगता है। शरीर तथा मन की शक्तियां विकसित होने से आत्मविश्वास तथा कार्यक्षमता मे तीव्र विकास होता है। समस्याओं का सामना करने की शक्ति आ जाती है। कार्यशक्ति सही दिशा में बहने लगती है परिणामस्वरूप व्यक्तित्व मे आमूल-चूल परिवर्तन आ जाता है।

● **आध्यात्मिक जाग्रति**—मनुष्य की पिण्ड देह (Ethenic Body) में शक्ति के छः केन्द्र हैं जिन्हें चक्र कहा जाता है। मूलाधार चक्र रीढ़ के नीचे भाग मे, स्वाधिष्ठान लिंग मूल में, मणिपुर नाभि में, अनाहत हृदय में, विशुद्धि चक्र कंठ में तथा आज्ञा भ्रू मध्य मे स्थित है। मूलाधार चक्र के भीतर कुण्डलिनी शक्ति (Spirit fire) एक सर्पिणी की भाति कुण्डली मारे सुषुप्त है। जब योगी प्राणायाम करता है तो प्राण के आघात से कुण्डलिनी की निद्रा टूटती है तथा वह चक्रों को जाग्रत करती हुई सहस्राचक्र तक पहुंच जाती है जहा शक्ति तथा शिव का मिलन होता है। यही मोक्ष या आत्मानुभूति है। ज्यों-ज्यों कुण्डलिनी इन चक्रों में आरोहण करती है साधक को अपनी शक्ति, ज्ञान तथा आनन्द के अतिरेक का अनुभव होता है। डा. सम्पूर्णानन्द का कथन है—"कुण्डलिनी प्राण का ही नामान्तर है........ प्राण की शक्ति की प्रेरणा से शरीर में बौद्धिक तथा भौतिक स्तर पर सारे कार्य होते हैं। प्राण शरीर में पराशक्ति तथा उससे अभिन्न परमात्मा का प्रतीक एवं प्रतिनिधि है। उसी प्राण का जो रूप आध्यात्मिक स्तर पर कार्य करता है जिसका अनुभव प्राणायाम की अवस्था मे साधक को होता है उसी का नाम कुण्डलिनी है। ज्यों-ज्यों वह उर्ध्वगामिनी होती है साधक अपने स्वरूप के निकट आता जाता है। वह परमात्मा का अभिन्न अंग है। उसके भीतर सारे ज्ञान, आनन्द, शक्ति का भण्डार है।"

यह जीव का शिव में परिवर्तन है जो प्राणायाम की चरम उपलब्धि है। पतजलि ने प्राणायाम की उपलब्धियों की ओर सकेत किया है—

"ततः क्षीयते प्रकाशावरणम"(2,52)

एव

"धारणा च योग्यता मनसः" (2,53)

अर्थात् उससे प्रकाश का आवरण क्षय हो जाता है। मन को धारणाओं मे स्थिर रखने की योग्यता आती है। इन्द्रियो के सतत् तादात्म से अज्ञान का जो अंधकार बुद्धि पर छाया रहता है वह प्राणायाम के प्रभाव से छंटने लगता है, फलस्वरूप वह इन्द्रिय विषय से पृथक होकर अनासक्त भाव को प्राप्त कर लेती है। यह सत्य, शिव, सुन्दर की प्राप्ति है।

● **सामाजिक उपादेयता**—बर्ट्रेंड रसेल का कथन है—"हम एक ऐसे जीवन प्रवाह के बीच है जिसका साधन है—मानव दक्षता और साध्य है मानवीय मूर्खता। ....जब तक मुनष्य में ज्ञान के साथ विवेक का विकास नहीं होता, ज्ञान की वृद्धि दुख की वृद्धि साबित होगी।"

सत्य है कि विज्ञान के विकास ने भौतिक सुख सुविधाओं के ढेर लगाए हैं लेकिन उस पर बैठा व्यक्ति व्यर्थ की भागदौड़, अस्वस्थ प्रतिद्वंदिता, यांत्रिकता, हिंसा, कुन्ठा, चिन्ता आदि से तृप्त होकर सामाजिक, भावनात्मक तथा पारिवारिक तनावों की सतत् पीड़ा झेल रहा है। मनोरोग प्रौढ़ों और युवाओ को ही नही किशोरों और नन्हे बच्चों को भी अपने चक्रव्यूह में फंसा रहे हैं। स्वार्थ, हिंसा तथा हवस का नग्न तांडव मानवता की नियति

बन रहा है। इस सामुहिक विघटन और विश्व तनाव का मुख्य कारण मानव की चेतना का विघटन और विखंडन है। मानव चेतना की सुविख्यात मर्मज्ञ इरा प्रोग्राफ ने अपने शोध निष्कर्ष मे कहा है–

"आधुनिक मानव व्यक्तित्व मे एक मौलिक चेतनात्मक रूपान्तरण ही हमारी सभ्यता के सभावित ऐतिहासिक विध्वंस को रोक सकता है।"

मानव चेतना की समग्रता को खोजने के लिए पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक भी भारतीय योग पद्धतियों की ओर आकर्षित हुए हैं। कार्ल युंग ने इस संदर्भ मे 'मॉडर्न मैन इन सर्च ऑफ सोल' नामक ग्रन्थ लिखा। जीन हार्डी ने 'साइकोलॉजी विद ए सोल' लिख कर मानव चेतना के आधार को जानने का प्रयत्न किया है। डा. जेकिल एवं हाइड के अनुसार मानव चेतना के दो केन्द्र हैं– एक है छद्म स्व यानी कि अहं, दूसरा है वास्तविक स्व अर्थात् आत्मा। दोनों स्व के बीच की बढ़ती खाई ने सामाजिक स्वार्थ तथा विश्वबधुत्व की भावना मे समन्वय रोक दिया है। विज्ञान जन्य जीवन पद्धति के प्रति घोर अनास्था का स्पष्ट दिग्दर्शन हिप्पीवाद, हिसा, नशाखोरी, एड्स, व्यर्थबोध तथा मनोरोगों की ओर बढ़ते जन सैलाब में हो सकता है। उपरोक्त सामाजिक विद्रूपता का हल योग तथा प्राणायाम में है। वास्तव मे प्राणों का परस्पर विरोध ही तनाव का मुख्य कारण है जिसको प्राणायाम द्वारा संतुलित किया जा सकता है। 'आल्टरनेट मेडिसिन फॉर डमीज' के लेखक जेम्स डेलियार्ड का कहना है–"नियत्रित सांस लेना शरीर को स्वस्थ रखने के बेहतरीन उपायों में से एक है यह मस्तिष्क में मौजूद असंख्य विचारों के शोर को शांत कर देता है।" ध्यान की पहली सीढ़ी प्राणायाम ही है जो कि मानव चेतना की गहन गहराईयो तक पहुंच कर, अचेतन मन को कुठाओ से विमुक्त कर, मनुष्य के सहज स्वभाव को प्रकट कर जीवन को आनन्दमय बनाता है। प्राणशक्ति उसकी चेतना को आनन्दमय कोश की गहराईयों में छिपे आत्मज्ञत्व का साक्षात्कार कराने मे सफल होती है तब सम्पूर्ण ब्रह्माड के एकत्व के सूत्र का बोध अनायास ही प्रकट हो जाता है।

अस्तु स्पष्ट है कि प्राणसत्ता के विस्तार तथा संतुलन का मानव जीवन मे बहुआयामी महत्व है। प्राणशक्ति का सामंजस्य ठीक होने पर जीवन सत्ता के सभी अग-प्रत्यंग ठीक प्रकार से काम करते रहते है। शरीर स्वस्थ होने पर मन भी प्रसन्न रहता है तथा अतःकरण में सद्भाव तथा संतोष की सद्वृद्धि होती है परतु यदि प्राणक्षेत्र मे विकृति तथा असंतुलन पैदा होने लगे तो उसकी प्रतिक्रिया अधिव्याधियों, विपत्ति-विभीषिकाओं के रूप में प्रत्यक्ष दिखाई देती है। असंतुलित प्राण ऊर्जा से शारीरिक अवयवो की कार्य प्रणाली लड़खड़ा जाती है। मनः क्षेत्र में उत्पन्न हुआ प्राण विग्रह असंतुलनों, आवेगों और उन्मादों को जन्म देता है। भावना क्षेत्र मे हुई प्राणों की विकृति मनुष्य को नर-कीटकों, नर-पिशाचों के घिनौने गर्त में गिरा देती है। प्राणकोश की साधना का महत्व अपरिमित है क्योंकि यह मनस्विता, तप, ओज तथा तेज की अपार वृद्धि कर चमत्कार कर सकती है क्योंकि एक अति साधारण सा मानव इसके जादू से महामानव में परिवर्तित हो सकता है। ❑❑

शिक्षा संकाय, कुमाऊं विश्वविद्यालय परिसर
अल्मोड़ा

शिक्षा आर्थिक विकास का एक सशक्त माध्यम

❑ जितेन्द्र कुमार लोढ़ा

कुछ समय पूर्व तक यह समझा जाता था कि किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास उसके प्राकृतिक एवं भौतिक साधनों पर निर्भर करता है, परन्तु वर्तमान में कई ऐसे तथ्य सामने आए हैं जो इस बात को साबित करते हैं कि कई राष्ट्रों ने अपर्याप्त प्राकृतिक साधनों के बावजूद प्रगति की है। उदाहरण के लिए जापान, हॉलैण्ड, नार्वे, स्विट्जरलैंड, इजराइल आदि अनेक ऐसे देश हैं जिन्होने प्राकृतिक एवं भौतिक साधन कम होते हुए भी आशातीत उन्नति की है। इसके विपरीत अरब देशो के पास पर्याप्त तेल के भण्डार हैं, भारत एवं कांगो जैसे अनेक विकासशील राष्ट्रों के पास पर्याप्त प्राकृतिक एवं मानवीय साधन हैं, फिर भी इनकी विकास की दर बहुत कम है, अर्थात् साधनों से भरपूर राष्ट्र निर्धन हैं और बहुत कम प्राकृतिक एवं मानवीय साधनो वाले राष्ट्र अमीर हैं। इससे यह स्पष्ट है कि कोई अन्य घटक अवश्य है जो राष्ट्र की प्रगति में अनिवार्य रूप से सहायक है और वह है शिक्षा।

किसी भी राष्ट्र का भविष्य उसके आर्थिक विकास पर निर्भर करता है और शिक्षा आर्थिक विकास में अपना सकारात्मक योगदान प्रदान करती है। शिक्षा किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था का आधार है। 18वीं शताब्दी के अंत में प्रो. एडम स्मिथ ने आर्थिक विकास के क्षेत्र में शिक्षा के योगदान को स्वीकार किया था। इसके पश्चात् प्रो. मार्शल एवं शुम्पीटर ने शिक्षा को आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण घटक मानते हुए इसकी भूमिका को पुरजोर रूप से स्वीकारा। प्रो. जोहन वेजी ने शिक्षा को अर्थशास्त्र से जोड़ते हुए अपनी पुस्तक 'Economics of Education' में राष्ट्र के विकास में शिक्षा के महत्वपूर्ण कार्यो का उल्लेख करते हुए शिक्षा तथा आर्थिक विकास के सम्बन्ध को "चिकन-एग" (Chicken and Egg) के सम्बन्ध की संज्ञा दी। प्रो. हॉबिसन तथा मायर्स ने "Education, Manpower and Economic Growth" नामक अपनी पुस्तक में शिक्षा को आर्थिक विकास का बीज तथा फूल दोनों माना है। शुल्ट्ज ने अपनी पुस्तक "Investment in human Capital" मे शिक्षा को मानव पूंजी के निर्माण का सबसे महत्वपूर्ण साधन माना है। जिस पर किसी भी राष्ट्र के अर्थतत्र की नीव आधारित होती है। प्रो ब्लाग मार्क ने अपनी पुस्तक "Investment to the Economics of Education" में शिक्षा को आर्थिक जगत का शत-प्रतिशत लाभ देने वाला विवेकशील, अनिवार्य एवं आधारभूत विनियोग की सज्ञा दी है। मार्क का मानना है कि शिक्षा के क्षेत्र में लगाया धन राष्ट्र को बहुआयामी प्रतिफल प्रदान करता है, साथ ही सुदृढ़ आर्थिक ढाचे के निर्माण में एक आवश्यक घटक का कार्य भी करता है।

किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास का बीज शिक्षा के उद्देश्यों में निहित है। इस सम्बन्ध में टी.डब्ल्यू. शुल्ज का कहना है "आर्थिक विकास के लक्ष्य हेतु पूंजी हो, भूमि हो, भौतिक प्रसाधन उपलब्ध हो किन्तु किसी भी कारीगर को अपने व्यवसाय का तकनीकी ज्ञान उपलब्ध न हो, स्थानीय आर्थिक व्यवस्था का ज्ञान न हो, साक्षर न हो तो उत्पादन में कमी होना स्वाभाविक है।"

भारत में भी डा. आत्माराम मिश्र ने अपनी पुस्तक "Educational Finance in India" और जे. पी. नायक ने अपनी पुस्तक "Educational Planning in India" मे शिक्षा की भूमिका को प्रथम वरीयता में स्वीकारा है। इसी प्रकार मद्रास विकास संस्थान के अध्यक्ष डॉ. मैल्कम एस. अदिशेसैय्या का कहना है कि "किसी भी समाज में व्यापक एवं सूक्ष्म आर्थिक परिवर्तन लाने का सर्वाधिक सशक्त माध्यम शिक्षा होती है। यह गरीबी हटाने का एक प्रमुख साधन है। मानव पूंजी निर्माण, जनशक्ति

नियोजन एव आर्थिक बेहतरी मे शिक्षा व उसके विभिन्न स्वरूपों का सबसे अधिक योगदान है।" सोवियत रूस के अर्थशास्त्री स्ट्रमलिन ने अपने देश के आर्थिक विकास में शिक्षा के महत्व एवं योगदान को पहचाना तथा 1919 में लेनिन को एक पत्र लिखकर चेतावनी दी कि "यदि शिक्षा के क्षेत्र मे वांछित निवेश नहीं किया गया तो इस्पात कारखानों और मशीन टूल फैक्ट्रियों के साथ-साथ विशाल औद्योगिक उपक्रम भी चरमराकर बैठ जाएंगे।"

शिक्षा आयोग 1964-66 ने शिक्षा को आर्थिक विकास का महत्वपूर्ण साधन मानते हुए इसे उत्पादकता से जोड़ने को भारतीय शिक्षा का महत्वपूर्ण उद्देश्य माना है। दस वर्ष की सामान्य शिक्षा में "कार्यानुभव" को अनिवार्य रूप से लिया जाए तथा दस वर्ष के पश्चात् दो वर्ष "शिक्षा का व्यावसायीकरण" हो, इस आयोग की समसामयिक सिफारिशें हैं। शिक्षा राष्ट्र के भौतिक एवं मानवीय साधनो को अधिक योग्य, सक्षम एवं गुणात्मक बनाकर आर्थिक विकास का आधार तैयार करती है। शिक्षा द्वारा राष्ट्र को सुयोग्य नागरिक, कुशल श्रमिक, डाक्टर, इंजीनियर, कम्प्यूटर विशेषज्ञ, अध्यापक, वकील, प्रबन्धक एव वैज्ञानिक प्रदान किए जाते हैं, जो नियोजित ढंग से अपने विवेक, दायित्वबोध, कौशल एवं ज्ञान का प्रयोग करके राष्ट्र के आर्थिक निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। अत स्पष्ट है कि शिक्षा एक महत्वपूर्ण आर्थिक घटक है, शिक्षा एवं आर्थिक विकास मे गहन फलनात्मक सम्बन्ध हैं। एक ओर आर्थिक विकास शिक्षा का फलन है, वहीं दूसरी ओर शैक्षिक विकास एवं शिक्षा का स्तर आर्थिक उन्नति पर निर्भर करते है। जिस राष्ट्र में प्राथमिक, माध्यमिक, उच्चतर शिक्षा जितनी सशक्त, आधुनिक, अनुसंधानात्मक, तकनीकीपूर्ण एवं व्यावसायिक स्वरूप लिए होगी। तो वहां श्रेष्ठ मानव पूंजी का निर्माण होगा। श्रेष्ठ आर्थिक चिन्तन एवं राष्ट्रानुकूल साधनों की दिशा प्राप्त होगी। फलस्वरूप आर्थिक विकास की दर तीव्र होगी तथा गैर-आर्थिक घटक हतोत्साहित होंगे। शिक्षा बजट में अभिवृद्धि होती है तो राष्ट्र में शैक्षिक विकास को बढ़ावा मिलता है, जिसका अन्ततोगत्वा देश के प्राकृतिक एवं मानवीय साधन के विकास पर प्रभाव पड़ेगा। इससे सिद्ध होता है कि शिक्षा एवं आर्थिक विकास में सकारात्मक सह-सम्बन्ध है। इस महत्वपूर्ण सूत्र को आज के राष्ट्र निर्माता एवं आर्थिक चिन्तक समझ चुके है, इसलिए प्रत्येक राष्ट्र के शैक्षिक बजट में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है। स्वयं भारत में 1999-2000 के वार्षिक बजट में 2000 करोड़ रुपए शैक्षिक क्षेत्र में विनियोजन हेतु रखे गए और यह राशि 2001-02 के वार्षिक बजट में 3150 करोड रुपए तक पहुच गई है। इसके पीछे राष्ट्र की नई आर्थिक नीति की मंशा यह है कि शिक्षा के माध्यम से अर्थव्यवस्था के अनुकूल मानव सम्पदा को तैयार किया जाए ताकि *आर्थिक विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने में आसानी* रहे। इस सम्बन्ध में आधुनिक समष्टि अर्थशास्त्र के जनक जॉन मेनार्ड कीन्स का कहना है कि "किसी भी अर्थव्यवस्था का विकास वहां की आर्थिक नीतियों, सरकार एवं जनता की आर्थिक सोच एवं समझ पर निर्भर करता है, यदि उस देश की जनता को सम्यक् रूप से आर्थिक सिद्धान्तो के प्रयोग के लिए शिक्षित एवं प्रशिक्षित नही किया गया तो वहा आर्थिक विकास की सम्भावना क्षीण होती है क्योंकि अर्थव्यवस्था कभी स्वचालित नहीं होती उसका संचालन उस राष्ट्र की जनता के आर्थिक चिन्तन पर निर्भर करता है"।

उपर्युक्त प्राज्ञ पुरुषों एवं आर्थिक चिन्तको के विचारों का सिंहावलोकन करने के बाद शिक्षा किस प्रकार आर्थिक विकास का एक सशक्त माध्यम है, इसे सिलसिलेवार प्रकट किया जा रहा है।

आर्थिक विकास एवं शिक्षा के उद्देश्य

शिक्षा के उद्देश्य निर्धारण का कार्य समाज का होता है। समाज की आवश्यकताओं, आकांक्षाओं एवं आशाओं के अनुरूप ही शिक्षा के उद्देश्यों का गठन होता है। प्राचीन समय में शिक्षा का लक्ष्य चरित्र निर्माण तथा मानव मात्र के व्यक्तित्व का विकास था। यद्यपि शिक्षा के ये लक्ष्य आज भी महत्व रखते हैं परन्तु आज के इस उदारीकरण, निजीकरण एवं वैश्वीकरण (L.P.G.) वाले युग में समाज का मुख्य आधार आर्थिक विकास है। शिक्षा जिसके लक्ष्य समाज के आधारित एवं सामान्य स्वीकृत दृष्टिकोणों के

आधार पर निर्मित होते हैं। अत. आज के इस आर्थिक युग मे उत्पादन में वृद्धि, मानव मात्र को जीविकोपार्जन के लिए तैयार करना, छात्रों में श्रम के प्रति गरिमा के भाव पैदा करना, श्रेष्ठ एवं सम्यक् कौशलों से परिपूर्ण मानव पूंजी का निर्माण करना, व्यावसायिक एव तकनीकी शिक्षा पर बल देना, छात्रों में आर्थिक समझ का विकास करना, आर्थिक परिवर्तनों के अनुसार सामाजिक वातावरण पैदा करना आदि शिक्षा के मुख्य उद्देश्य है।

इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध अर्थशास्त्री जॉनसन का कहना है कि "शिक्षा भी अन्य पूजियों की तरह एक पूंजी है क्योंकि इसका लक्ष्य ऐसी जनशक्ति प्रदान करना है, जिसकी सहायता से भौतिक पूंजी अर्जित की जा सकती है।" नई शिक्षा नीति 1986 में यह स्वीकार किया गया कि शिक्षा मे सैद्धान्तिक पहलुओं के साथ-साथ व्यावहारिक पक्ष की भी अधिक महती आवश्यकता है क्योकि इसके अभाव में पढ़े-लिखे बेरोजगारों की सख्या बढ़ी है। इन्हीं उद्देश्यो को ध्यान मे रखते हुए 1986 में नई शिक्षा नीति के तहत 10+2+3 योजना राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकारी गई। जिसमें शिक्षा के व्यावसायीकरण पर विशेष ध्यान दिया गया, साथ ही अपेक्षा की गई कि इससे राष्ट्र में बेरोजगारों की संख्या कम होगी वहीं छात्रो को भविष्य के लिए रुचि का व्यवसाय मिल जाएगा। छात्रों की आर्थिक कार्यकुशलता में वृद्धि होगी, उनका राष्ट्रीय विकास में प्रत्यक्ष योगदान रहेगा। अतः जिस शिक्षा का लक्ष्य प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्र का आर्थिक विकास एवं व्यक्ति की आर्थिक कार्यकुशलता को बढ़ाना है तो उसे अपनी समस्त आयोजना, कृषि विकास, ग्रामीण विकास, बेरोजगारी को दूर करना, उत्पादकता को बढ़ाना, अर्थव्यवस्था की आशानुकूल जनशक्ति का निर्माण, स्वरोजगार की प्रेरणा देना, औद्योगीकरण की आवश्यकता के अनुसार तकनीकी एव व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था करना आदि पर रखनी होगी। शिक्षा के उद्देश्य राष्ट्र के आर्थिक विकास की दिशा के अनुकूल हों तो निःसन्देह उस राष्ट्र के आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त होगा। यदि शिक्षा आयोजना एवं शिक्षा सगठन संरचना शिक्षा के आर्थिक उद्देश्यों के अनुसार होगी तो उस राष्ट्र की सन्तति में सम्यक् अपेक्षित गुण एवं आर्थिक कौशल पैदा होगे जिससे वे भौतिक साधनो का सर्वोत्तम प्रयोग कर सकेगे तथा उनमे अपेक्षित आर्थिक समझ पैदा होगी जिसके कारण उनका आर्थिक व्यवहार वैयक्तिक एवं राष्ट्र के आर्थिक हितों के अनुकूल होगा। अत स्पष्ट है कि किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास का बीज शिक्षा के उद्देश्यों में निहित है। इस सम्बन्ध में टी.डब्ल्यू. शुल्ज का कहना है "आर्थिक विकास के लक्ष्य हेतु पूंजी हो, भूमि हो, .भौतिक प्रसाधन उपलब्ध हो किन्तु किसी भी कारीगर को अपने व्यवसाय का तकनीकी ज्ञान उपलब्ध न हो, स्थानीय आर्थिक व्यवस्था का ज्ञान न हो, साक्षर न हो तो उत्पादन मे कमी होना स्वाभाविक है।"

मानव पूंजी निर्माण एवं आर्थिक विकास

सर्वविदित आर्थिक सूत्र है कि देश का आर्थिक विकास उस देश की मानव पूंजी पर निर्भर करता है। मानव आर्थिक क्रियाओं का साध्य एव साधन दोनों है। अतः श्रेष्ठ मानव पूंजी होने पर ही आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है। श्रेष्ठ मानव पूंजी के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति सम्भव है। श्रेष्ठ मानव पूंजी के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए गांधी जी ने बुनियादी तालीम कार्यक्रम दिया जिसमे उत्पादन के साथ-साथ शिक्षा चले, की संकल्पना की गई है। पश्चिम के शिक्षाशास्त्र ने इसे Work Experience (कार्यानुभव) तथा Vocationalization of Education (शिक्षा का व्यावसायीकरण) की संज्ञा दी है। इस प्रकार की शिक्षा से कौशलों से परिपूर्ण मानव पूंजी प्राप्त होती है। जिससे देश में उत्पादन का स्तर बढ़ता है। इसलिए आज समय की मांग है कि कार्य के साथ शिक्षा दी जाए ताकि आगे चलकर छात्र उत्पादन व्यवस्था का अग बन कर स्वरोजगार चला सके न कि देश पर गैर-आर्थिक कारक के रूप मे भार बने। अर्थशास्त्र में पूंजी उत्पादन का एक महत्वपूर्ण साधन है। यह तीन प्रकार की मानी गई है यथा—भौतिक पूंजी जिसमे मशीन, उपकरण, यन्त्र, यातायात के साधन आदि शामिल होते हैं; दूसरी मानव पूंजी, जिसका आशय राष्ट्र की शिक्षित, कौशलो से परिपूर्ण,

स्वस्थ जनशक्ति से है; तीसरी वित्तीय पूजी होती है जिसका सम्बन्ध भौतिक एवं मानवीय पूंजी के मौद्रिक स्वरूप से होता है। आर्थिक विकास एवं पूंजी विनियोजन में धनात्मक सम्बन्ध होते हैं। उत्पादन व्यवस्था मे Input के रूप मे सभी भौतिक सम्पदाए मौजूद हों लेकिन मानव पूंजी सम्यक् ना हो तो आर्थिक विकास का मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। जापान एवं जर्मनी में आर्थिक विकास का मुख्य आधार मानव माना जाता है तथा वहां की शिक्षा आयोजना का सम्पूर्ण ध्यान राष्ट्र की आवश्यकता के अनुकूल मानव पूजी का निर्माण करना होता है।

जापान जैसे देश की भौगोलिक परिस्थितियां विषम हैं, प्राकृतिक साधनो का भी अभाव है, द्वितीय विश्व युद्ध मे विध्वंसित देश है, फिर भी वहां की अर्थव्यवस्था वर्तमान में विश्व की अग्रणी अर्थव्यवस्था है तथा सम्पूर्ण विश्व-बाजार में उसके उत्पादन का बोलबाला है। दूसरी ओर तृतीय विश्व के भारत समेत अनेक सारे देश जहां भौतिक एव मानव सम्पदा होते हुए भी आर्थिक विकास की दर बहुत धीमी है। इसके मूल मे कारण है श्रेष्ठ मानव पूंजी का अभाव। इन राष्ट्रो की जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग गैर-आर्थिक स्वरूप लिए हुए है, साथ ही आर्थिक कल्याण में बाधक तत्व के रूप में अपनी उपस्थिति बहुत अधिक रखता है।

आज भारत मे शिक्षा का अभाव एवं सम्यक् सरचना न होने के कारण बहुत बडी जनसंख्या मे आर्थिक चिंतन एवं आर्थिक समझ का अभाव है। जिसके कारण हमारी जनशक्ति सकारात्मक एवं समसामयिक आर्थिक सोच विकसित नहीं कर पाई है। देश में शिक्षित वर्ग का 60 प्रतिशत भाग अखबारों मे आर्थिक परिशिष्ट एवं आर्थिक पुस्तकों का अवलोकन एवं अध्ययन नही करता है। ग्रामीण एवं शहरी जनसंख्या मिला कर 80 प्रतिशत से अधिक लोगो को राष्ट्रहित के आधार पर आर्थिक आयोजना एव उनके राष्ट्र के प्रति आर्थिक दायित्वों का ज्ञान नहीं है। फलस्वरूप आर्थिक विकास की अपेक्षित दर प्राप्त नही हो रही है। इससे सिद्ध होता है कि किसी भी राष्ट्र का आर्थिक विकास केवल उसके प्राकृतिक साधनों तथा भौतिक पूंजी पर निर्भर नही करता बल्कि विकास का वास्तविक कारण है मनुष्य। वाछित मनुष्यो का निर्माण करती है शिक्षा। इस कारण शिक्षा का किसी भी राष्ट्र के आर्थिक विकास में प्रत्यक्ष योगदान होता है। इसलिए प्रोफेसर कुम्बस ने लिखा है "औद्योगीकरण की सम्पूर्ण प्रतिक्रिया मानवीय साधनों के बिना प्रगति नही कर सकती और मानवीय साधनो की कुशलता के लिए शिक्षा में विनियोजन की आवश्यकता है।" इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध उद्योगपति हेनरी फोर्ड ने कहा था कि "हम हमारे कारखानों में भौतिक वस्तुओ का निर्माण नहीं करते वरन् हमारा लक्ष्य श्रेष्ठ मानव बनाना होता है। जो हमारी वास्तविक सम्पत्ति होते हैं यही हमारी सफलता का रहस्य है। आप मेरा सब कुछ छीन लो, मेरा संगठन मुझे दे दो मै एक साल मे पुनः अपने आप को स्थापित कर लूंगा।" अमेरिका के बहुत बड़े अर्थशास्त्री प्रो. गालब्रिथ ने अपनी पुस्तक The Afftutent Society में लिखा है कि "अमेरिका के लोग अब समझ गए हैं कि केवल भौतिक वस्तुओं में पूजी लगाना बुद्धिमानी नहीं है। मनुष्य के विकास मे पूंजी लगानी चाहिए। मनुष्य मे गुणो का विकास करना चाहिए। इससे समाज का भला होगा, दुनिया का भला होगा।" सारांशतः कह सकते हैं कि किसी भी राष्ट्र का सार्वभौमिक विकास निर्भर है मानव पूंजी पर तथा वांछित मानव पूजी का निर्माण निर्भर करता है हमारी शिक्षा पर। अतः हमारी शिक्षा आयोजना का सम्पूर्ण ध्यान श्रेष्ठ मानव उत्पादन पर होना चाहिए बाकी सारे लक्ष्य अपने आप सहज प्राप्त हो जाएगे।

आर्थिक परिवर्तन एवं शिक्षा

प्रो जॉन मेनॉर्ड कीन्स का सारा समष्टि मॉडल अर्थव्यवस्था को स्वचालित नहीं मानता वरन् उसके सम्यक् स्वरूप को प्राप्त करने के लिए सही दिशा एवं उपायों के लिए मानव पर निर्भर है। इस प्रावेगिक युग में अर्थव्यवस्था को प्रभावित करने वाले अनेक घटक है जिनके परिणाम-स्वरूप राष्ट्र मे आर्थिक परिवर्तन का वातावरण बनता है, आर्थिक उच्चावचन जन्म लेते हैं। इसलिए प्रो. कीन्स कहते हैं कि "सम्यक् आर्थिक स्थिति को प्राप्त करने के लिए आर्थिक चिन्तकों एवं उस देश की जनता को

सक्रिय योगदान देना होगा" अर्थात् आर्थिक परिवर्तनों का सामना करने के लिए अर्थव्यवस्था को सही दिशा देने के लिए उस देश की जनता को बुरे आर्थिक प्रभावो से बचाने के लिए उन्हें शिक्षित एवं प्रशिक्षित करने का कार्य करना होगा जिसका सबसे श्रेष्ठ माध्यम शिक्षा है। शिक्षा के माध्यम से आर्थिक परिवर्तनों का सामना करने, अर्थव्यवस्था को वांछित दिशा देने के लिए उस देश की जनता को प्रशिक्षित करना होगा। उदाहरण के तौर पर मदीकाल की स्थिति मे जनता अर्थात् समाज का कैसा व्यवहार होना चाहिए? तेजीकाल की स्थिति मे कैसा व्यवहार होना चाहिए? बचत, आय, व्यय आदि का दृष्टिकोण कैसा होना चाहिए? इन सब तथ्यों से आम आदमी शिक्षित एवं प्रशिक्षित हो जाता है तो वह अर्थव्यवस्था का एक उत्पादक भाग बन जाता है। फलस्वरूप आर्थिक विकास के द्वार खुल जाते हैं। इस सम्बन्ध में डा. मैल्कम एस. आदिशेसैय्या का कहना है कि "प्राथमिक, माध्यमिक एवं उच्च तीनो प्रकार की शिक्षा क्षेत्र, परिवार और समाज के आर्थिक परिवर्तन में सक्रिय योगदान देती है। प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा छात्रों में सामान्य सम्यक् अभिवृत्तियो का एव उच्चतर शिक्षा दक्षतापरक कौशलो का विकास करके आवश्यक आर्थिक परिवर्तनों की समझ पैदा करती है।"

इस प्रकार शिक्षा दोहरा कार्य करती है एक ओर विपरीत प्रभाव डालने वाले आर्थिक परिवर्तनों से समाज को बचाती है वहीं दूसरी ओर उचित एवं परिस्थितिनुकूल आर्थिक परिवर्तन प्राप्त करने के लिए समाज को प्रशिक्षित करती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि आर्थिक परिवर्तनों की शिक्षा राष्ट्र के आर्थिक विकास की मुख्य कड़ी है। 1930 की मन्दी के बाद प्रो. कीन्स ने अपनी पुस्तक The General Theory of Employment Interest and Money में आर्थिक-परिवर्तन शिक्षा की नींव डाली तथा अर्थव्यवस्था की वास्तविक एवं व्यावहारिक व्याख्या विश्व पटल पर रखी। तभी से आज तक संसार के प्रायः सभी राष्ट्र अपनी आय, व्यय, बचत, विनियोग, उपभोग आदि का न केवल अध्ययन करने लगे हैं बल्कि अपनी अर्थव्यवस्था की सही दिशा का अनुमान लगाकर सम्यक् स्थिति को प्राप्त करने के लिए अपनी जनता को उपचारात्मक रूप से शिक्षित भी करने लगे है ताकि आर्थिक विकास एव प्रति व्यक्ति आय वृद्धि के परम् लक्ष्य तक पहुंच सकें। इस तथ्य को भारत के सम्बन्ध में देखें तो केरल राज्य द्वारा चलाए जा रहे तथा अन्य राज्यों के 2000 से अधिक जिलों में फैले सम्पूर्ण साक्षरता कार्यक्रम ने व्यक्तियों, गांवों और शहरों में जो आर्थिक परिवर्तन किए हैं वे अब दिखने लगे हैं। ये परिवर्तन किसानो में, अकुशल या दक्ष कारीगरों में, खेतीहर मजदूरों मे भी दिखने लगे है, जो अपनी शिक्षा का प्रयोग कर रहे है तथा अपनी उत्पादकता बढ़ा रहे है और नवीन रोजगार के अवसर भी पैदा हो रहे हैं।

जनशक्ति नियोजन में शिक्षा की भूमिका

जो देश अपने आर्थिक विकास हेतु नियोजन करता है, वह उत्पादन के मानवीय साधनों की उपेक्षा नहीं कर सकता, जैसा कि डा. एच. एस. पानेस ने कहा है कि "इस्पात का कारखाना उस समय तक अर्थहीन है जब तक उसके लिए आवश्यक इन्जीनियर, तकनीशियन, कुशल कारीगर, श्रेष्ठ प्रबन्धक आदि का प्रावधान न किया जाए।" शिक्षा प्रणाली का एक कार्य देश की उत्पादन प्रवृत्तियों हेतु योग्य कार्यकर्ता उपलब्ध कराना है, इसलिए यह आवश्यक है कि शिक्षा प्रणाली को राष्ट्र की उत्पादन आवश्यकता के अनुरूप बनाया जाए। जिस प्रकार और तादाद में मानव शक्ति की आवश्यकता भविष्य के लिए, अर्थात् एक या दो दशक की दृष्टि से अनुमानित की जाए, तदनुसार वर्तमान के शैक्षिक निर्णय होने चाहिए। इसी प्रक्रिया को शैक्षिक दृष्टि से जनशक्ति नियोजन की संज्ञा दी जाती है। शैक्षिक एवं आर्थिक दोनो प्रकार के नियोजन मे जनशक्ति नियोजन आवश्यक है, तभी आर्थिक विकास सभव होगा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने 1947 में वैज्ञानिक जनशक्ति समिति की नियुक्ति की। इस कमेटी ने आर्थिक क्रियाओ के प्रकार, वार्षिक उत्पादन, उद्योगों के विभिन्न क्षेत्रों में प्रशिक्षित कर्मचारियों की सख्या आदि के सम्बन्ध में विस्तृत आंकड़े एकत्रित किए। सन् 1951 में जब देश में सामाजिक-आर्थिक

विकास के लिए योजना निर्माण का कार्य आरम्भ किया गया तब जनशक्ति नियोजन के कार्य को महत्व मिला। इस दृष्टि से योजना आयोग ने Institute of Applied Manpower Research नामक जनशक्ति विभाग की स्थापना की। अत: स्पष्ट है कि देश की शिक्षा या शिक्षा प्रणाली के माध्यम से मोटे तौर पर उत्पादन अर्थात् आर्थिक विकास की दृष्टि से जनशक्ति का पूर्वानुमान लगाकर उसी के अनुसार वांछित जनशक्ति का निर्माण एवं विनियोजन किया जाता है, जो प्रत्यक्ष रूप से उत्पादन व्यवस्था में सक्रिय घटक बनती है। दूसरी ओर आर्थिक सम्पदा में अभिवृद्धि होने से शिक्षा का भी विकास होता है। अतः आर्थिक विकास के लिए आर्थिक एवं शैक्षिक दोनो प्रकार के नियोजन में जनशक्ति का सम्यक् स्वरूप में होना आवश्यक है। इसीलिए प्रो. मार्क ब्लग ने अपनी पुस्तक The Economic of Education and the Education of an Economist में लिखा है कि "शिक्षा द्वारा श्रमिकों के शिक्षण एवं प्रशिक्षण के बाद इनकी कुल मांग एव पूर्ति का सन्तुलन देखते हुए जनशक्ति का नियोजन करना चाहिए, किस क्षेत्र में किस प्रकार की शिक्षित एवं प्रशिक्षित जनशक्ति चाहिए, उसी का विकास करना चाहिए।" अतः शिक्षा को राष्ट्र की आशाओं एवं आकाक्षाओ के अनुरूप पूर्वानुमान के आधार पर वांछित जनशक्ति का निर्माण कर सम्यक् क्षेत्र में नियोजित करना चाहिए तभी हम आर्थिक विकास के परम् लक्ष्य को प्राप्त कर सकते है।

अर्थव्यवस्था के त्रि-क्षेत्रीय मण्डल (कृषि, उद्योग, सेवा) के विकास में शिक्षा की भूमिका

किसी भी अर्थव्यवस्था के कृषि (प्राथमिक क्षेत्र), उद्योग (द्वितीय क्षेत्र) और सेवाएं (तृतीय क्षेत्र) तीन प्रमुख क्षेत्र हैं। ये तीनो क्षेत्र एक-दूसरे पर फलनात्मक रूप से निर्भर हैं। किसी भी एक क्षेत्र का Input दूसरे क्षेत्र का Output होता है। इन तीनों क्षेत्रों से प्राप्त उत्पादनों का योग किसी भी राष्ट्र की राष्ट्रीय आय होती है। अतः इन तीनों क्षेत्रों का विकास सच्चे अर्थ में राष्ट्र का आर्थिक विकास होता है। ये तीनों क्षेत्र आधुनिक युग मे अपने प्रगतिशील विकास के लिए शिक्षा पर निर्भर करते हैं। विगत कुछ दशाब्दियों से शिक्षा के माध्यम से कृषि के क्षेत्र मे वैज्ञानिकता एवं व्यावसायिक तथा आर्थिक सोच पैदा हुई है। जिससे कृषि के क्षेत्र में वैज्ञानिकता आ गई है, सुरक्षित भडारों की तकनीकी का विकास हुआ है। पढ़ा-लिखा कृषक अधिक उन्नत ढंग से खेती करता है। कृषि विज्ञान के क्षेत्र में नित नई खोजे हो रही हैं। जिन्हें बिना शिक्षा के समझा एवं जाना नही जा सकता। शिक्षा की सहायता से आज का कृषक सम्पन्न कृषक बनता जा रहा है। वाणिज्यिक ज्ञान से अपनी आर्थिक स्थिति सुदृढ़ बना सकता है। स्वचालित कृषि यंत्रों का प्रयोग भी शिक्षा पर निर्भर करता है। दूसरी ओर उद्योग अर्थात् द्वितीय क्षेत्र तो पूरी तरह शिक्षा पर ही निर्भर है। उद्योग तो पूरी तरह तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की परिणति ही है। आज औद्योगिक जगत मशीनों की खोज के लिए, उनके संचालन के लिए, कुशल श्रमिकों के विकास के लिए, उत्पादन के सम्यक् वितरण के लिए शिक्षा पर निर्भर है। शिक्षा औद्योगिक क्षेत्र में आने वाले परिवर्तन प्रभाव एव उनके प्रयोगों के वैज्ञानिक सिद्धान्तों को आम जन तक पहुंचाने में उद्योगों की मदद करती है। सबसे महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि शिक्षा औद्योगिक जगत के सचालन हेतु प्रबन्धक, विकास एवं विस्तार हेतु साहसी, उत्पादन हेतु इन्जीनियर, पर्यवेक्षक, श्रमिक, एकाउन्टेण्ट, ऑडिटर, लागत लेखापाल, क्रय-विक्रय अधिकारी आदि उपहारस्वरूप भेंट करती है, जिस पर टिका हुआ है सम्पूर्ण औद्योगिक जगत। तृतीय क्षेत्र की सेवाएं जो कृषि एवं उद्योग दोनों के विकास के लिए आवश्यक हैं जिसमें बैंक, बीमा, यातायात कम्पनियां, संचार सेवाओ के साथ-साथ कम्प्यूटर विशेषज्ञ, डाक्टर, अध्यापक, वकील, इंजीनियर, प्रबंधक जैसी अनेक प्रत्यक्ष सेवाए शामिल होती हैं। ये सभी सेवारूपी व्यवसाय शिक्षा पर निर्भर करते है। यों कहें कि अर्थव्यवस्था का तृतीय क्षेत्र अपने विकास एवं संचालन हेतु पूरी तरह शिक्षा पर निर्भर है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

उपर्युक्त तीनों क्षेत्र राष्ट्र के उत्पादन अर्थात् आय

के आधार हैं। जो सम्पूर्ण रूप से शिक्षा पर निर्भर करते हैं। अतः शिक्षा के माध्यम से इन तीनों का सम्यक् विकास एवं समन्वय करके आर्थिक विकास के लक्ष्य को आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में लन्दन स्कूल ऑफ इकॉनोमिक्स के प्रोफेसर डाक्टर डेविड ओवेन्स का कहना है कि "उत्पादन व्यवस्था अपने प्रारम्भिक काल में भी थी लेकिन वर्तमान में जो विकसित उत्पादन तंत्र है, उसके पीछे शिक्षा का अदृश्य हाथ है।"

शैक्षिक लागत तथा प्रतिलाभ

शिक्षा के अर्थशास्त्रियों ने शिक्षा की लागत में शिक्षा मे बिताया समय, शिक्षक एवं कर्मचारियों पर किया गया व्यय, शैक्षिक व्यवस्था एवं उपकरण पर किया गया व्यय, शिक्षा संगठन पर होने वाला पूंजीगत व्यय, अभिभावको द्वारा किया गया व्यय आदि को शामिल किया है तथा प्रतिलाभ मे मानव पूजी में गुणात्मक सुधार, समय योजना के अनुसार शिक्षा की पूर्णता, राष्ट्रीय आय मे वृद्धि, विज्ञान एव नवीन तकनीकी का उत्पादन, व्यावसायिक कौशलो का विकास आदि की प्राप्ति शामिल है। शिक्षा द्वारा प्राप्त आर्थिक लाभों को अनेक दृष्टियों से मापने के प्रयास सयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैण्ड, फ्रांस, रूस एवं भारत मे किए गए है जिनसे इस सिद्धान्त की पुष्टि होती है कि शिक्षा पर किया गया व्यय लम्बी अवधि में जाकर लाभकारी सिद्ध होता है। इस सम्बन्ध में प्रोफेसर एच.जी. शफर ने एक अध्ययन के पश्चात् निष्कर्ष निकाला कि शिक्षा में व्यतीत किया गया समय तथा उसके परिणाम स्वरूप प्राप्त हुई आय में घनिष्ठ सम्बन्ध है। उनके अनुसार शिक्षा के बाद आर्थिक प्राप्ति शिक्षा में लगाई गई पूंजी के प्रत्यक्ष अनुपात में होती है। प्रो. डेनिजन ने अपने अध्ययन मे निष्कर्ष निकाला कि श्रमिको में बढ़ी हुई शिक्षा के कारण सन् 1930 से 1960 के बीच आर्थिक विकास मे 22.5 प्रतिशत की वृद्धि हुई। अब तक किए गए शोधो का सार यह निकलता है कि शिक्षा पर किया गया व्यय प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से राष्ट्र को व्यापक आर्थिक लाभ प्रदान करता है। जिससे आर्थिक विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। इस सम्बन्ध में प्रो. शुल्ज के अध्ययनों का निष्कर्ष यह है कि "शिक्षा पर जिस मात्रा में व्यय किया जाता है उससे कई गुना प्रतिफल शीघ्र ही मिलने लगते हैं।" प्रो. शुल्ज ने पता लगाया कि सन् 1929 से 1957 के मध्य अमेरिका की राष्ट्रीय आय 16.6 प्रतिशत से बढ़ कर 32.2 प्रतिशत तक पहुंच गई।

साराशत. सम्पूर्ण विश्लेषण यह तथ्य प्रकट करता है कि शिक्षा आर्थिक विकास का सबसे महत्वपूर्ण साधन है तथा शिक्षा एवं आर्थिक विकास मे गहरे फलनात्मक सम्बन्ध हैं। इसलिए प्रो. जोहन वेजी कहते है "शिक्षा और आर्थिक विकास दो ध्रुवीय क्रिया हैं, विपरीत स्वभाव की तथा साझे योगदान की, यह चूजे व अण्डे का सम्बन्ध है।" शिक्षा विकास की वह वाहिनी का है जिसे किसी भी क्षेत्र में ले जाया जा सकता है, रास्ता हमें चुनना है, शिक्षा किसी भी रास्ते में बहने को तैयार है......। ❑❑

गांधी विद्या मन्दिर
सरदारशहर, चूरू

नजाति क्षेत्र में शिक्षा : दशा, दिशा एवं दिग्दर्शन

☐ मिर्ज़ा नियाज़ बेग

राजस्थान में जनजातियों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। कर्नल टॉड और गौरी शंकर हीरा चन्द ओझा आदि इतिहासकारों ने यह प्रमाणित किया है कि भील लोग ही दक्षिण एवं दक्षिण-पूर्वी राजस्थान के मूल निवासी थे। राज्य मे भील, मीणा तथा अन्य जनजातियों का ऐतिहासिक व सांस्कृतिक इतिहास रहा है। जनगणना के हिसाब व जनजातीय जनसंख्या की दृष्टि से राजस्थान राज्य का भारत मे छठा स्थान है। 1991 की जनगणना के अनुसार जनजातियों का राजस्थान में कुल आबादी का 12.7 प्रतिशत था, जबकि भारत में यह अनुपात 8 प्रतिशत था। राज्य में भील, मीणा, डामोर, गरासिया, सहरिया जनजातियां पाई जाती हैं, जो बांसवाड़ा में 73 प्रतिशत, डूंगरपुर में 66 प्रतिशत, उदयपुर में 46 प्रतिशत, सिरोही में 23 प्रतिशत, चित्तौड़ मे 20 प्रतिशत है।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पहले और बाद में जनजातियों के विकास तथा उन्नति के लिए केन्द्र, राज्य व स्वयं सेवी संस्थाओं ने कई प्रयास किए। विकास खण्डों, बाद में पंचायत समितियों के द्वारा कई विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए। लेकिन पंचवर्षीय योजनाओं के तहत योजनाबद्ध व समयबद्ध कार्य जनजातीय क्षेत्रीय विकास कार्यक्रम 1970 में प्रारम्भ हुआ। जनजाति उप योजना के माध्यम से यह योजना बांसवाड़ा, डूंगरपुर, उदयपुर, सिरोही, चित्तौड़ क्षेत्र में जहां जनजाति के 66.4 प्रतिशत लोग हैं और जिनमें 4409 गांव एवं 23 पंचायत समितियां है, को विकास कार्यक्रम के प्रभाव में लाया गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व एवं पश्चात् जनजातियों के विकास व उन्नति के लिए केन्द्र,राज्य व स्वयं सेवी संस्थाओं ने कई प्रयास किए। विकास खण्डों, बाद में पंचायत समितियों के द्वारा कई विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किए गए। लेकिन योजनाबद्ध पंचवर्षीय योजनाओं के तहत जनजातीय क्षेत्रीय विकास का समयबद्ध कार्यक्रम 1970 में प्रारम्भ हुआ। जनजाति उप योजना के माध्यम से यह योजना बांसवाड़ा, डूंगरपुर, उदयपुर, सिरोही, चित्तौड़ क्षेत्र में जहां जनजाति के 66. 4 प्रतिशत लोग हैं और जिनमें 4409 गांव एवं 23 पंचायत समितियां हैं, को विकास कार्यक्रम के प्रभाव में लाया गया।

जनजाति कल्याण हेतु जवाहरलाल नेहरु के पंचशील

- ☐ लोगों को उनकी अन्तर्निहित क्षमताओं के अनुरूप विकसित होने देना चाहिए ताकि उन पर हमें किसी भी विचार को थोपने की प्रवृति को टालना चाहिए। हमें हर तरीके से उनकी कला एवं संस्कृति को प्रोत्साहित करने का प्रयास करना चाहिए।
- ☐ जनजाति समुदाय के भूमि एवं वन सम्बन्धित अधिकारों का सम्मान किया जाना चाहिए।
- ☐ प्रशासन तथा विकास के कार्य संचालन हेतु उन्हीं लोगों के अपने दलों को प्रशिक्षित कर तैयार करना चाहिए।
- ☐ इन क्षेत्रों में न तो अति प्रशासन व्यवस्था पनपने देनी चाहिए न कि अनेकों प्रकार की योजनाओं के कुचक्र में उन्हें उलझाना चाहिए।
- ☐ हमें अपने विकास प्रयासों के परिणामों का मूल्यांकन मात्र समंकों या खर्च की गई धनराशि के आधार पर नहीं करना चाहिए। वस्तुतः हमारी सफलता

मानवीय चरित्र निर्माण की ऊंचाईयों के धरातल पर परखी जानी चाहिए।

जनजाति उपयोजना के माध्यम से जनजाति के लोगों की आर्थिक स्थिति सुधारने, जनजातियों मे न्याय एवं समानता तथा विकास की संभावनाओं के लक्ष्य प्राप्त करने के प्रयास किए जा रहे हैं।

उपयोजना में कृषि एवं कृषि सहायक क्रियाएं, ग्रामीण विकास, सिंचाई, ऊर्जा, विकास, उद्योग, खनिज, परिवहन, संचार, वैज्ञानिक सेवाएं, अनुसंधान, सामाजिक, सामुदायिक सेवाएं, आर्थिक सेवाएं, सामान्य सेवाएं आदि को विकास का आधार बनाया गया।

शैक्षिक विकास

डा. डी.एस. कोठारी की अध्यक्षता वाले शिक्षा आयोग (1964-66) ने अपनी रिपोर्ट के शिक्षा के अवसरों के अध्याय में—"राजस्थान में अनुसूचित आदिम जातियो की शिक्षा (1961)" में इनकी कुल नामांकन की स्थिति दर्शाई थी जो इस प्रकार है—

अवर प्राथमिक	:	11.5
उच्चतर प्राथमिक	:	0.9
माध्यमिक	:	0.6
उच्चतर शिक्षा	:	0.5
व्यावसायिक शिक्षा	.	0.5

उस समय राजस्थान की स्थिति सुखद नही थी। इसलिए आयोग की सिफारिश थी कि—

- नामांकन में वृद्धि की जाए।
- प्रभावी शिक्षा की व्यवस्था हो।
- माता-पिता हेतु प्रौढ़ शिक्षा की व्यवस्था हो।
- लड़कियो की शिक्षा पर विशेष प्रोत्साहन हो।
- प्रारम्भिक अवस्था में शिक्षा का माध्यम आदिम जातीय भाषा हो।
- शिक्षा की सुविधाएं बढ़ाई जाएं।
- आश्रम स्कूलो को बड़ी संख्या में खोला जाए।
- स्कूलों का कामकाज और कार्यक्रम पर्यावरण के साथ समस्तर हो।
- उनके अवकाश कृषि व वन संबंधी कार्यों एवं सामाजिक उत्सवों के मौके पर हो।
- कार्यानुभव, कला, लोकनृत्य, लोकगीत, खेल, धनुर्विद्या पाठ्यक्रम का अंग हो।
- सभी विभागों के कर्मचारी, अधिकारी को जनजाति संस्कृति, जीवन शैली एवं मूल्यो तथा मिशन कार्य में प्रशिक्षित एवं क्षमता विकसित कर उप-काडर स्थापित किया जाए।
- इन काडर कार्यकर्ताओं को विशेष वेतन, सुविधाएं एवं पदस्थापन लाभ दिए जाएं ताकि अधिक वर्ष तक निरन्तर यहां कार्य कर सकें।
- आदिम जाति क्षेत्रों मे शिक्षा विभागों मे ऐसे विशिष्ट खण्ड या एकक हों जिनका काम इन जातियो की *आवश्यकताओं का अध्ययन करना और उनके कल्याण* तथा विकास को समुन्नत करने के लिए सर्वोत्तम समझी जाने वाली शिक्षा प्रणालियो को विकसित करने में सहायता देना है।
- अनुसंधान, प्रशिक्षण, मूल्यांकन का एक सतत् कार्यक्रम हो जो कि शिक्षा, समानता और राष्ट्रीय एकता का बड़ा कार्यक्रम है, इस प्रयोजन के लिए जितना भी खर्च किया जाए वह थोड़ा होगा।

शिक्षा जनजाति विकास का आधार

शिक्षा व्यक्ति और समाज, दोनों के गुणात्मक विकास की अनिवार्य शर्त है। भाषा और गणना के कौशल से शुरुआत कर यह सूचनाओं के संग्रह, उनके विश्लेषण और निष्कर्ष निकालने, विचारों और भावनाओं के संप्रेषण आदि की क्षमताओ के विकास मे महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। इसका अभाव व्यक्ति में आत्मविश्वास के अभाव की स्थिति को जन्म देता है और आर्थिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में तीव्र गति से परिवर्तन वाले इस युग में उसका सीमान्तीकरण कर देता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में व्यक्ति में, समानता के स्तर पर, समस्याओं के समाधान एवं राष्ट्र के संचालन में योगदान की क्षमता विकसित करने के लिए जनजाति क्षेत्र में अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा के प्रावधान को अत्यन्त आवश्यक माना गया और इसी वजह से हमारे संविधान निर्माताओं ने सरकार को निर्देशित किया था कि वह संविधान लागू होने के 10 वर्ष की अवधि के भीतर देश में 6 से 14 वर्ष तक की आयु

के बच्चों के लिए अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था लागू कर देने का वादा भी निरन्तर, 2000, 2003 और 2005 तक बढ़ाते रहने के बाद भी, अभी हम यह लक्ष्य प्राप्त करने में निश्चित नहीं है। इस निर्देश में सबके लिए समान स्तर और समान गुणवत्ता की शिक्षा की व्यवस्था निहित है। हमारा राष्ट्र, शिक्षा के महत्व और उपयोगिता से परिचित होते हुए और संवैधानिक निर्देशों के बावजूद, इस क्षेत्र में उपयुक्त व प्रभावी सुविधाएं प्रदान करने की दिशा मे उपेक्षा का दोषी रहा है।

बाल अधिकार और मानव अधिकार

"हर बच्चे को अच्छे से अच्छा स्वास्थ्य, रहने को घर तथा पर्याप्त पोषण मिलना चाहिए। हर बच्चा खेल-कूद सके व निःशुल्क शिक्षा पाए। चाहे लड़का हो या लड़की, जो किसी भी धर्म का हो, किसी भी जाति का हो, कहीं भी जन्म लिया हो, उसे बराबर का अधिकार मिलना चाहिए। हर एक को नाम व राष्ट्रीयता का हक, स्नेह, स्वतंत्र विचार, समझ और सुरक्षा का अधिकार, अवहेलना, क्रूरता और शोषण से बच्चे को सुरक्षा मिले।"

बालको के ये अधिकार आज भी पूरे नहीं हुए हैं। 21वीं सदी में जिस तरह जनसंख्या वृद्धि हो रही है, बच्चों की संख्या और बढ़ेगी। अभाव, अशिक्षा, भूख, रोग, झुग्गी-झोंपड़ियों का जीवन भी ज्यादा बढ़ेगा। बाल श्रमिक, शिक्षा से वंचित जनजाति के बालको को स्कूल में लाने, पूर्ण शिक्षा व अच्छे स्वास्थ्य के दायित्व को पूरा करने का दायित्व निभाना होगा। सबको शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, रोजगार और पीने का साफ पानी क्या हम 21वीं सदी में दिलाने का ठोस कार्यक्रम क्रियान्वित कर सकने में समर्थ हो सकेंगे? इसके लिए हमें प्रतिबद्धता, समर्पण व कर्तव्य परायणता से जूझना पड़ेगा। विशेषकर 'सबके लिए शिक्षा' एवं सम्पूर्ण साक्षरता के लक्ष्यों की पूर्ति करने के लिए।

इस 54 से अधिक वर्षों के सफर में हमने शिक्षा के क्षेत्र में कई प्रयोग, परीक्षण, नवाचार और प्रतिमानों के हर स्तर पर कार्य किया है, अनुभव भी प्राप्त किए हैं, लेकिन आज भी हम सर्वसुलभ, सार्वजनीकरण के लक्ष्य के साथ इसे आत्मनिर्भरता एवं स्वलम्बन युक्त व्यक्तित्व निर्माण की तलाश में भटक ही रहे हैं।

कोठारी आयोग ने सन् 1966 में अपने प्रतिवेदन में सिफारिश की थी कि देश अपनी राष्ट्रीय आय के 6 प्रतिशत के बराबर राशि शिक्षा पर खर्च करे। उस सिफारिश के बाद राष्ट्र आज भी शिक्षा पर राष्ट्रीय आय का 4 प्रतिशत भाग भी खर्च नहीं कर रहा है। विशेषज्ञों का अनुमान है कि देश में 6 से 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों के लिए अनिवार्य व निःशुल्क शिक्षा व्यवस्था करने तथा उसके परिणामस्वरूप उच्चतर माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा की मांग मे होने वाली वृद्धि को पूरा करने के लिए राष्ट्र को कम से कम 8 प्रतिशत राष्ट्रीय आय का प्रावधान करना ही होगा। इस तरह हम आवश्यकता से 50 प्रतिशत राशि ही खर्च कर रहे हैं। इस सीमित प्रावधान में भी प्राथमिक शिक्षा के लिए समुचित प्रावधान न किए जाने से अशिक्षा और अज्ञान से मुक्ति की दिशा में हमारी प्रगति अत्यन्त धीमी रही है।

राजस्थान की मानव विकास रिपोर्ट (1999) तथा अब तक की उपलब्धियां

जनजाति बाहुल्य प्रमुख जिलों की मानव विकास इन्डेक्स जिसमें गरीबी, शिक्षा, स्वास्थ्य (मृत्यु-जन्म दर) की दृष्टि से बांसवाड़ा, डूंगरपुर, उदयपुर व चित्तौड़ क्रमशः प्रथम, द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ स्थान पर राज्य स्तर पर आते है। राज्य में इस दृष्टिकोण से ये जनजाति बाहुल्य जिले सबसे पिछड़े जिलो में आते है।

शैक्षिक उन्नयन के प्रयास

जनजाति क्षेत्रों में स्कूलो के विस्तार, शिक्षको की संख्या तथा छात्र-छात्राओं का नामाकन, साधन, सुविधाओं, प्रशिक्षण-नवाचार प्रयोग एवं प्रयोजनाओं के क्रियान्वयन के सतत् प्रयासों के बावजूद सबको शिक्षा देने का वादा अभी भी वादा ही है, वह आकांक्षा जो अभी भी पूरी नहीं हुई है, वह सकल्प केवल संकल्प बनकर रह गया है।

जनगणना 2001 : साक्षरता की स्थिति

	व्यक्ति	पुरुष	स्त्रियां	स्थान
भारत	65.38	75.38	54.16	
राजस्थान	61.03	76.46	44.34	
बांसवाड़ा	44.22	60.24	27.86	32
डूंगरपुर	48.32	66.19	31.22	30
उदयपुर	59.26	74.47	43.71	16

ग्रामीण क्षेत्रो मे साक्षरता आधी ही है। महिलाओं में साक्षरता अभी भी कम है और जनजाति की देखी जाए तो बहुत ही न्यून एवं दयनीय है। राजस्थान मे 1951 में 6-11 आयु-वर्ग के केवल 17 प्रतिशत बालक-बालिकाओं का नामाकन था, आज सरकारी आकडो के अनुसार 70 प्रतिशत जरूर हो गया है लेकिन पहली से पांचवीं कक्षा तक पहुंचते-पहुंचते आधे से अधिक नामांकित विद्यार्थी अपव्यय एव अवरोधन (Wastage and Stagnation) के शिकार हो जाते हैं। स्थिति वैसे की वैसी ही रह जाती है और नामाकन शिक्षा आपके द्वार, सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य इस समस्या से आगे नहीं बढ पाया है। नामांकन, रोकना (Retention) तथा प्राथमिक शिक्षा सब पूरी करे इसके लिए भगीरथ प्रयास, प्रयत्न एवं प्रतिबद्धता से करने की आवश्यक चुनौती है। वैसे राजस्थान भर मे तथा उदयपुर जनजाति परिक्षेत्र मे शिक्षा के सार्वजनीकरण के लिए औपचारिक शिक्षा का ढांचा आवश्यकता के अनुरूप विकसित हो चुका है। पंचायत समिति स्तर पर ब्लॉक शिक्षा अधिकारी, शिक्षा प्रसार अधिकारी कार्यालय की व्यवस्था की जा चुकी है। सामान्यत. 300 व जनजाति क्षेत्रों मे 150 की आबादी पर प्राथमिक विद्यालय, पंचायतो की पहल और मांग पर राजीव गाधी पाठशालाए, अनौपचारिक एवं सहज शिक्षा केन्द्र आदि खोले जा चुके है। दो अध्यापक व दो कमरे, शैक्षिक उपकरण आदि ऑपरेशन ब्लेक बोर्ड योजना के तहत दे चुके है। जिला शिक्षा प्रशिक्षण सस्थानो पर शिक्षकों का नवाचार युक्त, शिक्षण-अधिगम पर सेवारत प्रशिक्षण भी दिए जा रहे है। अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र भी खोले है जो 9-14 आयु-वर्ग के बालक-बालिकाओं को उनके फुर्सत के समय में प्रारम्भिक शिक्षा प्रदान करते है। आयु वर्ग 15-35 के प्रौढ़ो के लिए प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों की व्यवस्था की है।

आज की स्थिति

- आबादी का 1/3 गरीब जन यहा रहते हैं।
- 46 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी की सीमा रेखा से नीचे है, जिनकी 35/- रुपए प्रतिदिन से कम आय है।
- आधी आबादी निरक्षर है, विश्व में सबसे अधिक निरक्षर भारत मे हैं और वह भी जनजाति क्षेत्रो मे।
- 2/3 महिलाएं निरक्षर हैं। 34.18 प्रतिशत बालिकाए ही स्कूल जाती है और अनुसूचित जनजाति की बालिकाएं तो इससे भी कम प्रतिशत मे स्कूल जा रही हैं।
- 620 लाख जनजाति के बच्चे (5 वर्ष के) कुपोषण के शिकार हैं।
- 1/3 बच्चे (16 वर्ष से कम) बालश्रम मे लगे हैं। मजदूरी करने को मजबूर हैं।
- 7 लाख व्यक्ति प्रति वर्ष बेरोजगारों की पंक्ति में जुड जाते है।

जनजाति क्षेत्र में तीन चौथाई बालक-बालिकाओं के लिए व्यवस्था सरकारी स्कूल ही पूरी करते है। सरकारी स्कूलो में भवन पूरे नही, विज्ञान शिक्षक नहीं, समय पर पाठ्यक्रम पूरा नही हो पाता, अपव्यय एवं अवरोधन की भयकर समस्या, स्थानान्तरण व पदोन्नति, वेतन शृखला हेतु आन्दोलन होते रहे है, बजट की कमी से, अच्छे पुस्तकालय और प्रयोगशाला भी नहीं हैं, और तो और अभी तक सभी स्कूलो मे पीने का शुद्ध पानी, बालक-बालिकाओं के लिए स्वच्छ सुविधा गृहो और अध्यापक-अध्यापिकाओ के लिए आवास सुविधाए भी नही दे पाए है ताकि वे गावो में ही रहे और सामाजिक शिक्षा, सम्पर्क एव सहयोग का सिलसिला बनाए रखें।

वंचित 23 लाख बच्चों को स्कूलों में लाना एक अहम् चुनौती

राजस्थान राज्य मे शिक्षा से वचित 23 लाख बालक-बालिकाओ को उनकी सुविधानुसार पढ़ाने के लिए "शिक्षा आपके द्वार" अभियान शुरू हुआ है। अभियान के प्रथम चरण मे सब बच्चो का नामाकन और दूसरे चरण में उन्हे स्कूल छोड़ने से रोक रखने का लक्ष्य रखा गया है। शिक्षा दर्पण मे स्कूलों से बाहर पाए गए 18 लाख ग्रामीण और पांच लाख शहरी बच्चों में से हर बच्चे तक पहुंचने की योजना बनाई गई है। इनमें अधिकांश अनामांकित संख्या जनजाति बालक-बालिकाओं एवं पिछड़े वर्ग की है।

लक्ष्य

ग्रामीण क्षेत्र में—

- सात लाख बच्चो को औपचारिक विद्यालयों में
- पाच लाख को राजीव गाधी स्कूलों में
- दो लाख को वैकल्पिक कार्यक्रम द्वारा
- दो लाख बालिकाओ को शिक्षण शिविर द्वारा
- दो लाख कमजोर और घुमंतू वर्ग के बच्चों को हॉस्टल सुविधा देकर शिक्षा से जोड़ने का कार्यक्रम घोषित किया है। कार्य दुरूह है, प्रतिबद्धता, समयबद्धता, जनभागीदारी, उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य प्रणाली व मिशन के बिना उपलब्धिया प्राप्त करना एक कठिन चुनौती है ... 2003 या 2005 तक ही सही युद्ध स्तर पर कार्य करने की जरूरत है। विश्व का सबको शिक्षा फोरम तो, सेनेगल सम्मेलन 2000 के अनुसार जनजातियों के शत-प्रतिशत नामाकन का लक्ष्य 2015 निर्धारित किया है।

इक्कीसवीं शताब्दी में जनजाति शिक्षा– बदलाव के आयाम

नई शिक्षा नीति व नई व्यवस्था–शिक्षण की नई परिकल्पना एवं जनजाति शिक्षा नीति में बदलाव आने से ही शिक्षक और शिक्षार्थी में बुनियादी शिक्षा व नवीन स्वरूप आ सकता है। शिक्षा व्यवस्था ऐसी हो जो उपभोक्ता के विरुद्ध आवाज उठा सके। शिक्षा प्रणाली में ऐसी सामर्थ्य हो जो सवेदनशील व टिकाऊ विकास के आधार पर सुपोषित समाज का निर्माण कर सके।

- 21वीं सदी मे हमें ऐसे वातावरण की खोज करनी होगी जो प्रतिभा, स्वचिंतन, आपसी सीखने, आलोचनात्मक सोच एव आजीवन सीखने की प्रक्रियाओं को ज्यादा महत्व देते हुए डेलॉर्स रिपोर्ट के "चार बुनियादी स्तम्भ, ★ नई जानकारी के लिए शिक्षा, ★ प्रवृत्ति/क्रिया द्वारा शिक्षा, ★ बेहतर जीवन के लिए शिक्षा, ★ जीवन विकास के लिए शिक्षा को सक्रियता से क्रियान्वित कर सकें।"
- पाठ्यक्रम रुचि आधारित हो, शिक्षण पद्धतिया प्रयोग आधारित हो, अनुदेशन एव निर्देशन के आधार पर अधिगम हो, सतत् मूल्याकन की व्यवस्था हो ताकि विद्यार्थी हीन भावना का शिकार न हो।
- शिक्षा ऐसी हो जिससे उत्तरदायित्व, अनुशासन, नैतिकता एव सृजनात्मकता विकसित हो ताकि आदिवासी बालक/बालिका उत्तम नागरिक के रूप में सच्चे लोकतत्र की स्थापना करने में सहयोग दे सके। वर्तमान मे आवश्यकता इस बात की है कि तकनीकी युग में शिक्षा विभिन्न परिवर्तनो को अपनाती हुई भारतीय जीवन मूल्यों पर आधारित हो जो दया, प्रेम, सेवा, समानता, सहयोग, अहिसा, श्रम, विश्व बधुत्व में निष्ठा उत्पन्न करे।
- नई सदी मे जो चुनौतियां हमारे सामने हैं, वे है– सबके लिए शिक्षा, शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार, शैक्षिक टेक्नोलॉजी का सदुपयोग, भविष्य के लिए तैयारी, अध्यापकों की नई भूमिका तथा विद्यालयों को और सजीव बनाना। शिक्षा को अधिक सार्थक एव आनन्ददायक कैसे बनाया जाए? इसके लिए प्रयास हो।

अतः जनजाति के अपने परिवेश, संस्कृति, आवश्यकता एव जीवन मूल्यो की शिक्षा पर जोर देना बहुत महत्वपूर्ण है। बालक अपने बारे में निर्णय ले सके, ऐसी शिक्षा दी जाए ताकि वह आत्मनिर्भर बने। उच्च माध्यमिक/उच्चतर शिक्षा स्तर पर शिक्षा अधिक खर्चीली न हो। जो बच्चे गरीब किन्तु मेधावी है उनके लिए आवास, छात्रवृत्ति व शैक्षिक ऋण की व्यवस्था होनी चाहिए।

शिक्षाक्रम की नवीनता

जनजातियों की आवश्यकता, आकाक्षा, अभिरुचि, जीवन शैली, मूल्य एव सस्कृति आधारित शिक्षाक्रम हो। बच्चों पर बस्ते का बोझ कम करके और पुस्तकीय ज्ञान कम करने हेतु नवीन शिक्षाक्रम की रचना कर व्यावसायिक व व्यावहारिक गतिविधियो को आधार बनाकर सीखने हेतु प्रेरित करने पर जोर दिया जाना चाहिए, जिससे बालक को व्यावसायिक दक्षता प्राप्त करने का अवसर मिले। पाठ्यक्रम सरल और रुचिकर हो, प्यार और खेल-खेल मे बच्चा सीख जाए ऐसा प्रयास हो। शिक्षाक्रम ऐसा हो जो वर्तमान और भविष्य के ज्ञान पर जोर दे। एक ऐसी व्यवस्था हो जो नई-नई जानकारी, मार्गदर्शन सब तक सुलभ हो एवं उत्प्रेरणात्मक और जीवनोपयोगी हो।

शिक्षकों एवं अभिभावकों की भागीदारी

यह बात शत-प्रतिशत सत्य है कि 21वीं सदी "सूचना क्रांति" की सदी है। हमारी शिक्षा बाल केन्द्रित हो, जो बालकों के लिए उपयोगी व प्रवृत्ति आधारित हो। इसके लिए जनजाति क्षेत्र में अध्यापकों को अच्छा प्रशिक्षण,

आवास, विशेष सुविधा, सक्रिय भागीदारी तथा सरकार की इच्छा शक्ति आवश्यक है। बच्चो को प्रयोग, रुचि एवं स्वाध्याय के द्वारा स्वाभाविक रूप से सिखाने के प्रयास किए जाने की कोशिश होनी चाहिए ताकि उनमें एडवेन्चर की भावना पैदा की जा सके। मीडिया को शिक्षा-प्रक्रिया मे अधिकतम रूप मे शामिल करना चाहिए। अभिभावकों की सहभागिता का भी प्रयास करना आवश्यक है। प्रारम्भिक कक्षाओं में बालक को अपनी मातृभाषा में शिक्षण कराया जाना जरूरी है क्योंकि बालक अपनी मातृभाषा में बेहतर सोचता और समझता है।

नवाचार

शिक्षा में नवीन आयाम तथा नई प्रक्रियाएं सीखने-सिखाने पर जोर देकर ही हम जनजाति क्षेत्र के बच्चो का विकास कर पाएगे। शिक्षा सब को सुलभ हो और "गुरु मित्र" आधारित हो। बोझ मुक्त व्यावहारिक शिक्षा, विषय-वस्तु की अपेक्षा समझ व कौशल में वृद्धि पर अधिक ध्यान दिया जाए तभी 21वीं सदी मे शिक्षा का स्वरूप लोक कल्याण, विकासोन्मुख, नवीनता से ओत-प्रोत होगा। जनजाति क्षेत्र में भी कई स्कूल ऐसे हों जहां कम्प्यूटर से पढ़ाई हो, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी की समुचित व्यवस्था हो।

यूनिसेफ सयुक्त राष्ट्र बाल कोष ने शिक्षा को और अधिक कैसे बढ़ावा दें, को कारगर नीतियों और ठोस कार्यक्रम के तहत निर्देशित किया है, जिसमें नौ व्यावहारिक युक्तिया व उपाय सुझाए हैं–

- ☐ जनजाति समुदायों के पास ही स्कूल सुविधा उपलब्ध हो।
- ☐ शिक्षको के स्थान पर स्थानीय शिक्षिकाओ की नियुक्ति को प्रोत्साहित किया जाए।
- ☐ स्कूल के खर्च घटाए जाएं ताकि अधिक माता-पिता अपने बच्चों को स्कूल भेज सके।
- ☐ अर्थव्यवस्था, ग्राम्य जीवन, स्वास्थ्य, पोषक आहार, स्थानीय वातावरण और स्थानीय भाषा एवं सस्कृति से जुड़े प्रासंगिक पाठ्यक्रम तैयार किए जाएं।
- ☐ शिक्षा कार्यक्रमों मे समुदाय का हिस्सा/भागीदारी बढ़ाई जाए।
- ☐ स्थानीयकरण और विकेन्द्रीकरण बढाया जाए।
- ☐ शिक्षा का पथ समर्थन और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया जाए।
- ☐ ऐसी पद्धतिया तैयार की जाए जो छात्राओ की आवश्यकताओं को पूरा करती हैं, इन्हें प्राथमिकता दी जाए।
- ☐ औपचारिक, गैर-औपचारिक और परम्परागत तथा आधुनिक सूचना-सचार माध्यमों द्वारा औपचारिक शिक्षा तथा व्यावसायिक शिक्षा पर ध्यान केन्द्रित करने वाली बहुविधा शिक्षा पद्धति का समर्थन किया जाए।

वह सुबह कभी तो आएगी

क्या वो दिन आएगा जब प्रगति का आकलन न तो सैन्य या आर्थिक ताकत से, न उनकी राजधानियों और सार्वजनिक इमारतों की भव्यता से बल्कि उनकी जनता की खुशहाली से, उसके शिक्षा के स्तर व उसके स्वास्थ्य, पोषण के स्तर से, अपनी मेहनत का उचित पारिश्रमिक पाने के लिए उसके अवसरों से अपने जीवन को प्रभावित करते निर्णयों में भागीदारी की उसकी क्षमता से, उसकी उत्तरदायी नागरिकता और स्वतंत्रता के प्रति प्रदर्शित सम्मान से, कमजोरों और वचित जनजातियों के लिए किए गए प्रावधान से और उनके बच्चों के बढ़ते शरीर व पनपते दिमाग को दिए गए संरक्षण से होगा।

रॉबर्ट फ्रॉस्ट–

वन-पथ है प्रियतर, घोर अंधेरे घोर घनेरे
लेकिन वादे हैं, जो करने हैं पूरे,
और दूर जाना है मीलों,
सोने से पहले, मीलों सोने से पहले।

☐☐

विद्या भवन शिक्षा केन्द्र
डा. मोहन सिंह मेहता मार्ग
उदयपुर, राज.

भूगोल शिक्षण में लघु पाठ-योजना की उपादेयता

❑ जी. सी. भट्टाचार्य

सेवा-पूर्व अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र मे पाठ-योजना के लिखित प्रारूप के महत्व को हम आज भी अस्वीकृत नहीं कर पाते हैं। प्रायः यह देखा जाता है कि शिक्षण अभ्यास के लिए प्रत्येक विषय के शिक्षकों के द्वारा जिस पाठ-योजना प्रारूप का उपयोग किया जाता है, वह विस्तृत होता है। विस्तृत पाठ-योजना वह लिखित पाठ-योजना है जिसमें कक्षा-कक्ष की परिस्थिति में संघठित होने वाली प्रत्येक क्रिया, अनुक्रिया तथा प्रतिक्रियाओं का उल्लेख किया जाना जरूरी माना जाता है। पाठ-योजना के सन्दर्भ मे बॉसिंग महोदय का यह कथन कि– पाठ-योजना वह शीर्षक है जिसे उस कथन या विवरण को प्रदान किया जाता है जो कालांश मे संचालित क्रियाओं के परिणामस्वरूप प्राप्त होते हैं और जो उपलब्धि योग्य सम्प्राप्तियों तथा इस हेतु प्रयुक्त विशिष्ट साधन या माध्यमों की ओर संकेत प्रदान करता हो।

व्यापक अर्थ में इस परिभाषा के अन्तर्गत तो निश्चित रूप से कक्षागत समस्त क्रिया-प्रतिक्रियाओं का विवरण पाठ-योजना के अन्तर्गत प्रस्तुत करना जरूरी माना जा सकता है लेकिन यदि एक विहंगम दृष्टि से देखा जाए तो पाठ-योजना के अन्तर्गत भावी उपलब्धियों की ओर उसके लिए सम्भावित रूप से प्रयुक्त माध्यमो का उल्लेख करते हुए भी काम चलाया जा सकता है। इसी विचारधारा के उद्‌भव के साथ ही साथ पाठ-योजना के लघु रूप के बारे में विचार करना प्रारम्भ हो पाया। भावी उपलब्धियां निश्चित रूप से शिक्षण या अनुदेशन के विशिष्ट उद्देश्यों की ओर संकेत करती है और प्रयुक्त माध्यम शिक्षण की विधि, व्यूहरचनाएं, सहायक तथा सन्दर्भ सामग्री तथा उनके प्रयोग हेतु परिस्थितिगत संरचना को निर्देशित करती हैं।

इस प्रकार लघु पाठ-योजना वह पाठ-योजना है जिसमें अध्ययन-अध्यापन के उद्देश्यों के साथ उनकी उपलब्धि के लिए प्रयुक्त प्रणाली प्रविधि आदि के साथ अध्ययन बिन्दुओं के सन्दर्भ में प्रतिफल की सम्प्राप्ति के क्रमबद्ध आकलन प्रस्तुत किए जाते हैं।

शिक्षण अभ्यास की अवधि में लघु पाठ-योजनाओं के निर्माण तथा उपयोग को भावी काल में महत्व देना उचित ही प्रतीत होता है। यद्यपि इसे सर्वमान्य सामान्यीकरण के रूप में स्वीकृत करने के लिए और अधिक प्रयोग एवं परीक्षणों की आवश्यकता निश्चित रूप से विद्यमान है।

भूगोल विषय के अध्यापन अभ्यास के परिप्रेक्ष्य में लघु पाठ-योजना की व्यावहारिक उपादेयता को ज्ञात करने के लिए एक परीक्षणात्मक प्रयोग किया गया। शिक्षा संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के शिक्षकों के भूगोल समूह का इस हेतु चयन किया गया।

अध्ययन-प्रविधि

इस परीक्षणात्मक प्रयोग के लिए प्रयुक्त विचारोद्वेलन प्रविधि में कई स्पष्ट चरणों का प्रयोग किया गया। वे चरण है– पाठ-योजना पर सैद्धान्तिक आलोचना तथा विचार-विमर्श, विस्तृत पाठ-योजना तथा लघु पाठ-योजना के बारे में परिचयात्मक आलोचंना, संकल्पना सम्प्राप्ति प्रतिमान की सहायता से दोनों संकल्पनाओं का स्पष्टीकरण, विस्तृत तथा लघु भूगोल पाठ-योजनाओं की अभ्यासात्मक रचना, अनुरूपित परिस्थितियों में किसी प्रकरण के आधार पर दोनों पाठ-योजना प्रारूपों के निर्माण तथा शिक्षण हेतु चयनित शिक्षकों के समूह द्वारा अभ्यास, अध्ययन-अध्यापन के उद्देश्यों की उपलब्धि का मूल्यांकन और प्राप्त परिणामों के सन्दर्भ में दोनों प्रारूपों की उपादेयता का आकलन करना।

इसी प्रकार अध्ययन के लिए प्रयोज्यों के चयन

के लिए भी उद्देश्यपूर्ण न्यादर्श चयन प्रविधि का प्रयोग कई चरणो में किया गया। प्रथम चरण में भूगोल विषय के समस्त शिक्षकों का चयन किया गया जिन्होंने अपने शिक्षण अभ्यास के लिए भूगोल विषय का चयन प्रमुख या गौण अथवा द्वितीयक विषय के रूप में किया। इस प्रकार भूगोल के सम्पूर्ण समूह मे कुल 12 शिक्षकों का चयन किया गया। इस सम्पूर्ण समूह के सदस्य अपनी शिक्षण विधि की कक्षाओं में पाठ-योजना पर सैद्धान्तिक आलोचना तथा विचार-विमर्श, विस्तृत तथा लघु पाठ-योजना के बारे मे परिचयात्मक आलोचना, संकल्पना सम्प्राप्ति प्रतिमान की सहायता से दोनों संकल्पनाओ का स्पष्टीकरण एवं विस्तृत तथा लघु भूगोल पाठ-योजनाओ की अभ्यासात्मक रचना आदि चरणों में समान रूप से प्रतिभागी के रूप में कार्य करने लगे। यह प्रारम्भिक प्रस्तुतीकरण की अवस्था थी। इसके पश्चात् इन प्रतिभागियों का विभाजन दो परीक्षणात्मक समूहों में करने की व्यवस्था की गई। इसके लिए उनकी आयु-वर्ग (22 से 25 वर्ष तक), सामाजिक-आर्थिक परिस्थिति (औसत या सामान्य स्तर) तथा शैक्षिक योग्यता आदि को ध्यान मे रखते हुए जोड़े बनाए गए और दो शिक्षकों को इस कार्य समूह से विस्थापित किया गया और शेष 10 को जो परस्पर समस्तरीय पाए गए, परीक्षण तथा नियन्त्रित दो उप-समूहों में व्यवस्थित किए गए।

उपचारात्मक विभेदन

इस प्रकार निर्मित दो उपसमूहों में से प्रत्येक के लिए उपचारात्मक विभेदन को निर्दिष्ट किया गया ताकि अध्ययन के उद्देश्य का परीक्षण हो सके। उद्देश्य यह निर्धारित किया गया कि विस्तृत तथा लघु भूगोल पाठ-योजनाओ के माध्यम से शिक्षण अभ्यासगत उपलब्धियो मे अन्तर ज्ञात करना।

उपचारात्मक विभेदन हेतु चूंकि अधिक समय की आवश्यकता थी, अतः सामान्य कक्षावधि के पश्चात् विशेष अभ्यासात्मक सत्र चलाने की व्यवस्था की गई। परीक्षण समूह के शिक्षकों मे छात्राध्यापक व छात्राध्यापिकाओं को अनुरूपित परिस्थितियों के लिए चयनित पांच प्रकरणों पर जो भौतिक भूगोल से सम्बन्धित थे, लघु पाठ-योजना प्रारूप पर पाठ-योजना के निर्माण के लिए निर्देश दिया गया जबकि नियन्त्रित समूह को इसके विपरीत विस्तृत पाठ-योजना प्रारूप के आधार पर उन्हीं पांच भौतिक भूगोल से सम्बन्धित प्रकरणों पर पाठ-योजना निर्माण हेतु निर्देश दिया गया।

पाठ-योजनाओं के निर्माण के पश्चात् दोनों ही प्रारूपों की पाठ-योजनाओं में निहित त्रुटियों का निराकरण शोधकर्ता के द्वारा किया गया। साथ ही वांछित सहायक सामग्री तथा उपकरणों की भी जाच की गई जिसका निर्माण तथा चयन छात्राध्यापक व छात्राध्यापिकाओं के द्वारा किया गया था।

तत्पश्चात् अनुरूपित परिस्थितियों में ही शिक्षण अभ्यास हेतु लघु शिक्षण सत्र चलाए गए जिनकी अवधि 15 से 20 मिनट तक की रखी गई। इस सत्र मे दोनों ही समूह के प्रतिभागीगण ने अलग-अलग दोनों पाठ-योजना प्रारूपो के अनुसार शिक्षण अभ्यास के लिए प्रयत्न किए। अभ्यास सत्र के उपरान्त मूल्यांकन सत्र का संचालन, शोधकर्ता के द्वारा किया गया ताकि इस क्रियात्मक शोध या एक्शन रिसर्च के माध्यम से यह जानकारी प्राप्त करना सम्भव हो सके कि अध्ययन-अध्यापन उद्देश्यो की उपलब्धि के सन्दर्भ में प्रयोज्यों की सम्प्राप्ति का स्तर किस वर्ग का रहा।

शून्य परिकल्पना

अध्ययन के उद्देश्य के सन्दर्भ में इस शून्य परिकल्पना का निर्माण किया गया कि– विस्तृत तथा लघु पाठ-योजनाओ के आधार पर भूगोल शिक्षण का अभ्यास करने वाले छात्राध्यापक तथा छात्राध्यापिकाओ के मध्य उद्देश्यगत सम्प्राप्ति के सन्दर्भ में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

मान्यता

यह मान्यता निश्चित् की गई कि यदि दोनों समूहों का उपलब्धिगत अन्तराल सार्थक नही है तो शिक्षण अभ्यास हेतु विस्तृत पाठ-योजनाओ का प्रयोग करना मात्र प्रारम्भिक

अवस्था में सीमित करने का कोई अनौचित्य नही है। यह जरूरी नही कहा जा सकता है कि 40 या 20 (सम्पूर्ण शिक्षण अभ्यास काल में दोनो शिक्षण विषयो में 40 अथवा भूगोल विषय के शिक्षण अभ्यास के लिए कम से कम 20) पाठो को शिक्षण अभ्यास के दौरान पढ़ाते समय छात्राध्यापक रोज विस्तृत रूप से भूगोल पाठ-योजनाओं का निर्माण अवश्य करें। दूसरी मान्यता यह निर्धारित की गई कि चूंकि यह एक परीक्षणात्मक शोध या 'पायलट रिसर्च स्टडी' है, अतः प्राप्त परिणामों के आधार पर कोई सामान्यीकरण करने के लिए प्रयास न किया जाए। व्यापक स्तर पर परीक्षण हेतु जिन मौलिक एवं द्वितीयक सहायता एवं सुविधाओ की उपलब्धि आवश्यक माना जाता है, उनकी अनुपलब्धि तथा विभागीय संसाधनगत कमियों को देखते हुए ऐसा करना पड़ा।

इस हेतु यह शोध सुझाव भी स्वीकृत किया गया कि किसी सम्बन्धित अध्यापक शिक्षा विभाग या संस्थान में ऐसा प्रयास अवश्य ही किया जा सकता है ताकि कम से कम भूगोल विषय के शिक्षण अभ्यास के क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन उत्पन्न करना सम्भव हो सके और जैसा कि प्रायः देखने और सुनने को मिलता है कि शिक्षण अभ्यास के दौरान छात्राध्यापक/छात्राध्यापिकाएं विशेष कर भूगोल शिक्षण करते समय नियमित रूप से विस्तृत पाठ-योजना के निर्माण मे ही अपना अधिकांश समय व्यय करने के लिए बाध्य हो जाते हैं और शिक्षण की गुणवत्ता की अभिवृद्धि की ओर शायद कुछ कम ही ध्यान दे पाते हैं।

दूसरा, यह भी आक्षेप प्रायः लगाया जाता है कि शिक्षण अभ्यास के बाद जब भावी अध्यापक- अध्यापिकाएं, अध्यापन के क्षेत्र मे प्रवेश करते हैं तो उनके लिए विस्तृत पाठ-योजना का निर्माण करना असम्भव ही नही बल्कि निरर्थक भी लगने लगता है क्योंकि प्रायः उन्हें प्रतिदिन ही चार-पांच भूगोल के पाठ कम से कम पढ़ाने पड़ ही जाते हैं।

ऐसी स्थिति में यदि उन्हें सेवा-पूर्व प्रशिक्षण काल मे ही लघु पाठ-योजना निर्माण और प्रयोग का अभ्यास कराया जाता है जो विस्तृत पाठ योजना के समान ही फलदायक हो सके, तो शायद कहीं अधिक उपयुक्त साबित हो सकेगा।

तर्क यह भी दिया गया कि चूकि दोनों ही योजनाओ के निर्माण में छात्राध्यापक/छात्राध्यापिकाओं को समान रूप से तैयारी करनी होती है, अत. विस्तृत रूप से अध्यापक कथन, प्रश्न आदि को सम्भावित उत्तर के साथ नियमित लिखना प्राथमिक अनुभव के बाद अपरिहार्य नहीं रह जाता है।

परिणाम तथा निष्कर्ष

मूल्यांकन के लिए कसौटी सन्दर्भित परीक्षण का प्रयोग किया गया, जिसका निर्माण शोधकर्ता के द्वारा किया गया। कसौटियां निर्दिष्ट उद्देश्यो के अनुरूप तय की गई।

निश्चित रूप से अनुदेशनात्मक उद्देश्यों को मूल्यांकन सन्दर्भित रूप प्रदान करने के लिए छात्र-व्यवहारगत पदों में विभिन्न अनुवर्ग जैसे—ज्ञानात्मक, अवबोधात्मक, क्रियात्मक, कौशलात्मक, रुचि तथा अभिवृत्ति से सम्बन्धित आदि के अनुसार स्पष्ट करने के लिए प्रयास किया गया ताकि कसौटी सन्दर्भित परीक्षण का निर्माण करना सरल एवं उपयुक्त ढंग से सम्भव हो सके।

सम्बन्धित परीक्षण में वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का उपयोग किया गया तथा फलाकन कुंजी का भी निर्माण कर लिया गया ताकि मूल्यांकन सम्बन्धी वस्तुनिष्ठता को सुनिश्चित करना सम्भव हो सके।

इन प्रश्नों में लघु पाठ-योजना के लिए प्रयुक्त तथ्यों का अनुकरण किया गया। जैसे— अध्ययन बिन्दुओ का स्पष्टीकरण तथा क्रमबद्धीकरण, प्रत्येक बिन्दु के लिए उपयुक्त शिक्षण विधि, तकनीक अथवा व्यूहरचना आदि का उल्लेख तथा प्रयोग निर्देश प्रत्येक बिन्दु के लिए सहायक सामग्री तथा उपकरणों का निर्धारण एवं प्रयोग संकेत, अधिगम व्यवहारों का निर्धारण, कक्षा तथा गृह कार्यो का निर्धारण तथा मूल्यांकन, आत्म मूल्याकन का स्तर आदि।

परिणाम

लघु समूह के लिए गैरेट (1978) द्वारा निर्दिष्ट दो मध्यमानों

के मध्य अन्तराल की सार्थकता को परिमापित करने के लिए सूत्र का उपयोग करते हुए परीक्षणात्मक तथा नियन्त्रित दोनों समूहो के उपलब्धिगत मध्यमान के मध्य विभेदन का आकलन किया गया। प्राप्त परिणाम को नीचे सारणी में प्रदर्शित किया गया है।

के माध्यम से शीघ्र प्राप्त कर पाना उनके लिए अवश्य ही कठिन हो सकता है। शायद यह भी एक कारण है कि विस्तृत पाठ-योजना वाले समूह के उपलब्धिगत मध्यमान का मान, लघु पाठ-योजना वाले समूह की तुलना मे 6.40 अक अधिक रहा।

सारणी

मध्यमानों के मध्य अन्तर की सार्थकता का परीक्षण

क्रम संख्या	समूह	मध्यमान	मानक विचलन	टी मूल्य	सार्थकता स्तर
1	परीक्षण समूह (एन-5)	22.35	5.72	2.27	किसी भी स्तर पर सार्थक नहीं
2.	नियन्त्रित समूह (एन-5)	28.75	8.31		

उपरोक्त सारणीगत विवरण से यह स्पष्ट है कि विस्तृत पाठ-योजना के अनुसार शिक्षण अभ्यास करने वाले नियन्त्रित समूह के शिक्षकों का उपलब्धिगत मध्यमान (28.75) था जो लघु पाठ-योजना के आधार पर शिक्षण हेतु अभ्यास करने वाले भूगोल विषय के परीक्षण समूह का उपलब्धिगत मध्यमान (22.35) की तुलना में उच्च रहा। साथ ही समूहगत विभिन्नता भी तुलनात्मक रूप से कुछ अधिक रही। यह सम्भव भी प्रतीत होता है क्योकि समूह के समस्त छात्राध्यापक व छात्राध्यापिकाए समान रूप से विस्तृत और समय सापेक्ष पाठ-योजना को बनाने में कुशल हो सकें, यह सम्भव प्रतीत नही होता है। तुलनात्मक रूप से लघु पाठ-योजना मे कम विस्तार के साथ तथ्यों को लिखने की बाध्यता के कारण और अध्यापकीय प्रश्न एवं उनके सम्भावित उत्तरों को अनुमानित ढंग से ठीक-ठीक लिखने की अनिवार्यता के न रहने के कारण समूहगत प्रयासों में अन्तराल की सम्भावना का कम होना स्वाभाविक ही है, जो कि उनके मानक विचलनगत मूल्यों से स्पष्ट है।

साथ ही विस्तृत पाठ-योजना के माध्यम से तैयारी की दृष्टि से छात्राध्यापक तथा छात्राध्यापिकाओं को जो अन्तर्दृष्टि प्राप्त हो पाती है, वह भी लघु पाठ-योजना

लेकिन यह अन्तर मात्र सयोगवश भी हो सकता है तथा इस पर पूर्ण विश्वास के साथ निर्भर नहीं किया जा सकता है जब तक कि इस अन्तर की सार्थकता की पुष्टि न की जा सके। इसके लिए टी मूल्य की गणना करने पर मान 2 27 (स्वतन्त्रता के अंश-8) प्राप्त हो पाया। सारणी में इस स्वतत्रता के अंश के लिए निर्दिष्ट मान देखने पर ज्ञात हो पाया कि .05 स्तर पर सार्थकता के लिए निर्दिष्ट मान-3 306 तथा .01 स्तर पर सार्थकता को प्राप्त करने के लिए उपलब्ध टी का मान-3.355 होना अपेक्षित है। प्राप्त मान चूकि इनमे से किसी भी मान के समकक्ष नहीं है, अतः यह कहा जा सकता है कि (.05 स्तर को सार्थकता की स्वीकृति हेतु निर्धारित करते हुए) प्राप्त टी मूल्य किसी आधार पर सार्थक नही है।

निष्कर्ष

इस परिणाम के आधार पर यह निष्कर्ष प्राप्त किया जा सकता है कि दो समूहो के मध्य मध्यमानों के अन्तराल की सार्थकता नहीं है, अतः निर्मित शून्य परिकल्पना विस्तृत तथा लघु पाठ-योजनाओ के आधार पर भूगोल शिक्षण अभ्यास करने वाले छात्राध्यापक व छात्राध्यापिकाओ के मध्य उद्देश्यगत सम्प्राप्ति के सन्दर्भ में कोई सार्थक अन्तर

नहीं है– को स्वीकृत किया गया। अत. यह कहा जा सकता है कि लघु पाठ-योजना के आधार पर शिक्षण अभ्यास करवाए जाने पर भूगोल विषय के शिक्षको की अनुदेशात्मक उद्देश्यगत उपलब्धि मे कोई सार्थक अन्तर आने की सम्भावना नहीं है।

लेकिन निश्चियता के साथ ही यह कहना भी आवश्यक हो जाता है कि जब तक वे विस्तृत पाठ-योजना के निर्माण तथा उसके आधार पर शिक्षण अभ्यास नहीं कर लेते हैं, वे लघु पाठ-योजना को सार्थक रूप से प्रयोग करने मे समर्थ नही हो सकते हैं क्योंकि सक्षेपण कार्य के पूर्व व्यापक और समग्र कार्य का अनुभव प्राप्त होना ही चाहिए।

विभिन्न विद्यालयो मे सेवारत अध्यापकों को जिस अध्यापकीय अभिलेख या टीचर्स डायरी का उपयोग करना होता है, उसमें भी लघु पाठ-योजना का एक अन्य रूप में उपयोग किया जाता है। अन्तर यह रहता है कि अनुदेशनात्मक उद्देश्यों के निर्धारण, स्पष्टीकरण तथा उनकी उपलब्धि के ऊपर वहा विशेष बल नही दिया जाता है जबकि लघु पाठ-योजना में निर्दिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति को सुनिश्चित करने के लिए प्रयास अवश्य ही किया जाता है ताकि विस्तृत पाठ-योजना के माध्यम से अनुरूपित परिस्थितियों में शिक्षण अभ्यास करने के बाद भूगोल के छात्राध्यापक व छात्राध्यापिकाएं यथार्थ परिस्थिति मे कक्षा शिक्षण अभ्यास के दौरान लघु पाठ-योजना का निर्माण तथा अनुकरण कर सकें।

यद्यपि अध्ययन हेतु उद्देश्य तथा शून्य परिकल्पना का निर्माण अलग से नहीं किया गया था कि इस शिक्षण अभ्यासगत उपलब्धि के सन्दर्भ में लिंग भेद है या नहीं, फिर भी इसके बारे में भी गणना की गई। यह देखा गया कि न तो विस्तृत पाठ-योजना के आधार पर शिक्षण अभ्यास करने वाले समूह में ही और न लघु पाठ-योजना के आधार पर शिक्षण अभ्यास करने वाले समूह के छात्राध्यापक व छात्राध्यापिकाओ में ही कोई सार्थक लिग भेद पाया गया। अतः यह भी कहा जा सकता है कि लघु पाठ-योजना के उपयोग करने की स्थिति में किसी भी दृष्टि में कोई लिंग भेद जन्य उपलब्धिगत अन्तराल की सम्भावना है। यह पाठ-योजना समान रूप से दोनो ही लिग के लोगों के लिए प्रभावी तथा व्यावहारिक है।

समय और श्रम की बचत करने के कारण लघु पाठ-योजना अवश्य ही शिक्षण अभ्यास करने वाले शिक्षकों को अध्यापन के लिए अपने आप को तैयार करने में अधिक सहायक और उपादेय सिद्ध हो सकती है। लेकिन कठिनाई यह है कि इसके लिए उन्हें दोनों ही प्रारूपों के बारे मे ज्ञान प्राप्त करने के साथ ही अभ्यास भी करने होंगे। शिक्षक शिक्षा संस्थानों के विशेषज्ञों को भी इसके लिए दोहरा अभ्यास करवाना होगा और निरन्तर मूल्यांकन और प्रतिपुष्टि प्रणालियो का भी सार्थक रूप में प्रयोग करना होगा।

विशेष कर समय तथा साधन की कमी के कारण जिन शिक्षक शिक्षा सस्थानों मे सामान्य तथा विशिष्ट शिक्षण कौशलाधारित शिक्षण अभ्यास को प्रयुक्त कर पाना सम्भव नहीं हो पा रहा है (सूक्ष्म शिक्षण या लघु शिक्षण हेतु अनुरूपित परिस्थितियो में), वहां अवश्य ही लघु पाठ-योजना आधारित शिक्षण अभ्यास फलदायक सिद्ध हो सकता है। पर्यवेक्षकों की कमी को दूर करने में भी यह पाठ-योजना सहायक सिद्ध हो सकती है। चूंकि विषयगत जटिलताओं के वर्णन से यह पाठ-योजना मुक्त होती है, अतः शिक्षण अभ्यास की अविध में किसी भी विषय के विशेषज्ञ निरीक्षक या मूल्यांकनकर्ता लघु पाठ-योजनाओ का मूल्यांकन आसानी से कर सकते है। अतः जो आक्षेप प्रायः लगाया जाता है कि शिक्षण अभ्यास के दौरान विषय के अतिरिक्त अन्य विषय के ज्ञाता को भी ऐसे विषय की पाठ-योजनाओं का परीक्षण और मूल्याकन करना पड़ता है जिससे उनका प्रत्यक्षत सम्बन्ध नहीं होता है, उसे भी दूर कर पाना कठिन नहीं रह जाता है।

इस प्रकार उपरोक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षण अभ्यास की अवधि में लघु पाठ-योजनाओं के निर्माण तथा उपयोग को भावी काल में महत्व देना उचित ही प्रतीत होता है, यद्यपि इसे सर्वमान्य सामान्यीकरण के रूप में स्वीकृत करने के लिए और अधिक प्रयोग एवं परीक्षणों की आवश्यकता निश्चित रूप से विद्यमान है। ❑❑

नं. 4, टीचर्स फ्लैट, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय
वाराणसी, उ.प्र.

प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र तथा मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन

□ मंजू सिंह

भारतीय समाज में गुरु का सर्वोच्च स्थान है, क्योकि वह शिक्षा के माध्यम से समाज को विकासोन्मुख बनाता है। अत. शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है, शिक्षा के उद्देश्य देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होते रहते है, जो समाज की परिवर्तित आवश्यकताओं के पूरक होते है। शिक्षा ही हमें इस योग्य बनाती है कि परिस्थितियों के अनुरूप उचित का निर्णय लेकर सही मार्ग का चयन करें और जीवन के विभिन्न क्षेत्रो में विभिन्न अवसरो पर सही विकल्प का चुनाव कर सके। वस्तुत उच्चतम विकल्प के चुनाव की प्रक्रिया ही मूल्य प्रक्रिया है। इस मूल्य प्रक्रिया में चयनकर्ता की बुद्धि, योग्यता, रुचि, शैक्षिक स्तर, विश्वास एवं नियन्त्रण केन्द्र की अहम् भूमिका रहती है, जिसके आधार पर वह अपने जीवन को विकासोन्मुख एवं समाजोपयोगी बनाने में सक्षम होता है।

व्यक्ति और समाज एक-दूसरे के पूरक होने के साथ-साथ पारस्परिक निर्भरता का गुण रखते हैं, यह निर्भरता व्यक्तियों की मनोवृत्तियो, आचरणों एवं सांस्कृतिक मानदण्डो पर आधारित होती है। इन मानदण्डों का निर्धारण करने मे माता-पिता, शिक्षकों, समाज सुधारकों, वैज्ञानिक एव साहित्यकारो की भूमिका को नकारा नही जा सकता। वहीं मानवता के पोषक मूल्य मानदण्डों को बालकों एव बालिकाओं में विकसित करने के लिए शिक्षको की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। शिक्षक का जीवन दर्शन भी सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक आदि तत्वों से प्रभावित होता है और यही प्रभाव वह बालक-बालिकाओ में सक्रमित करता है, जिससे बालक अपने जीवन मूल्यों को वैकल्पिक चयन प्रक्रिया के द्वारा निर्धारित करता है और इस प्रकार वह समाज की बुराइयो को समाप्त करने के साथ-साथ सास्कृतिक विकास मे भी सहयोगी होता है। इसी प्रकार के तथ्यो को राष्ट्रीय शिक्षा नीति– 1986 में स्वीकार करते हुए कहा गया है कि हमारा समाज सांस्कृतिक दृष्टि से बहुआयामी है तथा शिक्षा द्वारा ऐसे सार्वभौमिक व शाश्वत मूल्यो का विकास किया जाना चाहिए जो हमारे लोगों की एकता व उनके समाकलन की ओर अभिमुख हो। इस प्रकार की मूल्य शिक्षा से धार्मिक उन्माद, हिंसा, अन्धविश्वास, भाग्यवाद व रूढ़िवादिता समाप्त होगी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुच्छेद 2.4 में शिक्षा को सामाजिक व नैतिक मूल्यो के विकास के लिए एक सशक्त साधन बनाने के लिए कहा है।

प्रस्तुत शोध में प्राथमिक स्तर के शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र एवं मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। अध्ययन हेतु आगरा शहर के 35 शिक्षकों एवं 35 शिक्षिकाओं को प्रतिदर्श के रूप में चुना गया। प्रदत्तों का विश्लेषण एवं विवेचना यह इंगित करती है कि शिक्षकों एव शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र प्राप्तांकों में सार्थक अन्तर है, शिक्षिकाएं अपेक्षाकृत बाह्य रूप से नियन्त्रित हैं तथा अधिक भाग्यवादी हैं। मूल्य विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के आर्थिक एवं सामाजिक मूल्य प्राप्तांकों में सार्थक अन्तर है, शिक्षिकाओं की अर्थ सम्बन्धी वरीयता अधिक है जबकि शिक्षकों की सामाजिक कार्यो में रुचि उच्च है। अन्य मूल्यों यथा– सैद्धान्तिक, सौन्दर्यात्मक, राजनीतिक एवं धार्मिक– के लिए दोनों समूहों की वरीयता लगभग समान है।

मनोवैज्ञानिक इस तथ्य को स्वीकार करते हैं कि उच्च मूल्य व्यक्ति को आदर्श नागरिक बनाते है। व्यक्ति का मानसिक स्वास्थ्य एवं स्वस्थ व्यक्तित्व मूल्यो पर निर्भर करता है और वे मूल्य ही है जो व्यक्ति के नियंत्रण केन्द्र पर प्रभाव डालते हैं। जिस शिक्षा में जितने उच्च मूल्य होगे वह उतनी ही अधिक सतुलित एवं भावी पीढ़ी के लिए विकासोन्मुख होगी। इस मोड़ पर कुछ प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठ रहे है कि क्या भावी देश के निर्माता और कर्णधार तैयार करने वाले शिक्षको व शिक्षिकाओं के जीवन मूल्य बदलते हुए परिवेश मे बदल रहे हैं अथवा नहीं। यदि बदल रहे हैं तो उनकी दशा किस ओर है? क्या उनके नियंत्रण केन्द्र एक जैसे हैं अथवा नही। क्योकि शिक्षकों व शिक्षिकाओं के मूल्य, विश्वास, आचार-विचार, नियंत्रण केन्द्र आदि निश्चित रूप से विद्यार्थियो के मूल्यों को प्रभावित करेंगे। इस जिज्ञासा को स्पष्ट करने के लिए ही अनुसधान के विषय के रूप में शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र एवं मूल्यों को तुलनात्मक अध्ययन के लिए चुना गया है।

उद्देश्य

प्रस्तुत अध्ययन के निम्नांकित प्रमुख उद्देश्य हैं–

- ☐ प्राथमिक शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र की जानकारी करना।
- ☐ प्राथमिक शिक्षकों व शिक्षिकाओं के मूल्यों यथा सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक की जानकारी करना।
- ☐ शिक्षको व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र का तुलनात्मक अध्ययन करना।
- ☐ शिक्षको व शिक्षिकाओं के मूल्यों का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं

प्रस्तुत अध्ययन में अधोलिखित शून्य परिकल्पनाओं का परीक्षण किया गया–

- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र प्राप्तांकों में सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सैद्धान्तिक मूल्य प्राप्तांको मे सार्थक अन्तर नही है।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों व शिक्षिकाओं के आर्थिक मूल्य प्राप्तांकों में सार्थक अन्तर नही है।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य प्राप्ताको में सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षको व शिक्षिकाओं के सामाजिक मूल्य प्राप्ताकों में सार्थक अन्तर नहीं है।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों व शिक्षिकाओ के राजनैतिक मूल्य प्राप्ताको मे सार्थक अन्तर नही है।
- ☐ प्राथमिक स्तर पर शिक्षकों व शिक्षिकाओ के धार्मिक मूल्य प्राप्तांको मे सार्थक अन्तर नहीं है।

प्रत्ययों की व्याख्या

मूल्य– मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता प्रकट करता है। यह एक आदर्श या इच्छा है, जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता रहता है। दूसरे शब्दों में मूल्य को आचार, सौंदर्य, कुशलता या महत्व का मानदण्ड माना गया है, जिनके साथ हम जीते हैं, जिन्हें हम कायम रखते हैं। प्रस्तुत अनुसंधान मे मात्र छः मूल्यों यथा– सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनैतिक तथा धार्मिक– को अध्ययन हेतु चयनित किया है।

नियंत्रण केन्द्र– नियन्त्रण केन्द्र सम्प्रत्यय रोटर (1954) के सामाजिक अधिगम सिद्धान्त से उद्धृत है जो यह इंगित करता है कि पुनर्बलन व्यक्ति के स्वयं के व्यवहार अथवा भाग्य या अवसर का परिणाम है। आन्तरिक प्रत्याशाओं से युक्त प्रयोज्यों को आन्तरिक (Internal) तथा अपेक्षाकृत अधिक बाह्य प्रत्याशाओं से युक्त प्रयोज्यों को बाह्य (External) रूप से वर्णित किया गया है। आन्तरिक नियन्त्रण केन्द्र की प्रधानता वाले व्यक्तियो का विश्वास होता है कि पुनर्बलन उनके स्वयं के व्यवहार, विशेषताओं और क्षमताओं पर निर्भर करता है, जबकि बाह्य नियन्त्रण केन्द्र की प्रधानता वाले व्यक्तियों का विश्वास होता है कि पुनर्बलन उनके वैयक्तिक नियंत्रण के अधीन नहीं होता बल्कि वह अवसर और भाग्य के अधीन होता है।

शोध अभिकल्प

प्रस्तुत अध्ययन हेतु सर्वेक्षण प्रणाली का चयन शिक्षकों एवं शिक्षिकाओं की परिस्थितियों का अध्ययन करने के लिए किया गया है क्योकि अध्ययन का उद्देश्य शिक्षको और शिक्षिकाओं के नियत्रण केन्द्र एवं मूल्यो की तुलनात्मक जानकारी प्राप्त करना है।

न्यादर्श

प्रस्तुत अध्ययन प्राथमिक स्तर के शिक्षकों और शिक्षिकाओ पर प्रतिपादित किया गया। अध्ययन में आगरा शहर के 35 अध्यापकों व 35 अध्यापिकाओं को यादृच्छिक चयन विधि से प्रयोज्यों के रूप में चयनित किया गया। न्यादर्श के प्रयोज्यो की आयु 21 से 35 वर्ष के मध्य है।

उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन में नियंत्रण केन्द्र एव मूल्यों के मापन हेतु निम्नांकित मापनियों का प्रयोग किया गया है–

- **रोटर नियंत्रण केन्द्र मापनी**– कुमार एवं श्रीवास्तव (1966) द्वारा हिन्दी मे अनुकूलित मापनी।
- **अध्यापक मूल्य सूची**– सिंह एवं अहलुवालिया (1981)।

विश्लेषण व व्याख्या

प्रस्तुत अध्ययन के प्रयोज्यों के मूल्य प्राप्तांको के सांख्यिकीय विश्लेषण के लिए मुख्य रूप से मध्यमान, प्रमाणिक विचलन तथा क्रान्तिक अनुपात अथवा टी. मूल्य (t-value) की गणना की गई है तथा शिक्षक व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र एवं मूल्य प्राप्तांकों की सार्थकता की जाच की गई जो कि अग्रांकित सारणियों मे प्रस्तुत है–

सारणी 1 पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षिकाओं के नियत्रण केन्द्र प्राप्तांक उच्च हैं तथा प्राप्त क्रान्तिक अनुपात (टी. मूल्य) का मान 5.58 है। प्राप्त टी. मूल्य .01 विश्वास स्तर पर सार्थक है। अतः प्रस्तुत अध्ययन की यह परिकल्पना कि "शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियंत्रण केन्द्र प्राप्तांको में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।" अस्वीकृत होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षिकाएं उच्च रूप से बाह्य नियन्त्रित हैं अर्थात् शिक्षिकाए शिक्षकों की तुलना में अधिक भाग्यवादी हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि शिक्षक, शिक्षिकाओं की अपेक्षा आन्तरिक प्रत्याशाओं से युक्त होते है अर्थात् शिक्षकों का विश्वास है कि पुनर्बलन उनके स्वयं के व्यवहार, विशेषताओं और क्षमताओं पर निर्भर करता है, जबकि शिक्षिकाएं यह समझती हैं कि पुनर्बलन उनके वैयक्तिक नियंत्रण के अधीन नहीं है बल्कि वह अवसर और भाग्य के अधीन होता है। प्रस्तुत परिणाम की पुष्टि बोर्समा (1978), खन्ना एवं खन्ना (1979) के अध्ययनों से भी होती है। उन्होने पुरुषों को महिलाओं की अपेक्षा आन्तरिक रूप से अधिक नियन्त्रित पाया।

सारणी 2 का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षिकाओं के सैद्धान्तिक मूल्य प्राप्तांक कुछ उच्च हैं, परन्तु दोनों समूहो के मध्यमान प्राप्तांकों मे सार्थक अन्तर नहीं है जो कि असार्थक क्रान्तिक अनुपात के मान से प्रतिबिम्बित है। अतः प्रस्तुत परिणाम के आधार पर यह परिकल्पना कि "शिक्षकों व शिक्षिकाओ के सैद्धान्तिक मूल्य प्राप्तांकों के मध्य कोई सार्थक अन्तर नहीं है।" स्वीकृत होती है।

परिणाम की विवेचना करते हुए कहा जा सकता

सारणी 1

शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र प्राप्तांकों की तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
शिक्षक	35	6.62	1.70	5.58	सार्थक है।*
शिक्षिकाएं	35	10.68	3.96		

*.01 विश्वास स्तर पर

सारणी 2
शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सैद्धान्तिक मूल्य प्राप्तांकों की तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
शिक्षक	35	88.46	7 21		सार्थक नहीं है।
				.78	
शिक्षिकाएं	35	89.86	7.74		

सारणी 3
शिक्षकों व शिक्षिकाओं के आर्थिक मूल्य प्राप्तांकों की तुलना

समूह	सख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रांतिक अनुपात	सार्थकता
शिक्षक	35	88 00	7.87		सार्थक है।*
				2.065	
शिक्षिकाएं	35	90.68	9 35		

*.05 विश्वास स्तर पर

है कि शिक्षकों व शिक्षिकाओ की ज्ञानात्मक, विवेचनात्मक एवं तर्कयुक्ति लगभग समान होती है। दोनो में सत्य को खोजने की रुचि एक जैसी होती है।

सारणी 3 को देखने से स्पष्ट होता है कि शिक्षिकाओं के मध्यमान आर्थिक मूल्य प्राप्तांक शिक्षकों की अपेक्षा उच्च हैं तथा प्राप्त क्रान्तिक अनुपात का मान 2.065 है जो कि विश्वास के .05 स्तर पर सार्थक है। इससे पता चलता है कि शिक्षिकाओं की अर्थ सम्बन्धी वरीयता अपेक्षाकृत अधिक है अर्थात् शिक्षिकाएं अर्थ को अधिक महत्वपूर्ण मानती हैं। शायद यही कारण है कि शिक्षिकाओं के आर्थिक मूल्य प्राप्तांक शिक्षकों की तुलना मे उच्च हैं। इस प्रकार प्रस्तुत शोध की यह परिकल्पना कि "शिक्षकों व शिक्षिकाओं के आर्थिक मूल्य प्राप्तांकों मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।" अस्वीकृत होती है।

सारणी 4 का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य प्राप्तांक लगभग समान हैं, इनमें नगण्य अन्तर है। इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षकों व शिक्षिकाओं की सौन्दर्यात्मक मूल्य वरीयता लगभग एक जैसी है। शायद यही कारण है कि दोनों समूहो के मध्यमान सौन्दर्यात्मक मूल्य प्राप्तांक लगभग समान हैं। अतः शोध की यह परिकल्पना कि "शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य प्राप्तांकों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।" की पुष्टि होती है।

सारणी 5 पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि शिक्षको का मध्यमान सामाजिक मूल्य प्राप्तांक शिक्षिकाओ की तुलना में उच्च है तथा प्राप्त क्रान्तिक अनुपात का मान 2.59 है जो कि विश्वास के .05 स्तर पर सार्थक है। इससे स्पष्ट होता है कि शिक्षिकाओं की अपेक्षा शिक्षक सामाजिक कार्यो मे अधिक रुचि रखते है तथा वे अधिक सेवाभावी, सहयोगी एवं परोपकारी होते हैं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि शिक्षकों की सामाजिक वरीयता शिक्षिकाओं की तुलना में व्यापक है। अतः शोध की यह परिकल्पना कि "शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सामाजिक मूल्य प्राप्तांकों में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।" अस्वीकृत होती है।

सारणी 6 का अवलोकन करने पर विदित होता है

सारणी 4
शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सौन्दर्यात्मक मूल्य प्राप्तांकों की तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
शिक्षक	35	85.71	8.60	.867	सार्थक नहीं है।
शिक्षिकाएं	35	87.46	8.29		

सारणी 5
शिक्षकों व शिक्षिकाओं के सामाजिक मूल्य प्राप्तांकों की तुलना

समूह	सख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
शिक्षक	35	90.60	9.56	2.59	सार्थक है।*
शिक्षिकाएं	35	85.17	7.87		

*.05 विश्वास स्तर पर

सारणी 6
शिक्षकों व शिक्षिकाओं के राजनैतिक मूल्य प्राप्तांकों की तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
शिक्षक	35	86.14	8.24	.62	सार्थक नहीं है।
शिक्षिकाएं	35	84.83	9.59		

सारणी 7
शिक्षकों व शिक्षिकाओं के धार्मिक मूल्य प्राप्तांकों की तुलना

समूह	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	क्रान्तिक अनुपात	सार्थकता
शिक्षक	35	86.03	7.15	.24	सार्थक नहीं है।
शिक्षिकाएं	35	86.40	5.68		

कि शिक्षक व शिक्षिकाओ के मध्यमान राजनैतिक मूल्य प्राप्तांक लगभग समान हैं तथा प्राप्त क्रान्तिक अनुपात या टी-मूल्य का मान .62 है जो कि विश्वास के किसी भी स्तर पर सार्थक नही है। इससे यह प्रतिबिम्बित होता है कि शिक्षक व शिक्षिकाओं की राजनैतिक वरीयता एक जैसी है तथा वे समान राजनैतिक सोच रखते हैं। अतः प्रस्तुत अनुसधान की यह परिकल्पना कि "दोनों मे राजनैतिक मूल्य प्राप्तांकों मे कोई सार्थक अन्तर नहीं है।" स्वीकृत होती है।

सारणी 7 का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि शिक्षकों व शिक्षिकाओ के धार्मिक मूल्य मध्यमान प्राप्तांक क्रमश· 86.03 एवं 86.40 है जो कि लगभग समान है। इनमें सार्थक अन्तर नहीं है। इससे पता चलता है कि शिक्षकों व शिक्षिकाओं की धार्मिक आस्था अथवा प्रवृत्ति लगभग एक जैसी है। दोनों ही समूह धर्म के प्रति समान सोच रखते है तथा धार्मिक रीति-रिवाजों को मानने वाले है। अतः प्रस्तुत अनुसंधान की यह परिकल्पना कि "शिक्षकों व शिक्षिकाओ के धार्मिक मूल्य प्राप्तांको में कोई सार्थक अन्तर नही है।" स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष

- ❑ शिक्षकों व शिक्षिकाओं के नियत्रण केन्द्र प्राप्तांको के मध्य सार्थक अन्तर है, जो कि .01 विश्वास स्तर पर प्राप्त है। शिक्षको की अपेक्षा शिक्षिकाएं उच्च रूप से बाह्य नियन्त्रित हैं, अर्थात् शिक्षिकाएं बाह्य कारकों को अधिक महत्वपूर्ण मानती हैं। वे शिक्षको की अपेक्षा अधिक भाग्यवादी हैं।
- ❑ शिक्षिकों व शिक्षिकाओं के आर्थिक मूल्य प्राप्तांकों के मध्य सार्थक अन्तर है, जो कि .05 विश्वास स्तर पर प्राप्त है। परिणामों से स्पष्ट होता है कि शिक्षिकाओं की अर्थ सम्बन्धी वरीयता अधिक है तथा वे अर्थ को अधिक महत्वपूर्ण मानती हैं।
- ❑ शिक्षकों व शिक्षिकाओ के सामाजिक मूल्य प्राप्तांकों के मध्य सार्थक अन्तर है, जो कि विश्वास के .05 स्तर पर प्राप्त है। शिक्षको का मध्यमान सामाजिक मूल्य प्राप्ताक शिक्षिकाओ की अपेक्षा उच्च है। इससे स्पष्ट है कि शिक्षक सामाजिक कार्यो में अपेक्षाकृत अधिक रुचि रखते है तथा उनका विश्वास दूसरों की सेवा, परस्पर सहयोग एवं परोपकार में अधिक है।
- ❑ शिक्षकों व शिक्षिकाओ के मध्यमान मूल्य प्राप्तांकों यथा– सैद्धान्तिक, सौन्दर्यात्मक, राजनैतिक एवं धार्मिक– के मध्य सार्थक अन्तर नहीं है, अर्थात् दोनो समूहो के प्राप्तांक लगभग समान है। इससे स्पष्ट होता है कि लिंग का उक्त मूल्यों के साथ महत्वपूर्ण सम्बन्ध नहीं है।

सुझाव

- ❑ अध्ययन के निष्कर्ष यह इंगित करते हैं कि शिक्षकों की तुलना मे शिक्षिकाओं के नियन्त्रण केन्द्र प्राप्तांक सार्थक रूप से उच्च है अर्थात् शिक्षिकाएं अपेक्षाकृत बाह्य रूप से अधिक नियन्त्रित हैं, अधिक अवसर या भाग्यवादी हैं। अतः शिक्षिकाओं में वैज्ञानिक व तार्किक दृष्टिकोण संवर्द्धित करने की अत्यन्त आवश्यकता है।
- ❑ शोध के परिणाम यह भी इंगित कर रहे हैं कि शिक्षिकाओं के आर्थिक मूल्य प्राप्तांक शिक्षकों की अपेक्षा सार्थक रूप से उच्च है। अतः शिक्षकों में आर्थिक मूल्य सवर्द्धन हेतु प्रयास किया जाना वाछनीय है।
- ❑ प्रस्तुत शोध कार्य के परिणामों से यह भी स्पष्ट है कि शिक्षकों की अपेक्षा शिक्षिकाओं के सामाजिक व राजनैतिक मूल्य प्राप्तांक निम्न हैं। अतः शिक्षिकाओं के उक्त मूल्यों को संवर्द्धित करने के लिए प्रयास अति आवश्यक है, जिनके फलस्वरूप शिक्षिकाओं की सामाजिक व राजनैतिक चेतना में वृद्धि की जा सकती है। ❑❑

शिक्षा विभाग
सी इम्पैक्ट संस्थान
8 किमी. स्टोन, मथुरा रोड, आगरा

निसर्ग – कहे कुछ हमसे

❑ अनिला गोदरे

फूलों से नित हंसना सीखो
भौंरो से नित गाना,
फल से लदी डालियों से
नित सीखो शीश झुकाना।

कवि मैथिलीशरण गुप्त जी की ये पंक्तियां निसर्ग की महानता का वर्णन करती हुई, कुछ सदेश भी देती हैं, हमारी प्रकृति में ऐसे अनेक संदेश छिपे है जिन्हें समझकर, अपनाकर हमारा मानव जीवन धन्य हो सकता है।

प्रकृति में मुख्य पाच तत्व समाविष्ट है और इन्हीं पांच तत्वों से हमारा शरीर भी बना है– "पृथ्वी, जल (पानी), तेज (अग्नि), वायु व आकाश"। इन तत्वो का समावेश प्रकृति व मानव दोनो मे है। ऐसा माना जाता है कि ब्रह्मा ने जब सृष्टि की रचना की उस समय मानव जाति के आनंद उपभोग के लिए निसर्ग के विविध घटकों की भी रचना हुई।

निसर्ग के सभी तत्वों की अपनी-अपनी विशेषता है। जिनसे मानव हमेशा आनंदित व प्रेरित होता रहा है। अप्रत्यक्ष व अनौपचारिक रूप से प्रकृति हमें कुछ कहती रहती है।

"पत्तों की खड़-खड़, झरने की झर-झर, नदियों की कल-कल, समुद्र की गर्जना, हवा की सर-सर से अनोखे सगीत का आभास होता है। घने, हरे-भरे जंगल, उत्तंग पर्वत श्रेणी, शांत गंभीर बहती पानी की धारा ने मानव के कवि मन को भी लुभाया है, फलस्वरूप अनेक प्रसिद्ध कवियों की रचना का विषय 'निसर्ग' रहा है।"

मराठी के प्रसिद्ध कवि 'बाल कवि कुसुमाग्रज' की अनेक रचनाएं इन्ही पर आधारित हैं। उसी तरह मराठी काव्य में 'वृक्षवल्ली आम्ही सोयरे' अर्थात्– वृक्षों को मानव का संबधी माना गया है। कवि कालिदास ने तो उमड़ते, गरजते, बरसते मेघ को अपना दूत ही बना लिया है और उससे अपनी प्रेयसी को सदेश पहुंचाने का आग्रह करते हुए 'मेघदूत' नामक महाकाव्य की रचना कर डाली।

प्रकृति व मानव परस्पर पूरक हैं। यदि हम उसके बहते प्रवाह को उसके मूक इशारों द्वारा खिलते, फलते-फूलते पुष्पों द्वारा दिए गए संदेश को समझें, उनकी खुशबू की तरह सद्भावना, प्रेम व स्नेह की सुगंध समाज में बिखेरें तो अवश्य ही लाभान्वित होंगे। परन्तु आज हम कई कार्य निसर्ग के विरुद्ध कर रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप हमारी पृथ्वी व समाज दोनों ही प्रदूषण रूपी दानव के शिकंजे में जकड़ते जा रहे हैं। इस दानव से उसे बचाने के लिए फिर से प्रकृति की ओर लौटना जरूरी है। हम उससे जुड़ें व अपनी भावी पीढ़ी को उसकी ओर देखने का, समझने का सही नज़रिया दें तो "वसुधैव कुटुम्बकम्" की धारणा सही अर्थो में सच्ची हो सकेगी।

रवीन्द्रनाथ टैगोर तो प्रकृति से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने 'शान्ति निकेतन' का निर्माण ही इस आधार पर खुले आकाश व स्वतन्त्र वातावरण में किया। निसर्ग मे घटने वाली प्रत्येक घटना से मानव जीवन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होता रहा है। सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन करें तो पाएंगे कि प्रकृति अप्रत्यक्ष रूप से किस प्रकार हमारी मानव जाति पर संस्कार के बीज बोती है और मूल्य शिक्षा का दायित्व निभाती है।

निसर्ग एक चचल बहता प्रवाह है, जिसमे हम स्वच्छंद

होकर डुबकी लगाए तो उसके कण-कण से ज्ञानरूपी अमृत प्राप्त होगा क्योंकि इस विश्व में वृक्ष, समुद्र, नदी, पर्वत, सूर्य, चन्द्र, तारे, जमीन, झरने, खेत, फसलें, आकाश, क्षितिज, खनिज, चम-चम चमकती आकाश बिजली आदि सभी हमें निःस्वार्थ भाव से कुछ न कुछ सिखाते है—कथन समर्थन मे कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः, परोपकाराय वहन्ति नदयाः।

वृक्षो से फल, फूल, लकड़ी अनेक प्रकार की खाद्य सामग्री हमे प्राप्त होती है। थके हारे प्राणी को शीतल छाया देकर सुख प्रदान करते हैं। किसी ने पत्थर मारा तब भी मीठे फल ही देंगे—यह सब परोपकार नही तो क्या है।

परोपकार के साथ "समानता" की सीख भी हमें देते है। वृक्षों की शीतल छाया सभी के लिए है, वहां छोटे-बड़े, अमीर-गरीब, जाति-पांति का भेदभाव नहीं होता। अविरत रूप से धूप, वर्षा, ठडी हवा के झोंके सहते हुए मनुष्य के लिए उदात्त ही रहते हैं। इतना ही नहीं अनेक औषधि हमे वनस्पति से ही मिलती है। वातावरण अनुकूल हो या प्रतिकूल यह वृक्ष संपत्ति हमें इशारा करती है कि परिस्थिति चाहे जैसी भी हो, हमारी तरह झूमते रहो और दूसरों की भलाई का विचार करो। निःस्वार्थ भाव से सेवा का व्रत लो।

वन संपदा, भारतीय संस्कृति की परंपरा निभाने मे भी हमारी सहायक होती है। जप, तप, होम, हवन, यज्ञ के लिए समिधा देने वाली यही है, स्वय जलकर कार्य सिद्धि के लिए हमेशा तत्पर। सामाजिक कार्यक्रमो में सजावट कार्य फूलों से किया जाता है। फूलों के कारण वातावरण खिल उठता है, सुगंधित हो जाता है, हर कोई इनकी सुंदरता, कोमलता, खुशबू में रम जाता है और प्रतीत होता है कि ये पुष्प चुपके से हमारे कानों में कह रहे हैं— देखो हमारे जैसे प्रिय बनना है तो सदैव मुस्कराओ, सुवचन व अच्छे व्यवहार की सुगंध समाज में बिखेरो, अपना व्यक्तित्व अमर बनाओ। हमारा जीवनकाल काफी छोटा है फिर भी वह सार्थक है, इसी तरह अपना जीवन सार्थक बनाओ।

कांटों मे खिलता गुलाब सभी का मन मोहता है। हमे गुलाब की सुंदरता व सुगंध की चाह होती है परन्तु सोचो यह गुलाब कांटो के बीच मुस्कराता सुगंध फैला रहा है, काटे उसके साथ हैं परन्तु उसके बाधक नहीं। अर्थात् विकास में अवरोध आने पर भी व्यक्ति अपना विकास कर सकता है, ऐसा ही संकेत हमें गुलाब से मिलता है।

समर्पण की सीख हमें उस बीज से लेनी चाहिए जो पृथ्वी के गर्भ में समर्पित होकर लहलहाती फसल के रूप में प्राणी के लिए उपयोगी होते हैं। पृथ्वी हमें सहनशीलता व क्षमाशील होने की शिक्षा देती है। धरती के सीने पर हल चलाकर ही किसान फसल प्राप्त करता है, धरती जैसा विशाल हृदय अकल्पनीय है।

जीवन में सुख-दुःख की छाया बनी रहती है। दुःख में मानव घबरा जाता है, विचलित हो जाता है, यदि उस समय झरने, नदी के बहाव को ध्यान से देखें तो समझ आएगा कि पानी की धार एक अवरोध आने पर, दूसरा मार्ग कैसे खोज लेती है। कठिनाई के समय शान्त, स्थिर भाव व आत्मविश्वास के साथ बढ़ना ही जीवन है, यही भाव दर्शाती हुई नदी अपने मार्ग में आने वाले सभी प्रदेशों को सुजलाम, सुफलाम करती हुई समुद्र मे समर्पित हो जाती है।

फलों से लदे हुए वृक्ष मानों हमे नम्रता का पाठ पढ़ा रहे है, यदि व्यक्ति विद्वान है, ज्ञानवान है, गुणी, यशस्वी है तो उसे विनयशील होना चाहिए न कि अहंकारी। वृक्ष फल, फूलों से लदकर नीचे झुक जाते हैं हमारे और करीब आ जाते हैं, यही भाव हममें होना चाहिए, कहा भी गया है "विद्या विनयेन शोभते"!

कार्य निष्ठा, लगन नियमितता के लिए सूर्य हमें प्रेरित करता है। सूर्य के प्रतिदिन के भ्रमण में कोई थकावट नहीं, उष्मा, प्रकाश फैलाने में कोई गड़बड़ी नहीं, वह जीवनदाता माना जाता है, सृष्टि पर जीवन उसकी देन है, फिर भी निरहंकारी, निस्वार्थ भाव से सभी की ओर ध्यान देता है।

इन्हीं लगन, निष्ठा, एकाग्रता, विनय आदि गुणों का महत्व विद्यार्थी जीवन में भी काफी है। प्रकृति के कुछ तत्वो से हमे "योग्य चुनाव" संबंधी प्रेरणा भी मिलती है। छात्र जीवन में यह अति आवश्यक है कि हम उसी

सामग्री का चुनाव संदर्भ साहित्य में से करें जो हमारे लिए लाभदायक हो। यह विवेक, बुद्धि समाज में विशेष अस्तित्व कायम करने मे मदद रूपी होती है जैसे प्राणी जगत मे रंग-रूप मे अधिक फर्क न होते हुए भी "हस" को विशेष स्थान प्राप्त है–

हंस श्वेतः वकः श्वेतः को भेद वक हंसयो.
नीर क्षीर विवेक तु हंसो हंसो बको बकः

'हंस' अपनी 'नीर क्षीर' विवेक बुद्धि के कारण ही अलग पहचाना जाता है, उसी तरह मानव में भी उचित-अनुचित के चुनाव की क्षमता होना जरूरी है।

प्रकृति व मानव परस्पर पूरक है। यदि हम उसके बहते प्रवाह को उसके मूक इशारो द्वारा खिलते, फलते-फूलते पुष्पों द्वारा दिए गए संदेश को समझें, उनकी खुशबू की तरह सद्भावना, प्रेम व स्नेह की सुगध समाज मे बिखेरें तो अवश्य ही लाभान्वित होगे, परन्तु आज हम कई कार्य निसर्ग के विरुद्ध कर रहे हैं जिसके परिणामस्वरूप हमारी पृथ्वी व समाज दोनों ही प्रदूषण रूपी दानव के शिकंजे में जकड़ते जा रहे हैं। इस दानव से उसे बचाने के लिए फिर से प्रकृति की ओर लौटना जरूरी है। हम उससे जुड़ें व अपनी भावी पीढ़ी को उसकी ओर देखने का, समझने का सही नज़रिया दें तो "वसुधैव कुटुम्बकम्" की धारणा सही अर्थो में सच्ची हो सकेगी।

एक महान संत के अनुसार– सृष्टि एक खुली शाला है। यह प्रकृति दया, क्षमा, शांति, करुणा, स्नेह, ममता व समर्पण के गुणों का संदेश हमें देती है। ❑❑

श्रीमती एस.के.एस. जूनियर कालेज ऑफ एजुकेशन
विद्याविहार, मुम्बई

महिला सशक्तिकरण

❑ भंवर लाल नागदा

"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवताः।"

जिस देश मे नारियो की पूजा/सम्मान होता है, वहां देवता निवास करते हैं। जिस समाज, देश और प्रदेश में नारी की जितनी प्रतिष्ठा होगी, वह राष्ट्र उतना ही समृद्धिशाली होगा। वह धन-धान्य, विद्या-बुद्धि तथा सुख-शान्ति से परिपूर्ण होगा। जहां एक ओर भारतीय नारियां मानव को त्याग, बलिदान, वीरता, सेवा-भाव, भक्ति, चेतना एव जागरण का सदेश देती रही हैं। वही दूसरी ओर मेवाड़ की नारियो ने भी भक्ति की पराकाष्ठा से लेकर त्याग, तप, वीरता, आन-बान-शान की गौरव गाथा से सम्पूर्ण क्षेत्र का सदैव मस्तिष्क ऊंचा किया है।

देश के विकास व प्रगति में नारी का योगदान सदियो से चला आ रहा है। देश रूपी गाडी के स्त्री-पुरुष रूपी दो पहिए हैं। यदि इनमें से एक भी कार्य करना बन्द कर दे तो उनकी गति में शिथिलता आ जाएगी या देश का विकास/प्रगति रुक जाएगी। ऐसी स्थिति में आवश्यक हो जाता है कि दोनों को समान अधिकार, न्याय, स्वतंत्रता और समान रूप से जीवन-यापन करने, प्रगति करने, नौकरी, सेवा आदि में भी समान अवसर, समान सहअस्तित्व प्रदान किया जाए।

महिला सशक्तिकरण की आवश्यकता एवं औचित्य

प्राय· आए दिन समाचार-पत्रो मे लूट, चोरी, डकैती, बलात्कार, अत्याचार, अनाचार जैसे कुकृत्य देखने से ऐसा

प्रतीत होता है कि आज भी अधिकाश लोग पुरुष प्रधान समाज मानकर महिलाओं और गरीबो को पूर्ण स्वतत्रता प्रदान नही कर रहे हैं और उन पर हकूमत जमाने की चेष्टा करते है, जो कि न्यायोचित नहीं है। उन्हें शिक्षा, व्यापार, नौकरी, जीवन-यापन, आमोद-प्रमोद की सुविधाए समान रूप से उपलब्ध नहीं करवाते है इसीलिए तो अशिक्षा, गरीबी, संकीर्ण विचारधारा, अंधविश्वास, सामाजिक कुरीतियां, रूढ़िवादिता आदि बुराईयों से हमे मुक्ति नहीं मिल पाई है जबकि आज के कम्प्यूटरीकृत युग में अन्य विकासशील एवं विकसित देश सतत् प्रगति की ओर अग्रसर है और हम वहीं "नौ दिन चले अढाई कोस" की कहावत का अनुसरण कर रहे है। इसका मुख्य कारण हमने भारत की प्रतिभाओं को नही पहचाना, हम उन्हें सम्मान नहीं दे पाए, तभी तो भारत से प्रतिभाओं का पलायन होता चला गया और अन्य राष्ट्रों में उन्होंने अपनी योग्यता व क्षमताओ का प्रदर्शन कर विज्ञान के हर क्षेत्र मे भारत को गौरवान्वित किया है।

देश के विकास एवं प्रगति में नारी का योगदान सदियों से चला आ रहा है। देश रूपी गाड़ी के स्त्री-पुरुष रूपी दो पहिए हैं। यदि इनमें से एक भी कार्य करना बन्द कर दे तो उनकी गति में शिथिलता आ जाएगी या देश का विकास/प्रगति रुक जाएगी। ऐसी स्थिति में आवश्यक हो जाता है कि दोनों को समान अधिकार, न्याय, स्वतंत्रता और समान रूप से जीवन-यापन करने, प्रगति करने, नौकरी, सेवा आदि में भी समान अवसर, समान सहअस्तित्व प्रदान किया जाए।

महिला सशक्तिकरण क्यों?

"सगठन में ही शक्ति है" यदि नारी को सगठित करना है तो पहले उसे सशक्त बनाना होगा। सशक्त नारी ही सशक्त समाज की स्थापना कर सकती है। इसके लिए आवश्यक है महिला को सशक्त बनाया जाए। इसके लिए उन्हे स्वतंत्रता प्रदान करनी होगी। उसमें सकारात्मक सोच विकसित करनी होगी तभी उसमें निडरता, स्वावलम्बन और आत्मविश्वास जागृत होगा।

नारी ही सृष्टि की सबसे सुन्दर कृति तो है ही, साथ ही उसका एक स्वतन्त्र अस्तित्व भी है। उसे पुरुष की दासी, पैरो की जूती, मनोरजन की पुतली और पुरुष की वासनामयी आंखो की मदिरा बनाकर नही रखा जा सकता। अब तक उस पर बचपन में पिता की चौकसी, युवावस्था मे पति का पहरा, वृद्धावस्था में पुत्र व पुत्र वधु उस पर नजर रखते आए हैं, मानों वह जन्मजात अपराधिनी है। हमें उसका दुस्साहस, उदण्डता एवं स्वच्छन्दता कहकर तिरस्कृत और उपेक्षित करने से काम नही चलेगा।

नारी ने सदैव विकास के समस्त कार्यो मे, देश के नव निर्माण मे पुरुषो के साथ कंधे से कधा मिलाकर बराबरी की भूमिका का निर्वहन किया है। वह नए कीर्तिमान स्थापित कर रही है, समुद्र की गहराई से लेकर आकाश की ऊंचाई नापने की चाह ने आज की भारतीय महिला को प्रेरणा प्रदान की है।

किसी ने सही कहा है—

तुम शक्ति हो, तुम भक्ति हो,
तुम ही हो, संस्कारों की खान।
क्रांति की अग्रदूत, गौरव का तुम सार,
वामा तुम चेतना का आह्वान हो।।

महिला सशक्तिकरण हेतु किए जाने वाले संभावित प्रयास

वैचारिक क्रांति—सर्वप्रथम नारियों में वैचारिक क्रान्ति लानी होगी। इसके लिए उन्हें यह बताना होगा कि अनादिकाल से स्त्रिया पुरुषो की अर्द्धांगिनी अर्थात् अभिन्न अंग रही हैं, इस प्रकार नामकरण भी किया है यथा—लक्ष्मी+नारायण—लक्ष्मीनारायण, गौरी+शंकर—गौरीशंकर, सीता+राम—सीताराम। इसी प्रकार सम्बोधन मे पहले उनका ही नाम लिया जाता है। ब्रह्म, विष्णु, महेश जो कि सृष्टि के जन्मदाता, पालन हार और संहारकर्ता के रूप में माने

जाते है, उन्होंने भी अर्द्धांगिनी को सदैव आगे रखा और किसी भी कार्य को प्रारभ करने, निर्माण करने अर्थात् हर क्षेत्र मे नारियों ने अहम् भूमिका का निर्वाह किया। उनमे चमत्कार था, शक्ति थी, पुरुषार्थ/बल था, तभी तो आज भी उनका स्मरण किया जाता है। स्त्री के अनेक रूप हैं। प्रत्येक रूप में वह अपने दायित्व का निर्वहन करती है। नारी सनातन शक्ति है, नारी सृष्टि निर्माता है। जयशंकर प्रसाद ने कहा है--

नारी तुम केवल श्रद्धा हो,
विश्वास रजत, नभ पगतल में।
पीयूस स्रोत सी, बहा करो,
जीवन के सुन्दर, समतल मे।।

नारी परिवार की धुरी है—नारी परिवार की धुरी है, सारा परिवार उसके इर्द-गिर्द घूमता है। नारी ममतामयी मां, वात्सल्य की जीती-जागती प्रतिमूर्ति है, तभी तो वह संतान को कितने ही दुःख सहकर भी उसका लालन-पालन, लाड़-प्यार-दुत्कार समय अनुसार करती है। धैर्य की मूर्ति है। दुःख का पहाड़ गिर जाने पर अर्थात् विषम परिस्थितियों में भी वह धैर्य रखकर न कही जाने वाली बात को मन में दबाए रख आत्मग्लानि महसूस करती है। वास्तव मे नारी त्याग की मूर्ति है। प्रत्येक परिस्थिति का सामना करने के लिए उसे समय-समय पर सघर्ष और पन्नाधाय की तरह त्याग करना पड़ता है।

नारी शिशु की प्रथम गुरु—परिवार शिशु की प्रथम पाठशाला है और नारी शिशु की प्रथम गुरु। वह बालक को बोलना, चलना, फिरना, उठना, बैठना, पढ़ना, लिखना और सुसंस्कारित करने के सम्पूर्ण दायित्व का निर्वहन करती है।

सफल गृहिणी के रूप में—नारी सफल गृहिणी के रूप में परिवार का सुसंचालन करती है। वह भोजन सामग्री जुटाने, पकाने और भोजन परोसने के पश्चात् स्वयं भोजन ग्रहण करती है। यहां तक कि गरीब परिवार की महिलाएं तो कभी-कभी बिना भोजन अर्थात् निराहार पानी पीकर भी सोती हैं, लेकिन परिवार के अन्य सदस्यों को भनक तक नहीं लगने देती कि घर में क्या चीज है और क्या नहीं?

नारी के अनेक रूप—नारी ममतामयी मा, त्याग की मूर्ति, अद्धागिनी, गृहस्वामिनी आदि कई रूप मे विद्यमान है। दुर्गा, काली, लक्ष्मी और सरस्वती के रूप मे पूजी जाने वाली भारतीय नारी पर न जाने कितने अत्याचार हुए हैं किन्तु आज भी वह अपने कर्तव्य से विमुख नही हुई है। नारी आज्ञाकारी पुत्री, सहयोगी पत्नी और एक ऐसी आदर्श माता है जिसमें ममता, त्याग, सहिष्णुता, उदारता, करुणा, दया भाव तथा प्रेम का अथाह भण्डार है। भारतीय महिलाओ ने हर क्षेत्र में सदैव अग्रणी भूमिका अदा कर नए कीर्तिमान स्थापित किए हैं, इसके जीते-जागते कई उदाहरण देखने को मिलते है। श्रीकृष्ण की बुआ और पांडवों की माता कुती, पतिव्रता पाचाल नरेश की पुत्री द्रोपदी, पतिभक्ता गाधारी, अनुसूइया, अहिल्या, सीता, रानी पद्मिनी, भक्तिमती मीरा, पन्नाधाय, झासी की रानी लक्ष्मीबाई, जीजाबाई, गार्गी, राजमाता कर्मवती, मदर टेरेसा, महादेवी वर्मा, लक्ष्मी कुमारी चूण्डावत, किरण बेदी आदि अनेक नारियों की गौरव गाथाओं से इतिहास भरा पड़ा है। यदि इनके शौर्य, पराक्रम एवं गुणों का वर्णन किया जाए तो पूरा इतिहास रचा जा सकता है। इन्होने अनवरत रूप से किसी न किसी रूप में अन्यायो के खिलाफ आवाज उठाई है और सघर्ष किया है।

अब नारी अबला नहीं रही है, जैसा कि जयशंकर प्रसाद ने कहा—

अबला हाय! यह तुम्हारी करुण कहानी।
आचल में दूध और आंखों में पानी।।

अब तो नारी सबला बन गई है। नैतिक बल में तो नारी पुरुषों से अनंत गुण ऊची है। तभी तो नारी को विकास की सर्वोत्तम सीढ़ी कहा जाता है। वह सामाजिक दायित्वो का निवर्हन पूर्ण निष्ठा एवं जिम्मेदारी से करती है। हा, उनमें पुरुषो की अपेक्षा पशुता कम है और मानवता अधिक। किन्तु जब उन पर अत्याचार सीमा से बाहर हो जाता है और सहन करने की क्षमता नहीं रहती तो या तो आत्महत्या कर लेती है या धैर्य का पहाड़ टूट जाता है और वह रौद्र रूप धारण कर लेती है तो कालिका, चडिका से कम नहीं। किन्तु ऐसा उसे बाध्य होकर अंतिम हथियार के रूप में अपनाना होता है।

शैक्षिक क्षमताओं का विकास

"पढ़ी लिखी लडकी, रोशनी है घर की"

आजकल सभी शिक्षा का महत्व समझने लगे हैं और अपनी लड़कियों को पढ़ाते हैं। लड़किया भी चाहे स्कूल मे हों या कालेज में, वरियता सूची में अग्रणी रहकर अपने आप को गौरवान्वित कर रही हैं। इसलिए हमे स्त्री शिक्षा का अधिकतम प्रचार-प्रसार करना होगा। उनमें अधिकारो के प्रति संचेतना जागृत करनी होगी। इस प्रकार हम नारियों को अपनी योग्यता, रुचि, क्षमता के अनुसार हर क्षेत्र में कार्य करने के अवसर प्रदान कर शैक्षिक क्षमताओं का विकास कर सकेगे।

मानसिक स्वतंत्रता— महिलाओं मे सकारात्मक सोच विकसित करनी होगी ताकि उनमे संवेगात्मक प्रवृत्तियां, जो घर कर बैठी हैं यथा—सकीर्णता, कुण्ठित भावना, शकालूपन, प्रताड़ना, भयावहता से छुटकारा मिलेगा और मानसिक रूप से अपने आप को स्वतन्त्र महसूस करेंगी, उनमें स्वावलम्बन की भावना विकसित हो, आत्मनिर्भर बनने के लिए प्रयासरत रहेगी। सुमित्रानन्दन पंत ने कहा है।

मुक्त करो नारी को, चिर बंदिनी नारी को।

लैंगिक समानता—आजकल स्त्रियों और पुरुषों को समान अधिकार एवं न्याय मात्र भाषणो एवं पुस्तकों में छपने तक सीमित हो गए है। कितने ही दहेज के लोभी नारियों को जला देते हैं, मार देते हैं या फिर जन्म के दौरान ही लड़कियों को मार दिया जाता है, क्या यह न्यायोचित है? हमें यह समझना होगा कि पुत्र और पुत्री मे भेदभाव पिछड़ेपन की निशानी है जबकि पुत्र की शिक्षा एक व्यक्ति को शिक्षित करना है और पुत्री को शिक्षा देना दो परिवारों को शिक्षित व सुसंस्कृत बनाना है। इस प्रकार लैंगिक समानता के अर्थ और औचित्य को समझना होगा।

संस्कृति उत्थान में नारियों का योगदान—भारतीय संस्कृति विश्व की सबसे पुरातन संस्कृति है। इसकी अनेक विशेषताएं है, जो हमें विरासत में मिली है, किन्तु धीरे-धीरे ये क्षीण होती जा रही हैं। इन्हें जीवित रखना है तो इसकी उपयोगिता को बताना होगा। सस्कृति की सुरक्षा और इसके उत्थान में सदैव नारियो का योगदान महत्वपूर्ण रहा है। नारियों को मान-सम्मान देना, अच्छे कार्य करने वाली महिला को प्रोत्साहन हेतु पुरस्कृत करना होगा।

नैतिक मूल्यों की पुनर्स्थापन—भारत को जगत गुरु की उपाधि से विभूषित किया जाता था, किन्तु पाश्चात्य शिक्षा के अधानुकरण की होड़ ने आज गर्त में लाकर खड़ा कर दिया है। जीवन एव मानवीय मूल्यों का खास कर आए दिन लूट-डकैती, मारधाड़, अत्याचार, अनाचार, बलात्कार जैसे कितने ही कुकृत्य हो रहे हैं जिन्हें रोका जाना नितान्त आवश्यक है। इसमें महिलाएं महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। महिला सगठन स्थापित करे, जो ऐसी घटनाओं पर पूरी नजर रखे और उन्हे आगे लाए। इसके लिए महिलाओं में संचेतना जागृत कर उन्हें संघर्ष करने के लिए प्रेरित करें। इसी प्रकार विभिन्न क्रांतिकारी संगठनो का सहयोग लेकर इन्हें रोकें। मानवाधिकार एवं कर्तव्यों की जानकारी कराएं। इस प्रकार नैतिक मूल्य पुनर्स्थापित किए जा सकते हैं।

उपसंहार

इस प्रकार महिला सशक्तिकरण नितान्त जरूरी है। इससे महिलाओं में संचेतना जागृत होगी। सामाजिक कुरीतियों व कुप्रथाओं से छुटकारा मिलेगा। महिलाओं के शोषण व अत्याचार को रोका जा सकेगा। उन्हें समाज मे उचित सम्मान मिलेगा और देश का सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से सुधार होगा। महिलाएं स्वतन्त्रतापूर्वक पुरुषों के साथ कधे से कंधा मिलकर देश के विकास, उन्नति मे आगे आएंगी। देश समृद्ध व शक्तिशाली बनेगा। ❑❑

210/ए, गणेशनगर
मो.सु.वि.वि. रोड, उदयपुर

कक्षा में बच्चों की सहभागिता कैसे बढ़ाएं?

❑ मृदुला गर्ग

बच्चे शाला में पढ़ने के लिए आते हैं। वे शिक्षक के मार्गदर्शन मे शाला में बहुत-सी गतिविधिया करते हैं। शाला को साफ-सुथरा बनाते है, गीत, कविताए गाते है, कहानी सुनाते हैं, अपनी पुस्तकों को पढ़कर उन पर कार्य करते है, वे खेलते-कूदते है, वे चित्र बनाते है, बाल मेला आदि लगाते हैं।

प्राथमिक शालाओ में आने वाले अधिकांश बच्चे अत्यन्त अनौपचारिक वातावरण से आते है। इन बच्चो को पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का अनुभव नही होता है। कुछ बच्चे अपने परिवार/पीढ़ी के शाला आने वाले पहले सदस्य होते हैं। कई बच्चे तो शर्मीले स्वभाव के भी होते है। इनके लिए शाला का वातावरण और कक्षा का वातावरण विशेष रूप से आकर्षक तथा रोचक बनाना जरूरी है। इसके लिए शिक्षको से विशिष्ट व्यवहार की आशा की जाती है। इसके साथ ही स्वच्छता, सामग्री का रख-रखाव तथा सामग्री तक बच्चो की पहुंच भी जरूरी है।

शिक्षक का कार्य बच्चों को न केवल नया ज्ञान प्रदान करना है बल्कि नए-नए बिन्दुओ और नई-नई अवधारणाओं को समझने में मदद करना है। अच्छे शिक्षक सतत् रूप से इस पहलू पर ध्यान देते है कि आज कक्षा मे बच्चो ने क्या सीखा? शिक्षक का ध्यान केवल पढाने पर नहीं बल्कि सिखाने पर होना चाहिए। कक्षा में हर पल बच्चो से उसका आमना-सामना होता है। कभी कुछ पढ़ाता है, कभी कुछ सिखाता है और कभी-कभी प्रश्न पूछकर अपनी इस जिज्ञासा को शांत करने का प्रयास करता है कि बच्चे क्या सीख रहे है।

सभी शिक्षक वच्चो से अपेक्षा करते है कि–

- कक्षा मे चल रही सीखने की गतिविधियों में बच्चे बिना किसी संकोच और डर के रुचि के साथ सहभागिता करें।
- बच्चे बिना किसी संकोच के अपनी बात कह सकें, लिख सके, चित्र बना सके।
- बच्चो द्वारा बनाए चित्र, लिखी हुई सामग्री और बातो को ध्यानपूर्वक सुनें और समझे।
- बच्चे अधिक सृजनशील और जिज्ञासु बनें।
- बच्चो की सक्रियता को बढ़ाना, उनमे संकोच और डर नही हो।

शिक्षक का कार्य बच्चों को न केवल नया ज्ञान प्रदान करना है बल्कि नए-नए बिन्दुओं और नई-नई अवधारणाओं को समझने में मदद करना है। अच्छे शिक्षक सतत् रूप से इस पहलू पर ध्यान देते हैं कि आज कक्षा में बच्चों ने क्या सीखा? शिक्षक का ध्यान केवल पढ़ाने पर नहीं बल्कि सिखाने पर होना चाहिए। कक्षा में हर पल बच्चों से उसका आमना-सामना होता है। कभी कुछ पढ़ाता है, कभी कुछ सिखाता है और कभी-कभी प्रश्न पूछकर अपनी इस जिज्ञासा को शांत करने का प्रयास करता है कि बच्चे क्या सीख रहे हैं।

- किसी बात, चित्र, वस्तु, घटना, परिस्थिति आदि के प्रति अपनी प्रतिक्रियाए दे सके।
- सीखने की गतिविधियो मे साझेदारी हो।
- बच्चों के शर्मीलेपन को दूर करना।
- बच्चों के बीच आपसी सहयोग बढ़े।
- आपसी रिश्ते बढ़े।
- भिन्न परिवेशों के बच्चो के बीच सबंध बने।
- बच्चो के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़े।
- बच्चों का शिक्षक, पुस्तक तथा अन्य शिक्षण सामग्री

के साथ सबध बने।

- बच्चे जिज्ञासु हो। वे अपनी बात पूछ सकें।
- बच्चो द्वारा कही हुई बातें, वनाई हुई चीजे तथा लिखित सामग्री को देखा, सुना और समझा जाए।
- बच्चो को सीखने की स्वतत्रता हो।

इसके लिए शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि वह—

- थोड़ी-सी भी सफलता प्राप्त करने पर शाबासी देना, पीठ थपथपाना यदि सभव वन पड़े तो कुछ इनाम दे देना इनकी प्रगति हेतु प्राण वायु समान है।
- अधिगम मे पिछड़े छात्र को कभी भी डांटना, फटकारना, पिछड़ेपन का एहसास कराना, क्रोध करना उसके सीखने की जड़ो पर कुठराघात है। अतः इस तरह के छात्र को धैर्यपूर्ण व्यवहार कर सिखाना अत्यन्त आवश्यक है।
- शिक्षक के दिमाग में यह धारणा होनी चाहिए किं बालक की जितनी बुद्धि है वह प्रकृति की देन है उसे बढ़ाया नही जा सकता। अतिरिक्त तरीके अपनाकर, सहारा देकर उठाया जा सकता है।
- बालक अपने सहयोगी छात्रो की संगत मे अधिक रुचिपूर्वक अधिगम प्राप्त करते है। अत· सरलता से ग्रहण कर उसे इस हेतु उसके साथियों की भी मदद लेनी चाहिए।
- खेल-खेल में पाठ सिखाएं।
- अधिगम में पिछड़े छात्र के साथ शिक्षक का व्यवहार प्रेम और सहानुभूति पूर्ण होना चाहिए।
- पिछड़े छात्रों को सम्पूर्ण अभ्यास एक साथ न करा कर थोड़े-थोड़े हिस्से कराकर अभ्यास कराएं एवं उसी हिस्से की बार-बार पुनरावृत्ति करे।
- आवश्यकता पड़ने पर पालको का सहयोग भी प्राप्त करे।
- बच्चो के साथ किस तरह का संबध/व्यवहार हो, इसकी जानकारी के लिए निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दिलाया जाए—
  - बच्चे नियमित रूप से शाला में आएं इसके लिए उनमे डर पैदा न किया जाए।
  - बच्चों को काम करने तथा गतिविधियों में भाग लेने की स्वतत्रता दी जाए।
  - बच्चे बेझिझक अपनी बात कह सके, ऐसा वातावरण दिया जाए।
  - बच्चे आसपास की चीजो का अवलोकन कर सके, जानकारी एकत्रित कर सके, अपनी जिज्ञासाओं को संतुष्ट कर सके।
  - बच्चे चित्र और तरह-तरह की सामग्री बना सके। चित्रो और सामग्री पर बातचीत कर सके, इसे दिखा सकें।
  - अभिनय कर सकें।
  - स्लेट, श्यामपट, दीवार पट्टी आदि का स्वतंत्र रूप से प्रयोग कर सके।
- बच्चों की पुस्तक तथा अन्य सामग्री के साथ किस तरह का जुडाव-लगाव हो, इसके लिए निम्न बिन्दुओ पर ध्यान दिलाया जाए।
  - सीखना-सिखाना की परिस्थितियो को आनन्ददायक और दक्षता आधारित बनाने के लिए आवश्यक सामग्री किसी एक पाठ्यपुस्तक में नहीं मिल सकती। गतिविधिया तो शिक्षक को अपनी सूझ-बूझ और मेहनत से बनानी होंगी। क्या शिक्षकों द्वारा ऐसा किया जा रहा है?
  - क्या पुस्तक के अतिरिक्त अन्य सामग्री से गतिविधियों के विभिन्न अवसर दिए जा रहे है?
- कक्षा तथा शाला के वातावरण को रोचक बनाने के लिए निम्न बिन्दुओ पर ध्यान दिलाया जाए।
  - प्राथमिक शालाओं मे आने वाले अधिकांश बच्चे अत्यन्त अनौपचारिक वातावरण से आते हैं। इन बच्चों को पूर्व-प्राथमिक शिक्षा का अनुभव नहीं होता। कुछ बच्चे अपने परिवार/पीढ़ी के शाला आने वाले सदस्य होते हैं। इनके लिए शाला और कक्षा का वातावरण विशेष रूप से आकर्षक तथा रोचक बनाना जरूरी है।
  - इसके लिए शिक्षको से विशिष्ट व्यवहार की आशा की जाती है। इसके साथ ही स्वच्छता, सामग्री का रख-रखाव तथा सामग्री तक बच्चो की पहुंच

भी जरूरी है।

- वातावरण को रोचक बनाने मे कुछ विशिष्ट गतिविधियां जैसे – स्थानीय कहानियां कहना, गीत गाना, खेल खिलाना, दूरियों को नापना, निकटवर्ती परिवेश का अवलोकन करना, जानकारिया एकत्रित करना आदि की जानी चाहिए।
- शाला के प्रारम्भ में बच्चों का प्रसन्न भाव से स्वागत करना और शाला समाप्ति के समय कल फिर आने का अनुरोध करने से उनकी सहभागिता को बढ़ाया जा सकता है।
- बच्चों का ध्यान आकर्षित करने के लिए रंग-बिरगी शिक्षण सहायक सामग्री बनाना, उपयोग करना और इसे बच्चों की पहुंच की दूरी पर दीवार पर टागना उचित होता है।
- सभी बच्चों के नाम याद कर उनके नाम से पुकारना और समय-समय पर बच्चों के पालकों से मिलकर बच्चो के विषय में बात करना अच्छा रहता है।
- कभी-कभी बच्चों द्वारा बनाई हुई सामग्री को प्रदर्शित करके उनके पालको को दिखाना उचित होता है।
- शाला के सभी बच्चों को विभिन्न दलों/समूहो/सदनों में विभक्त करके उनके बीच प्रतिस्पर्धाएं कराना प्रोत्साहन देता है। इससे एक-दूसरे से सीखने के मौके भी मिलते है।

यदि शिक्षक बच्चो को उपरोक्त गतिविधियो को अपनी शिक्षक प्रक्रिया के अग के रूप मे ले तो कक्षा में बच्चो की अधिक से अधिक सहभागिता होगी, जिसमें बच्चे शिक्षण में रुचि लेंगे तथा वे नियमित रूप से शाला आएगे।

❑❑

एम.आई.जी. 99
बागमुगालिया एक्सटेंशन
भोपाल, म.प्र.

अतीत, वर्तमान व भविष्य की शिक्षा की संकल्पना

❑ मोतीभाई एम. पटेल

यह सार्वभौम सत्य है कि देशकाल व समयानुसार शिक्षा संकल्पना परिवर्तित होती रहती है। समय के अनुसार शिक्षा में उन्मेष उभरते हैं और मांग के अनुरूप परिवर्तन करने ही पड़ते है। वैसे यह माना जाता है कि शिक्षा मे परिवर्तन के कारण ही समाज में परिवर्तन होता है। किन्तु वास्तविकता इससे भिन्न ही होती है। तदुपरान्त परिवर्तन की प्रक्रिया पारस्परिक है क्योकि कतिपय परिवर्तन पहले समाज में होते हैं और वही शिक्षा में बाद में दृष्टिगत होते हैं। इसी प्रकार कतिपय परिवर्तन पहले शिक्षा में होते हैं तत्पश्चात् समाज में दृष्टिगत होते है। इसी प्रकार यह कहना उचित होगा कि यह प्रक्रिया पारस्परिक है। वैसे शिक्षा के कई पर्याय शब्द हैं– यथा– सीखना, पढ़ना, अध्ययन तथा एजुकेशन किन्तु शिक्षा शब्द ही सामान्यतः प्रचलित है। गुजराती शब्दकोश के अनुसार शिक्षा और पढ़ना पर्यायवाची शब्द हैं। शिक्षा का शाब्दिक अर्थ है पढ़ना, व्यवस्थित रूप से बालक का लालन-पालन, विकास, शिक्षा, तालीम व पढ़ना। अंग्रेजी शब्द एजुकेशन का अर्थ है–पढ़ना, सम्पूर्ण शिक्षा। शिक्षा शब्द की व्याख्या तीन प्रकार से की जा सकती है– पहली शिक्षा का शाब्दिक अर्थ, दूसरी पारिभाषिक अर्थ तथा शिक्षा की विस्तृत व्याख्या। तत्पश्चात् भी तीनों व्याख्याओ की मूल भावना लगभग समान ही है।

शिक्षा में परिवर्तन के कारण ही समाज में परिवर्तन होता है। किन्तु वास्तविकता इससे भिन्न ही होती है। तदुपरान्त परिवर्तन की प्रक्रिया पारस्परिक है क्योंकि कतिपय परिवर्तन पहले समाज में होते हैं और ये परिवर्तन शिक्षा में बाद में दृष्टिगत होते हैं। शिक्षा में परिवर्तन होने के बाद ही उसके परिणाम समाज में दृष्टिगत होते हैं।

अतीत की शिक्षा की संकल्पना

अतीत से ही शिक्षा की संकल्पना के आकार का श्री गणेश हुआ है। शनै· शनैः इनमें अनेकानेक अर्थ उभरते रहे। अतीत की शिक्षा की सकल्पना कुल मिलाकर व्यक्ति मे निहित गुणों का विकास करने तक ही सीमित थी। अतीत की शिक्षा का ध्येय था– 'शिक्षा वही है जो मुक्ति प्रदान करवा सके।' इसकी पुष्टि हेतु निम्न संदर्भो का अवलोकन करना उचित होगा–

- ❑ 'शिक्षा मानव को आत्मविश्वासी और नि·स्वार्थी बनाती है।' **ऋग्वेद**
- ❑ 'प्रकृति की ओर से प्राप्त होने वाली सीख ही शिक्षा है।' **पाणिनी व्याकरण**
- ❑ 'शिक्षा वह है जो मानव को चरित्रवान और विश्व के लिए उपयोगी बनाए।' **याज्ञवल्क्य**
- ❑ 'शिक्षा का अर्थ है शिष्टाचार, देश व प्रकृति से प्रेम की तालीम।' **कौटिल्य**
- ❑ 'स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का निर्माण ही शिक्षा है।' **अरस्तु**
- ❑ 'मानव मस्तिष्क मे निहित, विद्यमान, अदृश्य व सर्वमान्य विचारों को प्रकाश में लाना ही शिक्षा है।' **सुकरात**
- ❑ 'सीखने का अभिप्राय है–विवेक शक्ति का अनुशासन।' **जोन लॉक**
- ❑ 'जीवन के अंधकार में प्रकाश की किरणें फैलाना ही शिक्षा है।' **एच.जी. वेल्स**
- ❑ 'संगमरमर के हर पत्थर में प्रतिमा, मूर्ति का समावेश

होता है। कुशल शिल्पी संगमरमर के पत्थर में से अवांछित भाग को काट-छांट कर सुन्दर प्रतिमा का रूप दे देता है, ठीक इसी प्रकार शिक्षा आत्मा को अन्य दूषित पदार्थो से मुक्त कर देती है। जैसे–सगमरमर पर मात्र हथौडे मारने से प्रतिमा-मूर्ति नहीं बन सकती वैसे ही मात्र हथियारो के प्रहारो मात्र से मानवीय आत्मा मुक्त नहीं हो सकती है।' **क्नफ्यूसि**

- ☐ 'सस्कृति के जिस स्तर तक आप पहुच चुके है उसे यथावत रखने, उसमें प्रगति करने अथवा संशोधन करने के उद्देश्य से तथा उसे भावी पीढ़ी को सौपना ही शिक्षा है।' **जॉन स्टुअर्ट मिल**

उपरोक्त परिभाषाओ के आधार पर अतीत की शिक्षा संकल्पना का अर्थ है–● जो व्यक्ति को आत्मविश्वासी, निःस्वार्थी, शिष्ट, देश-प्रेमी व मानवतावादी बनाए, ● अंधकार से प्रकाश में लाने वाली प्रक्रिया, ● सांस्कृतिक उत्तराधिकार का संक्रमण, ● विवेकशक्ति का अनुशासन, ● स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क, ● आत्ममुक्ति प्रदान करवाएं, ● मानव मन मे विचार उत्प्रेरक हो।

संक्षेप मे अतीत की संकल्पना का ध्येय मानव मे निहित गुणों को विकसित करना एव शरीर व मस्तिष्क को स्वस्थ बनाए रखना था।

वर्तमान शिक्षा की संकल्पना

वर्तमान शिक्षा की सकल्पना से मेरा अभिप्राय उस संकल्पना से है जो बीसवीं सदी से प्रारम्भ हुई है। क्योंकि इस सदी में बालकेन्द्रित शिक्षा व शिक्षा मनोविज्ञान के कारण ही शिक्षा की संकल्पना में परिवर्तन हुआ है। इस संदर्भ में विभिन्न शिक्षाविदों, चिन्तकों के मत निम्न हैं–

- ☐ 'मानवीय जन्मजात शक्तियों का प्राकृतिक, सुसंगत और प्रागैतिक विकास करना ही शिक्षा है।' **प्रेसटेलोजी**
- ☐ 'शिक्षा वह प्रक्रिया है जिससे बालक की जन्मजात प्रवृत्तियो का प्रादुर्भाव होता है।' **फ्रोब्रेल**
- ☐ 'शिक्षा वह प्रक्रिया है जिसमें अनुभवों से सतत् सीखकर मानव जीवन जीना सीखता है। शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे मानव अपनी जन्मजात मूलभूत शक्तियो तथा वातावरण पर विजय प्राप्त करके अपनी समस्त शक्तियो का भली प्रकार से विकास कर सके।' **जॉन ड्यूवी**
- ☐ 'शिक्षा अर्थात् व्यक्ति का समग्र विकास, जिससे वह मानव जीवन में अपनी मौलिक शक्तियो का यथा सम्भव वाछित लाभ प्राप्त कर सके।' **पर्सिनन**
- ☐ 'शिक्षा अर्थात् पालने से लेकर मृत्युपर्यन्त तक के सभी प्रकार के वातावरण के प्रभाव, सम्पूर्ण शिक्षा, समग्र शिष्टाचार तथा समग्र संस्कृति।' **टी. एबर्राड**
- ☐ 'शिक्षा अर्थात् मानव के सम्पूर्ण व्यक्तिव का प्रगटीकरण।' **स्वामी विवेकानन्द**
- ☐ 'शिक्षा वह है जो परम सत्य को ढूंढ़ने में सहायक हो, जो काल से मुक्ति दिलवाए, जिससे द्रव्य का नही अतर का प्रकाश प्रज्वलित हो, शक्ति का नही अपितु प्रेम का कोश प्राप्त हो तथा जिससे सत्य का वास्तविक रूप जाना जा सके।' **रवीन्द्रनाथ टैगोर**
- ☐ 'जो लोग शिक्षा का अर्थ नही जानते उन्हें शिक्षा का अर्थ जानने का प्रयास भी नहीं करना चाहिए। किन्तु जिन्हे आचरण करना नहीं आता उन्हे आचरण करना सीखना चाहिए।' **रस्किन**
- ☐ 'बालक या मानव के मन, शरीर और आत्मा मे जो भी श्रेष्ठ है उसे बाहर निकालना ही शिक्षा है।' **गांधी**
- ☐ 'शिक्षा से हमें सर्वप्रथम यह सीखना चाहिए कि भोजन मिलने की अपेक्षा उसका प्रत्येक कौर कैसे सुस्वादिष्ट बने।' **जेम्स ऐंजिल**
- ☐ 'शिक्षा का मूल्यांकन प्राप्त ज्ञान से नहीं अपितु ज्ञान प्राप्त करने की शक्ति से करना उचित होगा।' **बेकन**
- ☐ 'बालमन पतंगे के समान इधर-उधर भटकता रहता है इसीलिए अत्यधिक प्रयत्नों के उपरान्त उसे एकाग्र किया जाए। तदुपरान्त बालक में यह शक्ति (एकाग्रता) गुप्त रूप से निहित होती है। अतः प्रत्येक बालक में अभिरुचि जाग्रत की जाए, प्रगति के

लिए संकल्प जगाया जाए, यही शिक्षा है।'

- 'हमारी शिक्षा ऐसी हो जो समाज के प्रति व्यक्ति को निर्भय बनाए, उसका हृदय वज्र-सा कठोर हो और उसका जीवन पूर्णतः सत्यनिष्ठ हो।' **डा. राधाकृष्णन**
- 'शिक्षा का अभिप्राय है कि हम बिना क्रोधित हुए आत्मविश्वास के साथ दूसरो की बात धैर्य से सुन ले।' **राबर्ट कोस्ट**
- 'आंकड़ों और वास्तविकताओं को भुला देने के पश्चात् हमारे पास जो बच जाए, वही शिक्षा है।' **राबर्ट बेन्थली**
- 'शिक्षा सत्य का औजार है, सीखना अर्थात् मुक्ति, आत्मदर्शन, स्वप्रेरणा, नित्यनवसृजन व साहस।' **विनोबा भावे**
- 'शिक्षा का सर्वोत्तम कार्य है—ऐसे सुसंस्कारी व्यक्तियो का निर्माण करना जो जीवन को जीने की भांति जी सके।' **जे. कृष्णमूर्ति**
- 'मात्र पुस्तकीय ज्ञान को मस्तिष्क में भर लेना शिक्षा नही अपितु पुस्तकीय ज्ञान को जीवन मे उतारना ही शिक्षा है।' **चित्रभानु**
- 'सीखना मूल है, संस्कृति फूल है और ज्ञान फल है।' **स्वामी शिवानन्द**
- 'मात्र पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करने वालों का जीवन पुस्तकीय ज्ञान-सा कोरा और काला ही होकर रह जाएगा। किन्तु सच्ची शिक्षा प्राप्त करने वाले के तो हाथ, पांव, आंखें, कान, रक्त को प्रत्येक कण, रोम-रोम और हृदय में चैतन्य प्रकट होगा।' **जुगतराम दवे**
- 'मानव प्रतिभा का सर्वांगीण विकास ही शिक्षा है।' **डा. गुणवंत शाह**

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर वर्तमान शिक्षा संकल्पना का अर्थ है—● मानवीय जन्मजात प्रवृत्तियों का प्रादुर्भाव व विकास करना। ● व्यक्ति मे निहित समग्र शक्तियों का सर्वांगीण विकास / सम्पूर्ण विकास। ● जन्म से मृत्यु तक की प्रक्रिया। ● व्यक्ति में निहित सर्वोत्तम प्रवृत्तियों का प्रगटीकरण, प्रादुर्भाव करना। ● भोजन ही नही भोजन का प्रत्येक कौर सुस्वादिष्ट बने। ● सुसस्कारी व्यक्तियों का निर्माण हो। ● शिक्षा से प्राप्त ज्ञान का व्यावहारिक जीवन में प्रयोग। ● शिक्षा अर्थात् मूल, ज्ञान अर्थात् फल व सस्कृति अर्थात् फूल। ● शिक्षा अर्थात् बिना किसी प्रकार के दुर्व्यवहार के दूसरों को शातिपूर्वक सुनना। ● वास्तविकता को भूल जाने पर जो शेष रहे वही शिक्षा है। ● मानव मे मानवता, मानवीय प्रतिभा के सार्वभौमिक विकास की प्रक्रिया।

भावी शिक्षा की संकल्पना

भावी शिक्षा की संकल्पना वैसे कोई ज्योतिषाचार्य ही कर सकता है। तदुपरान्त कतिपय शिक्षाविदों ने भावी शिक्षा की संकल्पना का अनुमान निम्नानुसार किया है—

- 'विद्यालय अथवा विद्यापीठ का पुस्तकालय एक अभिन्न अग है, आवश्यक सहयोगी होगा। मेरे मतानुसार विद्यालय का पुस्तकालय शिक्षा के द्वार खोलने की कुजी होगी।' **आन्द्रेमोरवा**
- 'भविष्य में ज्ञान का विस्फोट होगा। अतः मात्र पुस्तको से ही ज्ञानार्जन सम्भव नहीं हो सकेगा। अतः अब टी.वी, रेडियो, सूचना माध्यमो, समाचार-पत्रो के माध्यमों से ज्ञानार्जन करना होगा। अब ज्ञान व्यक्तिगत रूप से देना होगा। शिक्षा अर्थात् जीवन पर्यन्त की शिक्षा होगी। इसीलिए विद्यालय अब केवल ग्यारह बजे से शाम पांच बजे की पारी में ही नहीं खुलेंगे। प्रौढ़ भी विद्यालय में ज्ञानार्जन हेतु आएंगे। शिक्षा के सभी को समान अवसर देने होंगे। विद्यालय को व्यक्ति में उत्पादन शक्ति विकसित करनी होगी।' **टार्स्टन हसन**
- 'मैं किसी को कभी कुछ भी नहीं सिखलाता अपितु ऐसे अवसर प्रदान करता हूँ कि विद्यार्थी स्वयं सीख सके।' **आइंस्टीन**
- 'भावी किसी फोटो खिचवाने को बैठे व्यक्ति-सा क्या स्थिर है? किन्तु यह हमे आभास तक नहीं होने सा आकर स्वम्भित कर देगा। अतः हमें सीखने की विधि, कक्ष, कक्षागत व्यवहार आदि सभी बदलने होंगे। शिक्षा वह है जिससे विद्यार्थी आनंदातिरेक

में सराबोर हो जाए, लवलीन हो जाए, मुग्ध हो जाए।' **जार्ज लियोनार्द**

- 'वर्तमान विद्यालय ऐसे स्थल है जहां विद्यार्थी मे दासग्रंथि का सर्जन होता है। विद्यार्थी अध्यापन को ही अध्ययन मानने की भूल कर रहा है। वह इसे अंक प्राप्ति में प्रगतिशील मानता है। सतत् बोलने की प्रक्रिया को नवाचार की प्रक्रिया समझता है। इस प्रकार विद्यालय और विद्यालयी शिक्षा ने बालक का बहुत ही अहित किया है अतएव हमे विद्यालयहीन समाज की व्यवस्था करनी चाहिए।' **ईलान एलीच**
- 'शांतिपूर्ण आंदोलन द्वारा ही शिक्षा के क्षेत्र मे परिवर्तन सम्भव है। विश्वव्यापी शिक्षा विश्व से ही प्राप्त हो सकती है। घर और कार्य के महत्व का आकलन जितना किया जाए कम ही होगा ..... जो जीवन क्षण-क्षण में नवरूप धारण करता रहता है उसे निश्चित समय (समयसीमा), मर्यादा, पाठ्यक्रम या विद्यालयी चारदीवारी में भला कैसे बांधा जा सकता है?' **अवरैंट रैमर**
- 'मध्य युग की भाति शिक्षण संस्थाएं महत्वहीन हो चुकी हैं और ये निर्जीव शिक्षा द्वारा समाज का अनिष्ट ही कर रही हैं। अतएव हमें भविष्य की आवश्यकताओं का विश्लेषण करके शिक्षा की पुनर्रचना करनी होगी।' **जॉन वीझी**
- 'भावी शिक्षा की व्याख्या होगी– कैसे सीखा जाए, यह सीखना ही शिक्षा होगी। सीखना अब जीवन का प्रायः एक आयाम, तबका ही नहीं रहेगा, किन्तु यह जीवन पर्यन्त की प्रक्रिया होगी। अब शिक्षित को भी पढ़ना होगा। क्या सीखने के पश्चात् भी मानव जीवन में वास्तव में परिवर्तन आता है? उसकी दैनिक जीवन शैली मे परिवर्लन आए यही सीखना है।' **माल्कम आदिशेशैय्या**
- 'सीखना, पढ़ाई जीवन लक्षी बने, इस हेतु भावी आवश्यकताओं पर विचार-विमर्श करके उनकी प्राप्ति हेतु आज से ही आयोजना करनी होगी अन्यथा वह भावी झटका बना कर जीवन को निरर्थक बना देगा। **'आल्विन टोफलर**
- 'अतीत ऐसा पथ है जिससे ऊपर चढ़ा जाता है। किन्तु इसका बोझ सिर पर लादे घूमते रहना लाभप्रद नहीं। शिक्षा भविष्योन्मुख होनी चाहिए।' **आचार्य रजनीश**
- 'पढ़ाई द्वारा हम आज (Untınshed Man) तैयार कर रहे हैं। कल के समग्र समाज को अध्ययन शील समाज बनाना होगा। भविष्य मे सांस्कृतिक क्रान्ति करनी होगी। पढ़ाई जीवन को केवल समृद्ध, सुखी और शांतिप्रद बनाने का साधन ही नहीं अपितु माध्यम भी होगा।' **लर्निंग टू.बी. यूनेस्को रिपोर्ट**
- 'सच्ची पढ़ाई का प्रथम सिद्धान्त यह है कि मानव किसी वस्तु को जान नहीं सकता है। शिक्षक केवल सूचना देने का यंत्र या विद्यार्थी से काम लेने वाला मुकादम भी नहीं है। शिक्षक विद्यार्थी का सहायक अथवा मार्गदर्शक होता है। शिक्षक विद्यार्थी पर केवल बोझ डालने वाला नही, अपितु भावी को सूचित करने वाला है। वास्तव में शिक्षक अपने शिष्य के अन्तस का निर्माण ही नही करता है; वह तो विद्यार्थी को जो ज्ञान किरणे प्राप्त होती हैं वही मात्र विद्यार्थी को बता देता है, विद्यार्थी को पूर्ण बनाने, इसमें सहायक और प्रोत्साहन देने वाला शिक्षक शिष्य को ज्ञान नहीं देता है, किन्तु शिष्य ज्ञानार्जन कैसे करे यह बताता है। शिक्षक शिष्य में निहित ज्ञान को प्रकाशित करने का कार्य नहीं करता, किन्तु वह ज्ञान में आने वाले अवरोधों को दूर करने के उपाय शिष्य को बताता है।' **महर्षि श्री अरविंद**
- 'किसी शिक्षक को शिक्षा के बारे में पूछा गया तो उसने उत्तर दिया– आप के ज्ञान भण्डार के अंधकार में जो पूर्व में है उससे अधिक कोई मनुष्य नही दे सकता है। मंदिर की छाया में शिष्यों के बीच रहने वाला शिक्षक अपना विवेक शिष्य को नहीं देता है। किन्तु वह श्रद्धा व प्रेम के कुछ अंश अवश्य देता है।

जो वास्तव में ही विवेकशील हो वह भी अपना ज्ञान तुम्हें उत्तराधिकार के रूप में नहीं दे सकता है किन्तु वह तुम्हें तुम्हारे मन की गहराई तक ले जा सकता है।

खगोल शास्त्र ब्रह्माण्ड (SPACE) की कल्पना की अभिव्यक्ति कर सकता है किन्तु वह कल्पना आपको नहीं दे सकता है। गायक सर्वत्र व्यापक स्वर आपको गाकर सुना सकता है किन्तु वह तुम्हें ऐसे कान नहीं दे सकता है जिससे तुम उस स्वर लहरी का आनद भोग सको।

इसी प्रकार प्रकाण्ड गणितज्ञ तुम्हे नापने, तोलने विषयक ज्ञान बता सकता है किन्तु वह तुम्हें वहां तक पहुंचाने मे असमर्थ है। क्योंकि एक व्यक्ति अपने प्राप्त दर्शन को अन्य व्यक्ति को नही दे सकता है।

जैसे ईश्वर की दृष्टि में आप स्वतंत्र है, इसी प्रकार ईश्वर विषयक दृष्टि मे तथा जगत विषयक कल्पना में भी आप सबको स्वतत्र ही रहना चाहिए।' **खलील जिब्रान**

उपरोक्त सन्दर्भो से भावी शिक्षा की संकल्पना की एक झलक आपको दिखाने का प्रयास किया है। सक्षेप में भावी शिक्षा की संकल्पना... ● पुस्तकालयो को खोलने की ताली समान होगी, ● अध्ययन जीवन पर्यन्त चलता रहेगा, ● सीख के नहीं अपितु सीखने के अवसरो का निर्माण करना होगा, ● कक्षा, कक्षागत व्यवहार, अध्यापन की विधियो मे परिवर्तन करना होगा। ● शाला विहीन समाज का विकल्प बनेगा, ● शिक्षा जीवन लक्षी बनेगी, भावी आवश्यकताओं का पता लगाना होगा, ● विद्यार्थी को ज्ञान प्राप्त करने के उपाय बताने होंगे, ● ईश्वर की दृष्टि की भांति ही जगत विषयक कल्पना मे प्रत्येक को स्वतः स्वतंत्र रहने की पुकार होगी।

इस प्रकार से हमने अतीत, वर्तमान और भावी शिक्षा की संकल्पनाओं का विवेचन देखा। इस प्रकार आज की शिक्षा की व्यवस्था क्या है? युवक आज महाविद्यालयो मे क्यों जाते हैं? क्या आप जानते है? प्रश्न का उत्तर देते हुए विलियम आलब्रेकर अपनी काव्यात्मक शैली मे कहते है– आज विद्यार्थी विद्यापीठ में अध्ययन हेतु नहीं जाते अपितु वे लकडी की कठोर कुर्सियों पर अपने आपको शिक्षकों के सामने लाकर स्थापित कर देते है और कहते है कि हमसे फर्नीचर बनाया जाए। इस प्रकार ऐसा आभास होता है कि आज विद्यार्थी महाविद्यालय मे अध्ययन हेतु नहीं जाता है। अत. अध्ययन, शिक्षा की वास्तविक सकल्पना समझना जरूरी है। काका साहब अपनी अलंकारित गुजराती भाषा में शिक्षा की व्याख्या करते हुए लिखते है– 'शिक्षा कहती है, मैं विज्ञान नहीं, सत्ता की दासी नही, किसी शास्त्र की गुलाम नही अपितु मैं मानव के हृदय, बुद्धि और अन्य समग्र शक्तियो की स्वामिनी हूं। मानवशास्त्र और समाजशास्त्र मेरे दो चरण है।' कला और हुनर मेरे हाथ हैं, विज्ञान मेरा मस्तिष्क है, धर्म मेरा हृदय है, निरीक्षक व तर्क मेरे चक्षु हैं, इतिहास मेरे कान हैं, आजादी मेरा श्वास है, उत्साह व उद्योग मेरे फेफड़े हैं, धैर्य मेरा व्रत है, श्रद्धा मेरी पूंजी है।

मैं समग्र कामनाएं पूर्ण करने वाली जगदम्बा हूं। सच्चे अर्थ में शिक्षा जगदम्बा हूं। शिक्षा यदि उपरोक्त काल्पनिक चित्र साकार कर सके तो कितना अच्छा हो?

वंदावन
नजदीक संस्कार सोसायटी सामे
जिनतान रोड, सुरेन्द्र नगर
गुजरात

देश के आर्थिक विकास में शिक्षित महिलाओं का योगदान – प्रमुख समस्याएं एवं समाधान

❑ नन्द किशोर मण्डल

देश का आर्थिक विकास शिक्षित महिलाओं के बिना अधूरा है। एक पुरुष का शिक्षित होना केवल एक व्यक्ति के शिक्षित होने के बराबर है जबकि एक महिला का शिक्षित होना पूरे परिवार के शिक्षित होने के बराबर है। महिलाओं ने घर-गृहस्थी के कार्य को सम्पादित कर कृषि एवं औद्योगिक विकास में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है, लेकिन दुर्भाग्य है कि इनके द्वारा सम्पन्न कार्य का न तो परिवार के लोग मूल्यांकन करते हैं न समाज और राष्ट्र ही। आज के आधुनिक युग में महिलाओं की जिम्मेदारी बढ़ती जा रही है इसका मुख्य कारण ग्रामीण पुरुषों का शहरों में पलायन करना है।

प्राचीन काल से ही देश के आर्थिक विकास मे महिलाए अमूल्य योगदान देती रही है। विकास का कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं रहा है जिसमे महिलाओ ने अहम् भूमिका अदा नही की है चाहे वह क्षेत्र शिक्षा का हो या सस्कृति का, विज्ञान हो या ललित कला, व्यवसाय हो या कृषि। मध्य काल में स्त्रियां अपने पति के कार्यो मे सहयोग करती थीं। सूरत नगर मे रेशमी एवं ऊनी वस्त्र बुनने का कार्य महिलाएं करती थीं। वे कुशल कारीगर भी थीं तथा छोटी-छोटी दुकाने भी चलाती थीं। शिक्षित महिलाएं अध्यापन का कार्य करती थीं।

मुगल सल्तनत काल मे कई बार शासन की बागडोर महिलाओं के हाथ मे रही है। अकबर की मुख्य आया महाय अनत्रा ने शासन पर लगभग 5 वर्ष अपना नियंत्रण जमाए रखा। चदेल राजकुमारी दुर्गावती ने गढ़ गोविन्द पर शासन किया। इसके राज्य में हजार कस्बे एवं गांव थे। इतिहासकारों का मानना है कि दुर्गावती अकबर से ज्यादा कुशल प्रकाशक थी। आज बदलती हुई परिस्थिति मे भारतीय महिलाएं अपने निम्न स्तर को ऊचा उठाने में ही नही लगी हैं बल्कि हमारे देश का भी नाम ऊंचा उठा रही हैं। भारतीय महिलाएं केवल घर में चारदीवारी के अन्दर ही बन्द नही है बल्कि निकलकर चहुंमुखी दिशा में कार्यरत हैं। महिलाओं ने यह प्रण कर लिया है कि जिस दिशा मे कदम बढ़ाएं, उसमें अपनी ही पदचाप सुनाई दे। नए-नए क्षेत्रो में प्रवेश कर महिलाएं अपना बोलबाला कायम कर रही हैं। अपराजेय महत्वाकांक्षाओं, अथक परिश्रम, प्रतियोगिता की अदम्य क्षमता और दृढ़ निश्चय के कारण भारतीय महिलाएं न केवल अपने देश का नाम रोशन कर रही हैं बल्कि विश्वस्तर पर भी अपनी सत्ता और सामर्थ्य को दर्शा रही हैं। लक्ष्मीबाई, सुष्मिता सेन, बछेन्द्रीपाल, मेधा पाटकर, किरण बेदी, मदर टेरेसा, लता मंगेश्कर, पी.टी. उषा, नलिनी सिंह, भगवती देवी शर्मा, अमृता प्रीतम जैसी भारतीय महिलाएं है जिन्होंने अपनी अलग पहचान बनाई है। चाहे वह सेवा का क्षेत्र हो या समाज सुधारक (मदर टेरेसा), चाहे राजनीति का क्षेत्र हो (इन्दिरा गांधी), या साहित्य का (अमृता प्रीतम), चाहे खेल का क्षेत्र हो (पी.टी. उषा), या कला का (लता मंगेशकर), चाहे विज्ञापन का क्षेत्र हो या सौन्दर्य का (सुष्मिता सेन), चाहे वह प्रशासन का क्षेत्र हो (किरण बेदी), या पर्यावरण का (मेधा पाटकर) हर जगह महिलाओ की पदचाप गूंज रही है।

भारतीय खाद्यान्नों की पूर्ति हेतु विदेशों से अनाज आयात करते थे लेकिन विज्ञान की प्रगति ने कृषि उत्पादन के क्षेत्र मे देश को आत्मनिर्भर बना दिया है। अगर आज भारत कृषि उत्पादो का आयात करता है तो दूसरी ओर अन्य कृषि उत्पादनों का निर्यात भी करता है। इस कृषि क्षेत्र के विकास मे ग्रामीण महिलाओं का विशेष योगदान

रहा है। जैसा कि आप जानते है कि देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। हमारे देश मे भी महिलाओ की संख्या कुल जनसख्या का 45 प्रतिशत है। जिसमें 75 प्रतिशत महिलाएं ग्रामीण क्षेत्र में विकास कार्य करती है। खेत तैयार करने से लेकर बीजो की बुआई, पौधों की रोपाई, खरपतवार की निलाई, फसल की कटाई इत्यादि समस्त कार्यो में महिलाओ का बहुत बडा हाथ होता है। लेकिन दुर्भाग्यवश महिलाओ द्वारा सम्पन्न कार्य का न तो परिवार के लोग मूल्याकन करते हैं और न समाज और राष्ट्र ही। आज जिस प्रकार ग्रामीण पुरुषो का शहरों में पलायन बढ़ रहा है उससे महिलाओ के ऊपर खेती करने की जिम्मेदारी और बढ़ती जा रही है। पिछले कुछ वर्षों में ऐसा देखा गया है कि कृषि कार्य में महिलाओं की भागीदारी 70 प्रतिशत से बढ़कर 84 प्रतिशत हो गई है। ये महिलाएं 14 से 18 घण्टे तक खेतों मे काम करती है।

आजकल महिलाए केवल कृषि कार्य तक ही सीमित नही है। एक गृहणी की पूर्ण जिम्मेदारी निभाते हुए अन्य छोटे-बड़े उद्योग, सरकारी दफ्तर तथा मजदूरी आदि मे महिलाएं शामिल हैं। 1991 की जनगणना के मुताबिक 22.4 करोड़ पुरुष और 9 करोड़ महिलाएं श्रम शक्ति का हिस्सा है। सार्वजनिक क्षेत्र में महिला कर्मचारियो की संख्या पिछले 26 सालों मे (1971-1997) तीन गुणा बढ़ी है। एक अनुमान के अनुसार घरेलू महिला कामगारो की संख्या 1 करोड और 1 करोड़ 20 लाख के आसपास है। 1996 मे 16.40 फीसदी उत्पादन में 119.50 व 756 80 बिजली में 36.70 व 1.10 फीसदी, निर्माण मे 61.40 व 4 फीसदी, व्यापार में 15.60 व 25.10 फीसदी, यातायात में 157.60 व 4.5 फीसदी, वित्त मे 169.10 व 39 फीसदी, सामुदायिक क्षेत्र में 2634.50 व 1791. 90 फीसदी महिलाएं कार्यरत थीं। लेकिन कुछ समस्याएं हैं जिनके कारण महिलाएं अपनी योग्यता एवं क्षमता का पूर्ण प्रयोग नहीं कर पाती हैं।

प्रमुख समस्याएं

हमारे देश में जो महिलाएं कृषि तथा घरेलू कार्य मे संलग्न हैं उनमें साक्षरता का प्रतिशत बहुत ही कम है। अशिक्षित होने के कारण वे आधुनिक तकनीक से अनभिज्ञ रहती हैं जिसका सीधा असर देश के आर्थिक विकास पर पड़ता है। अगर अनुसधानकर्ता कृषि संबंधी जानकारी देने ग्रामीण इलाके में जाते है तो वे केवल पुरुष किसानों को ही जानकारी देते हैं तथा महिलाएं इस कार्यक्रम में कम भाग लेती है।

हमारे देश के ग्रामीण इलाके मे महिलाओं के पास वित्तीय साधनो का अभाव है। इसलिए ये महिलाएं उन्नत तकनीकों का प्रयोग नही जानतीं। बैको, सहकारी संस्थाओ तथा अन्य सहकारी वित्तीय संस्थाओं की जानकारी पुरुषों तक ही सीमित है। सरकार द्वारा भी महिलाओं को वित्तीय मदद के लिए कोई पृथक नीति नही है, जिसका प्रभाव देश के आर्थिक विकास मे अप्रत्यक्ष रूप से पड़ता है।

हमारे देश की महिलाओं को कार्यो का दोहरा बोझ उठाना पड़ता है। अपने परिवार के पालन-पोषण तथा अन्य कार्य करने की जिम्मेदारी तो होती ही है, अधिकांश ग्रामीण महिलाएं घर की कुछ अनिवार्य आवश्यकताओं जैसे खाना बनाना, पीने के लिए पानी की व्यवस्था करना, जानवरो के लिए चारे की व्यवस्था करना तथा बच्चो की देखभाल करना इत्यादि प्रमुख कार्य भी करती है।

आज देश के प्रत्येक क्षेत्र मे क्रातिकारी परिवर्तन हुआ है। खेती करने के तरीके तथा औद्योगिक कार्य पद्धति में परिवर्तन हुआ है। उन्नत मशीनों की खोज की गई है जिससे उत्तम किस्म की वस्तुओ का उत्पादन शीघ्रातिशीघ्र किया जा सके। लेकिन अनेक महिलाओं में निपुणता की कमी होती है जिसके कारण कृषि तथा उद्योग दोनो ही प्रभावित होते है। अधिकाश महिलाओ को यह मालूम नहीं है कि बीज कितनी गहराई में बोया जाना चाहिए और पौधों के बीच कितनी दूरी रखनी चाहिए। खाद की मात्रा और पानी कब डालना चाहिए। अत निपुणता के अभाव में महिलाएं उतना योगदान नहीं दे पातीं जितना उनकी मेहनत के परिप्रेक्ष्य मे अपेक्षित है।

कृषि कार्य मे महिलाओ को पूरे साल कार्य भी नहीं मिलता है। वे अपने कृषि कार्य के बाद बचे हुए समय का सही सदुपयोग नही कर पातीं। महिला को लघु तथा कुटीर उद्योग संचालित करने के लिए प्रशिक्षित नहीं किया जाता। उद्योगो को कैसे सचालित करें, उनके लिए कच्चा माल कहां से प्राप्त किया जाए, उत्पादित वस्तुओं को किस प्रकार बेचा जाए, इनकी जानकारी के अभाव में वे खाली समय का उपयोग नहीं कर पातीं।

महिलाओं की देश के आर्थिक विकास में भागीदारी बढ़ाने के लिए अनेक सामुदायिक विकास कार्यक्रम, बीस सूत्री-कार्यक्रम, पंचायती राजव्यवस्था, राजीव गाधी मिशन, महिला समृद्धि योजना इत्यादि अनेक योजनाएं हैं लेकिन उचित जानकारी के अभाव में महिलाए लाभ नहीं उठा पाती है।

अधिकांश कार्य ऐसे हैं जिनमें महिलाएं अपनी इच्छा से फैसला नहीं ले सकतीं जिसके कारण देश के आर्थिक विकास मे बाधा उत्पन्न होती है। उत्तर प्रदेश में करीब 90 फीसदी और बिहार, मध्य प्रदेश, हरियाणा और आंध्र प्रदेश की करीब 80 फीसदी महिलाओं को अपने रिश्तेदारो व दोस्तों से मिलने के लिए घरवालों की इजाजत लेनी पड़ती है। बाजार तक जाने के लिए इजाजत मांगने वाली महिलाओं की संख्या बहुत ज्यादा है। यहां तक कि केरल जैसे प्रगतिशील राज्य मे 50 फीसदी से ज्यादा महिलाओं को इस तरह की इजाजत लेनी पड़ती है। पंजाब में 97 फीसदी और उत्तर प्रदेश में 98 फीसदी महिलाएं भोजन बनाने में शिरकत करती हैं। बिहार, उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में 15 फीसदी महिलाओं ने अभी भी किसी भी प्रकार के फैसले में हिस्सा नहीं लिया है। यह पाया गया है कि 50 फीसदी महिलाओ के पास घरेलू खर्चो के लिए धन रहता है। इससे देश मे आर्थिक बाधा उत्पन्न होती है।

समाधान

अशिक्षित महिला देश के आर्थिक विकास में बहुत बड़ी बाधक है। हमारे देश में महिलाओं को दी जा रही शिक्षा देश के आर्थिक विकास के अनुरूप नही है। ग्रामीण महिलाओं के लिए एक ऐसी शिक्षा नीति होनी चाहिए जो देश के आर्थिक विकास में बाधित समस्या का समाधान करती हो। महिलाओं को ग्रामीण-स्तर पर कृषि तथा उद्योग की आधुनिक तकनीको, वैज्ञानिक उपकरणों के प्रयोग की शिक्षा दी जानी चाहिए। उन्हें कृषि तथा औद्योगिक उपकरणो की देखभाल तथा उनके सुधार की तकनीकी शिक्षा दी जानी चाहिए। महिला को दी जाने वाली शिक्षा मे सरकारी योग्यताओं की जानकारी, महिलाओं को प्रदान किए गए संवैधानिक अधिकारों का ज्ञान तथा सीमित साधनों के द्वारा अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के अर्थशास्त्र को सम्मलित किया जाना आवश्यक है, तभी देश का आर्थिक विकास तीव्र गति से संभव है।

भारतीय महिलाओं को सरकारी तथा गैर-सरकारी संस्थाओं द्वारा वित्तीय साधन उपलब्ध कराने चाहिए जिससे वे स्वतन्त्रतापूर्वक अपना योगदान कृषि तथा उद्योगो से संबधित विकास को गति प्रदान करने मे दे सके। स्कूली छात्राओ को कृषि तथा उद्योगों का तकनीकी ज्ञान प्राप्त करने के लिए विशेष व्यवस्था आवश्यक है तभी महिला कृषि तथा उद्योगों मे निपुणतापूर्वक कार्य कर सकती है जो देश के आर्थिक विकास मे तीव्रता प्रदान करेगी।

हमारे देश में खेती का कार्य पूर्णकालिक नहीं है। खेती मुख्यतः वर्षा पर निर्भर होने के कारण महिलाओ को वर्ष के बाकी समय मे काम नहीं मिलता है। जब महिलाएं कृषि कार्य मे संलग्न नही हों, उस समय उन महिलाओं को अन्य लघु एवं कुटीर उद्योग मे कार्य कराने हेतु सम्मिलित होने हेतु प्रोत्साहित करना चाहिए। इन महिलाओं को टोकरी बनाने, पापड, चिप्स, अगरबत्ती, मोमबत्ती, मिट्टी के बर्तन आदि चीजों को बनाने के लिए प्रशिक्षण दिया जाना आवश्यक है जिससे समय का सही सदुपयोग हो सके। इसके साथ-साथ महिलाओं की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए मुर्गी पालन, मछली पालन, डेयरी उद्योगों में भी भागीदारी बढ़ाना आवश्यक है। अपनी स्थिति सुदृढ़ बनाने के साथ-साथ वे देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने मे अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकती हैं।

देश मे अधिकाधिक विकास के लिए महिलाओं का सही सदुपयोग नही किया गया तो देश को विकास पथ पर अग्रसर करने मे काफी कठिनाई आएगी। आज महिला जीवन के प्रत्येक क्षेत्र मे जिस प्रकार कीर्तिमान बना रही है उसको देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि महिलाओं के कार्यक्रम एव महिलाओ के श्रम का उचित मूल्यांकन किया जाए जो देश के आर्थिक विकास के लिए प्रेरणा का स्रोत बन सके। ☐☐

ए-38, कैलाश कालोनी
नेशनल ओपन स्कूल
नई दिल्ली

आदमी

❑ सत्यनारायण शुक्ल

तुम अच्छे हो
पर अच्छे नही,
तेरे अन्दर सीखने की लालसा है,
पर उसके प्रति समर्पण का भाव नहीं,
मनुष्य की वास्तविक शक्ति मनुष्य बनने तक है,
मंजिल पर पहुंचने के लिए कठिन दौर से गुजरना होगा।

आदमी
है क्या तू आदमी...?
दिल भी है
दिमाग भी,
वक्त का सैलाब भी,
पर तू कहता है.....
वक्त कहां.....

आदमी
आखिर तू है क्या आदमी...?
आंख भी है
कान भी
आन भी है
शान भी
आबेहयात् कुर्बान भी,
पर तू कहता है...
वक्त जरा ठहर जा
क्योकि में भी हूं
आदमी।

आदमी
राम भी
रावण भी
आदमी, युधिष्ठिर भी
दूर्योधन भी
आदमी के अन्दर
बैठा है एक आदमी।
आदमी, है क्या तू आदमी।

जिन्दगी तूफान है, तो
आदमी तू कै दे तूफान है।
आदमी तू शक्ति है
आदमी तू सब कुछ है
तुझ से है सब कुछ
आदमी का आदमी
आदमी के वास्ते
गर जो कहे आदमी
और सुन ले आदमी
तो हर गली-कूंचे मे
आदमी ही आदमी।

बापू भी थे आदमी,
नाथू भी था आदमी,
वक्त बह रहा था,
बापू के नाम से
नाथू कह रहा था...
तू ही नही आदमी

मैं भी हूं आदमी
तेरे नाम की हवा
मेरे घर से गुजरेगी
क्योंकि तू ही नही आदमी,
मैं भी हूं आदमी।

रौशन जहा के तह में
आदमी का नाम है
सत्यन् 'चेनारीवी' का बस
एक ही पैगाम है।
गर हो सके तो हम वतन का
ज़र्रा-ज़र्रा ये कहे कि
तू ही नही आदमी
मै भी बनूंगा आदमी ❑❑

ग्राम व पोस्ट-चेनारी
जिला-रोहतास (सासाराम) बिहार

सदा हरी-हरी रखना

❑ **रेखा बहन दवे**

हे आचार्य आचारवान!
हे गुणीयल गुरु महान!
हे शिक्षक चारित्रवान!
तेरी विद्यावाटिका को सदा हरी-हरी रखना।
सदा हरी रखना और फोरम फैलाना.. हे आचार्य आचारवान..

विद्या वाटिका में प्यारे भोले बच्चे आएंगे,
मीठी जुबां से सबके दिल को बहालाएगे,
उनकी निर्दोष आंखों में तेरा ढेर प्रेम डालना।
हे आचार्य आचारवान, तेरी विद्यावाटिका को सदा हरी-हरी रखना।

विद्यावाटिका में सुदर पक्षी भी आएगे,
मीठे टहूंके सबके दिल को ललचाएंगे,
मीठी-मीठी जुबां से उनको सत्कारना।
हे आचार्य आचारवान, तेरी विद्यावाटिका को सदा हरी-हरी रखना।

मूंछों वाली मा बनके हंसना-हंसाना,
अध्ययन के भारण को थोड़ा कम करना,
संस्कृति की सुगध फैलाना।
हे आचार्य आचारवान, तेरी विद्यावाटिका को सदा हरी-हरी रखना। ❑❑

बी-10, गांधीकुंज अपार्टमेंट
कोचरब आश्रम के पास
पालडी, अहमदाबाद, गुजरात

पुस्तक समीक्षा

पुस्तक– पाठ्यक्रम परिवर्तन के आयाम

लेखक– डा. जगमोहन सिंह राजपूत

प्रकाशक– राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

नई दिल्ली

पृष्ठ सं. 232

मूल्य– पेपरबैक 70.00

सजिल्द 100.00

समीक्षक– डा. जयपाल तरंग

पाठ्यक्रम परिवर्तन के आयाम– स्कूली शिक्षा का संदर्भ-ग्रंथः शिक्षा सुधार और राष्ट्र निर्माण की दिशा में मील का पत्थर

समीक्ष्य कृति पाठ्यक्रम परिवर्तन के आयाम जो डा. जगमोहन सिंह राजपूत, निदेशक राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसधान और प्रशिक्षण परिषद् के आज की शिक्षा की आवश्यकताओ और राष्ट्र की आकाक्षाओ के संदर्भ में समय-समय पर प्रकाशित लेखों का संग्रह है। कहने की आवश्यकता नही कि पाठ्यक्रम परिवर्तन और पाठ्य-सामग्री संबंधी विविध वाद-विवादी और संवादी प्रसंगों में डा. राजपूत ने सतर्क और उपयोगी भूमिका निभाई है। इस भूमिका-निर्वाह में पाठ्यक्रम के विषय में व्यावहारिक विवेचना मे शास्त्रीय झलक व उसके विवरणो मे व्यावहारिकता सर्वोपरि रही है। अतः इस सद्य प्रकाशित कृति को स्कूली शिक्षा का सदर्भ-ग्रंथ एवं शिक्षा-सुधार और राष्ट्रीय निर्माण की दिशा मे नीव का पत्थर कहा जा सकता है।

लेखो के क्रम निर्धारण, संकलन और सपादन ने इन लेखो को पाठ्यक्रम परिवर्तन के आयामो को सुसगठित, समग्र शिक्षा सेवी और उपयोगी अनुशासन मे ढाल दिया है। इन लेखो को पत्र-पत्रिकाओ मे पढने वाले विद्वानो को भी लगेगा कि इन आयामों का अवलोकन समग्र विषय को समझने और समझाने मे 'पाठ्यक्रम-सर्वस्व' बन गया है। परिणामस्वरूप मिडिया और जनमानस पाठ्यक्रम और पाठ्य-सामग्री निर्माण में परिवर्तनो की दृष्टि से उपयोगी और सराहनीय भागीदारी सुनिश्चित कर सकेगे, जो शिक्षा में सुधार और राष्ट्र निर्माण की दिशा मे सही और लक्ष्य समर्पित क्रियान्वयन को सफल बना सकेंगे।

पाठ्यक्रम परिवर्तन के आयामो में इकतालीस अध्याय हैं। प्रत्येक आयाम सारगर्भित, विचार प्रेरक और सहज सप्रेषणीय है। प्रायः हिन्दी की शास्त्रीय पुस्तकों मे अंग्रेजी सेवी नीरस अनुवाद शैली मन्तव्य-निवर्हन, प्रवाह और प्रभाव मे हिन्दी की सहजता खो बैठती है। इस दृष्टि से यह कृति सहज हिन्दी की अभिव्यक्ति में सराहनीय है। इसके लिए डा राजपूत और संपादक दोनों साधुवाद के अधिकारी है।

'शिक्षा का मूलभूत अधिकार' संविधान के सदर्भ में इस अधिकार की अनिवार्यता बच्चों के सर्वेक्षण-आकड़ो से स्पष्ट करते हुए देश में पिछड़ेपन का कारण बच्चो का स्कूल से बाहर रहना बताया है। अत में सार संदेश है–

"सब बच्चों को प्रारभिक शिक्षा देना राष्ट्र का उत्तरदायित्व है। अतः यह प्रत्येक नागरिक का भी उत्तरदायित्व है।"

'सिखाए कौन' के अंतर्गत बच्चों के सर्वागीण विकास के लिए सिद्धान्त और व्यवहार का अंतर स्पष्ट किया है। उत्तर में कहा गया है–

कितना महत्वपूर्ण होता है स्कूल का परिवेश तथा वातावरण जहां बच्चे स्वच्छद होकर प्रकृति के साथ मिलकर खेले, सीखें, पढ़ें और पढ़ाएं। एक संवेदनशील ही इसे जान सकता है।" कदाचित वही सिखा सकता है।

'शिक्षक की भूमिका', 'अध्यापक की निर्भरता', 'भारत के अध्यापक' और 'नए शैक्षिक उत्तरदायित्व' आयामों मे शिक्षक के प्रशिक्षण, अध्ययन-कला और क्षमताओ के विकास, प्रतिबद्धता तथा सोद्देश्य कार्य निष्पादन की भावना को आदर्श अध्यापक का गुण माना है। डा. राजपूत ने दो टूक शब्दों मे कहा है–

"जिस विशाल नैतिक परिवर्तन की आवश्यकता आज देश को है, उसके कर्णधार आज की परिस्थितियों में देश के अध्यापक ही हो सकते है। ...यदि समाज और राष्ट्र इन्हें यह उत्तरदायित्व सौंप सके तो सफलता निश्चित रूप से मिलेगी।"

'नए शैक्षिक उत्तरदायित्व', 'उपयुक्त और सार्थक शिक्षा', शिक्षा और प्रतिबोध' शिक्षा की सही व्यवस्था पर डा. राजपूत के विचारो मे कोई आला-जाला नही है इस सबध में डा. राजपूत का यह कथन कितना सार्थक व उपयोगी है–

"वाद-विवाद और सवाद किसी भी प्रगतिशील समाज के ऐसे अंग है जो उसे हर दिशा में आगे बढ़ाने में सहायता करते है। इनकी उपयोगिता इस पर निर्भर करती है कि कितना वाद है और कितना विवाद एवं किस हद तक संवाद पहुचते हैं। सवाद मानव विकास का एक महत्वपूर्ण अग है।" इस विचार दृष्टि से उन्होंने इन आयामों की विवेचना की है।

'प्राथमिक स्तर पर स्कूली शिक्षा', 'परीक्षा प्रणाली का परीक्षण', 'शिक्षा में परिवर्तन के आधार', 'शैक्षिक परिवर्तनों की आलोचना', 'कैसी शिक्षा दे रहे हैं हम', 'शिक्षा जीवन उपयोगी बने', 'आदर्श शिक्षा का लक्ष्य', 'भविष्य की स्कूली शिक्षा 'सुधारोन्मुख परिवर्तन का विरोध', 'शिक्षार्थी आज हाशिए पर', 'स्कूली शिक्षा के सदर्भ', 'स्कूली शिक्षा और आध्यात्मिकता', 'नई पाठ्यचर्या की रूपरेखा' विवेचना पाठक मे विश्वास रचती है और नई सोच को जगाती है।

संस्कृत, सस्कृति और सशय, असहमत, सहमत और सहमतिविमल विवेक उदबोधक हैं।

'ग्लोबल विलेज–इसका चौधरी कौन', 'परिमार्जित नया पाठ्यक्रम-संशय कैसा', 'अर्थ का अनर्थ करने वाले', 'सेक्यूलरिज्म के ध्वज-वाहक', 'मानवीय मूल्यो का विरोध क्यो', 'आलोचना की पर पराकाष्ठा', 'कैसे-कैसे प्रगतिशील', अध्याय पाठकों को लालित्य और राजनीतिगंधी लग सकते हैं किन्तु यदि वे उन्हे स्वतत्र रूप से पढ़ेगे और निष्पक्ष रूप से मनन कर स्वतंत्र निर्णय लेगे कि इनकी विवेचना तार्किक और भरोसेमंद तथ्यो पर आधारित है, निस्संदेह शिक्षाधर्मी हैं। भगवाकरण तथा तालिबानीकरण की दलीलो पर सतर्क कथन स्वागत योग्य है। "ऐसा न तो तथ्यपरक है, न वैज्ञानिक और न ही यह विचार देशहित मे है।"

'अध्यापकों में गुरु परिचय', 'स्कूली शिक्षा के बदलते पाठ्यक्रम सरोकार', 'ग्रेडिग का मूल्यांकन', 'शिक्षा की दिशा की खोज', 'स्कूली शिक्षा में गुणवत्ता', 'समझदार समाज मे विद्यालय', 'प्रारभिक विद्यालयों में पठन-पाठन जिज्ञासा, सृजनात्मकता और अन्वेषण' पाठ्यक्रम परिवर्तन के विविध आयामो पर उपयोगी प्रकाश डालते है।

अंत के तीन अध्यायों मे– 'क्या स्कूली शिक्षा धर्मो के मूल्यो, आध्यात्मिकता और तत्व शास्त्र की अवहेलना कर सकती है? छिद्रान्वेषण की प्रशंसा निशाना बने अध्यापक और शिक्षा में पारदर्शिता विवेक सम्मत विमर्श और निष्पक्ष दृष्टि का अनुशीलन प्रकट करते हैं।

प्रस्तुत कृति स्कूली शिक्षा के विभिन्न सरोकारों से ज्ञानवान और गरीब जनता पिछड़े वर्ग और दलित वर्ग के बच्चों के हितचिन्तन के साथ राष्ट्र-निर्माण की चेतना जागृत करने में शिक्षार्थियों, शिक्षाविदों, मिडिया विशेषज्ञों और नीति-निदेशकों को उपयोगी सलाहकार कही जा सकती है। ☐☐

एच-2/53, महावीर इन्क्लेव
नई दिल्ली

प्राइमरी शिक्षक

वर्ष . 27 | अक . 4 | अक्तूबर 2002

इस अंक में

शिक्षकों ने लिखा है

विचार

संपादक की कलम से

एन.सी.ई.आर.टी. के पाठ्यक्रम परिवर्तन के अन्तर्गत नई पाठ्यपुस्तकों के प्रकाशन के निर्णय से बौखलाए लोगों की ओर से विरोध की आंधी लगभग तीन वर्षो से प्रायोजित चल रही थी। समाचार-पत्रों तथा दूरदर्शन-चैनलों पर बड़े पैमाने पर चली चर्चाओं को देख, सुनकर तथा संसद में भी 'सैक्यूलरवाद' के नाम पर मचाया गया हड़कंप देखकर अच्छे खासे तथा सोच-समझ रखने वाले लोग भी यह शंका करने लगे कि पाठ्यपुस्तकों में कुछ न कुछ गड़बड़ी जरूर है। किन्तु विगत बारह सितम्बर को माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने ऐतिहासिक फैसले में दूध का दूध और पानी का पानी ही नहीं कर दिया बल्कि पाठ्यक्रम की पुस्तको के विरोधियों को यह भी चेता दिया है कि भारतीय परपरा और संस्कृति यहां की शिक्षा का आधार होनी अनिवार्य है और इसे स्वीकार किया जाना आवश्यक है। हम में से कुछ लोगों ने बापू को सुना या पढ़ा ही नहीं, और यदि सुना भी है तो उन्हें समझने की कोशिश कभी नहीं की। गांधीजी ने भारत की सस्कृति और मिट्टी से जुड़ी समझ के आधार पर 'बेसिक' शिक्षा प्रणाली की रूपरेखा राष्ट्र के सामने रखी थी। मौलाना आजाद और जाकिर हुसैन ने इस तथ्य को माना और स्वीकार किया। गांधीजी ने देश की एकता के सूत्रों और पृष्ठभूमियों को समझा और परखा था। उनकी पारखी दृष्टि केवल संस्कृति, अध्यात्म और धर्म के तल तक ही सीमित नहीं थी बल्कि प्रकृति, वातावरण और जीव-जन्तुओं के प्रति मनुष्यों के करुणा-भाव के बारे में भी उनकी परिवेश-दृष्टि स्पष्ट और अचूक थी साथ ही शिक्षा से जुड़ा यह महत्वपूर्ण पक्ष भी उनके जहन में रहा। 'शंकर राव चव्हाण कमेटी' ने मूल्याधारित शिक्षा के बारे में एक रिपोर्ट' दी थी, इस 'रपट' को माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अपने फैसले में विस्तारपूर्वक उद्धृत किया है– हमारी पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति के बढ़ते नकारात्मक कुप्रभावों से ग्रस्त है हमारा देश विशाल और वैविध्य से भरा-पूरा है। यह अत्यंत प्राचीन देश है इस देश की परंपराएं वैविध्यपूर्ण हैं। यहां प्राचीन काल से अत्यन्त महान संतों व दृष्टाओं की शृंखला रही है। यहा के विभिन्न धर्मो और सम्प्रदायों ने शाश्वत मूल्यों का उल्लेख शिक्षा का बीजारोपण करने के लिए किया है। धर्मो के आधारभूत मूल्यो से विद्यार्थियों का परिचय कराना है। वे सभी धर्मो के दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन करें। विद्वान न्यायमूर्तियों ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि संस्कृत थोपने की बात सरासर गलत है। सस्कृत का केवल प्रावधान मात्र किया गया है ताकि जो छात्र संस्कृत पढ़ना चाहते हैं वे उसे पढ़ सकें, माध्यमिक स्तर पर यह एक वैकल्पिक विषय है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय शिक्षा को हमारे मूल से जोड़ने वाला है और इसलिए भी इसे ऐतिहासिक निर्णय कहा जाएगा, जिससे अध्यापको और अभिभावकों को भी बहुत बड़ी राहत मिली है। ❑❑

विद्यालय एक दर्पण

□ रजनीकान्त शुक्ल

जीवन के लिए उपयोगी और आवश्यक वस्तुओं का संरक्षण करना तथा उचित मार्गदर्शन करना शिक्षा का परम दायित्व है। इस दायित्व का निर्वहन विद्यालय द्वारा ही सम्भव है। मानव व मानव के बीच बढ़ती दूरी को विद्यालय ही कम करता है। विद्यालय मानव समाज को आगे बढ़ाने का कार्य करता है। सभी लोग शैक्षिक-सम्पन्नता हेतु विद्यालय की ओर उन्मुख होते हैं एवं भावी जीवन की तैयारी का मार्ग प्रशस्त करते हैं। जीवन-निर्माण में हमेशा सक्रिय रहते हैं।
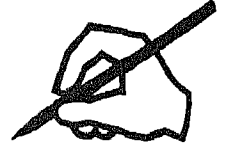
विद्यालय समाज के विकास का दर्पण है। समाज के लोगों के विकास का दायित्व समाज का होता है। अत. समाज के द्वारा ही विद्यालय की स्थापना की जाती है। किसी भी समाज के निर्माण मे शिक्षित लोगो का योगदान एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है जिससे विद्यालय और समाज का अन्योन्याश्रित स्वरूप हमारे सामने उभरता है। ऑट्वे का कथन है कि "बच्चा जब बोलने लगता है और अपने आप चलना सीख जाता है तो वह अपने मित्र बनाने लगता है और घर अथवा घर के बाहर खेलने वाले बाल-समूहों मे सम्मिलित हो जाता है। इस क्रिया से उसमें सामाजिक-प्रवृति का विकास होता है पर, जब हम वह विद्यालय जाकर कुछ सीखने लगता है तो सामाजिक अन्योन्यक्रिया की परिधि बढ़ जाती है।" यही विचार आगे चलकर समाज को गति एवं दिशा प्रदान करता है। वस्तुत' विद्यालय के बिना भी समाज का जीवन चलता है परन्तु, वह विकसित एवं गतिशील जीवन नहीं कहा जा सकता, क्योंकि समाज मनुष्यों से निर्मित होता है। मनुष्यो मे मानवोचित गुणों का होना आवश्यक है। एतदर्थ मानवोचित गुणों के विकास हेतु विद्यालय का योगदान आवश्यक ही नहीं वरन् अनिवार्य भी है।

सम्पूर्ण प्रकार के ज्ञान का विकास विद्यालय के कार्यक्षेत्र में ही होता है जो मूलतः जिज्ञासा पर आधारित है। जिज्ञासा ज्ञान पर आधारित है। ज्ञान अवबोधन या समझ पर आधारित है। ज्ञान व समझ दोनों ही वंशानुक्रम और वातावरण पर निर्भर होते हैं। वंशानुक्रम से मानव प्राकृतिक गुणों को प्राप्त करता है तथा वातावरण से उसे नैसर्गिक गुणों की प्राप्ति होती है। इस प्रकार एक अविकसित मानव, विकासशील मानव बनकर, विकसित मानव की श्रेणी को प्राप्त कर सकता है।

उक्त प्रक्रिया विकास की प्रक्रिया है जिसका आधार विद्यालय ही होता है। विद्यालय समाज का लघु रूप होता है। इस रूप के प्रति समाज का आकर्षण होता है। समाज अपने समग्र स्वरूप का दर्शन विद्यालय में करता है। इसीलिए विद्यालय समाज के दर्पण के रूप मे पहचाना जाता है। उपनिषद् में 'आत्मा वै जायते पुत्रः' का उल्लेख है। इसका अर्थ है कि 'आत्मा ही स्वय पुत्र के रूप मे जन्म लेती है।' उसी प्रकार समाज के रूप का दर्शन विद्यालय मे होता है। अतएव जैसा हमारा समाज होगा वैसा ही विद्यालय होगा क्योंकि 'एक बड़े समाज के भीतर विद्यालय सुसंगठित सामाजिक समूह के रूप में कार्य करता है।' ऐसी स्थिति में सामाजिक विकास की परिधि अपना वृहद् आकार ग्रहण करेगी तथा इसी क्रम में समाज के सुविधा सम्पन्न विद्यालय भी होंगे। व्यवस्थित विद्यालय से निकला हुआ छात्र भी समाज का विकास करने में सक्षम भूमिका का निर्वाह करता है। अतः समाज व विद्यालय की सार्थकता विकास से है। एक विकसित परम्परा की स्थापना मे दोनों का योगदान है। सच्चे अर्थो में यह कहा जा सकता है कि 'यह एक ही सिक्के के दो पहलू की तरह है।'

वस्तुत' शैक्षिक समाज की परिकल्पना का आधार विद्यालय है। साक्षर बनाना, साक्षर बनाकर राष्ट्र की मुख्य धारा में लाना—यह कार्य शिक्षा का है। शिक्षा के आधारभूत स्वरूप का दर्शन केवल विद्यालय के द्वारा ही

सम्भव है। विद्यालय के निर्माण में समाज के सभी सदस्यों का योगदान होता है। सभी सदस्यों को समान रूप से जीवन-यापन, समान शिक्षा, समान विकास मे सहयोग मिले—इसकी व्यवस्था विद्यालय के द्वारा ही की जाती है। यह दायित्व तभी सम्भव है, जब शिक्षा की एक धारा उसे पूर्णरूपेण प्रभावित करे।

चिन्तन की प्रक्रिया में समाज के नवनिर्माण के लिए, नई दृष्टि प्रदान करने के लिए विद्यालय का मुख्य कार्य होता है। उस कार्य का सम्यक् रीति से सचालन या निर्वहन करना ही समाज द्वारा सस्थापित संस्था का प्रयोजन होता है। इस प्रकार अर्जित प्रतिभा के प्रयोग हेतु उचित दृष्टि की आवश्यकता होती है। प्रकृति से प्राप्त दृष्टि का अच्छी रीति से उपयोग करना एव नूतन दृष्टि का निर्माण करना विद्यालय का दायित्व होता है। विद्यालय को 'विद्या-गृह' कहा जाता है। 'विद्या' का अर्थ 'ज्ञान' से है, अतः 'ज्ञान-गृह' की संज्ञा देना भी उपयुक्त है। चूकि ज्ञान का क्षेत्र कदापि सीमित नही हो सकता। अतः जिस प्रकार हम ज्ञान के क्षेत्र में पहुचकर उसे समाजाधारित करेंगे, उतनी ही उस ज्ञान की उपयोगिता समाज में होगी। फलतः समाज मे सर्वदा ज्ञान-वृक्ष की आवश्यकता महसूस की जाती रही है।

जीवन के लिए उपयोगी और आवश्यक वस्तुओ का सरक्षण करना तथा उचित मार्गदर्शन करना शिक्षा का परम दायित्व है। इस दायित्व का निर्वहन विद्यालय द्वारा ही सम्भव है। मानव व मानव के बीच बढ़ती दूरी को विद्यालय ही कम करता है। विद्यालय मानव समाज को आगे बढ़ाने का कार्य करता है। सभी लोग शैक्षिक-सम्पन्नता हेतु विद्यालय की ओर उन्मुख होते है एवं भावी जीवन की तैयारी का मार्ग प्रशस्त करते हैं। जीवन-निर्माण में हमेशा सक्रिय रहते हैं।

मानव द्वारा अपने व्यवहार की पूर्वावस्था में परिवर्तन लाना ही शिक्षा की कसौटी है। शिक्षा के द्वारा ही उसके चिन्तन में परिवर्तन परिलक्षित होता है। परिवर्तन ही समाज का धर्म है। समाज ही विद्यालय का मूल स्रोत है। अतएव समाज और विद्यालय के मध्य नूतन चिन्तनधारा को आगे बढ़ाने का कार्य युवा पीढ़ी का है। किसी भी समाज का अध्ययन करना है तो उस समाज मे रहने वाले नवयुवकों व छात्रो से साक्षात्कार करना आवश्यक है। राष्ट्रीय चिन्तनधारा मे युवकों/युवतियो का महत्त्वपूर्ण स्थान है। नव-विकास की चेतना से सम्पन्न युवा-वर्ग के बिना समाज या राष्ट्र का विकास सम्भव ही नही है।

आज का नवयुवक विकास के इस क्रम में दिग्भ्रमित है, किधर जाए? क्या करे? किससे परामर्श ले?, मंजिल एक है, परन्तु मार्ग अनेक। उसकी स्थिति उस अनजान, अपरिचित एव अजनबी पथिक की तरह है जो जीवन के चौराहे पर आकर पशोपेश में पड़ जाता है। जीवन मे भटकाव है, भूलभूलैया है, स्थिरता नही है, क्योकि आज के चिन्तन का धरातल और क्षेत्र व्यापक है। नवयुवक गन्तव्य स्थल तक पहुंचना चाहता है, पर, उसे राह दिखाने वाला, प्रेरणा देने वाला व्यक्तित्व नही मिल रहा है। आज दर्शक है परन्तु, मार्गदर्शक नही है। समाज के लोगों के पास विकसित दृष्टि नहीं है। परिवार के पास साधनों का अभाव है। अत. जिस समाज या परिवार के पास अभाव है, उस समाज के विकास की कल्पना कैसे की जा सकती है? दृष्टि के बिना सृष्टि या सृजन-क्रिया सम्भव नही है। प्रकृति से प्राप्त दृष्टि सामान्य कार्य-सम्पादन के लिए पर्याप्त है, परन्तु सामाजिक चिन्तन के लिए समाज से असपृक्त दृष्टि की अपेक्षा की जाती है। यही दृष्टि विद्यालय प्रदान करता है।

समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विभिन्न प्रकार के ससाधनो की अपेक्षा होती है। पर्याप्त ससाधनो के बिना समाज का विकास सम्भव नही है। अविकसित राष्ट्र या समाज सभ्य समाज या राष्ट्र की श्रेणी मे नहीं आते। राष्ट्रीय चिन्तनधारा में समानता की अपेक्षा की जाती है। सभी का विकास, सभी के लिए, सभी संसाधनों से है। यह भावना व्यक्ति के स्तर पर, समाज के स्तर पर तथा राष्ट्रीय स्तर पर आवश्यक है।

वस्तुतः आज के समाज मे चिन्तन की परिभाषा सिमट-सी गई है। व्यक्ति के पास चिन्तन है, विचार-शक्ति है, परन्तु वह उसका प्रयोग वैयक्तिक उत्थान और स्व के लिए करता है। इससे साथ-साथ चले, साथ-साथ बोले, सकारात्मक सम्प्रेषण हो—यह भावना लुप्त होती जा रही है। यही कारण है कि आज, लोग अपने से, अपने परिवार से, गांव, नगर और समाज से टूटते जा रहे हैं, एक बिखराव-सा हो गया है। यह, जो प्रवृति चल रही है उसका परिणाम अतिशीघ्र ही हमें पतन के कगार की ओर ले जाएगा। आज जो भी किसी भी समाज में अल्पविकसित लोग हैं, वे दूसरों के सुख, शान्ति और सुरक्षा के लिए खतरा

बनते जा रहे है। सर्वत्र अधिकार-प्राप्ति, सत्ता-सुख, शक्ति-प्रदर्शन हो रहा है, परन्तु दायित्वपूर्ति व समाज-सरक्षा की प्रवृति को घुन लग गया है।

राष्ट्र-चिन्तन, समाज-चिन्तन की प्रवृति के विकास हेतु किए जा रहे सभी प्रयास सार्थकता की ओर अग्रसर हो रहे हैं, परन्तु उन सभी का जो परिणाम है, वह सर्वत्र नहीं पहुच पा रहा है, वह प्रसृत नहीं हो पाया है। इन सभी चिन्तन-बिन्दुओ की महत्ता व्यष्टि से समष्टिपरक जीवन में ही निहित है तथा जिसका एकमात्र स्थल विद्यालय है। मानव-निर्माण के सक्रिय प्रयास मे विद्यालय का विकास पर्याप्त रूप से किया जाना आवश्यक ही नहीं अपितु अनिवार्य भी है।

मानव में मानवोचित गुणो का होना अवश्यम्भावी है। इनके विकास का प्रमुख आधार विद्यालय है। जब शिशु अपनी शैशवावस्था मे होता है तब परिवार के सभी सदस्य उसके विविध भाति के विकास हेतु प्रयासरत रहते हैं। अतः विद्यालय जो सभी का आस्था-केन्द्र है, सभी के सर्वागीण विकास का केन्द्र है, सभी के विकास की कुजी है, सभी के चिन्तनों का प्रधान स्रोत है—उसका पर्याप्त विकास करना हम सबका कर्तव्य है।

विश्व के सभी देशों मे शिक्षा को ही विकास का आधार माना गया है। प्राचीन काल से पढ़ा-लिखा मनुष्य या ज्ञान सम्पन्न मनुष्य ही दूसरे मनुष्य का सदैव मार्गदर्शन करता रहा है। विश्व का इतिहास इस बात का साक्षी है। जहा भी विकास की यह प्रक्रिया चल रही है, लोग आगे बढ़ने के लिए प्रयासरत हैं। 'चरैवेति-चरैवेति' का सिद्धान्त निरन्तर गतिशीलता का द्योतक है एव हमें आगे बढ़ने हेतु प्रेरित करता है।

घर-परिवार या समाज के सभी सदस्य भी एक-दूसरे को निरन्तर आगे बढ़ने के लिए कहते रहते है। तदनुसार लोग अग्रसर है। प्रश्न उठता है कहा जाएं? क्या करे? क्या उचित है? क्या अनुचित है? आदि प्रश्न गत्यवरोध की तरह सामने आते रहते है। परन्तु यदि व्यक्ति का व्यक्तित्व जिज्ञासु प्रकृति का है तो समस्त प्रश्नों का समाधान प्राप्त हो सकता है। जिज्ञासा-भूमि के निर्माण का कार्य विद्यालय मे होता है। विविध गुणों का समन्वय विविध क्रियाओं की शिक्षा द्वारा छात्रों मे किया जाता है। इसके माध्यम से छात्रो मे सक्रियता बढ़ती है तथा उनमें विभिन्न गुणो का विकास होता है। अतः वातावरण का निर्माण विद्यालय मे किया जाता है, जहा छात्र यदि वातावरण से समायोजन स्थापित कर लेता है तो सर्वगुण सम्पन्नता की स्थिति प्राप्त कर सकता है। अगर छात्र को वातावरण मिला तो सद्यः प्रवृत्त होकर परिणामदायक बन सकता है और शनै शनैः सर्वागीण विकास के पथ पर बालक अग्रसर होता रहता है। फलत· सामाजिक विकास की प्रक्रिया में बालक मील का पत्थर साबित हो सकता है।

वर्तमान में, कुछ देशो में प्रगतिशील विद्यालयों की स्थापना की गई है। ये विद्यालय छात्र की सभी आवश्यकताओ को ध्यान मे रखकर स्थापित किए गए है। इनमे पर्याप्त रूप से सभी भौतिक सुख-सुविधाओ की व्यवस्था की गई है जो एक छात्र के लिए आवश्यक हैं। इस विद्यालय से निकले हुए छात्र के चिन्तन से परिवार, समाज एव राष्ट्र के विकास का नया अध्याय प्रारम्भ हुआ है तथा उन छात्रों ने समाज के विकास की नई परम्परा का प्रारम्भ किया है।

उपर्युक्त विचार से यह स्पष्ट हो जाता है कि शिक्षालय जितना अधिक विकसित होगा उतना ही समाज भी विकसित होगा। शिक्षालय समाज का आधार स्तम्भ है जिससे समाज की नींव सुदृढ होती है। अत· विद्यालय को सभी संसाधनो से, सुख-सुविधाओं से व्यवस्थित करने पर ही उत्साहजनक परिणाम की अपेक्षा की जा सकती है। किसी शिक्षाशास्त्री का यह कथन अत्यन्त ही प्रासंगिक है—"किसी राष्ट्र का अध्ययन करना है तो मात्र उसके विद्यालयो की स्थिति का अध्ययन करना चाहिए।"

दर्पण जितना अधिक स्वच्छ और सुन्दर होगा, आकृति और स्वरूप दोनों ही निर्मल तथा द्युतिमान दिखाई देंगे। अतः विद्यालय समाज का दर्पण है। विद्यालय जितना व्यवस्थित, सुसगठित और संसाधन-सम्पन्न होगा, समाज उतना ही एक उत्तम विकसित स्वरूप का परिचायक होगा। ❑❑

राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ, तिरुपति
आन्ध्र प्रदेश

किशोरावस्था शिक्षा का स्वरूप

❑ चंदन कुमार पंकज

समय के बदलते परिवेश के साथ शिक्षा के क्षेत्र का विस्तार हुआ है। शिक्षा अब मात्र पुस्तकीय विधान से नहीं जुड़ी है, उसका विस्तार वैयक्तिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। विज्ञान प्रौद्योगिकी, कम्प्यूटर इंटरनेट, टी वी. इत्यादि का स्पष्ट प्रभाव जीवन पर पड़ा है। एक ओर विज्ञान प्रौद्योगिकी की प्रगति से हमारी आर्थिक प्रगति के द्वार खुलते है वहीं कम्प्यूटर, इंटरनेट आदि की सुविधा मुहैया होने से आदमी आरामतलब घर में बन्द व सामाजिक रूप से रूढ़ हो रहा है। इटरनेट की कृपा से वासना का नंगा नाच भी होने का बहुत खतरा है, जो नई पीढी के लिए विषैला है और साइबर क्राइम्स भी बढ़ जाएंगे। हो सकता है कि उपरोक्त कथनों मे कही अतिश्योक्ति हो गई हो, पर यह सब देर-सवेर संभवत. घटित होना ही है।

टी.वी. आदि के द्वारा सस्ते मनोरंजन परोसे जा रहे हैं, आज गुणवत मनोरजन के साधन उपलब्ध नहीं होने से अच्छे मूल्यों की खोज पर देश की वर्तमान पीढ़ी का ध्यान नहीं जा रहा है। अश्लील साहित्य का प्रचार-प्रसार जोरों से है। चलचित्रों मे भी कामुक अश्लील प्रसगो का भरमार रही है। हिंसात्मक, उपद्रवो के दृश्य फिल्माए जाते है। अच्छे गुणो के विकास के लिए पृष्ठभूमि तैयार होने के बजाय मानसिक विकास का बढ़ावा एवं देश का पर्यावरण आज किशोरों, युवाओ को मिल रहा है। गुणवत कालजयी क्लासिकल साहित्य की भी घोर उपेक्षा हो रही है। स्वस्थ मानसिकता की सुसघटित विकास की जगह पर घटिया विचारों, मूल्यो की उत्प्रेरणा प्रबल हो रही है। गंदी भावनाओं से परिपूरित चित्र वस्तु से मानस गंदा हो रहा है, और किशोर, युवा, विकास के बजाय सस्ती कामुकता के जाल में फंसता जा रहा है, फलतः नकारात्मक विचार पनप रहे है।

जीवन में सफलता एवं प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए सकारात्मक दृष्टिकोण का होना आवश्यक है। अधिकतर असफलता की पृष्ठभूमि में नकारात्मक विचार होते हैं, नकारात्मक विचारो से आत्मविश्वास कमजोर हो जाता है, आत्मविश्वास के पथ पर निरन्तर अग्रसर होने के लिए आवश्यक है कि सोचने-सोचने के तरीके स्वस्थ बनें। युवाओं, किशोरो को अपने भीतर के सारे नकारात्मक विचार त्याग कर उसकी जगह सकारात्मक विचार उत्पन्न करे। प्रारम्भ मे ऐसा कर पाना किसी युवा किशोर के लिए सहज नहीं होता। इसके लिए सकारात्मक विचारों के हक मे नकारात्मक विचारो को गलत साबित करने की कोशिश की जाए। सही में युवाओं, किशोरो के समक्ष कैसी भी चुनौती क्यों न हो काल्पनिक भूत पालने के बजाय उन पर विजय का पवित्र सकल्प दृढ़ कीजिए। किशोरों में सकारात्मक दृष्टिकोण सम्पन्न बनाने के लिए आसपास के वातावरण को भी सकारात्मक तरीकों से पूर्ण बनाना होगा।

आज का किशोर उस अन्धी सुरंग की ओर तेजी से बढ़ रहा है जिसका कोई छोर नहीं। नशा पहले भी चलता था परन्तु यह वर्तमान युग की सबसे ज्वलंत समस्या बन चुकी है। पिछले एक दशक में नशे ने किशोरों पर इतना कहर ढाया है कि वह सृजन एवं निर्माण के स्वप्न तक देखना भूल गया है, और जो व्यक्ति या राष्ट्र सृजन एवं निर्माण के स्वप्न नहीं देखता, वह कभी विकास नहीं कर सकता।

नशे की प्रकृति किसी जाति, वर्ग, धर्म या क्षेत्र से संबधित नही सम्पूर्ण विश्व समस्या का अंग है। पारिवारिक सामाजिक आयोजन में नशे का प्रवेश हो गया है। "अमृत से नहीं विष से किशोरों को प्यार हो रहा है। सिगरेट का काला धुंआ मुंह का शृंगार हो रहा है।

गुटके और चुटकी की मनहार देखकर
लगता है स्नेह में शत्रु का व्यवहार हो रहा है।"

आधुनिक समाज मे मनोरजक मसालेदार वस्तुओ के माध्यम से किशोर किशोरियों का भावनात्मक दोहन कर उन्हें पथ भ्रष्ट किया जा रहा है। शिक्षा विचारो के संशोधन का सशक्त माध्यम है। सामाजिक विकारो व कुप्रवृतियो के परिशोधन के लिए शिक्षा हस्तक्षेप करती है। यह शिक्षा का पुनीत कार्य है कि बालक/बालिकाओ के चरित्र निर्माण में शिक्षा की अहम् भूमिका है। शिक्षा एक प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से विकारों, कुप्रवृतियों को हटाकर स्वस्थ आदतों के बीज को डाला जाता है। स्वस्थ आदतो से चरित्र का निर्माण होता है। चरित्र एक व्यापक शब्द है जिसके अन्दर ज्ञान, कुशलता, शिष्टाचार, व्यवहार, श्रम इत्यादि और गुण स्वयं आते हैं। आधुनिक युग के विघटनकारी मूल्यहीन समाज के परिप्रेक्ष्य मे शिक्षा एक सकारात्मक दिशा देने के लिए कटिबद्ध है।

किशोरावस्था शिक्षा पर विचार करने से पूर्व बाल विकास की अवस्था पर विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है–

0 से 5 वर्ष – शैश्वावस्था।
6 से 11 वर्ष – बाल्यावस्था।
11 से 13 वर्ष – पूर्व किशोरावस्था।
13 से 17 वर्ष – प्रारम्भिक किशोरावस्था।
17 से 24 वर्ष – उत्तर किशोरावस्था।

किशोरावस्था शिक्षा की पृष्ठभूमि

विश्व की आधी से अधिक आबादी 25 वर्ष से नीचे की है। आंकड़ों से स्पष्ट है कि 1.5 अरब जनसख्या विश्व के 10 से 24 आयु-वर्ग की है, जिसमें 85 प्रतिशत जनसंख्या किशोर वर्ग की है। भारत में लगभग 21.6 प्रतिशत जनसंख्या 10 से 19 आयु-वर्ग की है। बिहार में 10-19 आयु-वर्ग के लोगों की जनसंख्या लगभग 21. 15 है। विद्यालय जाने वाले किशोरों की संख्या 3.15 लाख है, विकासशील देशों की 15 करोड़ लड़किया किशोरावस्था में मां बनती हैं। विकासशील देशों मे यह किशोरी माताओं में 2 से 5 प्रतिशत से अधिक होता है। अधिकतर यौन सम्बन्धो की शुरुआत किशोरावस्था मे होती है। किशोरावस्था मानव जीवन की महत्वपूर्ण अवस्था है, उसी अवस्था में व्यक्तित्व की नींव पडती है, जो जीवन पर्यन्त रहती है। किशोरावस्था पर इस शताब्दी के प्रारम्भ में मानव विज्ञान के विकास के बाद ही इन विशेषताओं पर पूर्ण प्रकाश डाला जाने लगा है।

किशोरावस्था मानव जीवन की महत्वपूर्ण अवस्था है। यह बाल्यावस्था यौवनावस्था के बीच की कड़ी है। यह उमंग और तूफान का (पिरियड) है इस उम्र मे जीवन उमंगो, भावनाओ, लालसाओं की तरंग पर किशोर-किशोरियां तैरती रहती हैं। यह ऊर्जा की उम्र होती है, व शक्ति की उम्र होती है।

किशोरावस्था शिक्षा अनवरत क्यों

आज शिक्षा और विकास का चोली दामन का सम्बन्ध है। किसी देश की जनसख्या महत्वपूर्ण ससाधन होते हैं। किशोर-किशोरियों की उम्र सृजनात्मक होती है। ये उमंग मद के नशे मे चूर रहते हैं, जबकि वे देश के महत्वपूर्ण ससाधन होते हैं क्योकि इनमें–

- सबसे अधिक शारीरिक शक्ति होती है।
- भरपूर आदर्श भावना होती है।
- विचारों का तूफान होता है।
- स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाने की क्षमता होती है।

ऊर्जा अंग-अंग में फडकती रहती है। किशोर-किशोरियों की इच्छा होती है कि यह करें कि वह करें, नाना प्रकार की अभिलाषाओं, आकांक्षाओं की दुनिया मे भ्रमण करते रहते हैं। कोमल भावों की उताल तरंगो की धार में किशोर-किशोरियां उमंगों के साथ तैरते हैं। उनकी संवेदना, भावना, आकांक्षा का सही उपयोग करने से देश का विकास संभव है। राष्ट्रीय विकास के साथ किशोर-किशोरियों का बड़ा सम्बन्ध है।

आवश्यकता इस बात की है कि यह पीढ़ी इस उम्र मे भ्रमित नही है केवल उनको भ्रमित एव गुमराह होने से रोकने के लिए यौन शिक्षा की सही जानकारी, बिना दुराव के दी जाए;

भारतीय सभ्यता और परम्परा में यौन विषय और तत्सम्बन्धी क्रियाकलाप एक व्यक्तिगत गोपनीय तथा मर्यादित सीमा में रखा जाने वाला विषय माना गया है, क्योंकि भारतीय दर्शन मान्यता के अनुसार यह काम एक पवित्र और व्यक्तिगत पुरुषार्थ की वस्तु है सार्वजनिक रूप से उपयोग करने और प्रदर्शन करने की नहीं। काम को व्यावहारिक या सार्वजनिक रूप से दिया जाएगा तो वह भद्दा, अश्लील और कुत्षित कार्य हो जाएगा जो अनेक यौन व्याधियों को उत्पन्न करने वाला सिद्ध होगा। भारतीय दृष्टिकोण 'काम' का दमन करने का नहीं है, लेकिन उसके अनुपयुक्त उपयोग करने का नहीं है, बल्कि उचित मार्यादित ढंग से इसका सदुपयोग करने का है और इसी लिए इसे मनुष्य के चार पुरुषार्थो—धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष में स्थान दिया गया है।

इस अनिवार्य संवेदनशील अपरिहार्य और पूरे जीवन को प्रभावित करने वाले काम को ठीक से समझाना और इसका ठीक से उचित मात्रा और मापदण्ड मे उपयोग करना बहुत आवश्यक है। यह बात बच्चो को किशोर अवस्था में जान व समझ लेनी होगी, ताकि जीवन यात्रा मे गलत दिशाओ में भटकने से बच सके। इस अवस्था में बच्चो के कम कौतुहल और जिज्ञासा से भरे हुए होते है। वे किसी काम की अच्छाई, बुराई और दुष्परिणामो को जानते, समझते, नही इसलिए गलत संगत मे पड़कर ऐसी बुरी आदतें ग्रहण कर लेते है जो उनके शरीर और स्वास्थ्य को हानि पहुंचाने वाली होती हैं, साथ ही उनके मानवीय जीवन को एड्स जैसी व्याधियां और समस्या से उलझाने वाली सिद्ध होगी।

विश्व स्वास्थ्य सगठन के अनुसार विश्व के आधे से अधिक लोग H I V. से और कम आयु के अन्य यौन रोग से ग्रसित भी मुख्यतः किशोर वर्ग के हैं। तीव्र गति से बढ़ते H.I.V. तथा एड्स रोग से नए वर्ग के लिए भी किशोरावस्था शिक्षा की आवश्यकता बढ़ती है। युवा वर्ग को उस सम्बन्ध मे सही शिक्षा नहीं दी गई तो देश का महत्वपूर्ण आयु-वर्ग पीढ़ी दर पीढ़ी रोग ग्रस्त और दिशाहीन हो जाएगा।

किशोरावस्था तीव्र शारीरिक, मानसिक, संवेशिक एवं सामाजिक व यौन प्रकृतियो के विकास की अवस्था है। किशोरों को यौन व्यवहार के प्रति सही समझ, विषय लिंगों के प्रति आदर, प्रजनन स्वास्थ्य एवं अधिकारों की सही समझ विकसित करने की अहम् आवश्यकता है।

किशोरावस्था शिक्षा क्यों?

किशोरावस्था शिक्षा किशोरो के शारीरिक, मानसिक एवं सवेशिक विकास की जानकारी की शिक्षा है। इसके अन्तर्गत यौन शिक्षा को संकुचित दायरे मे नहीं देखा जाता है। किशोरावस्था शिक्षा सही विकास की दिशा है। यौन सम्बन्धी विशेष जानकारी के माध्यम से यौन जनित रोगो से बचाया जा सके। अपनी विकास प्रक्रिया को समझ सके और उत्तरदायित्वपूर्ण व्यवहार विकसित कर सकें।

किशोरावस्था शिक्षा के उद्देश्य

- किशोर छात्र-छात्राओ को किशोरावस्था मे होने वाले शारीरिक, मानसिक एवं सांवेगिक परिवर्तनो की जानकारी देना।
- किशोरावस्था की समस्याओं एव आवश्यकताओ की जानकारी देकर सौम्य व्यवहार की समझ विकसित करना।
- सामाजिक अपेक्षाओ के अनुरूप सही समझ विकसित करना।
- प्रजनन प्रक्रिया, यौन-व्यवहार तथा यौन सम्बन्धी बीमारियों की जानकारी देकर बचाव के उपाय की समझ और कौशल विकसित करना।
- यौन-व्यवहार एवं प्रजनन प्रक्रिया सम्बन्धी भ्रान्तियों को दूर कर सुरक्षित यौन-व्यवहार एवं विपरीत लिंग के प्रति स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करना।
- एड्स रोग एवं यौन जनित रोग के कारण, लक्षण व बचाव के उपायों की जानकारी देना।
- नशाखोरी तथा नशीली दवाओं के सेवन की हानियों से परिचित कराना।
- पारिवारिक एवं वैवाहिक जीवन के प्रति सम्मान भावना के साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रदान करना।

किशोरावस्था शिक्षा की विषय-वस्तु

विकास की प्रक्रिया—

(महिला एव पुरुष के अंग एवं उनके कार्य)

- सामाजिक एवं नैतिक पक्ष।
- स्वकल्पना एवं स्वसम्मान।

यौन-स्वास्थ्य—

- यौनाचार से फैलने वाली बीमारिया।

एस.आई.वी./एड्स—

(कारण, परिणाम एव बचाव के उपाय)

- एड्स रोगियो के प्रति व्यक्तिगत एवं सामाजिक उत्तरदायित्व।

नशीली दवाओ का अति सेवन —

(कारण, परिणाम एवं रोकथाम के उपाय)

- उपचार एवं पुनर्वास।
- व्यक्तिगत एवं सामाजिक उत्तरदायित्व।
- किशोरावस्था शिक्षण से हम क्या अपेक्षा कर सकते है?
- किशोरों के सतुलित व्यक्तिगत विकास की आवश्यकता।
- संतुलित यौन-व्यवहार।
- नैतिक एवं सामाजिक मूल्यों के प्रति सम्मान की भावना का विकास।
- वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार सामाजिक मान्यताओ मे परिवर्तन।
- सही आयु मे विवाह।
- सफल वैवाहिक जीवन तथा पति-पत्नी के साथ मधुर एवं सम्मानजनक संबंध।
- उत्तरदायी अभिभावात्मकता का विकास।
- प्रजनन संबंधी भ्रान्तियों से मुक्ति।
- जन्मदर एव शिशु मृत्युदर में गिरावट।
- यौन-सम्बन्धी बीमारियों से बचाव, विकास की क्षमता।
- एड्स जैसी घातक बीमारी को फैलने से रोकने की क्षमता का विकास।

किशोरावस्था शिक्षा कैसे

बिहार राज्य मे झारखण्ड समेत किशोरावस्था शिक्षा के कार्यावियन संबधी कार्य व पाठ्यक्रम, विद्यालय कार्यक्रम में सम्मिलित करने के लिए निम्न कार्य किया गया है—

- ☐ वातावरण निर्माण।
- ☐ सामग्री विकास।
- ☐ प्रशिक्षण कार्यक्रम।
- ☐ सहपाठ्यगामी क्रियाशील — नुक्कड़ नाटक, प्रश्न पेटी, सामूहिक चर्चा, भूमिका, वैयक्तिगत अध्ययन, वाद-विवाद प्रतियोगिता, चित्रांकन प्रतियोगिता।
- ☐ नवाचार गतिविधियां।

वातावरण निर्माण

किशोरावस्था शिक्षा को सफल बनाने के लिए समाज के सभी वर्गो का सहयोग अपेक्षित है। अत. इसके लिए सभी को जागरूक करना आवश्यक है, ताकि इस कार्य के लिए एक उचित वातावरण का निर्माण हो सके।

वातावरण निर्माण एवम् जागरूकता हेतु विभिन्न स्तर पर पक्ष प्रतिपादन कार्यक्रम आयोजित किया जाता है। नीति निर्धारकों एवम् अधिकारियों के लिए पक्ष प्रतिपादन कार्यक्रम (Advocacy Programme)— इसमें नीति निर्धारकों, सम्बन्धित विभागो के अधिकारियों, प्राचार्यो, अभिभावको एव स्वयंसेवी सस्थाओ के प्रतिनिधि आदि के लिए पक्ष प्रतिपादन गोष्ठी का आयोजन करके उन्हे किशोरावस्था शिक्षा के उद्देश्यो, आवश्यकताओं एवम् कार्य योजना सम्बन्धी जानकारी से अवगत करवाया जा सकता है, तथा विद्यालय मे इसके सुचारू सचालन हेतु विभिन्न विधियों के विकास पर विचार-विमर्श किया जा सकता है। यह कार्यक्रम राज्य एवं जिला स्तर पर किया जाता है।

सामग्री विकास

किशोरावस्था शिक्षा एक नवीन प्रयास है। अतः इसके लिए भारतीय सभ्यता एव सस्कृति के अनुरूप ग्राह्य सामग्री विकसित करने की आवश्यकता है। इसके उद्देश्य की उपलब्धि के लिए विशेष कारगर व प्रभावकारी सामग्री विकसित करना जरूरी भी है। इस दिशा में निम्न प्रयास किए जा रहे हैं —

- वातावरण निर्माण हेतु पक्ष प्रतिपादन सामग्री।
- प्रतिशत सामग्री।
- छात्र-क्रियाशीलन आयोजन सम्बन्धी सामग्री।

प्रशिक्षण कार्यक्रम

किशोरावस्था शिक्षा को वर्ग शिक्षण का अभिन्न अग बनाने के लिए शिक्षको मे निम्न चेतना जागृति एव विशेष कौशल विकसित करने की आवश्यकता है –

- शिक्षकों मे व्याप्त इस शिक्षा की भ्रान्तियों को दूर करना।
- पूर्व धारणाओ को दूर कर सहज एवं सामान्य बनाना।
- शिक्षकों को शारीरिक, मानसिक एव सांवेगिक परिवर्तनों की जानकारी प्रभावकारी ढंग से पहुंचाने की कला विकसित करना।
- किशोरावस्था शिक्षा के मुद्दो को वर्ग में छात्रो तक सहज एवं प्रभावकारी ढंग से देने की कला विकसित करना।
- छात्र-क्रियाशीलन आयोजन की तकनीक विकसित करना।

वरीय छात्र प्रशिक्षण

किशोरावस्था शिक्षा, वरीय चयनित छात्रो के माध्यम से भी प्रभावकारी ढग से अन्य छात्रो को दी जा सकती है।

वर्ग शिक्षण में किशोरावस्था शिक्षा का समावेश

जीव विज्ञान, गृह विज्ञान, स्वास्थ्य एवं शारीरिक विज्ञान जैसे विषयो को पाठ्यपुस्तको के सबन्धित पाठो मे समाहित कर किशोरावस्था शिक्षा की जानकारी दी जा सकती है। शिक्षक-प्रशिक्षण मे इस पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

सहपाठ्यगामी क्रियाशीलनों का आयोजन

शैक्षिक व वर्ग शिक्षण की गतिविधियों में किशोर-किशोरिया अक्सर केवल श्रोता बन कर ही रह जाते है, परन्तु सहपाठ्यगामी गतिविधियो में प्रत्येक विद्यार्थी को सम्मिलित होने का अवसर मिलता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए "सहपाठ्यगामी गतिविधियो" को किशोरावस्था शिक्षण के अन्तर्गत एक महत्वपूर्ण कड़ी समझ कर जोड़ा गया है, ताकि ज्यादा विद्यार्थी इस सवेदनशील विषय में सक्रिय रूप से भाग ले सके, और अपनी दबी हुई जिज्ञासाओं को प्रकट कर सके तथा उनका समाधान पा सकें।

विद्यालय में निम्न सहपाठ्यगामी गतिविधियो का आयोजन किया जाता है–

- प्रश्न पेटी।
- सामूहिक चर्चा।
- मूल्य स्पष्टीकरण।
- भूमिका अभिनय।
- वैयक्तिक अध्ययन।
- वाद-विवाद प्रतियोगिता।
- चित्रकला प्रतियोगिता।
- निबन्ध प्रतियोगिता।

इन गतिविधियो का आयोजन एक शैक्षिक सत्र में किया जाता है। इन गतिविधियो को अन्तर्राष्ट्रीय व राष्ट्रीय दिवसो पर आयोजित किया जा सकता है।

किशोरावस्था शिक्षण के नए प्रयोग

- किशोरावस्था शिक्षा वर्ग के माध्यम से पूर्णरूपेण कारगर नहीं है।
- इसके लिए शिक्षण में कुछ नए प्रयोग की आवश्यकता महसूस की जा रही है।
- इसका मुख्य कारण परम्परा से यौन-सम्बन्धी विकास के प्रति संकोच तथा इसे गोपनीय रखने का परम्परागत चलन है। अतः भारतीय सभ्यता की मान्यताओ के तहत कुछ नए प्रयोग इस शिक्षा को छात्रो तक पहुंचाने के लिए किए जा सकते हैं।

किशोर क्लब

इसे विद्यालय, प्रखण्ड या जिला स्तर पर कायम कर

किशोरावस्था शिक्षा पर या किशोरावस्था से उत्पन्न समस्याओ पर चर्चा की जा सकती है।

सलाहकार समिति

प्रत्येक विद्यालय मे प्रशिक्षित शिक्षकों / किशोरावस्था शिक्षा के विशेषज्ञों की एक समिति गठित कर किशोरों की समस्याओ को इस दिशा में स्पष्ट जानकारी देकर हल किया जा सकता है। यह समिति प्रश्न पेटी, विशेष बैठक या विशेष वार्ता का प्रबन्ध कर छात्रो में किशोरावस्था सम्बन्धी स्पष्ट चेतना जागृत कर सकती है।

वरीय सहपाठी सलाहकार

इस अवस्था मे सहपाठियो एवं वरीय सहपाठियों का विशेष महत्व होता है। अतः उनके माध्यम से भी जानकारी दी जा सकती है।

वीडियो फिल्म / कैसेट

वीडियो फिल्म तथा श्रव्य कैसेट के माध्यम से भी किशोरावस्था के सभी मुद्दों पर स्पष्ट जानकारी दी जा सकती है।

स्वयंसेवी सलाहकार

सेवानिवृत्त व्यक्ति तथा गृहणिया स्वयसेवक के रूप में किशोरो की समस्याओं का समाधान विशेष जानकारी देकर कर सकते हैं। आजकल शहरों में दूरभाष पर भी सलाह की सुविधा दी जा रही है।

दिशा-विहीन होने पर उज्ज्वल भविष्य हेतु अपने पथ के लिए चयन मे भी साफ दृष्टि नहीं रख सकते है। उज्ज्वल भविष्य के विकास के लिए किशोरावस्था शिक्षा का सही मार्गदर्शन अपेक्षित है। ❑❑

म.फि.अ.अ.बी.एड. शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय
रामबाग, पूर्णिया
बिहार

विज्ञान शिक्षण का आधार

❑ मीना जोशी

सामान्यतया शिक्षा जगत के विभिन्न विषयो में विज्ञान विषय को विशिष्ट माना जाता है। विज्ञान विषय मे रुचि रखने वाले या विशेष योग्यता रखने वालों का एक विशेष स्थान होता है, बनिस्बत अन्य विषय के लोगों से। इसी कारण इस विषय से (विज्ञान से) सामान्य जन दूर जाने की कोशिश करते है। जबकि विज्ञान महज एक विषय नही बल्कि हमारे सोचने, विचार करने के ढग में व्यवस्थितता, क्रमबद्धता लाना, प्रयोग करना, अवलोकन करना, निरीक्षण करना फिर निष्कर्ष निकालकर नियमो, सूत्रो या सिद्धान्तो का प्रतिपादन करना, सिद्धान्तो का सामान्यीकरण करना यही सब तो विज्ञान है। ये सब कार्य क्या हम अपने देनिक जीवन मे नही करते है? निश्चित रूप से करते हैं फिर भी विज्ञान विषय से जी चुराते है। इसका मुख्य कारण यह है कि कुछ विषयों की प्रस्तुति ही इतनी जटिल, नीरस, अवास्तविक, अप्राकृतिक कर दी गई है कि वह विषय अपने आप मे बडा ही रसपूर्ण होते हुए भी नीरस जान पडता है। इस स्थिति में कुछ सुझाव हैं–

- ❑ शिक्षकगण सबसे पहले यह जान ले कि परम्परागत शिक्षण के तरीके जैसे–क्लास रूम मे एकतरफा भाषण जिसमें एक पक्ष ही बोले दूसरा निष्क्रिय होकर सुने। चॉक, ब्लैकबोर्ड आदि के निश्चित सांचे मे ढला तरीका छोड़ कर अनौपचारिक ढंग से यानि प्रकृति के सान्निध्य मे ढेरो अनुभव बच्चो को दे सकते है।
- ❑ हम यह समझ लें कि "सीखना" वास्तव मे किस पर आधारित है? सीखना मुख्य रूप से "स्व-अनुभव" या "इद्रिय-अनुभव" पर आधारित होता है। अतः जो अनुभव हम स्वय कार्य करके प्राप्त करते है उसकी तुलना अन्य प्रकार से (नाटकीय ढग/औपचारिक ढंग/कृत्रिम माध्यम से) सीखने से नही की जा सकती। इसलिए सीखने मे या शिक्षा में स्वयं अनुभव को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए।

प्रकृति की सबसे सुंदरतम कृति/रचना है फूल। इसीलिए इसे ईश्वर को समर्पित किया जाता है। तरह-तरह के फूल देखना, उनकी तुलना करना, उनके परिपक्वन के समय में तुलना करना, कोई फूल सुबह खिलते हैं तो कोई दोपहर, कोई शाम और कोई फूल रात में खिलते हैं। पंखुड़ियों के आकार, रंग, उनकी व्यवस्था, संख्या, कोमलता आदि में अनेक अंतर पाए जाते हैं। प्रत्येक प्रकार के फूल की खुशबू विशिष्ट प्रकार की पाई जाती है। पंखुड़ियों की संख्या व बैठक व्यवस्था में गणित तथा अनुशासन अवश्य पाया जाता है।

हमारी शिक्षा पद्धति में इस प्रकार थोडा-सा सुधार लाने से कई फायदे होगे जैसे–

- बालक स्वयं अनुभव प्राप्त करेगे।
- स्वय निष्कर्ष निकालेंगे।
- बच्चों को आनद की अनुभूति होगी।
- उनमे आत्मविश्वास आएगा।
- बच्चे नवीन खोज करेंगे।
- एक रसता या बोरियत नहीं होगी।
- खर्च कम से कम होगा।

इस प्रकार की शिक्षा के लिए शिक्षक को निश्चित रूप से "रिसोर्सफुल" होना चाहिए। हालाकि शिक्षक को भी इससे कई लाभ होंगे जैसे–

- सबसे बडा फायदा यह होगा कि विषय की पूर्व तैयारी कम करना होगी जिससे उसे तनाव कम होगा।
- बहुत-सी बातें बच्चे अपने आप सीखेगे।
- शिक्षक का उत्साह भी बना रहेगा।

- कम खर्च एवं कम समय में अधिक से अधिक उद्देश्यो की प्राप्ति होगी।
- अन्य कई दूरगामी फायदे होंगे जिनका यहा उल्लेख करना सभव नही है।

ऐसी अनौपचारिक पद्धति को अमल में लाने हेतु हमे क्या-क्या करना है इसका नियोजन कैसे हो? इस बाबत रचनात्मक सुझाव इस प्रकार हैं—

- □ **आयु समूह**—चार वर्ष से अधिक 15-16 वर्ष तक के किसी भी समूह को ले बशर्ते उनकी आयु व योग्यतानुसार उनसे चर्चा एवं प्रश्नोत्तर किए जाएं, अपेक्षाएं भी उसी अनुसार हों।
- □ **पूर्व तैयारी**— जिस प्राकृतिक स्थल पर जाना हो वहां के लिए बच्चो की मानसिक तैयारी करें, हो सके तो उनके इच्छुक पालक भी साथ मे आएं क्योंकि शिक्षा में पालक-शिक्षक दोनो का साथ रहकर सहभागिता होना अच्छे परिणाम दे सकती है।
- □ **स्थान का चुनाव**— ऐसा खुला प्राकृतिक स्थल जहा आसानी से कम से कम खर्च व कम से कम असुविधा से बच्चों को ले जाया जा सके, जहा घने लेकिन विविध प्रकार के पेड़ हों, खाई और पहाड़ी हों, घुमावदार रास्ते हों, पानी का झरना, छोटे-छोटे प्राणी, पक्षी आदि। आवश्यक नहीं कि ये सभी एक साथ एक स्थान पर ही हों लेकिन इनमे से अधिकांश बातें वहां हों, यह ध्यान में रखा जाए।
- □ **कार्यक्रम का नियोजन**— सप्ताह में कम से कम एक दिन प्रातः सूर्योदय से सायं सूर्यास्त तक या कभी-कभी रात में भी प्रकृति के साथ रहना। एक समय में 15 से 20 बच्चे ले। उनके साथ 1 या 2 वयस्क हों, जिनमें से एक किसी बच्चे के अभिभावक हो सकते हैं।

उपरोक्त सारी विशेष व्यवस्था इसलिए हो क्योंकि वर्तमान में विद्यालय शहर के कोलाहल, भीड़ भरे इलाके में होते हैं। जहां न तो खेल के पर्याप्त मैदान है, न ही वहा आने-जाने मे बच्चे को पैदल चलने का अवसर ही मिलता है। सभी बच्चे प्रायः वाहनों से ही आते हैं जिस कारण पैदल चलकर जो अनुभव उन्हें मिलना चाहिए वह उन्हे नहीं मिल पाता। इसलिए भीड़ व कोलाहल से दूर प्रकृति से परिचय करवाने का यही तरीका हो सकता है।

□ **प्राकृतिक स्थल पर जाकर वास्तव में क्या करना है**— प्राकृतिक स्थल पर जाकर वहां घटित होने वाली घटनाओ, या वहां की वस्तुओं की ओर बच्चों का ध्यान आकर्षित करे, उन्हे गौर से, शाति से जितनी देर तक वे देखना चाहें देखने दे लेकिन अपने आवश्यक हस्तक्षेप या अत्यधिक सूचनाओ को देकर उनकी एकाग्रता कतई भंग न करें। वैसे तो असंख्य बातें वहा दिखाई देंगी, उनकी कोई सीमा ही नही है फिर भी कुछ उदाहरण यहां प्रस्तुत है।

● **आकाश** — सूर्योदय के समय आकाश मे लालिमा छा जाना, धीरे-धीरे सूर्य का ऊपर उठना, उस समय पक्षियों का चहचहाना, बादलों पर सूर्य की तिरछी किरणें गिरने के कारण सुनहरा रंग दिखाई देना, हवा के साथ बादलो का उड़ना, आकार बदलना एक-दूसरे में मिलना, पक्षियों का झुंड बनाकर उडना, पक्षी कभी-कभी चित्र के आकार मे एकत्रित होकर उडते हैं।
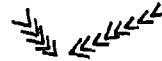
आकाश की विशालता देखना, क्षितिज को देखना आदि, बारिश के दिनों में काले बादल व इन्द्रधनुष्य अवश्य दिखाएं।

प्रकाश और परछाई का संबंध — सुबह पेड़ की छाया जमीन पर कैसी पड़ती है? सायंकाल एव दोपहर को उसमें क्या परिवर्तन आता है आदि।

परछाई के विभिन्न खेल खेलना — सूर्य के प्रकाश या मोमबत्ती के प्रकाश मे वस्तु आगे पीछे करके, वस्तु की परछाई में होने वाले परिवर्तनो को ध्यान से देखना फिर अपने अनुभवों पर आधारित नियमों का प्रतिपादित करना।

● **पेड़-पौधे**— पेड़-पौधे तो स्वयं हमारे सजीव साथी हैं व ज्ञान के भडार होते हैं। हम इनमें जितना खोजेंगे उतना उनका ज्ञान क्षेत्र बढ़ता ही जाता है। अत· पेड़-पौधों

की कभी भी उपेक्षा नही करनी चाहिए।

विभिन्न प्रकार के बड़े पेड़ जैसे— बरगद, पीपल, गूलर, अशोक, इमली, आम, जामुन, कटहल, नारियल आदि की ओर ध्यान आकर्षित करे। पेड़ के एक-एक अंग को व उसकी भिन्नता की ओर देखें—

तना — कौन से पेड़ का तना सबसे ऊंचा है? कौन-सा तना ठिगना है? किसका तना मोटा है? किसका पतला है? तने को छू कर देखना कि वह चिकना है या खुरदरा है? कठोर है? नीम के तने की मोटी छाल निकलती है जामुन के पेड़ की पतली-पतली छाल निकलती है। छाल निकलने पर अंदर का उजले रग का तना दिखाई देता है। तने को जोर से हिलाने पर क्या होता है? किसी तने में से चिपचिपा पदार्थ निकलता है तो किसी तने पर कीट निवास करते है आदि-आदि।

शाखा — कौन से पेड़ में शाखाए अधिक होती हैं। किस की मोटी शाखाए हैं, किसकी पतली शाखाएं होती हैं। किसकी कठोर/लचीली है। लताएं सहारा लेकर किस प्रकार बढ़ती है इनके तन्तु स्प्रिंग के समान होते हैं।

पत्तियां— हवा के चलने पर, पत्तियों के फड़फड़ाने की आवाज सुनना। पत्तियों का रंग कैसा है— गहरा हरा, हल्का हरा, अलग-अलग रंगों के छीटे वाली पत्तियां, पत्तियो में शिराविन्यास कैसा है? ऊपरी सतह की अपेक्षा निचली सतह पर उभरी हुई शिराए है। केले के पत्ते में समानान्तर शिराएं होती हैं। पत्तियों के आकार में भिन्नता व समानता ढूंढ़ना। पत्तियों की बाहरी सीमा पर पाए जाने वाले कटाव कैसे हैं? पत्तियो के आकार, रंग, मोटाई व नए पत्ते आने मे भी जातिगत गुण पाए जाते हैं। पुराने पत्ते धीरे-धीरे पीले पड़ जाते हैं व एक दिन वे शाखा से गिर पड़ते है। सूखे पत्तों पर चलने पर आवाज़ होती है। रबर प्लान्ट की पत्तियां मोटी रबर जैसी होती है लेकिन नई-नई पत्तियां लाल रग की व कोमल होती है। पतझड़ मे सारी पत्तियां गिर जाती हैं तब पेड़ एक ठूंठ-सा उदास खड़ा होता है, परन्तु जैसे ही उसका अपना समय आता है तब धीरे-धीरे नई कोपलें फूटती है, नन्हें-नन्हें पत्ते निकल आते हैं, व कुछ ही दिनों में पूरा पेड़ गहरे व हल्के हरे रंग की पत्तियों से आच्छादित हो जाता है।

कली व फूल — कली आने के पूर्व पेड़ पर/ पौधों पर कैसी-कैसी रचनाएं बनती है। पहले हरे रंग की पत्तियों मे लिपटी-छिपी हुई नाज़ुक कली होती है, कालान्तर से धीरे-धीरे उस कली का बढ़ना व जब कली सपुष्ट हो जाए तब हवा के मन्द झोंकों से उसका खिलना और एक सुन्दर मुस्कुराते फूल का बनना। ये सारी क्रियाएं जब बच्चे स्वयं देखेंगे तो उनका यह सबसे अलग अनुभव होगा।

प्रकृति की सबसे सुदरतम कृति/रचना है फूल। इसीलिए इसे ईश्वर को समर्पित किया जाता है। तरह-तरह के फूल देखना, उनकी तुलना करना, उनके परिपक्वन के समय मे तुलना करना, कोई फूल सुबह खिलते है तो कोई दोपहर, कोई शाम और कोई फूल रात मे खिलते है। पखुड़ियों के आकार, रग, उनकी व्यवस्था, संख्या, कोमलता आदि मे अनेक अंतर पाए जाते हैं। प्रत्येक प्रकार के फूल की खुशबू विशिष्ट प्रकार की पाई जाती है। पखुडियो की संख्या व बैठक व्यवस्था में गणित तथा अनुशासन अवश्य पाया जाता है। जातिगत गुण यहां भी हमें दिखाई देते है। जैसे गुलाबी गुलाब के फूल में हमेशा वैसे ही फूल आएंगे जैसे पहले आते आए है पीढ़ियों में भी अंतर कभी दिखाई नही देता यहां।

प्रत्येक प्रकार के पौधे में एक निश्चित समय पर ही बहार आती है, चाहे जब फूल नही आते। जब उनका मौसम आता है तब असंख्य फूल आते है जिससे पेड़/पौधे की डाली झुक-सी जाती है।

फल— डाल पर लगे कच्चे फल हरे होते हैं बाद में पक जाने पर वे बड़े, रंगीन व सुन्दर दिखाई देते हैं। ताजे फलों का सौन्दर्य अलग ही होता है। फलों में भी जातिगत गुण की निश्चितता एव गणित तथा अनुशासन का मेल दिखाई देता है। फलों में बीजों की संख्या व आकार तथा उनकी फल में व्यवस्था कैसी है? आदि के बारे में बच्चों का ध्यान आकर्षित करें। कुछ फलों का छिलका खाया जाता है तो किसी में अंदर का भाग, किसी में बीज या किसी में रस खाने योग्य भाग होते हैं। कई पेड़ों में फल झुण्ड में या गुच्छे में लगते हैं कई पेड़ों में फलियां लगती हैं। इस प्रकार सूक्ष्मता से निरीक्षण करने पर बच्चे समानता व असमानता ढूंढ़ना,

वर्गीकरण करना सीखते है।

बीज— बीजो को गीली मिट्टी मे रोपने से उनमे अकुर फूटता है। बीज पत्र पुष्ट होकर उनका अलग-अलग होना, बीच मे से अंकुर व प्राकुर का निकलना, अंकुर से छोटा-सा पौधा बनना, पौधे के विकास के लिए हवा, पानी, मिट्टी व सूर्य प्रकाश आवश्यक हैं यह भी देखने दें। बीजों के आकार, रंग, स्पर्श मे भिन्नता, समानता ढूंढ़ना, कौन से बीज खाने योग्य है कौन से नही आदि बीजो मे अनुवांशिक गुण पाए जाते है इस बात का अनुभव अनेक उदाहरणो द्वारा दिया जा सकता है।

मिट्टी व पत्थर— मिट्टी को स्पर्श करना, रेतीली मिट्टी, काली-पीली मिट्टी देखना, मिट्टी द्वारा पानी को सोखना, मिट्टी का पानी मे बहना, चट्टाने देखना, उनके कठोरपन का अनुभव प्राप्त करना, छोटे-बड़े विभिन्न रंगो के चिकने व खुरदुरे, परतदार पत्थर इकट्ठा करना, कुछ पत्थर पारदर्शक भी होते हैं मिट्टी पौधे को बांधे रखती है उन्हे देखना। मिट्टी पर "काई" का उगना नदी या कुएं के अदर पत्थरो पर पानी की सतह के निशान पड़ना, पत्थर का पानी मे डूबना आदि अनेक प्रकार के निरीक्षण बच्चों के अपने अनुभवों में जमा हो जाएंगे।

पानी— वर्षा के पानी की बौछारें पडना, हवा के तेज बहने से पानी की बौछारे भी तिरछी पडती है। ठहरे हुए पानी में कोई चीज फेंकने पर उसमें गोल-गोल लहरें उठती है, पानी मे पडी हुई कोई चीज़ ऊपर उठी हुई दिखाई देती है, पानी मे कागज की नाव चलाना, सूखे पत्तों का पानी पर बहना आदि। छोटे बर्तन में पानी भरा हो और उसमें कोई वस्तु डालें तो पानी का स्तर ऊपर उठता हुआ दिखाई देता है। पानी में हाथ डालना, पानी के अंदर हाथ हिलाने पर एक दबाव-सा महसूस होना, पानी का रगहीन होना, पानी मे रंग डालकर उसकी लहरें देखना, पानी का स्वाद चखना, पानी का बर्फ बनना, भाप बनना, पानी का बहाव ऊची सतह से निचली सतह की ओर होता है यह देखना। पानी मे अपना प्रतिबिम्ब देखना, नलो से पानी खींचना आदि कई अनुभव दिए जा सकते हैं।

हवा— नाक व मुंह कुछ क्षण तक बंद रखकर, यह अनुभव लिया जा सकता है कि हवा हमारे लिए कितनी आवश्यक है। बड़े पाईप के एक सिरे से बोलकर दूसरे सिरे से सुनना, बड़ी खाई या दीवार के सहारे जोर से चिल्लाकर प्रतिध्वनि का पैदा होना। वर्षा के समय तेज चलने वाली ठडी हवा का अनुभव लेना, हवा के साथ-साथ बादलो का उड़ना, एक-दूसरे में मिलना, आकार बदलना आदि, हवा के झोंको से पत्तों का हिलना, खड़खड़ाना, कली का खिलना, पत्तो का खिलना, हवा के साथ-साथ धुंआ उठना, धुए के बादल बनना, हल्की वस्तुएं उड़ना, भारी वस्तुओ का नही उड़ना आदि।

कीट— प्रकृति में असख्य प्रकार के कीट पाए जाते हैं, उनकी रचना, रंग, चलने का ढग, खाने का ढंग, आवाजें निकालने का ढंग, उडने का ढग आदि को ध्यान से देखना उनका लेखा-जोखा रखना, विविध अनुभव ग्रहण करके निष्कर्ष निकालना आदि कार्य बच्चे स्वयं करें।

पक्षी— पक्षियों का रहवास, खान-पान का ढग, पंखो को साफ करने का ढंग, चोच से पानी पीने का ढग, अपने बच्चो को सभालने, घोसले बनाने का तरीका ध्यान से देखना। पक्षी की शारीरिक रचना कैसी होती है? पखो के रग कितने प्रकार के होते हैं? इनमे भी आनुवाशिकता दिखाई देती है। किस पक्षी के कितने बड़े अण्डे होते है? चूजे कैसे दिखाई देते हैं? उनका पोषण कैसे होता है? पक्षी समूह में रहते है या अकेले रहते है? क्या वे अपने साथियो की आवाज को पहचानते है? पक्षी चिल्लाते है तब उनका कठ फूलता है या पूछ के पंख ऊपर उठते हैं? पक्षियो के पंजे व पंखों की रचना कैसी है? क्या इनके कारण उन्हे उड़ने में आसानी होती है? उनकी चोच की विशेष रचना के कारण फलो को, अनाज को कुतर-कुतर कर खाने में मदद मिलती है। पक्षियों की आखों की रचना ध्यान से देखना, क्या उनके कान होते है? नही, तो फिर वे सुनते कैसे है? क्या पक्षी रात में सोते हैं बैठे-बैठे ही सोते हैं या लेट कर सोते हैं। भीषण गर्मी के बाद, पहली बारिश मे पक्षी पानी मे भीगते है, उन्हें ऐसा करना अच्छा लगता है या नही। क्या कभी पक्षी को दुख-दर्द से कराहते देखा है? या कभी खुशी से ऊंची उड़ान भरते देखा है? पक्षियों में सामान्य प्रवृत्ति क्या है? क्या पक्षी को पिंजरे में बंद रहना अच्छा लगता है? लेकिन मनुष्य तो उसे पिंजरे में बंद करके स्वयं आनन्द का अनुभव करता है।

प्राणी— प्रकृति में असंख्य प्रकार के प्राणी पाए जाते

हैं, चार पैर वाले, मांसाहारी/शाकाहारी प्राणी, पानी मे रहने वाले, जमीन पर चलने वाले प्राणी आदि। इन प्राणियों के खानपान के तरीके, चलने, दौड़ने के तरीके, पजे के आकार, पैरों की लंबाई, पूंछ की लम्बाई, कान की रचना, आंखें, मुंह, दांतों की रचना, शरीर को साफ रखने के तरीके आदि। प्राणियों की स्वाभाविक प्रवृत्ति क्या है? कुत्ते, बदर, बिल्ली, शेर, भालू को चिड़ियाघर के पिंजरे मे क्या अच्छा लगता होगा? चेन से बांधकर रखने पर क्या प्राणियो की गतिविधिया सीमित नही हो जाती? आदि-आदि।

उपरोक्त केवल थोड़े से अनुभव देने से ही बच्चों के मन मे न केवल प्रकृति के प्रति प्रेम, जिज्ञासा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न होगा बल्कि कई ऐसी बातें भी वे सीखेंगे जिनकी हमने पूर्व कल्पना भी नही की होगी क्योकि सब प्रत्यक्ष अनुभव होगे जो उनके अपने होंगे, मौलिक होगे अत. इनसे असख्य लाभ होंगे।

सप्ताह में कम से कम एक बार इस प्रकार के आयोजन से बच्चा भविष्य में गणित व विज्ञान शिक्षण में काम आने वाली अनेक जटिल मानसिक क्रियाओं से खेल-खेल मे परिचय प्राप्त कर लेता है जैसे—समानता ढूढ़ना, असमानता (कई पहलुओं में) ढूढना, तुलना करना, वर्गीकरण करना, आकार, रंगों की छटाओं तथा घटनाओं का क्रम देखना, विकास की विभिन्न अवस्थाए, सह-संबंध परजीविता, सहजीविता, कई प्रकार से परस्पर निर्भरता, परिपक्वन, कार्य-कारण सम्बन्ध, जैविक क्रियाएं जैसे—श्वसन, परिसंचलन, वृद्धि, प्रजनन, चलन, भोजन आदि नियमितता, विभिन्नता आदि प्रक्रियाओं से सहज ही पहचान हो जाती है। अतः आगे आने वाले विषयो की नीरसता, जटिलता का आभास उसे नही होता। बच्चा इन विषयों मे गहन चिन्तन कर सकता है और उसमें एकाग्रता भी बढ़ती है। ज्ञान के मुख्य रूप से दो पहलू होते है —

- संज्ञानात्मक
- असज्ञानात्मक

संज्ञानात्मक पक्ष, इंद्रियानुभव द्वारा ग्रहण किया जाता है जैसे आंखों से रंग, आकार, दूरी, चौड़ा-सकरा, ऊंचा-ठिंगना आदि, कान से ध्वनि तथा उसमें विभिन्नता, जीभ से तरह-तरह के स्वाद, नाक से दुर्गन्ध, सुगन्ध का ज्ञान तथा त्वचा से स्पर्श का ज्ञान प्राप्त होता है। मुख्य रूप से यही हमारा संज्ञान है परन्तु ज्ञान का एक दूसरा और महत्वपूर्ण पक्ष है— असज्ञानात्मक पहलू, जिसका ज्ञानेद्रियो से नही होता है जैसे दुख, आनन्द, प्रेम, ममत्व, वात्सल्य, त्याग, सहयोग, दया, धैर्य, सहानुभूति, निस्वार्थता, समस्या को हल करना, सुरक्षा की भावना, जिज्ञासा, उत्कंठा, सहजीविता आदि, गुणो का संवर्धन करने के लिए विशेष अनुकरण करके ही विकसित की जा सकती हैं।

केवल प्रकृति-भ्रमण से ही उपरोक्त मे से ऐसी कई बातें विकसित की जा सकती है जैसे— चिडिया का अपने चूजे के लिए दाना लाना या बिल्ली, कुतिया का अपने बच्चो की सुरक्षा करना, गाय द्वारा अपने बछड़े को दूध पिलाना, चाट-चाट कर साफ करना, पक्षियो द्वारा अपने बच्चों के लिए घोसले बनाना, अडो की सुरक्षा करना आदि उदाहरणो से बच्चे प्रेम, ममता, वात्सल्य एवं सुरक्षा आदि भाव ग्रहण करेगे।

प्रकृति मे हर कार्य के होने के लिए निश्चित परिपक्वन की आवश्यकता होती है जैसे एक निश्चित समय के बाद ही बीज मे अकुर फूटता है। सूखे पेड मे नई कोपलें भी निश्चित समय के वाद ही आती है। इसी प्रकार फल, फूल के आने के लिए भी इंतजार करना पडता है। इससे धैर्य, एकाग्रता जैसे गुण पनपते हैं जिन्हें हम विद्यालयो में पैदा करने मे असमर्थ होते है।

इसी प्रकार कठिनाई हल करने के लिए भी सयम, लगन की आवश्यकता होती है। प्रकृति में लता या बेल को ऊपर चढ़ने के लिए सहारे की आवश्यकता होती है उसके मार्ग में रुकावट आने पर वह अपना सहारा अवश्य ढूढ़ती है। छोटे से छोटा प्राणी भी रुकावटो से (समस्या से) न घबराते हुए अपनी ओर से प्रयास अवश्य करता है, खुले आकाश के नीचे प्रकृति के सारे घटक (पेड़, पौधे, कीट प्राणी) प्राकृतिक परिवर्तनो (ठड, वर्षा, गरमी, धूप) आदि का सामना करते हैं, कठिनाई का सामना उन्हें करना ही पडता है। ऐसे कई उदाहरण मिल सकते है जिनसे बच्चों में मानवीय गुण उत्पन्न किए जा सकते हैं।

शिक्षक यदि चाहे तो अपनी प्रणाली मे उपरोक्त परिवर्तन कर सकता है लेकिन विडम्बना यह है कि शिक्षक ही शिक्षा के प्रति प्रेरित नहीं होते। अत उनके प्रशिक्षण मे इस प्रकार का मूलभूत परिवर्तन लाया जाना चाहिए। वर्तमान मे विज्ञान शिक्षण का जो स्वरूप है उसमें निम्नलिखित तरीके अपनाए जाते हैं जैसे— पाठ पढ़वा

देना, प्रश्नो के उत्तर लिखवा देना, पाठ के अंदर प्रश्नो के उत्तरों पर निशान लगवा देना, थोड़े जागरूक शिक्षक हों तो वे ज्यादा से ज्यादा कक्षा में सब बच्चों के समक्ष एक बार बड़ी मुश्किल से प्रयोग करके दिखा देते हैं। 30-40 बच्चों को चाहे वह समझ में आए न आए। प्रश्नों के रटे-रटाए आदर्श उत्तरो को बच्चे याद करके अपनी कॉपियों मे उंडेल देते हैं जिन्हें जांच करके शिक्षक उन बच्चो को 97%, 98%, 99% अंक दे देते हैं। मानो कोई रटे-रटाए उत्तरों की यह प्रतियोगिता हो, परीक्षा नहीं।

विज्ञान शिक्षण कैसा हो

विज्ञान शिक्षण व उसके मूल्याकन का स्वरूप निम्न बिंदुओं पर आधारित होना चाहिए, —स्वअनुभव का भरपूर अवसर देना, स्वतन्त्रता देना, प्रकृति की विविध घटनाओ की ओर बच्चो का ध्यान आकर्षित करना, बच्चों को बोलने, निरीक्षण करने, इंद्रिय अनुभव ग्रहण करने की आजादी देना, पाठ्यक्रम का बधन कठोर नही रखना, देखी हुई घटनाओं का लेखा-जोखा (DATA) बच्चे स्वय अपने शब्दो मे तैयार करे। स्वय निष्कर्ष निकालें, इसके बारे में शिक्षक व बच्चे मिलकर, खुली सामूहिक चर्चा करें और बातो ही बातो मे शिक्षक मार्गदर्शन भी दे। बच्चों के रटे-रटाए उत्तरो को शिक्षक को कभी स्वीकार नहीं करना चाहिए। नवीन विचारों, सृजनात्मक सोच या नए तरीकों को स्वीकार करने में जरा-सा भी संकोच न करें।

इस प्रकार विज्ञान शिक्षण को केवल कक्षा की चार दीवारो में कैद न करते हुए कक्षा के बाहर खुले वातावरण में दैनिक जीवन से प्राप्त अनुभवों के आधार पर अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है। शिक्षकों के विभिन्न स्तरो के प्रशिक्षणो मे भी ऐसा परिवर्तन करने की अत्यत आवश्यकता है।

विज्ञान के साथ-साथ अन्य कलाओं को भी शिक्षा का माध्यम बनाया जाना चाहिए क्योकि हम जानते हैं कि बालक का विकास कभी भी एकतरफा नहीं होता अर्थात् ऐसा कभी नही होता कि पहले सारा शारीरिक विकास हो, बाद में मानसिक विकास या पहले भाषा विकास हो और बाद में गणित का ज्ञान हो। बालक तो सर्वागीण रूप से विकसित होता है। सभी तरह का समग्र विकास होता रहता है। अतः उपरोक्त प्रकृति निरीक्षण की पद्धति से केवल वैज्ञानिक दृष्टिकोण ही उत्पन्न हो ऐसा बंधन हमे नही पालना चाहिए, जब प्रकृति के विभिन्न दृश्यो का, अनुभवों का, सौन्दर्य का वर्णन बच्चे अपनी इच्छा से करते हैं तब वे अपनी ओर से अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं, उस समय उन्हें अवश्य ही स्वतन्त्रता दी जानी चाहिए, भले ही बालक कुशलतापूर्वक उस घटना या सौन्दर्य का वर्णन न कर सके लेकिन शिक्षक को उसे स्वीकार करना चाहिए किसी बच्चे में काव्य प्रतिभा या शब्दो में वर्णन करने की कला छिपी हो सकती है आदि।

उसी प्रकार मिट्टी से नमूने बनाना, चित्र निकालना, मुंह से प्राणियो, पक्षियों की आवाजें निकालना, प्राणियो की चालें चलना, प्राणी तथा पक्षियो के नाटक, कहानी बनाना, अभिनय करना आदि ऐसे मौके है जब बच्चे अधिक से अधिक अपने अंदर छिपी कला को उजागर करते हैं। ऐसे आयोजनों से बच्चे अगली बार प्रकृति को ओर ध्यान से देखेगे। सूक्ष्म से सूक्ष्म बात को भी देखेंगे उनमे रुचि जागृत होगी, इसके साथ नृत्य और गीत भी आयोजित कर सकते है। इस प्रकार विभिन्न कलाओं को शिक्षा में स्थान देने से ऐसे असख्य लाभ होगे जिनकी कल्पना भी शायद हम न कर पाए।

प्रकृति दर्शन से सौन्दर्य को देखने का कलात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न होगा अनेक तरह से एक ही चीज को अभिव्यक्ति मिलेगी जिससे बच्चों में सृजनात्मक सोच की प्रवृत्ति बढ़ेगी। इस प्रवृत्ति का मूल्यांकन उनकी नई रचना के तैयार होने से ही हो जाएगा जो वर्तमान के 97%, 98%, 99% से कही अधिक होगा। ◻◻

136, लोकमान्य नगर
इन्दौर, मध्य प्रदेश

पर्यावरण अध्ययन कठिन क्यों लगता है?

❑ अश्वनी कुमार गर्ग

बच्चे शाला में अत्यन्त अनौपचारिक वातावरण से पढ़ने के लिए आते है। कुछ बच्चे अपने परिवार/पीढ़ी के शाला आने वाले पहले सदस्य होते हैं। इनके लिए शाला का वातावरण तथा कक्षा का वातावरण रुचिकर तथा आकर्षक बनाना जरूरी है ताकि उनकी क्षमताओ का सही दिशा मे विकास किया जा सके तथा विकसित क्षमताओं को समयानुकूल उपयोग में लाया जा सके।

जब बच्चा शाला मे आता है तो वह सभी विषयों के शिक्षण मे रुचि दिखाता है, लेकिन कुछ समय पश्चात् वह कुछ विषयो में रुचि दिखाता है और कुछ को जबरदस्ती पढ़ता है और उन विषयो से डरता है। अनुभव बतलाता है कि जिस विषय मे शिक्षक की स्वयं रुचि होती है अधिकाशत· उस विद्यालय के बच्चों द्वारा भी उसी विषय में अधिकाधिक रुचि दिखाई जाती है। जिस विषय मे शिक्षक की रुचि अधिक नहीं होती है, उस विषय में बच्चे भी ज्यादा रुचि नही दिखाते हैं, क्योंकि शिक्षक जिस विषय में रुचि लेता है तो वह उस विषय को अधिक रोचक बनाकर तैयारी के साथ पढ़ता है और जिसमे रुचि नहीं होती है वह बच्चों को सिर्फ कक्षा उत्तीर्ण कराने के लिए पढ़ाता है।

अधिकाश शिक्षक पर्यावरण को भाषा के समान एक विषय मानकर बच्चों को शिक्षण कराते है। इससे बच्चो को किसी विषय-वस्तु की स्पष्ट अवधारणा नहीं बन पाती है। शिक्षक का कार्य न सिर्फ बच्चों को कोई पाठ पढ़ाने तक सीमित है, बल्कि नए-नए बिन्दुओं और नई-नई अवधारणाओं को समझाने में मदद करना है। अतः शिक्षक से यही उम्मीद की जाती है कि वह किसी विषय-वस्तु को ऐसे प्रस्तुत करे जिससे अधिक से अधिक बच्चे सहभागिता कर सके। बीच-बीच में यह जानने का प्रयास भी करना चाहिए कि बच्चे सीख रहे हैं कि नहीं।

प्राथमिक स्तर पर सीखने की प्रक्रिया बच्चों में स्वयं सीखने की प्रवृत्ति, आत्मविश्वास, विवेकपूर्ण दृष्टिकोण, जिज्ञासा, खोज करने की भावना, सृजनात्मकता, प्रश्न पूछने का साहस, सत्य तथा सौंदर्यपरक मूल्यों की सराहना जैसे गुणों के विकास के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करती है।

प्राथमिक स्तर पर सीखने की प्रक्रिया, बच्चों में स्वयं सीखने की प्रवृत्ति, आत्मविश्वास, विवेकपूर्ण दृष्टिकोण, जिज्ञासा, खोज करने की भावना, सृजनात्मकता, प्रश्न पूछने का साहस, सत्य तथा सौंदर्यपरक मूल्यों की सराहना जैसे गुणों के विकास के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करती है।

यह सर्वमान्य सत्य है कि—

- बच्चे खेलना पसन्द करते है वे खेल के नियम स्वयं बनाते हैं, उनमे परिवर्तन करते रहते हैं, नए खेल बनाते हैं और आनन्द प्राप्त करते हैं।
- बच्चे तब अच्छे ढंग से सीखते हैं जब क्रीड़ाए अनौपचारिक वातावरण मे होती है और सामग्री तथा तरीके अपने होते है।
- बच्चे सिर्फ शिक्षक से ही नही सीखते अपितु दूसरे बच्चों के साथ अन्तरक्रियाए करके भी सीखते है।
- सुनने की अपेक्षा देखने से अधिक सीखना होता है तथा पूरी तरह से सीखना स्वय कार्य करने से होता है। अवधारणाएं तभी स्पष्ट होती है जब स्वयं करके देखते हैं।
- बच्चे जब स्वय कार्य करते हैं तो उन्हें विभिन्न प्रकार के अनुभव प्राप्त होते हैं। जब उन्हें अपने कार्य में सफलता मिलती है तो उन्हें आनन्द की प्राप्ति होती है और आगे कार्य करने के लिए उनका हौसला बुलद होता है, उनमे आत्मविश्वास जागृत होता है तथा सीखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है।

- बच्चा किसी बात को आसानी से सीख लेता है, यदि सीखना कुछ करने से संबंधित हो।
- स्वयं कार्य करने पर कौतूहल उत्पन्न करता है और अधिक चिन्तन तथा कार्य करने की प्रेरणा मिलती है।
- बच्चे जब तक स्वच्छ वतावरण में समुदाय के लोगों के सम्पर्क में आते हैं तो लोगो के अनुभव सुनने का अवसर मिलता है। बच्चों के ज्ञान में वृद्धि होती है बातचीत करने पर अभिव्यक्ति की क्षमता बढ़ती है।

अकसर देखने को मिलता है कि विद्यालय में पर्यावरण के पाठ पढ़ा देने के बाद यदि बच्चो से उस पाठ से संबंधित प्रश्न पूछा जाए तो अधिकतर बच्चे उसका उत्तर नहीं दे पाते है। शिक्षक भी विषय-वस्तु को पढ़ाते हुए आगे चले जाते है। शिक्षक द्वारा यह जानने का प्रयास नहीं किया जाता है कि बच्चे ने कितनी विषय-वस्तु को सीखा है। बच्चे को कहां पर समझ मे नही आया है। समझ में न आने के कारण क्या है?

अनुभव एव विद्यालय मॉनीटरिंग के दौरान निम्नानुसार जो बिन्दु देखने में आते है, जो विद्यालय मे सही दिशा में न होने के कारण बच्चो में पर्यावरण अध्ययन के प्रति भय पैदा कर देते हैं और बच्चो को पर्यावरण अध्ययन कठिन लगते है।

पर्यावरण अध्ययन को भाषा के समान एक बच्चे द्वारा पढ़ा जाना तथा सभी बच्चों द्वारा दुहराया जाना— अधिकतर विद्यालयो में देखने मे आया है कि शिक्षक द्वारा भाषा के समान पर्यावरण का या तो खुद वाचन कर दिया जाता है या शिक्षक द्वारा बच्चो से वाचन करा दिया जाता है। अत मे पाठ मे दिए प्रश्नो के उत्तर लिखाकर बच्चों को रटा दिए जाते हैं। ऐसे में बच्चे में पर्यावरण अध्ययन विषय की अवधारणात्मक समझ नही बन पाती है और आगे चलकर पर्यावरण अध्ययन कठिन लगने लगता है।

पर्यावरण शिक्षण को परिवेश से जोड़कर न पढ़ाया जाना— पर्यावरण अध्ययन की विषय-वस्तु पूरी तरह अपने आसपास के परिवेश से जुड़ी हुई है। अत. शिक्षक को चाहिए कि वे पर्यावरण अध्ययन विषय को पूरी तरह कक्षा के अंदर ही सीमित न कर विद्यालय के बाहर बच्चों को ले जाकर विषय-वस्तु को परिवेश से जोड़ते हुए शिक्षण कार्य कराए। इससे जहां बच्चो मे बडी आसानी से विषय-वस्तु की अवधारणात्मक समझ बनती है वहीं दूसरी ओर उसको अपने दैनिक जीवन मे उपयोग से परिचित होते है।

शिक्षक द्वारा बिना किसी तैयारी के शिक्षण कार्य कराना— कई बार शिक्षक बिना किसी तैयारी एवं योजना के शिक्षण कार्य कराते है। शिक्षक को खुद स्पष्ट नही होता है कि वह क्या पढाने जा रहा है और उसे पढाकर बच्चे में क्या दक्षता विकसित करना चाहता है। बिना तैयारी के शिक्षण कराने मे बच्चो की सहभागिता भी शिक्षण के दौरान नही बन पाती है तथा बच्चो की विषय-वस्तु पर समझ भी नही बन पाती है और वे पर्यावरण अध्ययन से डरने लगते है।

पर्यावरण अध्ययन शिक्षण को विद्यालय के अंदर तक ही सीमित रखना— पर्यावरण अध्ययन शिक्षण की प्रक्रिया प्रयोगो, अवलोकनो, विश्लेषणों आदि पर आधारित है लेकिन अधिकतर शिक्षक विद्यालय मे कक्षा के अदर ही पूरी विषय-वस्तु को पढ़ा देते है। ऐसे मे बच्चो को व्यावहारिक ज्ञान नही मिल पाता है सिर्फ सैद्धान्तिक ज्ञान तक ही सीमित होकर रह जाता है। यानि पूरी पर्यावरण अध्ययन की विषय-वस्तु को पढ़ लेने के बाद भी बच्चा उसे विषय-वस्तु को सही प्रकार से प्रस्तुत करने मे असमर्थ पाया जाता है।

आओ करके सीखें सिद्धान्त को प्राथमिकता न दिया जाना— पर्यावरण की पूरी विषय-वस्तु आओ करके सीखने के सिद्धान्त पर आधारित है, लेकिन शिक्षक पूरी विषय-वस्तु को भाषा विषय के समान पढ़ाते हैं उसमे कही भी किसी प्रकार की कोई प्रयोगिक गतिविधि नही कराते है। ऐसे में बच्चे को पूरी विषय-वस्तु स्पष्ट नही हो पाती है। अत· शिक्षक को चाहिए कि वह विषय-वस्तु को बच्चो द्वारा खुद करके जानने की गतिविधि का प्रयोग कर पर्यावरण अध्ययन का शिक्षण कराए। अगर बच्चा गलत भी करता है तो उसे विभिन्न अभ्यास कराकर उसकी गलती को दूर किया जा सकता है।

पर्यावरण को सिर्फ किताबी ज्ञान से जोड़कर पढ़ाया जाना– अधिकतर शिक्षक पर्यावरण को सिर्फ पुस्तक में दी गई विषय-वस्तु तक ही सीमित रहकर बच्चो को शिक्षण कार्य कराते हैं। ऐसे में बच्चे में उस विषय-वस्तु की स्पष्ट अवधारणा नहीं बन पाती है और बच्चे को वह विषय-वस्तु कठिन लगने लगती है। अत शिक्षक को चाहिए कि वह पर्यावरण शिक्षण पढ़ाने के पूर्व अपनी तैयारी के लिए अन्य पुस्तकों का भी उपयोग करे ताकि विषय-वस्तु बच्चे को सही ढंग से समझ मे आ सके।

पर्यावरण को प्रयोग के माध्यम से न पढाया जाना– पर्यावरण अध्ययन की विषय-वस्तु को अधिकतर शिक्षक व्याख्यान विधि के द्वारा पढ़ाकर किसी वस्तु के गुण-दोष आदि की जानकारी दे देते हैं। अपने परिवेश में ऐसे कई सस्ते प्रयोग हैं जिन्हे कराकर शिक्षक बच्चों को सही तथा व्यावहारिक जानकारी दे सकता है। व्याख्यान विधि से पर्यावरण की सही समझ बच्चे में नही बन पाती और वह उससे डरने लगता है।

शिक्षण सामग्री का उपयोग न किया जाना– प्राथमिक स्तर पर बच्चे किसी भी विषय-वस्तु को देखकर, छूकर, उपयोग कर आदि के माध्यम से आसानी से पर्यावरण अध्ययन के बारे मे जानकारी प्राप्त करते है। ये सभी कार्य शिक्षण सहायक सामग्री के माध्यम से विद्यालय के अंदर कर सकते हैं। शिक्षण सामग्री का अध्ययन के दौरान उपयोग करने से बच्चे को विषय-वस्तु आसानी से समझ मे आती है। लेकिन अधिकतर शिक्षक बिना किसी शिक्षण सामग्री का उपयोग किए पर्यावरण अध्ययन का शिक्षण कार्य कराते हैं। ऐसे में बच्चों को वह विषय-वस्तु स्पष्ट नही हो पाती है।

बच्चो की अधिकाधिक सहभागिता न होना– कक्षा शिक्षण के दौरान बच्चो की सहभागिता का होना जरूरी है। शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि वे अध्यापन के दौरान विषय-वस्तु को ऐसे प्रस्तुत करें जिसे अपनी जिज्ञासा के आधार पर बच्चे अपनी बात शिक्षक के समक्ष बिना डरे जानने का प्रयास करे। अतः शिक्षक की अपने शिक्षण की योजना ऐसी होनी चाहिए कि बच्चो के मन में लगातार जिज्ञासा उत्पन्न हो और वे बीच-बीच में लगातार प्रश्न शिक्षक से पूछे तथा शिक्षक द्वारा उनके उत्तर दिए जाए ताकि बच्चो को विषय-वस्तु अच्छी तरह समझ में आए।

पर्यावरण शिक्षण में गतिविधियों का अभाव– पर्यावरण शिक्षण के दौरान शिक्षक द्वारा सीधे पाठ्य-वस्तु को पढा दिया जाता है। उस पर किसी भी प्रकार की गतिविधिया नही कराई जाती है। पाठ्य-वस्तु के प्रति कोई जिज्ञासा उत्पन्न नही होती है। ऐसे में बच्चे उस वस्तु पर ध्यान भी नही देते है और बच्चो को विषय-वस्तु कठिन लगने लगती है।

पर्यावरण को रटाया न जाकर करके देखने के अभ्यास पर बल न दिया जाना– पर्यावरण अध्ययन की विषय-वस्तु को अधिकतर शिक्षक द्वारा पूरी तरह से रटा दिया जाता है। ऐसी स्थिति मे बच्चे पुस्तक के अभ्यास तो कर लेते है, लेकिन यदि थोडा सा बदलकर उसी विषय-वस्तु के प्रश्न दे दिए जाए तो बच्चे उत्तर नही दे पाते। क्योंकि रटाने से बच्चे में विषय-वस्तु की पूरी समझ विकसित नहीं हो पाती है। अतः शिक्षक को पर्यावरण की विषय-वस्तु को रटाना नही चाहिए, बल्कि उस पर प्रयोग, अभ्यास आदि को अधिक उपयोग करना चाहिए।

पर्यावरण अध्ययन शिक्षण प्रक्रिया रोचक न होना– पर्यावरण अध्ययन की शिक्षण प्रक्रिया को रुचिकर/अरुचिकर बनाना पूर तरह शिक्षक की विषय-वस्तु पर पकड पर आधारित होता है। शिक्षक चाहे तो किसी विषय-वस्तु को बहुत ही अच्छी तरह से बच्चे के समक्ष प्रस्तुत कर सकता है और चाहे तो नीरस ढंग से। यदि शिक्षक पर्यावरण शिक्षण के दौरान विषय-वस्तु के प्रस्तुतीकरण में विद्यार्थियो की सहभागिता लेते हुए करके सीखो के सिद्धान्त को अपनाए तो बच्चे विषय-वस्तु को आसानी से सीख सकते हैं। ❑❑

राजीव गांधी शिक्षा मिशन
पुस्तक भवन, अरेरा हिल्स, भोपाल, मध्य प्रदेश

शिक्षकों की गैर-शैक्षिक कार्यों में प्रतिनियुक्ति

❑ तिलक राज पंकज

वर्तमान मे केन्द्रीय सरकार एवं समस्त प्रान्तीय सरकारें "प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण" की दिशा में प्रयासरत और जागरूक है तथा विभिन्न अभियानो, कार्यक्रमों व गतिविधियों से शिक्षा के क्षेत्र मे नित नए आयाम स्थापित किए जा रहे है। प्रान्तीय, राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं से अनुदान, सहायता व ऋण द्वारा शिक्षा की विभिन्न परियोजनाओ को क्रियान्वित किया जा रहा है और इसके सकारात्मक परिणाम भी नजर आने लगे है।

इन परियोजनाओं, कार्यक्रमो, अभियानों में शिक्षा के समस्त पहलुओ यथा शैक्षिक, सह-शैक्षिक, भौतिक, मानव ससाधनों का विकास, समुदाय की भागीदारी व नवाचारो को संवेदनशीलता से छुआ जा रहा है। इसके परिणामस्वरूप समुदाय मे उल्लेखनीय रूप से जागरूकता आई है तथा वह शिक्षा के प्रत्येक आयाम के प्रति सजग हो रहा है। इसका सबसे ज्यादा असर यह हुआ है कि समुदाय एव विद्यालय के बीच की दूरी कम हो रही है और उनके बीच आपसी समझ, समन्वयन एवं सहयोग मे उत्तरोत्तर सुधार होता प्रतीत हो रहा है। जिसको "प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीकरण" के लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में अच्छे सकेत के तौर पर माना जा सकता है। माना कि सरकारे एवं प्रशासन प्राथमिक शिक्षा की अनिवार्यता के प्रति सकल्पित नजर आते हैं।

शिक्षक की भूमिका

किसी भी राष्ट्र की उन्नति, समृद्धि व लोकतान्त्रिक व्यवस्था की मजबूती, उस देश के शिक्षित, सभ्य व चरित्रवान नागरिको पर निर्भर करती है। और इस प्रकार के नागरिकों को तैयार करने व नव पीढी निर्माण के लिए काबिल शिक्षकों की भूमिका को ध्यान में रखते हुए ही, इस देश मे पुरातन काल से ही शिक्षक को उच्च गरिमामय पद व स्थान प्राप्त है। शिक्षको के जीवन व आदर्शो से समाज सदा से प्रेरणा व दिशा ज्ञान लेता रहा है। इसलिए शिक्षक को समाज का दर्पण माना गया है।

किसी भी राष्ट्र की उन्नति, समृद्धि व लोकतान्त्रिक व्यवस्था की मजबूती, उस देश के शिक्षित, सभ्य व चरित्रवान नागरिकों पर निर्भर करती है। और इस प्रकार के नागरिकों को तैयार करने व नव पीढ़ी निर्माण के लिए काबिल शिक्षकों की भूमिका को ध्यान में रखते हुए ही, इस देश में पुरातन काल से ही शिक्षक को उच्च गरिमामय पद व स्थान प्राप्त है। शिक्षकों के जीवन व आदर्शो से समाज सदा से प्रेरणा व दिशा ज्ञान लेता रहा है। इसलिए शिक्षक को समाज का दर्पण माना गया है।

इन्ही बिन्दुओ को आधार बनाते हुए, शिक्षा के क्षेत्र की सबसे महत्वपूर्ण एव सवेदनशील इस कड़ी को शिक्षक प्रशिक्षणो, कार्यशालाओ, बैठको, शैक्षिक भ्रमणो व अन्य नवाचार युक्त तरीकों से क्षमतावान, ऊर्जावान, दक्ष व सजग बनाने के प्रयास किए जा रहे है जिससे वह प्रशासन, विद्यालय, स्थानीय समुदाय व बच्चों के साथ बेहतर तरीके से अपनी भूमिका निभा सके। समस्त शैक्षिक कार्यक्रमो एवं परियोजनाओं के मुख्य लक्ष्यों में यह तय किया गया है कि सभी प्रयासों में "शिक्षक का सम्मान बना रहे", "उसकी भूमिका को कमतर नही आंका जाए", "समाज मे उसको सम्मान की दृष्टि से देखा जाए" और "उसे एक खास दर्जा प्राप्त हो"!

वर्तमान परिप्रेक्ष्य

एक तरफ जहा उपर्युक्त तरह से प्राथमिक शिक्षा का

सार्वजनीनकरण" की दिशा में कोशिशे जारी हैं, वहीं दूसरी ओर शिक्षा के क्षेत्र मे बढती राजनैतिक दखलंदाजी, बेअसर होता शिक्षा प्रबंधन, समाज/समुदाय की शिक्षा के प्रति बढ़ती जागरूकता व बदलता नजरिया, बेहतर सूचना प्रबंध तंत्र का अभाव, शिक्षकों की गैर-शैक्षिक कार्यो में प्रतिनियुक्ति, मूलभूत सुविधाओ की बेहद कमी, हाथों से फिसलता बच्चों का उपलब्धि स्तर व ज्ञान एवं सूचनाओं का विस्फोट आदि कुछ ऐसी वजह हैं जिससे कि आम आदमी की सोच शिक्षा एवं शिक्षा व्यवस्था के प्रति नकारात्मक बनती जा रही है। इसका सबसे ज्यादा खामियाजा शिक्षक को भुगतना पड़ रहा है तथा शिक्षक व समुदाय के सम्बन्धों पर इसका प्रतिकूल असर होता नजर आ रहा है। समुदाय के अति निकट होने के कारण ही शिक्षक को सबसे ज्यादा आक्रोश का सामना करना पड़ता है। जिससे उसकी छवि, उसका सम्मान, उसका व्यक्तित्व व उसकी विश्वसनीयता में लगातार कमी होती जा रही है।

जबकि शिक्षक की छवि उसके मनोबल व समुदाय मे उसका एक खास मुकाम बनाए बिना, "प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीनकरण" का सपना साकार करना लगभग असंभव और बेमानी है।

शिक्षकों की गैर-शैक्षिक कार्यों में प्रतिनियुक्ति

शिक्षकों की छवि, मनोबल, सम्मान व विश्वसनीयता में अवसान की सबसे अहम वजह है उसकी राष्ट्रीय एव राज्य स्तरीय सर्वोच्च प्राथमिकता प्राप्त कार्यो / कार्यक्रमो / अभियानों के नाम पर "शिक्षक की गैर-शैक्षिक कार्यो में प्रतिनियुक्ति" करना। समस्त महकमों में नियुक्त कार्मिको मे "शिक्षक" ही मात्र ऐसा व्यक्ति है जिसको अन्य विभागो (गैर-शैक्षिक) के लक्ष्यो को प्राप्त करने हेतु अल्प या दीर्घ अवधि के लिए प्रतिनियुक्त कर दिया जाता है। चूकि शिक्षा विभाग ही अन्य विभागों के दबाव में रहता है। अन्य विभागों का कोई भी बाशिंदा शिक्षा विभाग या शिक्षक के साथ "प्राथमिक शिक्षा का सार्वजनीनकरण" मे सहयोग करना अपनी शान के खिलाफ समझता है।

बावजूद इसके शिक्षकों को गैर-शैक्षिक कार्यो यथा "पशु गणना", "जनगणना", "बीपीएल सर्वे", "मतदाता सूची संशोधन", "परिवार कल्याण", "अल्पबचत", "पल्स पोलियो", "ग्राम सभा/वार्ड सभा", "वृक्षारोपण", "पोषाहार तैयार करना" आदि तथा विभिन्न कार्यालयो में प्रतिनियुक्त किया जाता है। हालाकि राज्य सरकारों व शिक्षा निदेशकों द्वारा शिक्षको की प्रतिनियुक्ति पर पाबदी है। परन्तु इसके बाद भी प्रशासनिक अधिकारियों का दबाव आने से शिक्षकों को प्रतिनियुक्त करना पड़ता है।

इन प्रतिनियुक्तियों के निम्नांकित दुष्परिणाम सामने आ रहे हैं–

- ☐ शिक्षकों के बार-बार गैर-शैक्षिक कार्यो से समुदाय मे जाने से आम आदमी की नजर में उसके सम्मान, गरिमा, व्यक्तित्व व विश्वसनीयता में कमी आ रही है।
- ☐ शिक्षक अपने मूल काम से विमुख हो रहा है।
- ☐ शिक्षा में गुणात्मकता तथा बच्चों की उपलब्धि स्तर मे स्पष्टत कमी हो रही है।
- ☐ शिक्षकों की ऊर्जा व क्षमताओ का सही इस्तेमाल नही हो पा रहा है।
- ☐ शिक्षक के अपने मूल शैक्षिक कार्यों में अन्तराल (गैप) आने से समुदाय मे उसे उपेक्षा व आक्रोश मिल रहा है।
- ☐ उसे अन्य विभागो एवं प्रशासनिक अधिकारियों का भी असयमित व्यवहार झेलना पड़ रहा है, जिससे शिक्षक व शिक्षा विभाग अपने को "अन्तिम पायदान" पर खड़ा पा रहा है।

इसके अलावा भी कई और भी दुष्परिणाम हो सकते है, लेकिन सार तथ्य यही है कि शिक्षक एक अजीब पेशोपेश मे है और अपने आप को दिशाहीन पाता है।

सुझाव

आज के माहौल में जब किसी भी कार्य का संतोषजनक स्तर पर निष्पादन करने हेतु जिस समझ, कौशल व निपुणता की आवश्यकता होती है, वही अगर हम अपने शिक्षकों में देखना चाहते हैं तो सर्वप्रथम हमे शिक्षकों को शैक्षिक कार्यो में ही संलग्न रखना होगा।

- ☐ शिक्षक की गैर-शैक्षिक कार्यों में प्रतिनियुक्ति को सरकारों द्वारा तत्काल रोका जाए।
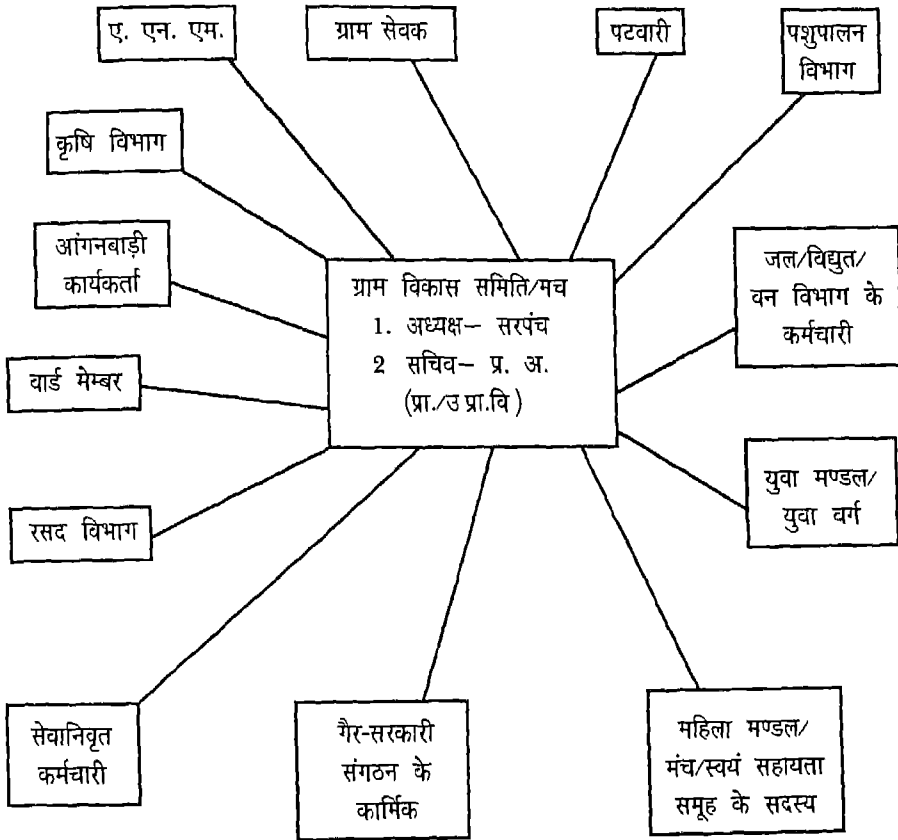
- यदि कोई प्रशासनिक अधिकारी, किसी शिक्षक की प्रतिनियुक्ति करता है, तो उसके खिलाफ कार्यवाही अमल मे लाई जाए।
- किसी भी परिस्थिति मे विद्यालयो को बद नही रखा जाए। जैसे किसी भी विद्यालय के समस्त स्टाफ को "पल्स पोलियो अभियान", "मतदाता सूची संशोधन" किसी सर्वे आदि में लगाने से विद्यालय बंद रहता है।
- शिक्षा विभाग द्वारा निर्धारित शैक्षिक दिवसों को कम नही किया जाए।
- शिक्षकों को मर्यादानुकूल कार्य सौंपे जाने चाहिए।
- शिक्षा विभाग द्वारा भी अपने "सूचना प्रबन्ध तंत्र" को मजबूत व सुव्यवस्थित बनाना चाहिए, जिससे शिक्षकों को बार-बार ग्राम समुदाय, शिक्षा कार्यालयों के बीच चक्कर न काटने पड़ें।
- ग्राम स्तर पर एक "ग्राम विकास समिति/मच" बनाया जाना चाहिए तथा सरकारों द्वारा उनको अधिकार व कार्यो के निर्धारण व क्रियान्वयन का जिम्मा सौंपा जाना चाहिए जैसे–

"ग्राम विकास समिति" मुख्य रूप से जिम्मेदारी उस कार्मिक को सौंपें, जिस विभाग से सम्बन्धित कार्य है तथा सहयोग हेतु शेष विभागों के कार्मिको को यथानुरूप कार्य विभाजन कर दें।

उदाहरण

अभी यह स्थिति है कि "ग्राम सभा" में पटवारी/ग्राम

सेवक की अनुपस्थिति/अवकाश की स्थिति में "शिक्षक" की प्रतिनियुक्ति कर दी जाती है और "शिक्षक", "ग्राम सभा/वार्ड सभा" की कार्यवाही का दायित्व संतोषजनक तरीके से वहन करते हैं। परन्तु एक ग्राम सेवक/पटवारी, उस शिक्षक के अवकाश की स्थिति में एक भी दिन विद्यालय संचालन की जिम्मेदारी लेना तो दूर, विद्यालय के कार्यो में सहयोग करना भी गंवारा नहीं करते।

केन्द्रीय सरकार एव राज्य सरकारो को इस पर गभीरता से विचार करना होगा और गैर-शैक्षिक विभागों का नजरिया व अवधारणा को बदलने के प्रयास करने चाहिए। तथा प्रशासनिक अधिकारियों को सम्बन्धित सरकारों द्वारा मार्गदर्शन एवं आवश्यक दिशा-निर्देश प्रदान किए जाने चाहिए।

उपसंहार

हमें पुनः शिक्षको के कार्यो, उनकी भूमिका का वर्तमान परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण करना होगा तथा शिक्षक का विभिन्न एजेसियों से समन्वयन पर भी प्रकाश डालना होगा ताकि उनके साथ बेहतर तालमेल व सम्बन्ध स्थापित किए जा सके।

हमे पुन. शिक्षा प्रबंधन, शिक्षा व्यवस्था तथा विभिन्न शैक्षिक पहलुओ की व्याख्या करनी होगी तथा सच्चे मन से "सबके लिए गुणात्मक शिक्षा" की दिशा मे प्रयास करने होंगे।

❑❑

आबू रोड, सिरोही
राजस्थान
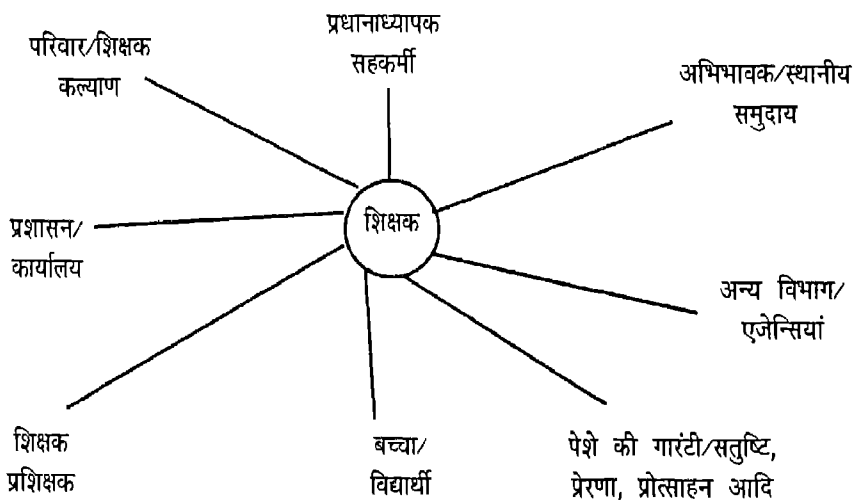
सुविधाविहीन बच्चों की शिक्षा– अध्यापक क्या करें?

❑ नीरजा शुक्ला

किसी भी देश की उन्नति को मापने के कई आधार होते हैं। कोई देश अपने समाज के कमजोर वर्गो को ऊपर उठाने के लिए जो प्रयत्न करता है और उन्हें भरपूर पोषण, कपड़ा और रहने के लिए आवास प्रदान करता है, वह भी उसके विकास को मापने का एक आधार होता है। भारतीय समाज एक ऐसा समाज है जिसमे विभिन्न धर्मो, जाति तथा अलग-अलग संस्कृति को मानने वाले कई समूह एक साथ रहते है। भारतीय संविधान में इन सभी समूहो के हितो की रक्षा करने के लिए कई प्रावधान किए गए हैं। शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा समाज से समस्त भेदभावों को दूर कर एक स्वस्थ चितन प्रदान कर सकते हैं। शिक्षा वह सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा हम विभिन्न सामाजिक तथा आर्थिक विषमताओ एवं विभिन्नताओ को दूर कर सकते है। प्रारभिक शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए आवश्यक है कि सभी बच्चों को शिक्षा सुलभ कराने के साथ-साथ सभी को शाला में नामांकित कराने तथा उन्हें शाला में बनाए रखने और बीच में शाला त्यागने की दर पर नियंत्रण करने का प्रयत्न किया जाए। साथ ही माता-पिता के साथ साझेदारी तथा शिक्षा में समुदाय की भागीदारी ये दोनों मुद्दे ऐसे हैं जिन पर जोर देने की आवश्यकता है। कहना अनुचित न होगा कि जहा हमारा प्रयत्न है सभी बच्चों को शिक्षा देना जिसमें सुविधाहीन समूहों तथा बालिका शिक्षा पर विशेष रूप से जोर दिया जा रहा है, वहीं शिक्षा की गुणवत्ता बनाए रखना भी अत्यावश्यक है। ऐसा करने के लिए उनकी भाषाई विशिष्टताओं और शिक्षण पद्धति सबधी जरूरतों को ध्यान मे रखकर जीवन के सामाजिक-सांस्कृतिक आयामों पर ध्यान देना आवश्यक है। ऐसी अवस्था में बहुभाषी तथा बहु-सास्कृतिक परिवेश शिक्षण-प्रविधि के स्वरूप को निर्धारित करेगा जिससे अधिगम की सम्पूर्ण प्रक्रिया को सारगर्भित तथा संदर्भ के अनुकूल बनाया जा सके। यह सही कहा गया है कि यद्यपि पाठ्यचर्या रचना मे सक्रिय रूप से भाग लेने वाले शिक्षको की संख्या बहुत थोडी है किन्तु पाठ्यचर्या को लागू करने मे सर्वाधिक योगदान अध्यापको का ही है। इसलिए यह आवश्यक है कि आज के अध्यापक के लिए इस भूमिका का सही रूप से निर्वाह करने के लिए उचित प्रशिक्षण की व्यवस्था हो और उनमें उन कौशलो का विकास किया जा सके जो उन्हें शिक्षा कार्य को और अधिक चिंतनशील तथा विचारशील बनाने में सहायता प्रदान करे। सभी प्रकार के सामाजिक परिवर्तन एव आर्थिक विकास का मूल शैक्षिक विकास मे ही निहित है और शैक्षिक विकास के लिए अध्यापको का सक्षम होना अत्यावश्यक है।

बहुभाषी, सामाजिक तथा भौगोलिक सच्चाई को ध्यान में रखकर जब भाषा सम्बन्धी नीति निर्धारित की जाती है तब शाला की भाषा तथा बच्चों के परिवार की भाषा के अंतर से उत्पन्न समस्याओं पर ध्यान जाना स्वाभाविक है। भाषा संबंधी समस्याएं केवल सीखने-सिखाने के माध्यम से जुड़ी हुई नहीं हैं वरन् इनका सम्बन्ध जीवन मूल्यों और उनका एक बच्चे के जीवन में स्थान से भी जुड़ा होने के साथ-साथ भाषा अधिगम और प्रत्ययों को समझने से भी है। बच्चे किसी भी भाषा को तभी अच्छी तरह सीखते हैं जब वह उनकी संप्रेषण सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति करती है तथा बच्चे उसे भय रहित एवं अपने ही परिवेश के संदर्भ में सीखते हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1896 तथा संशोधन 1992)

शिक्षा मे समानता, सामाजिक न्याय, देश की अद्वितीय सामाजिक और सास्कृतिक पहचान, राष्ट्रीय समरसता में योगदान, सहिष्णुता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण और सविधान में निहित प्रोत्साहनो पर जोर देती है। जस्टिस जे. एस. वर्मा समिति द्वारा भी नागरिको के मौलिक कर्तव्यों के संबध में जो उल्लेख किए गए है वे मूलभूत मानवीय मूल्यो और सामाजिक न्याय के सकल्प का मार्ग प्रशस्त करते हैं। साथ ही साथ देश में कुछ विशिष्ट कार्यक्रम भी प्रारभ किए गए है। ये कार्यक्रम जहा एक तरफ एक ज्ञान आधारित समाज बनाने में मदद करते है वहीं *नई सूचना प्रौद्योगिकी को शिक्षा से जोड्ते है जिसके* माध्यम से समाज के सभी वर्गो विशेषकर सुविधाविहीन वर्गो को सीखने के लिए समान अवसर प्रदान किया जा सकता है।

शिक्षण कौशल क्या है

एक सफल प्राथमिक अध्यापक बनने के लिए विषय-वस्तु के ज्ञान के साथ-साथ व्यवसायपरक कौशल की भी आवश्यकता होती है। इस विषय मे एकमत होना बड़ा कठिन है। यदि यह कहा जाए कि शिक्षण कौशल से तात्पर्य उन शिक्षण प्रविधियों से है जिनका प्रयोग शिक्षक बच्चो को पढ़ाने के लिए करता है तो शिक्षक के व्यवहार के कई पहलू छूट जाएगे। इसलिए उचित यही होगा कि शिक्षण कौशल को परिभाषित करने की अपेक्षा उसकी कुछ विशिष्टताओं की चर्चा की जाए जिससे अध्यापक उनके संदर्भ में अपनी भूमिका को संवर्धित कर सके।

एक अच्छा अध्यापक कौन

एक कुशल अध्यापक के लिए आवश्यक है कि सबसे पहले वह अपनी सोच, अपनी मनोवृत्ति, मूल्य तथा सबके साथ किस प्रकार मिल कर रहा जाए इस पर नियन्त्रण करे। यह करना इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि हमारा विद्यालय हमारी कक्षा एक सूक्ष्म समाज है जिसमे सभी वर्गो के व्यक्ति रहते है। इसमे प्रखर बुद्धि वाले बच्चो के साथ-साथ औसत बुद्धि तथा औसत से कम बुद्धि वाले बच्चे भी होते है, उच्च शिक्षा प्राप्त माता-पिता के बच्चों के साथ प्रथम पीढ़ी के पढने वाले बच्चे तथा आम बच्चों के साथ संवेदिक, बौद्धिक तथा शारीरिक रूप से चुनौतीपूर्ण वर्ग के भी बच्चे पढ़ते है। इन सभी प्रकार के बच्चो में समवेत रूप से पढ़ाना और उनकी विभिन्न शैक्षिक आवश्यकताओ की पूर्ति करना स्वयं में एक चुनौती है। ऐसी स्थिति मे एक अध्यापक के लिए आवश्यक हो जाता है कि वह अपने प्रशिक्षण के दौरान सीखी गई प्रविधि मे परिवर्धन कर उसे अपनी कक्षा के विद्यार्थियों के अनुरूप बनाए। बच्चों का पारस्परिक सम्बन्ध, उनकी एक-दूसरे के प्रति मनोवृत्ति तथा बच्चों *का एक-दूसरे से सीखना इत्यादि का सीधा सम्बन्ध* अधिगम तथा शिक्षण से है। विद्यालय मे बच्चो को एक-दूसरे के प्रति सहिष्णु होना सिखाया जाता है यह एक समरसतापूर्ण समाज की स्थापना तथा उसके सुदृढ़ीकरण के लिए आवश्यक है। भारतीय समाज व्यवस्था में दुर्भाग्य से आज भी जातीय व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण स्थान है जहां समाज के पिछडे वर्गो को दूसरी नजर से देखा जाता है। यह इन वर्गो की अल्प शिक्षा का एक अहम् कारण माना जाता है। भारत सरकार की सर्वशिक्षा अभियान योजना के अन्तर्गत शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े इन वर्गों की शिक्षा पर विशेष रूप से ध्यान दिया जा रहा है। समाज में व्याप्त इस भेदभाव की मनोदशा को बदलने मे अध्यापक की सक्रिय भूमिका होनी चाहिए। इससे न केवल इन वर्गो के बच्चों को शिक्षा के समान अवसर मिलेंगे वरन् समाज व्यवस्था के ढांचे की नींव भी बराबरी तथा सामाजिक न्याय के द्वारा और भी सुदृढ़ होगी।

बहुभाषी, सामाजिक तथा भौगोलिक सच्चाई को ध्यान में रखकर जब भाषा सम्बन्धी नीति निर्धारित की जाती है तब शाला की भाषा तथा बच्चों के परिवार की भाषा के अंतर से उत्पन्न समस्याओं पर ध्यान जाना स्वाभाविक है। भाषा संबंधी समस्याए केवल सीखने-सिखाने के माध्यम से जुड़ी हुई नहीं हैं वरन् इनका सम्बंन्ध जीवन मूल्यों और उनका एक बच्चे के जीवन में स्थान से भी जुड़ा होने के साथ-सार्थ भाषा अधिगम और प्रत्ययो को समझने से भी है। बच्चे किसी भी भाषा को तभी अच्छी

तरह सीखते हैं जब वह उनकी संप्रेषण सम्बन्धी आवश्यकताओ की पूर्ति करती है तथा बच्चे उसे भय रहित एव अपने ही परिवेश के सदर्भ मे सीखते हैं। सेवारत प्रशिक्षण का एक उद्देश्य अध्यापकों को भाषा सम्बन्धी ज्ञान तथा सम्बन्धित मुद्दो के विषय में जानकारी प्रदान करना भी है जिससे वे बच्चों को समझ सकें और उनके सम्प्राप्ति के स्तर को बढ़ाने के लिए सही निर्णय ले सकें। बच्चो के लिए उनके अपने संदर्भ और अपने परिवेश के अनुसार शैक्षिक कार्यक्रम का अनुकूलन ही अपेक्षित है। अध्यापक प्रशिक्षण द्वारा उनमे ऐसा कौशल विकसित करने की आवश्कता है जिससे वे बच्चो की विशेष शैक्षिक आवश्यकताओ के अनुसार अनुपूरक सामग्री तथा नूतन अभिनवो के आधार पर अन्य प्रकार की सहायक शिक्षा सामग्री को विकसित कर सकें तथा उनका उचित प्रयोग भी कर सकें।

आज जब हमारा समाज बहुत तेजी से बदल रहा है और हमारी शिक्षा पद्धति मे भी शोध तथा अन्य प्रकार के अध्ययनों से प्राप्त परिणामों के आधार पर परिवर्तन लाया जा रहा है तब हमारे लिए यह आवश्यक हो जाता है कि हम अपने शिक्षकों तथा शैक्षिक प्रशासकों की मनोवृत्ति में भी परिवर्तन लाएं। शिक्षक भी उसी समुदाय का हो जिस समुदाय के शिक्षार्थी है, सर्वत्र यह आवश्यक नही है। कोई भी शिक्षक जब विद्यालय पढाने जाता है तो वह अपने साथ अपनी मान्यताएं, अपना नजरिया, अपना विश्वास और विभिन्न समुदायो के बारे में अपनी सोच साथ लेकर जाता है। यह सभी उसकी सोच और उसके व्यवहार मे परिलक्षित होता है। इससे न तो बच्चे ही अपने शिक्षक से खुल पाते हैं, और न शिक्षक ही उन्हे ठीक से समझ पाते हैं। इससे कक्षा में होने वाले सम्प्रेषण पर भी प्रभाव पडता है। इसलिए एक शिक्षक के लिए आवश्यक होता है कि वह अपने शिक्षार्थियों के विषय में, उनकी संस्कृति के विषय में, उनकी मान्यताओं तथा विश्वासों के विषय मे सम्पूर्ण जानकारी अर्जित करे। जिससे उसे, उन्हें तथा उनके व्यवहार को समझने मे आसानी हो।

अकसर देखा गया है कि प्राथमिक स्तर पर विभिन्न विषयो की जो पाठ्यपुस्तके बनाई जाती हैं उनमे स्वभावतः शहरी परिवेश तथा शहरी संदर्भ आ जाते हैं। इन पाठ्यपुस्तकों की सामग्री ग्रामीण अथवा दूरदराज के क्षेत्रों के बच्चों के परिवेश, दैनिक जीवन के अनुभवो तथा संस्कृति से बहुत दूर होती है। अतएव इन स्थानों के बच्चे न तो उस सामग्री का भरपूर लाभ उठा पाते है और न ही उससे तादात्म्य स्थापित कर पाते है। इसका प्रभाव उनकी सीखने की गति तथा सम्प्राप्ति दोनों पर पड़ता है। इसलिए अध्यापको तथा जिला स्तरीय संस्थाओं द्वारा इन पुस्तको तथा पाठ्य-सामग्री का उपर्युक्त दृष्टिकोण से मूल्यांकन किया जाए जिससे उन्हे स्थान विशेष के बच्चों के लिए अधिक उपयोगी बनाया जा सके। इससे जहा एक ओर बच्चो को विभिन्न विषयो को सीखने में सहायता मिलेगी वही शिक्षको एवं बालक-बालिकाओ में आपसी अंत क्रिया भी सुदृढ़ होगी।

उपर्युक्त तथ्यो के आधार पर यह कहना अनुचित न होगा कि अध्यापक का अधिगम की सम्पूर्ण प्रक्रिया मे एक महत्वपूर्ण स्थान है। सुनने मे तो उपर्युक्त बातें मामूली-सी लगती है किन्तु यदि अध्यापक स्वय में इन क्षमताओ, कौशलो तथा दृष्टिकोण को विकसित कर सके तो कोई कारण नहीं है कि सभी बच्चे विशेष रूप से सुविधाविहीन बच्चे सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था का पूरा लाभ न उठा सकें। शिक्षण-प्रशिक्षण सामग्री तथा प्रशिक्षण कार्यक्रम द्वारा अध्यापकों मे इन कौशलो को विकसित करने का उत्तरदायित्व सभी का है— विशेषकर राज्य तथा जिला स्तर की शिक्षक-प्रशिक्षण सस्थाओ का। यदि बच्चों की अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों का निराकरण प्रारम्भ में ही हो जाए तो उन्हें अपेक्षाकृत उच्च स्तर पर अध्ययन करने तथा सीखने में न तो कठिनाई होती है और न ही उनके सीखने की प्रक्रिया पर विपरीत असर पड़ता है। ☐☐

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
श्री अरविन्द मार्ग, नई दिल्ली

आर्थिक विकास में महिला शिक्षा की भूमिका

❑ राजीव मालवीय

शिक्षा महिलाओं की व्यक्तिगत योग्यता तथा संसाधनों के कुशल सदुपयोग की योग्यता को बढ़ाकर एक महान कार्य करती है। महिलाओं की राष्ट्रीय जीवन को समृद्धशाली बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यदि राष्ट्र महिला रूपी कुशल जनशक्ति को अधिकतम् दक्षता सम्पन्न बनाने हेतु शिक्षा का उचित प्रबन्धन नहीं करता तो राष्ट्रीय प्रगति में गम्भीर रुकावटें पड़ सकती हैं। अतएव कहा जा सकता है कि महिला शिक्षा पर किया गया निवेश भविष्य एवं तात्कालिक दोनों प्रकार का लाभ देने वाला होता है।

राष्ट्रीय प्रगति में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान होता है। शिक्षा कुशल जनशक्ति का निर्माण करती है, जिससे राष्ट्र को उत्पादक व्यक्ति मिलते हैं फलतः राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था मजबूत बनती है। किन्तु भारत को स्वतत्र हुए 54 वर्ष हो गए हैं, फिर भी शिक्षा पुरुष जनशक्ति की तुलना में महिला जनशक्ति का निर्माण करने में असफल रही है। लगभग 27 प्रतिशत महिला जनशक्ति शिक्षित होते हुए भी बेरोजगार है। महिला साक्षरता पुरुषो के मुकाबले बहुत कम है। ग्रामीण क्षेत्रों की महिला जनशक्ति अभी भी रूढ़िवादिता, अन्धविश्वास, पर्दा प्रथा, नकारात्मक सोच, अभिभावकों की अशिक्षा के कारण आर्थिक विकास में पूर्णतः योगदान नही दे पा रही है। एतदर्थ यह उचित एवं समसामयिक होगा कि आर्थिक विकास में महिला-शिक्षा के महत्व को देखते हुए कारगर व्यवस्था को अंजाम देकर महिला शिक्षा के प्रत्येक पहलू को नवीन विधाओं से सुसज्जित किया जाना चाहिए।

महिला शिक्षा– एक उत्तम निवेश

निवेश से आशय किसी कार्य पर किए जाने वाले पूजी-व्यय से लगाया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति किसी कार्य पर पूंजी-व्यय इसलिए करता है, क्योकि उसे यह उम्मीद होती है कि भविष्य मे हमें इससे लाभ होगा। जिस कार्य पर निवेश किए जाने वाले धन का व्यक्ति को लाभ नहीं मिलता, वह उसके लिए घाटे का सौदा होता है। अन्ततः वह उस कार्य पर पूंजी का व्यय नहीं करना चाहता। प्राय· जनमानस में यह धारणा प्रचलित है कि लड़कियां पराया धन होती हैं। दूसरे उनका कार्य केवल घर के भीतर तक ही सीमित है अतएव जहा तक हो सके उनको सीमित मात्रा मे, पत्र-व्यवहार करने की योग्यता प्राप्त करने तक ही शिक्षा देनी चाहिए। ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसी मान्यता बहुतायत से सुनने को मिलती है। लड़को की अपेक्षा लड़कियों की शिक्षा पर इसी कारण कम ध्यान दिया जाता है। जबकि वास्तविकता यह है कि महिला शिक्षा पर किए जाने वाला निवेश पुरुष शिक्षा पर किए जाने वाले निवेश से अधिक फलप्रदायी होता है। एक सुशिक्षित महिला से उत्पन्न संस्कारी बच्चे एक अशिक्षित महिला से उत्पन्न बच्चे से अधिक ज्ञानवान, संस्कारवान होते हैं। महिला शिक्षा पर किया जाने वाला निवेश घाटे का सौदा हो ही नहीं सकता। विश्व बैक के प्रसिद्ध शिक्षा-अर्थशास्त्री समर्स (1992) ने अपने दीर्घकालीन अनुभवों के आधार पर शोध द्वारा इस तथ्य का रहस्योद्घाटन किया कि भारत में 100 बालिकाओं की शिक्षा पर कुल खर्च 32,000 अमेरिकी डालर आता है। उसका लाभ यह मिलता है कि इससे 43 शिशुओं और 2 महिलाओ की मृत्यु को रोका जा सकता है, 300 बच्चो का जन्म रोका जा सकता है, साथ ही साथ कुल 52,000 अमेरिकी डालर धनराशि का प्राप्ति भी होती है अर्थात् 20,000 अमेरिकी डालर विशुद्ध लाभ मिलता है।

शिक्षा महिलाओ की व्यक्तिगत योग्यता तथा संसाधनो के कुशल सदुपयोग की योग्यता को बढाकर एक महान कार्य करती है। महिलाओ की राष्ट्रीय जीवन को समृद्धशाली बनाने में भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यदि राष्ट्र महिला रूपी कुशल जनशक्ति को अधिकतम् दक्षता सम्पन्न बनाने हेतु शिक्षा का उचित प्रबन्धन नहीं करता तो राष्ट्रीय प्रगति में गम्भीर रुकावटे पड़ सकती हैं। अतएव कहा जा सकता है कि महिला शिक्षा पर किया गया निवेश भविष्य एवं तात्कालिक दोनो प्रकार का लाभ देने वाला होता है। महिला शिक्षा पर किए जाने वाले निवेश से निम्नलिखित लाभ होते हैं--

- ☐ सुशिक्षित एवं संस्कारित बच्चों का सृजन।
- ☐ पारिवारिक आय-व्यय मे संतुलन।
- ☐ अवकाशकाल का आर्थिक उन्नयन मे सदुपयोग।
- ☐ लघु परिवार की महत्ता का बोध।
- ☐ जन्मदर एव मृत्युदर मे कमी।
- ☐ पर्यावरण सरक्षण मे सहभागिता।
- ☐ स्वय के स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता।
- ☐ परिवार को कुपोषण से बचाव का ज्ञान।
- ☐ महिला-अधिकारों का बोध।
- ☐ सरकारी योजनाओ मे सहभागिता।
- ☐ औद्योगिक प्रतिष्ठानो, लघु उद्योगो, नौकरियों मे सहभागिता।
- ☐ स्वावलम्बन एव सहकारी भावना का विकास।

आर्थिक विकास एवं महिला शिक्षा

आर्थिक विकास से आशय देश की राष्ट्रीय आय, सामग्री उत्पादन की मात्रा तथा सेवाओं के परिणाम की उत्तरोत्तर वृद्धि से लगाया जाता है। भारत एक विकासशील देश है, यह विकसित देश की कोटि मे तभी आ सकता है जब पुरुष जनशक्ति के साथ-साथ महिला जनशक्ति की भी आर्थिक विकास में सहभागिता होगी। महिलाओं की आर्थिक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वे शारीरिक एवं मानसिक श्रम से पुरुषों की अपेक्षा अधिक उत्पादन दे सकती हैं। इससे राष्ट्रीय आय में भी वृद्धि होगी। अतएव महिला शिक्षा को प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च स्तर, व्यावसायिक एवं तकनीकी स्तर तक को उत्कृष्ट बनाने एवं उचित शैक्षिक नियोजन को अजाम देना होगा। शिक्षा मे महिलाओं की रुचि, योग्यता, अभिक्षमता, आवश्यकता को ध्यान में रखकर यदि शिक्षा-व्यवस्था बनाई जाएगी तो निश्चित रूप से महिलाएं मात्र गुजारे वाली अर्थव्यवस्था तक ही सीमित न रहकर बचत वाली अर्थव्यवस्था में अग्रणी भूमिका निभाकर आर्थिक विकास को समृद्धशाली बना सकेगी।

पारिवारिक विकास एवं महिला शिक्षा

परिवार के अभ्युदय मे महिला शिक्षा का विशेष महत्व होता है। सुशिक्षित महिला की कोख से जन्म लेने वाले बच्चे भी सुशिक्षित एव संस्कारी होते है। प्राय बच्चे प्रारम्भ मे अनुकरण द्वारा ही सीखते हैं। फलत. यदि बच्चा बचपन से ही माता-पिता का सस्कार युक्त, विनय युक्त, मूल्यवादी दृष्टिकोण से आच्छादित परिवेश पाता है तो इसका स्पष्ट प्रभाव बच्चे पर भी पड़ता है। अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति लिंकन, शिवाजी, राष्ट्रपिता महात्मा गाधी को मनीषी के रूप मे स्थापित करने मे इनकी माताओ की सुशिक्षा, सस्कार एव पारिवारिक परिवेश का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। इस संबंध में लिंकन ने लिखा भी है कि– "जो कुछ भी मैं आज हू और बनने की आशा रखता हू, वह सब मेरी देवी *स्वरूपा माता के कारण संभव हुआ है।"* वस्तुत. बालक की शिक्षा पारिवारिक परिवेश पर निर्भर करती है। यदि परिवार अच्छे रीति-रिवाजों पर आधारित है तो इसका बालक की विचारधारा और विकास पर प्रशसनीय प्रभाव पड़ेगा। पारिवारिक परिवेश का निर्माण केवल योग्य एव सुशिक्षित महिला ही कर सकती है। साराशत' महिला शिक्षा से एक परिवार को आर्थिक रूप से तथा अनार्थिक रूप से बहुत सहायता मिलती है। महिलाओं के सुशिक्षित होने से पारिवारिक आय-व्यय में सन्तुलन आता है। महिलाएं अध्यतन नवविचारों की ओर आकर्षित होती है, जिससे परम्परागत मान्यताओ से आच्छादित कार्यवृत्ति के स्थान पर अधिक फलप्रदायी कार्यवृत्ति द्वारा वे अपने परिवार के अभ्युदय में योगदान देने मे समर्थ होती हैं। वे लघु परिवार की महत्ता के प्रति वफादारी बरतते हुए अपने परिवार को

खुशहाली का मार्ग प्रशस्त करती है। महिला- शिक्षा पारिवारिक प्रगति के कार्यक्रम में द्रुतगति तथा दृढता से आमूल-चूल परिवर्तन करके उत्कृष्ठ सवाहक के रूप मे अपनी भूमिका का निर्वहन करती है। अतएव महिला-शिक्षा के प्रति सकारात्मक सोच और उसमे यथोचित बदलाव लाने की वर्तमान में नितान्त आवश्यकता है।

आर्थिक विकास के उपादान एवं उनका शिक्षा द्वारा सशक्तिकरण

आर्थिक विकास को प्रभावित करने मे कई उपादान शामिल है। इनमें उत्पादन, संगठन और राज्यनीति या शिक्षा नीति अति महत्वपूर्ण होते हैं। उत्पादन को बढ़ाने में भौतिक ससाधन एवं मानवीय संसाधन की यथोचित आवश्यकता होती है। इसमें खनिज, कच्चा माल, यंत्र, उपकरण, कुशल श्रमिको का संगठन आदि समाहित होता है। यांत्रिक उपकरणों को कुशल श्रमिक संचालित करके कच्चे माल को उपयोगी रूप प्रदान कर बाजारू परिशोधित माल तब तैयार होता है तो उससे उत्पादन मे वृद्धि होती है। उत्पादन का निर्यात कर आर्थिक लाभाश प्राप्त किया जाता है। यह आर्थिक विकास मे सहायक होता है। अतएव विकास की गति को तेज करने के लिए उद्योग, शिक्षा पर निवेश करना जरूरी हो जाता है। किन्तु भारत मे शिक्षा पर जितना निवेश किया जाना चाहिए उतना नहीं हो पा रहा है। महिला शिक्षा पर किया जाने वाला निवेश पुरुष शिक्षा पर किए जाने वाले निवेश से अत्यल्प है। तकनीकी शिक्षा मे महिलाओ की सहभागिता भी लज्जाजनक है। भारत मे जो तकनीकी शिक्षा उपलब्ध भी है उसमे नवाचारों का यथोचित समावेश नहीं है वे अभी परम्परावादी ही हैं।

जेल्वेलाइन केवांड (1970) ने ठीक ही लिखा है कि– "तकनीकी तथा वैज्ञानिक सभ्यता के द्वार तक महिलाओं को न पहुंचाने वाला शिक्षा तंत्र विश्व की आधी मानवता एवं मानव शक्ति को विश्व से पृथक कर देगा।" अतएव यह आवश्यक हो गया है कि राष्ट्र की आधी जनशक्ति जिसका अपव्यय हो रहा है इसका समुचित उपयोग करने हेतु तथा परिवार एवं राष्ट्र के आर्थिक स्तर को सुधारने के लिए महिला शिक्षा को विविध दृष्टिकोणो से सशक्त बनाया जाए। सामान्य शिक्षा के साथ-साथ विशिष्ट शिक्षा मे भी उनकी सहभागिता बढ़ाई जाए। भक्तवत्सलम् समिति (1963) ने महिला शिक्षा को समुन्नत बनाने के लिए सुझाव दिया है कि महिलाओ को विविध व्यवसायों (अध्यापन व्यवसाय के प्रति ज्यादा) आकर्षित किया जाए, निर्धनों को विविध शैक्षिक मदद दी जाए, निजी विद्यालयों की स्थापना,आवास व्यवस्था, महिला शिक्षा से संबंधित प्रतिकूल अभिवृत्तियों को समाप्त करने आदि के लिए जनसहयोग प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। कोठारी आयोग (1966) ने महिलाओ को सभी प्रकार की शिक्षा मे समान अवसर प्रदान करने, महिला शिक्षा के प्रसार हेतु उदारतापूर्वक आर्थिक सहायता उपलब्ध कराने की अनुसशा व्यक्त की है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में भी आर्थिक विकास मे महिला शिक्षा की भूमिका को देखते हुए यह संकल्प लिया गया कि– "महिलाओं, सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्गो और शारीरिक दृष्टि से विकलाग लोगों को तकनीकी शिक्षा देने के लिए उपयुक्त औपचारिक व अनौपचारिक कार्यक्रम संचालित किए जाएगे। पाठ्यचर्या का लगातार व क्रमबद्ध नवीनीकरण किया जाएगा। कार्यात्मक कुशलता की वृद्धि के लिए प्रौद्योगिकी के आधुनिकीकरण पर बल दिया जाएगा। पॉलिटैकनिक प्रणाली को अच्छा और सुदृढ़ बनाया जाएगा।" राष्ट्रीय महिला शक्ति सम्पन्नता नीति 2001 में यह संकल्प लिया गया है कि– "महिलाओ की पूर्ण क्षमता की प्राप्ति के लिए महिलाओ के पूर्ण विकास हेतु सकारात्मक आर्थिक तथा सामाजिक नीतियों के माध्यम से वातावरण के सृजन को प्रमुखता दी जाएगी। शिक्षा स्तर पर सुधार तथा शिक्षा के साथ-साथ महिलाओ के व्यवसायो/तकनीकी कौशलों के विकास हेतु विशेष उपाय किए जाएंगे।... औपचारिक तथा अनौपचारिक क्षेत्रो में सामाजिक, आर्थिक विकास हेतु उत्पादकों तथा कार्यकर्ताओ के रूप में महिलाओं के योगदान को मान्यता प्रदान की जाएगी तथा रोजगार और अन्य कार्य परिस्थितियों से सम्बन्धित उपयुक्त नीतियां तैयार की जाएंगी।"

किंतु दुखद पहलू यह है कि महिला शिक्षा के सशक्तीकरण के संबंध मे जितने भी सकल्प लिए गए हैं, उनका पूर्णतः ईमानदारी के साथ क्रियान्वयन नहीं हो पा रहा है। महिलाए अब भी अपने अधिकारो के प्रति सचेष्ट नही दिखाई पड रही हैं। पुरुष प्रधान समाज में भारत की अधिकांश ग्रामीण महिलाएं किन्हीं न किन्हीं कारणों से आर्थिक विकास मे सक्रिय योगदान नहीं दे पा रही है। जिससे आर्थिक विकास द्रुतगति से नही हो पा रहा है। किसी भी विकासशील समाज मे विकास का एक आयाम आर्थिक अधिकारिकता है, जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती है। हमारे ग्रामीण जीवन मे अनेक गतिविधियां ऐसी है, जिनमें महिलाओं को ग्रामीण एवं देशी ज्ञान-विज्ञान की रक्षा एवं उनके संरक्षण मे महत्वपूर्ण योगदान कर सकती हैं। परम्परागत दवाइयां, लघु स्तर खाद्यान्न सुरक्षा, फल एवं बीज संरक्षण, ऊर्जा प्रबधन तथा उद्यमशीलता कुछ ऐसे क्षेत्र है जिनका संचालन महिलाएं सफलता से कर सकती हैं। अतएव महिलाओ की इस परम्परागत भूमिका को नया आयाम देने और आधुनिक विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से उन्हें अधिक लाभ पाने योग्य बनाने के लिए उनकी शिक्षा को सबल बनाना होगा। महिलाओं मे आत्मविश्वास, आत्मसम्मान, आत्मचेतना एवं आत्मजाग्रति उत्पन्न करनी होगी कि वे मात्र घर की अधिष्ठात्री न होकर राष्ट्रीय नवनिर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। महिलाएं आर्थिक विकास में योगदान तभी दे सकती हैं जब पुरुष भी उनका सहयोग एवं भागीदारी करे। पुरुषों की पारपरिक सोच में बदलाव लाना होगा। महिलाओ को विकास के लाभ मे बराबर का हकदार बनाने के लिए एक सकारात्मक, आशाजनक, उत्साहवर्धक और प्रोत्साहित करने वाला वातावरण निर्मित करना होगा। पाठ्यक्रम में आर्थिक विकास से संबधित अद्यतन नवाचारों एवं प्रौद्योगिकी का समावेश करना होगा। लघु उद्योग, कार्यानुभव से महिलाओ को जोडना होगा। सभी विकास योजनाओ में उनकी सहभागिता एवं उन तक उसकी सीधी पहुच बनानी होगी। शिक्षा के सभी स्तरों तक कम से कम एक तिहाई सीटे आरक्षित करने और निर्णायक स्तर पर उन्हें पर्याप्त प्रतिनिधित्व देना होगा। महिलाओं को आधुनिक नए उद्योगों में प्रशिक्षित करना होगा जो उन्हें न केवल लाभप्रद ढंग से व्यस्त रख सकेगे बल्कि उन्हें आर्थिक रूप से सबल बना सकेगे।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि महिला-शिक्षा के बिना हमारा सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राष्ट्रीय उत्थान सभव नही है। इस दिशा मे अपेक्षित ध्यान देने की आवश्यकता है। महिला शिक्षा के सशक्तीकरण से ही कुशल जनशक्ति की मांग की पूर्ति होगी, महिलाएं आर्थिक विकास मे सहभागी भूमिका अदा कर सकेगी और शिक्षा सही अर्थो में निम्न उक्ति को चरितार्थ कर सकेगी—

स्वदेशो ऽभुदयं नूनं, मातृशक्ति विकासनात्।
मानवोज्जवलतं मूलं स्त्रीभनोद्भावना।। ❑❑

ग्राम व पोस्ट– कोटवां
इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद और भारत

❐ विद्यानन्द पाण्डेय

भारतीय सस्कृति मानवता की रक्षा संबधी प्रश्नो के शाश्वत समाधान की संस्कृति है। आज वर्तमान विश्व के सामने सबसे बड़ी समस्या राष्ट्र की सस्कृति को सुरक्षित रखने की है। प्रत्येक राष्ट्र अपनी-अपनी सीमा, सामर्थ्य एव सोच के अनुसार परमाणु अस्त्र-शस्त्र तथा आयुध संसाधनों को विकसित करने में लगा है। सभी राष्ट्र एक दूसरे से भयभीत हैं। दुनिया के सभी देश भौतिक प्रभुत्व स्थापित करने की प्रतिस्पर्धा में खड़े हो गए है। किसी भी राष्ट्र के सामने न तो मानव का कोई मूल्य है, न मानवीय संस्कृति की कोई संवेदना। यह त्रासदी एव सांस्कृतिक संक्रमण का काल है। भूमण्डलीकरण इस बात का सूचक है कि पूर्ण वैश्विक परिप्रेक्ष्य में आध्यात्मिक जीवन मूल्यो तथा उदात्त सांस्कृतिक परम्पराओ का लोक पराभव प्रारम्भ हो गया है। हम किसी न किसी बौद्धिक जड़ता तथा कुठित सास्कृतिक दासता मे जकड़ लिए गए हैं, जहां स्थूल पाषाण खण्डो में प्राण प्रतिष्ठित प्रतिमाओ से रक्षा की याचना करना व्यर्थ है। यही हमारी आधुनिक सस्कृति का मुखौटा और राष्ट्र की नियति है।

हृदयहीन रोबोट एव प्राणहीन यंत्रो द्वारा चैतन्य विश्व की गतिविधियो का सचालन कर हम किन मूल्यों की स्थापना करना चाहते है? किस संस्कृति का आश्रय पाना चाहते है? यह किसी को ज्ञात नहीं है। इस पर कोई चिन्तन नही किया जा रहा है। क्या यही सस्कृति राष्ट्रीय सुरक्षा का अभेद्य कवच होगी? क्या इसी से मानव मूल्य पोषित होंगे? क्या इस सदी के समाज एवं व्यक्ति को दिशा-निर्देश इसी सास्कृतिक परिप्रेक्ष्य में मिलेगा? कदापि नहीं। मानवीय या राष्ट्रीय सस्कृति परम्परा तथा जीवन मूल्यो की सुरक्षा कभी भी बादशाहो के ताज एवं सम्राटों की तलवारों से नहीं हो सकती और न ही राष्ट्रीय स्थिरता के लिए मनमाने शहंशाही फैसलों से इसकी उपादेयता हो सकती है। राष्ट्रीय सांस्कृतिक सुरक्षा के लिए राम-कृष्ण-बुद्ध-महावीर जैसे युग प्रवर्तको की भाति राज्य वैभव का तिरस्कार कर जगलों, पर्वतों तथा नदियों के पावन सान्निध्य मे जाना होगा, वही शैल्य, पावनत्व की खोज करनी होगी।

संस्कृति से राष्ट्रीय पहचान बनती है। भारत एक परम्परापोषित तथा सनातन राष्ट्र है। यहां की परम्पराओं में सांस्कृतिक संवहन की क्षमता रही है। यही कारण है कि विश्व का एकमात्र ऐसा राष्ट्र जिसमें सभी संस्कृतियों के मानवीय तत्वों को आत्मसात् करने की क्षमता है वह है– भारत। भारतीय संस्कृति अपनी समष्टि की प्रवृत्ति के कारण दुनिया के मंच पर सदैव सम्मान पाती रही है। किसी संस्कृति का पराभूत होना, वहां के राष्ट्रीय मूल्यों एवं राष्ट्र का पराभव है। पराभूत संस्कृति से न तो राष्ट्र की सुरक्षा हो सकती है और वहां के नागरिकों को आत्मगौरव, सम्मान तथा सुरक्षा मिल पाती है। राष्ट्रीय संस्कृति का अर्थ है– वह संस्कृति जो अपने नागरिकों को राष्ट्रीय मूल्यों एवं पहचान से जोड़ती है। मानवीय व्यक्तित्व की मूल प्रवृत्तियों का संशोधन एवं परिमार्जन कर समाज के अनुकूल बनाने की प्रक्रिया संस्कृति कहलाती है। यही मानव की प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक अवस्था का अन्तर है।

भोगवादी प्रवृत्ति से मुक्त हो कर त्याग, सेवा, स्नेह, सहिष्णुता तथा करुणा के शाश्वत प्रवाह में अपनी वैचारिक कलुषता का प्रच्छालन करना होगा। तभी राष्ट्रीय वैभव एव अस्मिता की सुरक्षा हो सकती है। आध्यात्मिक उत्कर्ष हेतु तमसावरण को हटाना होगा तथा संस्कृति के आलोक मे अपनी परम्पराओं एवं जीवन मूल्यों को पहचानना होगा तथा उन्हे परिभाषित भी करना होगा। आदर्श एवं नैतिक

मान्यताओ का स्वस्थ संबल बनाकर जीवन जीने की कला से संस्कृति को जोड़ना होगा। वस्तुत. मानवता से सस्कृति एवं मूल्य यदि निकाल दिए जाए तो न जीवन की कोई संज्ञा रह जाती है न पहचान। उसी तरह यदि राष्ट्र से सस्कृति हटा दी जाए तो राष्ट्र का अस्तित्व समाप्त हो जाता है।

यही अन्तर और पहचान राष्ट्र के परिप्रेक्ष्य में भी अनुभव की जा सकती है। यदि राष्ट्र अपनी भौगोलिक भौतिक और प्राकृतिक पहचान तक सीमित है तो उसकी कोई अस्मिता नहीं मानी जा सकती। अस्तित्व और अस्मिता का बोध सस्कृति से होता है और किसी भी राष्ट्र के लिए यह आवश्यक है। भारत वर्ष का अस्तित्व और उसकी अस्मिता मे यहां की परम्परागत सांस्कृतिक पहचान जुड़ी है। यहां की वाचिक परम्परा में सस्कृति एवं आर्ष जीवन दर्शन प्रस्फुरित होता रहा है। इसी से भारतीय सस्कृति समष्टिवादी रही है। यही हमारी राष्ट्रीय पहचान है। हमारा राष्ट्र उस सस्कृति का बीजमंत्र लेकर आगे बढा है जिसके पुरुषार्थ से पुरुषो ने मृत्यु को भी जीत लिया था। काल को माप दिया था। यहां की संस्कृति के रज-कणों में देवताओ की लीला विधायिनी शक्ति का अकुरण हुआ है। हमारी राष्ट्रीय संस्कृति मे आत्मबोध, समाजबोध, राष्ट्रबोध तथा युगबोध (विश्वबोध) की उदात्त सकल्पना निहित है।

आत्मबोध या आत्म साक्षात्कार का तात्पर्य है— "आत्मवत् सर्वभूतेषु" अर्थात् समस्त प्राणी जगत को अपने समान समझना। "आत्मन. प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्" यह भारतीय संस्कृति का अमर वाक्य है। यही आत्मबोध है। स्वार्थ से भिन्न आत्मबोध—जहां जीवन के समस्त द्वन्द्व वैश्विक समरता मे अन्तर्लीन हो जाते हैं। जहां मैं, तुम की पहचान अस्तित्व की समानता मे बदल जाती है। यही राष्ट्रीय संस्कृति की विशिष्ट पहचान है। यही श्री राम का पुरुषोत्तमत्व है। वे ही उत्तम पुरुष हैं। उन्हें मैं, हम का बोध है। मैं, हम में अतर न करना ही रामत्व है। राम हमारी सस्कृति के नायक हैं। उन्हें पूरा विश्व आत्ममय दिखाई देता है।

समाजबोध समाजवाद नहीं है। समाज की समष्टि उसका एकनिष्ठ भाव ही समाज बोध है। यह समाजबोध राजनीति नहीं अपितु जीवन शैली एवं सामाजिक सरचना का बोध है। समाज की परम्परा मे निहित जड़ता का उत्खनन करते हुए समाजीकरण को स्वस्थ बनाना समाजबोध है। समाज मे व्याप्त रूढि, अंधविश्वास तथा मिथ्या परम्पराओ को जड़ता से अलग करने का कार्य संस्कृति करती है। हमारे कुछ स्तुत्य महापुरुषो द्वारा सामाजिक जन जागरण की दिशा में किए गए प्रयास इसके दृष्टात हैं यथा—राममोहन राय, दयानंद सरस्वती, ईश्वरचंद विद्यासागर तथा महात्मा गाधी के नाम समाजबोध के रूप मे लिए जा सकते है। ये महापुरुष भारत की जमीन, संस्कृति एवं भारतीय समाज की जडो से जुडे थे।

राष्ट्रबोध का आशय सत्ता, शासन या संविधान से नहीं। राष्ट्र, नदी, पहाड, खेत खलिहान या प्राकृतिक सम्पदा से भी नहीं जाना जाता, इसकी पहचान राजनीतिक परिधि से भी नही होती। राष्ट्र एक भावना है, एक निष्ठा है, एक सांस्कृतिक अस्तित्व है। मानस की एक ऐसी छवि जिसमे सम्पूर्ण जनजीवन परिभाषित होता है। राष्ट्रबोध ही सस्कृति का शाश्वत तत्व है। संस्कृति की सार्वभौमिक पहचान राष्ट्रबोध में निहित होती है। राष्ट्रबोध की दृष्टि से संस्कृति मे राष्ट्रीय वेश, भाषा एवं भूषा होना अनिवार्य है। आज भारतीय संस्कृति की वेदना का यही सबसे बडा कारण है। भारतीय सस्कृति मे राष्ट्रबोध के स्वर मद हो गए है। निराला एव श्याम नारायण पाण्डेय तथा दिनकर एवं गुप्त जी की रिक्त पूर्ति न होने से सस्कृति का राष्ट्रवादी स्वर मद्धिम हो गया है।

युगबोध या विश्व बोध ही विश्वबधुत्व है। यही सर्वे भवन्तु सुखिन है। युगबोध जीवन की वस्तुनिष्ठ पहचान है। भारतीय सस्कृति में युगबोध की व्यापक समीक्षा की गई है क्योकि भारत वर्ष मे मानव की सुरक्षा, उसकी पहचान एव उसके महत्व को सर्वाधिक आका गया है। मनुष्य को आत्मसात् किया है भारतीय सस्कृति ने। भारतीय सस्कृति में पूरे विश्व को समष्टि की भावना से पहचाना गया है। हमने 'अहं ब्रह्मास्मि, तत्वमसि' के साथ-साथ 'सर्व खल्विद ब्रह्म' तक की बात कही। इससे बडा विश्वबोध का सांस्कृतिक उदाहरण अन्य किसी राष्ट्र की सस्कृति मे नहीं मिलता सतत स्रोत स्विनी सलिला एवं उत्तुंग गिरि शिखरो तथा पक्षियों के कलरव एवं वनस्पतियो की सुगन्धी मे हमने ईश्वरीय सत्ता की कल्पना की, यह किसी अन्य राष्ट्र के सांस्कृतिक चिन्तन मे संभव ही नहीं हुआ।

भारतीय संस्कृति उदार, सहिष्णु तथा विचार प्रधान

एवं जीवन आदर्श प्रवाहित करने वाली संस्कृति है। भारत एक राष्ट्र है और इसकी सास्कृतिक पहचान ही सास्कृतिक राष्ट्रवाद है। हम इक्कीसवी सदी मे एक विश्वव्यापी विभीषिका से मुक्त होने का प्रयास कर रहे हैं। उग्रवाद, हिंसा, आतकवाद से मुक्त होने का प्रयास चल रहा है। सभी देश इस विषैली वायु से बचने का यत्न कर रहे है। भारतवर्ष इस दिशा मे सदैव से ही शांति तथा सद्‌भाव के मार्ग का अनुकरण करता रहा है। आज चारो तरफ से उसे घेरने एवं तोडने का प्रयास किया जा रहा है। किसी भी विषम परिस्थिति का साहस एवं दृढ़ता से सामना करना भारतीय सास्कृतिक विशेषता रही है। भारत की इसी विचारधारा का जीवित रहना सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है। कोई राष्ट्र अपनी सास्कृतिक पहचान स्थिर रख सके और उसको अपने नागरिको में व्यवहृत कर सके यही उसका सांस्कृतिक राष्ट्रवाद है।

राष्ट्रवाद की वह विचारधारा प्रगति तथा विकास के मार्ग मे बाधा उपस्थित करती है जिसमे सस्कृति को महत्व न दिया जाता हो। दुराग्रह, कुष्ठा एवं रूढ़िवादी मानसिकता से राष्ट्रवाद को जीवित रखने वाले लोग दीर्घ जीवी नहीं होते। वही राष्ट्र अपने जीवन की सदियां, सहस्राब्दियां पूरी कर पाता है जो सास्कृतिक परम्पराओ का मानवीकरण करता है, मानव हित में उनका पालन एवं क्रियान्वयन करता है। इतिहास के पृष्ठों को पलट कर देखे तो रोम मिश्र, यूनान आदि स्वयंभू राष्ट्रो की विश्व प्रसिद्ध सस्कृति में इतना परिवर्तन होता गया कि उनका मूल स्रोत ही सूख गया क्योकि वे राष्ट्र प्रगतिशील बनने के लालच में आधुनिक होते गए और अपनी मौलिक सांस्कृतिक पहचान से मुक्त हो गए। आज भारत के साथ भी यही होने जा रहा है। हम एक सुनियोजित षड्‌यंत्र के शिकार हो रहे हैं। अपनी सास्कृतिक पहचान को छोड़कर भोगवादी मार्ग पर हमारे कदम बढ चुके है जो राष्ट्रवाद के विनाश की दस्तक है।

हमारी राष्ट्रवादी पहचान का आधार त्याग एव अपरिगृह की सस्कृति थी, परन्तु जब से इसका मूलयाकन भूगोल, राजनीति सत्ता एव शासन की दृष्टि से किया जाने लगा तभी से हमारी विश्वव्यापी सास्कृतिक पहचान सघर्षो, युद्धो एव सांप्रदायिक रूढ़ियों मे उलझकर रह गई। हमे न तो अपने राष्ट्र का पुराना भौगोलिक विस्तार मिला न ही हम सांस्कृतिक सरक्षण कर सके। हमारी सस्कृति भोगवादी नही, वैचारिक सृजन, चिन्तन की संस्कृति है जहां त्याग पूर्वक भोग किया जाता है। दोहरे मानदण्ड एव दोहरी मानसिकता को अपना कर हम न तो राष्ट्रवादी सांस्कृतिक पहचान स्थिर रख सकते हैं न ही किसी स्वस्थ जीवनशैली के साथ प्रगति कर सकते हैं।

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद भारतवर्ष के लिए नई संकल्पना या नए विचार की पृष्ठभूमि नहीं है। यहां राष्ट्र एव सस्कृति को सदैव एक मानदण्ड से मापा गया। सस्कृत भाषा मे लिपिबद्ध वैदिक सूक्तो, मंत्रो तथा विविध सस्कारों के समय नदियों, पहाड़ों, ऋषियो, पूर्वजो का आह्वान करना हमारी सास्कृतिक राष्ट्रवाद की मिसाल है। एक राष्ट्र की जीवंतता सदैव नही रहे, यही उपक्रम उसकी संस्कृति ही भारतीय सस्कृति मे राष्ट्रवादी चिंतन कभी भी भौगोलिक सीमा का मुखापेक्षी नही रहा, लेकिन हम आतक और राष्ट्रीय सीमा की सुरक्षा मे भी पीछे नही रहे। अपनी राष्ट्रवादी सास्कृतिक सुरक्षा के लिए देश के शहादती इतिहास को हम कभी नही भुला सकते।

आज इस देश की राष्ट्रीय एकता से अधिक खतरा यहां की सास्कृतिक सुरक्षा को है। आधुनिकता के नाम पर एक कचरे का डिब्बा हमारे सामने रखा गया है। दुर्भाग्य से हम उसे झपटने मे लगे है। शिक्षा के नाम पर एक ठगी और वंचना का शिकार हम होते जा रहे हैं। अपने आत्मगौरव, सम्मान एव विश्वास की ओर हमे लौटना चाहिए। कल के भारत के लिए हम किस नवीन संस्कृति और जीवन मूल्य की प्रतिस्थापना करना चाहते है? एक चितन का विषय है। कही आने वाली पीढ़ी के सामने एक तपन भरा निरक्त आकाश ही तो नहीं बचेगा? एक गभीर प्रश्न है। इसका समाधान खोजना होगा। अपनी गौरवशाली परम्पराओं की आत्ममंजरियों में सास्कृतिक राष्ट्रवाद की तलाश करनी होगी, उन्हे पहचानना होगा और अवसाद पूर्ण चिंतन तथा अंधानुकरण से मुक्त होना होगा। ❑❑

उ.अ.शि.सं.गा.वि.म.
सरदार शहर, राजस्थान

नारी – नए क्षितिजों की ओर

❐ आशा शर्मा

री भारतीय समाज की धुरी है, आधारशिला है। अभी छ दिवस पूर्व भारत के माननीय उपराष्ट्रपति महोदय कहा था 'नारी मूल्यों का श्रेष्ठतम प्रतीक जो प्रकृति रचा है वह है 'मां' का स्वरूप, 'मां' साक्षात् जनात्मकता तथा मौलिक उद्यम है जो परिवार की नवीय समस्याओ को हल करती है। वह उत्कृष्टता, तेकता, समानता का प्रतिनिधित्व करती है, भौतिक दृष्टि नहीं, अपितु उक्त मूल्यों को व्यवहार में उतारने वाले 'स्कृतिक मूल्यो के रूप मे भी। व्यापार, उद्योग, जनसेवा था प्रबंधकीय अनुभवों मे प्रकृति ने नारी को उत्कृष्टतम बंधक बनाया है। मा की सहज भावना ने भारत मा ा सुरक्षित रखा है। यह वस्तुत' सस्कृति शब्द से भी ढ़कर विशिष्ट है। मां द्वारा जिस प्रकार परिवार की ामान्य अथवा विशेष प्रकार से व्यवस्था की जाती है था जिस प्रणाली से प्रबधन व्यवस्था शक्ति प्राप्त करती उस माध्यम से मानव व समाज के बढ़ते विभेद का माधान सम्भव है यह प्रणाली ही संस्कृति माता है। क्त प्रबंधन व्यवस्था आज के विभेद के समक्ष एक नौती है।

उक्त व्यापक विचार हमे स्मरण कराते हैं कि हमने त्रा पक्ष मे कही न केवल सस्कृति मा का अपितु प्रकृति 'भारत-माता' तथा नारी केद्रित परिवार तक का सार या दिया है। घोर लिंग-भेद,समान कार्य हेतु असमान न, श्रमिक जगत में विभेद आदि कठोर सत्य हैं। कटु ांकड़े हमारे सामने मुंह बाये खड़े हैं। भारत की 70 तेशत महिलाए निरक्षर हैं, परिवार नियोजन की 90 तेशत शल्य क्रिया महिलाएं भोगती हैं। प्राथमिक द्यालयो मे बीच में ही पढ़ाई छोड़ने वाली 60 प्रतिशत छात्राए ही हैं। परिवार को समाज के अत' स्थल में विद्यमान लघुतम प्रजातंत्र मानने के आग्रह स्वरूप राष्ट्र संघ ने 1994 को परिवार-वर्ष घोषित किया था। इसके विपरीत मानव विकास रिपोर्ट 1993 के अनुसार "कोई भी देश महिलाओं से पुरुषों जैसा सद्व्यवहार नहीं करता"। क्या नव सहस्राब्दि का भारत केवल एक टाग पर खड़ा रहना झेल सकेगा? प्रत्येक महिला को अपनी क्षमता का पूर्ण विकास कर पाने का अवसर प्रदान किया जाना आवश्यक है। उसे शक्ति समृद्ध कर स्वप्नों के भारत निर्माण में जीवंत भागीदार बनाया जाना वाछित है।

महिला-हितकर प्रौद्योगिकी के नए दिशा क्षेत्र को उन्नत एवं विकसित करना वांछित है। इस प्रौद्योगिकी के रूप हैं– कृषि संबद्ध गतिविधियां यथा सूक्ष्म-वृद्धि-विस्तार (माइक्रोप्रोपेगेशन) पौष्टिक माध्यम से ऊतक रचना, रोग सर्वेक्षण, स्वास्थ्य रक्षा प्रणालियां आदि। महिला के उद्यमशील कौशल में विकास से ही वह पुनः परिवार व समाज में अपना उपयुक्त स्थान बना पाएगी।

यदि यह होना है तो अनेक कदम उठाने होंगे– उदाहरणार्थ, राज्यों ने महिलाओं पर अत्याचार रोकने हेतु अनेक कानून बनाए है यथा– बाल-विवाह निषेध अधिनियम, चिकित्सकीय गर्भपात अधिनियम एक्ट निष्ठापूर्ण एक्टस या कार्यो की परिभाषा मे नही आते। जब तक हमारी वृत्ति जो भयकर रूप से हमारे घोर पितृसत्तात्मक समाज में निहित है, नही बदलेगी स्थिति यही रहेगी। यह विस्तृत पटल से संबद्ध विषय है, किन्तु वर्तमान विज्ञान-काग्रेस में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी पर तो विचार करना ही है अर्थात् नारी जगत किस भांति विज्ञान व प्रौद्योगिकी को समृद्ध करेगा और विज्ञान व प्रौद्योगिकी उसे किस प्रकार समृद्ध करेगी।

प्रत्यक्ष सामने आ रहे हैं। प्रौद्योगिकी के विकास ने महिलाओं के जीवन को गहन रूप से प्रभावित किया

है। सूचना प्रौद्योगिकी का समक्ष आ रहा भव्य रूप, शिक्षा का प्रवेश प्रत्येक घर तक कराने में विलक्षण योगदान सिद्ध होगा तथा यह नारियों को उच्च शिक्षा उपलब्ध कराने, नौकरी धधे में भी उक्त लचीलापन उपलब्ध होने लगा है। सुविधानुसार दिन के किसी भाग में महिलाए इस नवीन योजना के माध्यम से घर से ही कार्य कर सकने की स्वतत्रता का उपभोग कर सकती हैं। घर तथा कार्यालय अब विपरीत दिशाओं वाला खिंचाव नहीं रहे। यह आवश्यक है कि सूचना प्रौद्योगिक-क्राति के महिलाओ को सम्पूर्ण लाभ प्रदान करने के लिए हमें कार्य-स्थल, कार्य के स्वरूप एवं कार्यालय समयानुसार बहु-उदार दृष्टिकोण अपनाना, अति प्राचीन नियोजन नियमों मे आमूल-चूल परिवर्तन लाना होगा।

जीवन विज्ञान में हुई प्रगति ने महिलाओं को ऐसे अवसर प्रदान कर दिए हैं जो अपूर्व हैं, किन्तु प्रौद्योगिकी दोधारी तलवार है तथा सदुपयोग न करने की अवस्था में यह प्रगति महिलाओं के हितो को हानि भी पहुंचा सकती है। प्रमाणतः आधुनिक प्रौद्योगिकी भ्रूण अवस्था में ही गर्भस्थ शिशु का लिंग जान सकती है जिससे गर्भपात के आंकड़े बढ़े जो कि (मादा) लड़की भ्रूण के थे और महानगरो की ओर संकेत करते थे। इस प्रकार पूर्वाग्रहों से ग्रसित रहे तो हम कैसे सहस्राब्दि के सपनो को साकार कर पाएगे एव नव भारत का निर्माण कैसे सम्भव होगा।

नारी समाज के न्याय हेतु तीव्र विकास की महत्वाकाक्षी अभिलाषा के साथ देश में स्वतत्रता प्राप्ति के बाद से ही विकास और कल्याण की अनेकानेक योजनाओ और कार्यक्रमो की सख्या काफी कम रही है, जिनमे अधिक से अधिक वर्गो और लोगों के विकास और कल्याण के लक्ष्य को पूरा करने के उद्देश्य से उत्तरोत्तर वृद्धि की जाती रही है, पिछले दो तीन वर्षो में सरकार द्वारा विभिन्न अवसरों पर नई-नई योजनाओं की घोषणा करके उनकी संख्या मे काफी बढ़ोतरी की गई है। इन योजनाओ पर वर्षानुवर्ष अपार धनराशि खर्च की जा रही है। दो तीन वर्षो में विभिन्न अवसरों पर घोषणा कर इन योजनाओं में वृद्धि की गई है लेकिन इनका प्रभाव किस अनुपात में किस दर से किस रूप में हो रहा है। इसके वास्तविक सही-सही और प्रामाणिक तथ्य किसी के पास आज तक उपलब्ध नहीं हैं इसके बाद भी कुछ पुरानी योजनाओं के स्थान पर नई-नई तथा नए-नए क्षेत्रों और वर्गो के लिए लुभावने नामो वाली नई-नई योजनाओं की भरमार-सी होती जा रही है वर्तमान मे देश मे गरीबी की प्रगाढ़ता को कम करने के लिए रोजगार के अवसर बढ़ाने, कमजोर और वंचित वर्गो के कल्याणकारी और सुरक्षात्मक उपाय सुनिश्चित करने गांवों तथा शहरो की मलिन बस्तियों में मौलिक एवं रचनात्मक अवसर/सुविधाएं उपलब्ध कराने के लिए सचालित प्रमुख कार्यक्रमों और योजनाओं की सख्या सैकड़ों में हो गई है।

महिलाओं को विशेष सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने एवं उनके सशक्तिकरण के अहम् उद्देश्यो को लेकर कार्यक्रम योजनाओं को सचालित किया गया। जिनमे राष्ट्रीय मातृत्व लाभ योजना 1995, बालिका समृद्धि योजना 1997, प्रजनन एवं बाल स्वास्थ्य कार्यक्रम 1997, शहरी क्षेत्रो हेतु महिलाओं और बच्चो का विकास कार्यक्रम 1997, महिला स्वशक्ति योजना 1998 आदि उल्लेखनीय है।

जुलाई 2001 में महिलाओ के सशक्तिकरण हेतु दो विशेष योजनाएं-- महिला स्वाधार योजना एवं महिला स्वय सिद्ध योजना के नाम से संचालित किए जाने का निर्णय लिया गया है। 15 अगस्त, 2001 को लालकिले की प्राचीर से जनता को सम्बोधित करते हुए प्रधानमंत्री द्वारा महिला उद्यमियों हेतु ऋण योजना को संचालित करने की घोषणा की

किशोरी शक्ति योजना-- समन्वित बाल विकास योजना के अन्तर्गत किशोरी बालिकाओ के लिए विशेष रूप से स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा और प्रशिक्षण की व्यवस्था सुनिश्चित करने हेतु किशोरी शक्ति योजना को देश भर के 507 खंडों मे लागू किया गया है तथा अवशेष विकास खडो में भी अति शीघ्र लागू करने की कोशिश की जा रही है। यह योजना ऐसे परिवारो की बालिकाओ के लिए है, जिनकी वार्षिक आमदनी 5,400 रुपए तक है, इस योजना के अन्तर्गत लाभान्वित होने वाली गरीब परिवार की बालिकाओं के उचित लालन-पालन, स्वास्थ्य और शिक्षित होने की सम्भावनाएं तथा समाज में लड़के,

	योजना का नाम	योजना का प्रमुख लक्ष्य	अन्य विवरण
1	किशोरी शक्ति योजना	चिहिन्त किशोरियो को पोषाहार देने के साथ-साथ स्वास्थ्य शिक्षा एवं व्यवसाय प्रशिक्षण प्रदान करना	आई.सी डी एस. 111 के कार्यक्रम के अन्तर्गत सचालित नई योजना।
2.	महिला स्वाधार योजना	स्वयं सहायता समूहो के गठन के माध्यम से महिलाओं का आर्थिक, सामाजिक सशक्तिकरण।	दोनो योजनाओ की घोषाणा जुलाई 2001 में मानव ससाधन विकास मंत्री द्वारा की गई।
3.	महिला स्वयं सिद्ध योजना	महिलाओं को स्वरोजगार के माध्यम से आर्थिक स्वावलम्बन प्रदान करना।	पूर्व से सचालित इन्दिरा महिला योजना तथा महिला समृद्धि योजना के स्थान पर महिला स्वयं सिद्ध योजना सचालित की जा रही है।
4.	राष्ट्रीय पोषाहार मिशन योजना	गरीबी की रेखा से नीचे जीवन-यापन करने वाले परिवारो, गर्भवती महिलाओं, धात्री माताओं, किशोरियों को सस्ती दरों पर अनाज उपलब्ध कराना।	इस योजना की घोषणा प्रधानमंत्री द्वारा 15 अगस्त, 2001 को की गई।
5.	महिला उद्यमियो हेतु ऋण योजना	महिला उद्यमियों को अगले तीन वर्षो तक सार्वजनिक बैंकों द्वारा कुल ऋण राशि का पांच प्रतिशत भाग ऋण के रूप मे उपलब्ध कराना।	उपरोक्त

लड़की के बरते जाते भेदभाव और समाजिक विषमता मे कमी लाने की सम्भावनाएं व्यक्त की गई हैं– इस योजना को दो भागो में बाटकर चलाया जा रहा है पहली योजना गर्ल्स टू गर्ल्स अप्रोच तथा दूसरी योजना को बालिका मडल योजना का नाम दिया गया है। पहली योजना 11 से 15 वर्ष आयु-वर्ग की किशोरियों के लिए तथा दूसरे वर्ग की किशोरियों को व्यवसायिक प्रशिक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की गई है।

महिला स्वयं सिद्ध योजना– महिला सशक्तिकरण वर्ष 2001 में इस योजना की घोषणा केन्द्रीय मानव ससाधन विकास मंत्री द्वारा 12 जुलाई, 2001 को केन्द्रीय परामर्श समिति की बैठक में की गई। महिला स्वयं सिद्ध योजना को पूर्व से संचालित इंदिरा महिला योजना और महिला समृद्धि योजना के स्थान पर संचालित किए जाने का निर्णय लिया गया है क्योंकि ये दोनो योजनाएं कुछ निहित कमियों के कारण अपेक्षित परिणाम नही दे पाई है। नई योजनाओं को महिलाओ के स्वयं सहायता समूहों के गठन के माध्यम से सचालित किया जाना है इस योजना का

प्रमुख उद्देश्य महिलाओ का सामाजिक, आर्थिक सशक्तिकरण करना है। इस योजना को चरणबद्ध ढग से पूरे देश में लागू किया गया। प्रारम्भ में प्रथम चरण मे देश के 650 विकास खंडों मे इसे 116 करोड़ रुपए व्यय करते हुए संचालित करने का निर्णय लिया गया है। इस योजना के अंतर्गत 9 80 लाख महिलाओ को लाभान्वित किया जा सकेगा।

महिला स्वाधार योजना– महिलाओ को आर्थिक रूप से स्वावलम्बन प्रदान करने के लिए इस योजना की घोषणा केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्री द्वारा 12 जुलाई, 2001 को की गई। योजना के अन्तर्गत निराश्रित, परित्यक्ता, विधवा तथा प्रवासी महिलाओ को वरीयता दिए जाने वाली बात कही गई है। इस योजना को पूरे देश में कई चरणो मे संचालित किया जाना है। योजना को त्रिस्तरीय पंचायतों के माध्यम से चला जाएगा। केन्द्र और राज्य सरकारो के माध्यम से सम्मलित संसाधनो से इस योजना को सचालित किए जाने का निर्णय लिया गया है।

महिला उद्यमियों द्वारा ऋण– यह योजना प्रधानमत्री द्वारा 15 अगस्त, 2001 को घोषित की गई। महिला सशक्तिकरण वर्ष के अन्तर्गत महिला उद्यमियो को सार्वजनिक बैको द्वारा अधिक मात्रा में बैक ऋण आसान शर्तो पर उपलब्ध कराने के लिए योजना का सचालन किया जा रहा है। योजना के अंतर्गत सार्वजनिक बैक अगले तीन वर्षो तक अपनी कुल ऋण राशि का 5 प्रतिशत भाग महिला उद्यमियो को आवश्यक रूप से प्रदान करेंगे। इस योजना के माध्यम से महिला उद्यमियो को 17 हजार करोड़ रुपए ऋण मुहैया कराया जाएगा। इस योजना के सचालित होने से महिला उद्यमियो को विशेष प्रोत्साहन मिल सकेगा। ❑❑

8, मॉडल टाउन वैस्ट
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश

कक्षा एक के नवनामांकित छात्रों का विशेष शिक्षण

❏ जलील अहमद इसलाही

प्राथमिक विद्यालय में नवनामांकित छात्र अपना रंगीन संसार छोड़कर एक अजनबी दुनिया में प्रवेश करते है। 5-6 वर्ष के अबोध बालको को विद्यालय के अनुशासनात्मक वातावरण मे यदि अपने छूटे ससार का प्रतिबिम्ब नजर नही आएगा तो उसे विद्यालय के कैदखाना और अध्यापक-अध्यापिकाएं क्रूर दरोगा या चौकीदार मात्र ही नजर आएगे। छात्र प्यारी मां की ममता, पिता का लगाव, भाई-बहनो की हमदर्दी, मासूम दोस्तो का स्नेह, खानदान का प्यार और समुदाय का दुलार लिए विद्यालय मे आता है। इतनी रंगीन दुनिया के बाद यदि विद्यालय मे प्रवेश के साथ ही अनुशासन की बदिशे, नैतिकता का शुष्क पाठ या आध्यात्मिकता का गाढा ज्ञान परोस दिया जाए तो बच्चों का मन इस अटपटे ससार से ऊबने लगेगा परिणामतः विद्यालयी जीवन नीरसता, सकुचितता तथा निष्क्रियता की भेट चढ जाएगा। ऐसी स्थिति मे स्वाभाविक है अधिगम प्रक्रिया बाधित होगी। इन परिस्थितियो में अध्यापको को अधिक सजगता के साथ अपने कर्तव्य का निर्वाह करना चाहिए उन्हे स्कूल बन्द होने के अन्तिम सप्ताह मे स्कूल के आसपास की बस्तियो का भ्रमण कर ऐसे बालक तथा बालिकाओं की सूची तैयार करनी चाहिए जिनका अगले शैक्षिक सत्र मे प्रवेश होना है। छुटियों के बाद जब स्कूल खुले तो प्रथम दिवस ही उस सूची के अनुसार अभिभावको से सम्पर्क करके एक-दो दिन मे सभी बच्चों का नामांकन कर कक्षा एक का निर्माण करना चाहिए। नामाकन के समय अध्यापक का नैतिक कर्तव्य है कि वे बच्चों का सही नाम पंजीकृत करें। किसान, मजदूर विद्यालय में घरेलू लाड़-प्यार के

छात्रों को बीच में कोई हास्य कविता, कहानी तथा चुटकुला सुना देना उनके मानसिक बोझ को कम करता है और अधिगम हेतु उनमें नई स्फूर्ति का सृजन करता है। कहानी, कविता, चुटकुले तथा किस्सों को सुनाने के लिए छात्रों को प्रेरित करें, उनका उत्साहवर्द्धन करें। जब छात्र कुछ सुना रहें हों कक्षा में पूर्ण अनुशासन का होना बहुत जरूरी है। अध्यापक पूरे मन से छात्र को सुनें और बीच-बीच में प्रशंसात्मक शब्दों का प्रयोग करें जैसे वाह, क्या कहने, बहुल बढ़िया, बहुत अच्छे, बहुत खूब, क्या बात है आदि शब्दों से छात्रों में कई कौशलों का विकास होगा।

नामों को दर्ज करा देते हैं जो बडे होने पर बच्चे के लिए शर्मिन्दगी का कारण बनते है। इस अवसर पर अध्यापक धर्म के अनुसार अर्थपूर्ण अच्छे नाम लिखे अध्यापक अभिभावकों को समझाएं कि कलुआ, गुड्डी, मुन्ना, मुन्नी, लाडो, मौजी, भैयाजी, भूरी, गुलाबी जैसे आदि नामो का कोई अर्थ नही है। अत· उनका नाम बदलकर अर्थपूर्ण कर दिया है उन्हें इसकी उपयोगिता बताएं। छात्रो का आपस मे परिचय कराएं तथा विद्यालयी नाम से सभी छात्रो को अवगत कराए और इसे ही पुकारने व सम्बोधन का आधार मानें। इस समय अध्यापक को भी छात्रो को अपना पूरा नाम बताना चाहिए। विद्यालय के बहुत से छात्रों को उनका नाम मालूम नही रहता और वे पाल साहव, शर्मा जी, वर्मा जी, मिश्रा जी, यादव जी, खा साहब आदि उपनामों से पुकारते हैं। ऐसा भी देखा गया है कि छात्र अध्यापको को विक्की वाले, स्कूटर वाले, धोती वाले, पतले मास्टर, लम्बे मास्टर, मोटे मास्टर, चश्मे वाले, गंजे मास्टर, काली बहनजी, छाते वाली बहनजी, ठिगनी बहनजी आदि नामो से पुकारते है। अतः नामांकन के समय इन तमाम आशकाओं को ध्यान मे रखकर ही सही परिचय कराएं। उसकी जाच भी कर लें। परिचय के समय छात्रों के मां-बाप, उनके व्यवसाय,

घर के अन्य सदस्यों का परिचय, पालतू जानवर तथा पक्षियों के बारे मे बातचीत करे। हमे ध्यान रखना चाहिए कि उनके परिवार अथवा पिता के व्यवसाय आदि पर व्यंग्यात्मक तथा हास्यास्पद ठिप्पणी कदापि न होने दे बल्कि उनकी मेहनत, लगन, समाजसेवा, ईनामदारी तथा राष्ट्र निर्माण में उनके योगदान को सराहे और सम्मानजनक शब्दो का प्रयोग कर छात्रों में छोटे व्यवसायो के प्रति सम्मान स्थापित करे।

छात्रों से परिचय गतिविधि करवाए सभी बच्चों को गोल घेरे मे खडा कर लें तथा क्रमवार उनसे उनका नाम बुलन्द आवाज में बोलने को कहें। फिर छात्रों को दाया-बायां का ज्ञान कराते हुए अपने दाहिने व बाए साथी का नाम याद करने को कहे। अब अध्यापक घेरे मे किसी भी छात्र से यदि दाहिना कहेगा तो उस छात्र को अपने दाहिने तरफ खडे साथी का नाम बताना होगा यदि बायां कहेगा तो बाई ओर की तरफ खडे साथी का नाम बताना होगा। बाद में इसे दो-दो, तीन-तीन साथियों के नाभ याद करके खेला जा सकता है।

अध्यापक छात्रो को ऐसी कहानी या कविताएं सुनाए जिसमे अध्यापक के साथ छात्रों की पूरी-पूरी भागीदारी हो। उदाहरणार्थ 'मुर्गी और चूजे की कहानी' को सुनाया जा सकता है। कहानी शुरू करने से पहले छात्रो को बता दें कि आज हम तुम्हें जो कहानी सुनाने जा रहे हैं यह एक मुर्गी व उसके बच्चे (चूजे) की है इस कहानी मे जब भी 'चूजा बोला' शब्द आएगा तो सभी बच्चे एक साथ एक आवाज में बोलेंगे-'तू ही मेरी मां'। छात्रो को सही प्रकार बैठाकर अध्यापक कहानी शुरू करे। एक मुर्गी थी उसका एक प्यारा बच्चा था। मुर्गी के बच्चे को चूजा कहते हैं। मुर्गी अपने प्यारे चूजे के साथ दरबे में रहती थी। मुर्गी रोज जंगल जाती और अपने चूजे के लिए जंगल से छोटे-छोटे दाने चुनकर लाती और चूजे को चूगाती थी। एक दिन जब वह दाने चुनने जंगल गई और समय से घर नही लौटी तो चूजा परेशान हो गया। भूख के कारण उसे बेचैनी होने लगी और वह अपनी मां की तलाश मे दरबे से निकल पड़ा। रास्ते मे उसे एक गाय मिली। चूजा बोला– सारे बच्चे एक साथ बुलन्द आवाज में कहेगे, 'तू ही मेरी मां'। अध्यापक– ना ना ना। मैं तेरी मा नही हू, मै तो गाय हूं गाय। मेरा शरीर कितना बड़ा है तेरी मां मुर्गी का शरीर तो बहुत छोटा होता है। मेरे दो सींग है तेरी मां के तो सीग नही होते। मेरे दो बडे कान हैं तेरी मा के तो कान नही होते है। मेरी चार लम्बी टागे हैं तेरी मां के तो केवल दो पजे ही होते हैं। मेरा एक मुह है। तेरी मां के तो चोच होती है। मैं घास, भूसा, चारा खाती हूं। तेरी मां तो दाना चुगती है। मै दूध देती हू तेरी मां अण्डे देती है। मैं तेरी मां नही हू।

चूजा आगे चल दिया। चलते-चलते उसे एक बकरी मिली। चूजा बोला, "सारे बच्चे एक साथ बुलन्द आवाज में कहेगे "तू ही मेरी मां"। अध्यापक– ना ना ना। मै तेरी मा नही हू मै तो बकरी हूं बकरी। अध्यापक बकरी और मुर्गी के शरीर की बनावट, खान-पान, स्वभाव आदि में अन्तर बताएगा और कहानी को आगे बढाएगा। इसी क्रम में अध्यापक कुत्ता, बिल्ली, भैंस, तोता, कौआ, घोडा, हाथी, मछली, मेढक तथा अन्य जन्तुओ को सम्मिलित कर सकता है। कहानी मे आए हुए जानवरों के नाम उनके शरीर के अंग, खानपान आदि के बारे मे बच्चों से पूछें। छात्रो से थलचर तथा जलचर की मौखिक सूची बनवाई जा सकती है। इस कहानी को पाच दिन तक बढाया जा सकता है। बच्चों से एक गतिविधि कराए सब बच्चो को गोल घेरे में खड़ा कर लें उन्हे बताएं कि जब तुमसे ऊपर कहा जाए तो अपने दोनो हाथ ऊपर उठाएंगे। नीचे कहने पर नीचे की ओर अर्थात् जाघ से लगाकर, आगे कहने पर दोनो हाथ कंधों तक आगे की ओर तथा पीछे कहने पर कंधे से कमर के पीछे की ओर ले जाएं। इसी क्रम मे इसी से मिलती-जुलती दूसरी गतिविधि कराएं। बच्चे इसी प्रकार गोले में खड़े रहेगें और अपने दोनो हाथों को कमर पर रख लेंगे। अध्यापक कहेगा फैलो तो सभी छात्र अपनी जगह से ऊपर उछलकर अपने पैरों को लगभग सवा फीट फैला लेंगे जब अध्यापक कहेगा सिकुड़ो तो सभी बालक ऊपर उछलकर दोनों पैरो को फिर से आपस में मिला लेंगे। इस गतिविधि को 15 से 20 मिनट के अन्दर पूर्ण करवा

ले। इन गतिविधियों के उपरान्त बच्चो को कुछ थकावट का अनुभव हो सकता है। अत' सभी बच्चो को पालती मार कर गोल घेरे में बैठा ले और कुछ इधर-उधर की मजेदार हसी मजाक से परिपूर्ण बाते करे।

छात्रो को बीच मे कोई हास्य कविता, कहानी तथा चुटकुला सुना देना उनके मानसिक बोझ को कम करता है और अधिगम हेतु उनमे नई स्फूर्ति का सृजन करता है। कहानी, कविता, चुटकुले तथा किस्सो को सुनाने के लिए छात्रो को प्रेरित करें उनका उत्साहवर्द्धन करें। जब छात्र कुछ सुना रहे हों कक्षा मे पूर्ण अनुशासन का होना बहुत जरूरी है। अध्यापक पूरे मन से छात्र को सुने और बीच-बीच मे प्रशंसात्मक शब्दो का प्रयोग करें जैसे वाह, क्या कहने, बहुत बढिया, बहुत अच्छे, बहुत खूब, क्या बात है आदि शब्दों से छात्रों में कई कौशलो का विकास होगा और सबसे अच्छा वे बेझिझक होकर अभिव्यक्ति का हुनर सीखेंगे। यदि छात्र प्रदर्शन के समय कुछ भूल जाए तो उनकी कविता कहानी को आगे बढ़ाने हेतु सहयोग दीजिए।

छात्रो मे अच्छे संस्कार पैदा करने हेतु नैतिकता के भाषण देने से अच्छा है कि गतिविधि द्वारा उनमें अच्छी आदतों को विकसित किया जाए। एक गतिविधि जिसमें सभी बच्चो को घेरे मे बैठा ले। अध्यापक उचित लय तथा अभिनय के साथ गतिविधि शुरू करेगा तथा छात्रो से उसी अंदाज में दोहराने को कहेगा। कविता की प्रथम पंक्तियों में दाहिने हाथ को ऊपर उठाना है–

भैया दीदी मा पिताजी
भोर भयो रे भोर भयो रे
आंखें मलो रे आंखें मलो रे
भैया दीदी मा पिताजी
आंखें मलो रे आंखें मलो रे
भैया दीदी मां पिताजी भोर भयो रे
मुहं धोलो रे मुंह धोलो रे
भैया दीदी मा पिताजी
मुंह धोलो रे मुंह धोलो रे
भैया दीदी मां पिताजी भोर भयो रे
दांत मांझो रे दांत मांझो रे
भैया दीदी मा पिताजी,
दात मांझो रे, दात माझो रे
भैया दीदी मां पिताजी भोर भयो रे।

जीभ रगड़ो रे, तालू रगड़ो रे, कसरत करलो रे, दूध पीलो रे, स्नान कर लो रे, साबुन मलो रे, बदन रगडो रे, पाठ पढ़ो रे, हाथ धोलो रे, खाना खालो रे, बस्ता ले लो रे, स्कूल चलो रे, प्रणाम करो रे, नाखून काटो रे आदि स्लोगन से गतिविधि को बढा सकते है। अध्यापक इनके अतिरिक्त अन्य दैनिक क्रियाकलापो को शामिल कर सकते हैं। इस गतिविधि को चार पाच दिनो मे पूरा कर लें।

बच्चो के पूर्व ज्ञान पर आधारित कविता के रूप मे उचित लय के साथ कुछ पहेलियां पूछी जाए जैसे–

1. अध्यापक– काला काला होता हूं
कांव-काव करता हू
कौन हू कौन हू कौन हू रे
छात्र– कौवा हू, कौवा हू, कौवा हू रे
2. अध्यापक– चूहे का मास खाती हूं
म्याउ-म्याउ करती हू
कौन हूं कौन हूं कौन हू रे
छात्र– बिल्ली हूं, बिल्ली हूं, बिल्ली हूं रे

पहेली के इस क्रम मे मुर्गा, बकरी, गाय, कुत्ता, घोडा, बत्तख, मछली, मेढक, साइकिल, मोटर तथा परिवेश के अन्य पशु-पक्षी तथा वस्तुओं को शामिल कीजिए। यह गतिविधि भी चार-पाच दिनो में पूरी करवा ली जाए।

अब तक छात्र अध्यापक के बहुत निकट आ चुके होगे और अध्यापक उनका विश्वास जीत चुके होगे। ऐसी स्थिति में अध्यापक छात्रो से फिर कहानी, कविता तथा अन्य दिलचस्पी के प्रसंग सुन सकता है। अध्यापक छात्रों के उत्साहवर्द्धन हेतु तालिया बजवाए अभिनय के साथ प्रदर्शन करने वाले अथवा नाचने वाले छात्रों को विशेषकर प्रोत्साहित किया जाए। अध्यापक दाएं-बाएं वाली गतिविधि करवाएं छात्रों को गोल घेरे मे बैठा ले। अध्यापक जब कहें दायां तो सभी छात्र अपना दायां हाथ उपर उठाएंगे। जब अध्यापक कहे बायां तो सभी छात्र अपना बायां हाथ उपर उठाएंगे। छात्रों से परवेश मे पाए जाने वाले

पशु-पक्षियो के विषय में दो-दो वाक्य बुलवाएं। इन वाक्यों की संख्या बढ़ाई भी जा सकती है। छात्रों की त्रुटियों का निवारण कुछ इस अंदाज से किया जाए कि छात्र इसे वेवजह हस्तक्षेप न समझने लगे। छात्रों को स्वागत ताली, स्काउट ताली तथा चुटकी ताली बजाने का खूब अभ्यास कराए। इन तालियों को दो दिन मे पूरा करा सकते हैं।

सभी छात्रों को गोल घेरे में बैठाएं यदि फर्श कच्चा है तो उगली से और यदि पक्का है तो चाक से गोले ◯ बनाने को कहे। उन्हें दायीं तथा बायीं ओर से गोले बनाने को कहे जिन छात्रों के गोले का आकार सही न हो तो अध्यापक सुडोल आकृति हेतु उन्हें सहयोग करे छात्रो को अभ्यास द्वारा पारंगत करें। छात्रों को दो गोले, तीन गोले, चार गोले आदि बनवाकर गिनतियों का अनौपचारिक ज्ञान दें। उन्हें इस प्रकार भी अभ्यास कार्य करवाएं–

जोड़कर बताओ कितने गोले–

छात्र कहेंगे तीन गोले। अध्यापक उन्हे बताए कि इसे इस प्रकार से कहा जा सकता है।
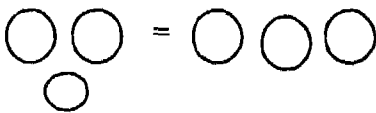
इस प्रकार के और अभ्यास बनाओ। अध्यापक श्यामपट पर गोले का रेखाचित्र बनाए और उसे आधा मिटा का साफ कर दे अर्थात्

चांद या चूल्हे जैसी इस आकृति के बारे में छात्रों से चर्चा करे। इसे चूल्ही का नाम दें अब बाईं व दाई चूल्हियों का अभ्यास कराएं। जैसे दो बायी चूल्ही)) दो दायीं चूल्ही ((इसके बाद ऊपर U और नीचे ∩ वाली चूल्हियों का अभ्यास कराएं। इनके अभ्यास में चार दिन लगाए। अध्यापक पूर्ण सतुष्ट और सुनिश्चित हो लें कि छात्र चूल्हियों के आकार को भली-भाति समझ गए हैं और अब कोई भी गलती नही कर रहे हैं।

अब छात्रों को पड़ी लकीर — तथा खड़ी। का अभ्यास कराए इसके बाद कट्टा + तथा तिरछा कट्टा X बनवाएं। छात्रो को इन्हे धन अथवा गुणा के निशान न बताए अभी ये उनकी अधिगम क्षमता के ऊंचे है। अभी तक की सभी आकृतियों का इमला बोलें। श्यामपट पर अभ्यास कार्य इस प्रकार कराया जा सकता है–

आकृतियों को गिनो और उनके जोड को खड़ी लकीरो से प्रदर्शित करो

0000
+++ = |||||||

आकृतियों के अभ्यास मे छात्रो की सक्रियता तथा अधिगम प्रक्रिया पर सूक्ष्म दृष्टि रखनी होगी। इस हेतु आप आठ या दस दिन ले सकते हैं। अभ्यास कार्य पूर्ण हो। कोई भी छात्र-छात्रा इन आकृतियों के बारे में आशंकित न हों बल्कि कार्य के प्रति उत्साहित तथा लालायित हों और उनसे त्रुटियां शून्य मात्र ही रह जाएं। छात्रो को अब यही अभ्यास लकडी की टेहनी, पेंसिल या कलम से करवाया जाएं यदि छात्रों की कलम की पकड़ मे त्रुटि है तो अध्यापक उनका हाथ पकड़कर अभ्यास कराएं क्योंकि ये छात्रों के भविष्य की आधार-शिला है। इसे समझते हुए इसे मजबूती प्रदान करें, खूब अभ्यास करवाए तथा मूल्यांकन करके उन्हे उपचारात्मक शिक्षा प्रदान करें।

एक माह के इस विशेष शिक्षण मे अध्यापक की भूमिका बड़ी अहम् है उसे एक कुशल नट की भांति रस्सी पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक बडी कामयाबी के साथ पहुंचना होता है जिसके मन-मस्तिष्क में सदैव 'सावधानी हटी दुर्घटना घटी' वाली कहावत अकित रहती है। उसे अबोध छात्रों की गलतियों पर झुंझलाहट नही

होनी चाहिए और न ही किसी बात पर गुस्सा आना चाहिए वरन् उसे एक नर्स की तरह धैर्य के साथ बडे प्यार से उनकी गलतियों का उपचार करना चाहिए और छात्रो के सिरों पर शराफत का हाथ फेरकर उनका हौसला बढाना चाहिए। यदि हमने जिम्मेदारी के साथ यह मजबूत आधार बना दिया तो छात्र सभी विषयों को आसानी से सीख सकेगे। उनका न्यूनतम अधिगम स्तर ऊचा उठेगा और बच्चा वास्तव में विद्यार्थी बनकर शिक्षा के दुर्गम पथ पर सुगमता से आगे बढ सकेंगे। ये सारे कार्य निश्चित समयावधि मे पूरे होने है। इसलिए इन्हें योजना अनुसार क्रियान्वित करे, योजना में पारदर्शिता तथा लचीलापन हो ताकि आकस्मिक समय में दूसरे अध्यापको का भी सहयोग लिया जा सके। यह कार्य उन्हीं अध्यापकों के लिए सरल है जो आशावादी दृष्टिकोण के साथ अपनी तमाम प्रतिभा की इस यज्ञ मे आहुति देगे वरना निराशावादियों के लिए एक पहाड़ है। ❑❑

ब्लाक संसाधन केन्द्र

बसरेहर, इटावा

उत्तर प्रदेश

श्रीनिवास रामानुजन – एक अद्वितीय गणितज्ञ

❑ कालिका चमोला

रामानुजन की सोच-विचार की दुनिया यद्यपि गणित के इर्द-गिर्द ही केन्द्रित थी परन्तु स्कूली शिक्षा ग्रहण करने तक वह अन्य आवश्यक समझे जाने वाले विषयों के प्रति भी ध्यान देते रहते। 1897 में उन्होंने अपनी प्राथमिक परीक्षा पास कर सम्पूर्ण जिले में प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा उसके पश्चात् टाउन हाईस्कूल से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की जिसके परिणामस्वरूप उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की गई तथा 1904 में उन्होंने कुम्भाकोनम गवर्नमेन्ट कालेज में प्रवेश लिया परन्तु जैसे-जैसे समय बीतता गया, रामानुजन अपना सम्पूर्ण समय गणित पर ही केन्द्रित करने लग गए। गणित में उनकी रुचि जितनी बढ़ती रही अन्य विषयों को वे उतना ही कम पढ़ने लगे।

श्रीनिवास रामानुजन का जन्म 22 दिसम्बर, 1887 को मद्रास प्रेसिडेन्सी क्षेत्र (अब तमिलनाडु) के एक छोटे-से कस्बे ईरोड नामक स्थान में हुआ था। उनके पिता एक कपड़ा व्यापारी के साथ सामान्य क्लर्क थे। परिवार की आर्थिक स्थिति ठीक न होने के कारण उन्हें विषम परिस्थितियो का सामना करना पड़ता था। रामानुजन की बौद्धिक क्षमताएं यद्यपि अद्भुत थीं परन्तु शरीर से वह बहुत ही दुर्बल थे। बाल्यकाल से ही रामानुजन की रुचि उन सभी चीजों को देखने-परखने में रहती जिनका सम्बन्ध किसी न किसी रूप से गणित से होता। तमिलनाडु के पारम्परिक रीति-रिवाजो के अनुरूप उत्सव-त्यौहारो के अवसर पर मकानो के इर्द-गिर्द सभी रंगोलियो की तरफ उनका ध्यान स्वत· ही आकर्षित हो जाता और वह उनके विभिन्न रूपो, आकारो में विभिन्न ज्यामितीय सरचनाओं को देखने की कोशिश करते। बालक रामानुजन की इन असामान्य गतिविधियों के कारण परिवार वाले उनके बारे में तरह-तरह की धारणाएं बनाते परन्तु उनकी निश्छल, खोजी दृष्टि इन बातो से विचलित नहीं होती, कई बार तो रामानुजन भोजन के समय पत्तलों आदि पर फैले चावल एवं अन्य खाद्य पदार्थो के भी विशिष्ट आकार की ज्यामितीय व्याख्या करने में जुट जाते।

स्कूल में शिक्षक रामानुजन की गणित के प्रति रुचि तथा कठिन से कठिन सवालों को भी कम समय में समझने एवं हल करने की क्षमता को देखकर अत्यन्त प्रभावित हो जाते और समय-समय पर पूरी कक्षा के सामने प्रशंसा भी करते परन्तु कतिपय मौकों पर रामानुजन के गणितीय प्रश्नों का जबाब न देने के कारण संकोच में भी आ जाते। रामानुजन प्राय· अपने शिक्षकों द्वारा पढ़ाए जाने वाले सिद्धांतों, प्रमेयों से भी गुरुत्तर कई अन्य सवालो को कई तरह हल कर देते तथा अनेक प्रश्नों का सूक्ष्म विश्लेशण कर अपने शिक्षकों से भी नए-नए प्रश्न पूछते। जिन्हें सुनकर शिक्षक आश्चर्यचकित रह जाते। ऐसा ही एक प्रश्न जब रामानुजन ने अपने गणित के शिक्षक से पूछा कि यदि किसी संख्या को शून्य से भाग किया जाए और शून्य को शून्य से ही भाग किया जाए तो क्या प्राप्त होगा? तब शिक्षक पल भर के लिए तो निरुत्तर से हो गए लेकिन कुछ समय बाद सोच-विचार कर जो उत्तर शिक्षक ने दिया उसे न तो सही ही कहा जा सकता और न ही गलत। शिक्षक ने इस सवाल का जबाब बताते हुए कहा कि इन दोनों का मान वास्तव मे न तो शून्य ही होगा और न ही एक। शिक्षक सही मान बताने में असमर्थ रहे, ऐसी स्थिति देखकर कक्षा के अन्य विद्यार्थी अचम्भित से हो गए एवं रामानुजन के प्रश्न पर सोचने को मजबूर हो गए। इसी बीच रामानुजन ने अपने सभी

साथियो को बताया कि यदि हम किसी संख्या को बहुत ही छोटी अर्थात् एक के भी कई अश छोटी सख्या से विभाजित करें तो भागफल उसी सख्या के अनुपात मे उतना ही बड़ा हो जाएगा और यदि हम इसी ढंग से भाजक को सूक्ष्म से सूक्ष्म करते जाए तो भागफल का मान उसी के अनुरूप वड़े से बडा होता जाएगा और भाजक को कम करने की इस प्रक्रिया मे यदि हम शून्य तक पहुच जाएं तो उस स्थिति मे भागफल का मान इतना वड़ा हो जाएगा कि उसे प्रतीकात्मक रूप से अनन्त या इन्फिनिटी भी कहा जा सकता है। इसलिए कई विद्वान रामानुजन को उस गणितज्ञ की सज्ञा भी देते है जिसे अनन्त के बारे में सही जानकरी थी यथा "रामानुजन ऐ मेन हू-न्यू इन्फिनिटी"।

रामानुजन की उम्र के अन्य बच्चे यद्यपि गली-सडको, खेतो, खलिहानो मे खेलते रहते परन्तु रामानुजन का शौक सिर्फ गणितीय प्रश्नों, सख्याओ से खेलने का ही था, वह कई नए सवालों को बनाते उनका हल ढूंढते, रामानुजन की इस तरह गणित के प्रश्नो को ढूढ़ने एव हल करने की क्षमता अपने समवयस्क बच्चों की अपेक्षा कई गुना अधिक थी, वह अपने से बड़ी कक्षाओ मे पढ़ने वाले कई विद्यार्थियों के कठिन से कठिन गणितीय प्रश्नों को भी हल कर देते और उनकी उन प्रश्नों को समझने एवं हल करने में सहायता भी करते। रामानुजन जब स्कूल मे ही थे उन्होने तब ही शुद्ध एवं व्यावहारिक गणित से सम्बन्धित जार्जकार की पुस्तक का सांगोपांग अध्ययन कर लिया था, इस पुस्तक में बीजगणित, चलन कलन, त्रिकोणमिति एवं वैश्लेषिक ज्यामिति से सम्बन्धित लगभग पांच हजार सवाल संगृहीत किए गए थे, इन सवालो को रामानुजन कई तरह से हल करते और अपने परिणामो को भी सगृहीत करते जाते। सवालो के इस प्रकार हल ढूंढ़ने की प्रक्रिया में रामानुजन की अपनी कल्पनाएं भी उडान भरती रहतीं और वह नई से नई कई प्रमेयों का प्रतिपादन कर उनकी उपपत्ति भी ढूंढ़ निकालते।

रामानुजन की सोच विचार की दुनिया यद्यपि गणित के इर्द-गिर्द ही केन्द्रित थी परन्तु स्कूली शिक्षा ग्रहण करने तक वह अन्य आवश्यक समझे जाने वाले विषयों के प्रति भी ध्याान देते रहते। 1897 में उन्होने अपनी प्राथमिक परीक्षा पास कर सम्पूर्ण जिले में प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा उसके पश्चात् टाउन हाईस्कूल से मैट्रिक की परीक्षा प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण की जिसके परिणाम-स्वरूप उन्हें उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की गई तथा 1904 मे उन्होने कुम्भाकोनम गवर्नमेन्ट कालेज में प्रवेश लिया परन्तु जैसे-जैसे समय बीतता गया, रामानुजन अपना सम्पूर्ण समय गणित पर ही केन्द्रित करने लग गए, गणित में उनकी रुचि जितनी बढ़ती रही कि अन्य विषयो को वे उतना ही कम पढने लगे और एक समय ऐसा आया जब वे सिर्फ गणित के ही होकर रह गए और विश्वविद्यालय की परीक्षा मे अन्य विषयो मे कम अंक पाकर लगातार दो बार अनुत्तीर्ण हो गए। रामानुजन की परिक्षाओ में विफलता देखकर उनके पिता बहुत निराश हो गए, घर की आर्थिक तंगहाली के कारण उनके पास रामानुजन की पढाई बन्द करने के सिवाय कोई दूसरा रास्ता नहीं बचा था परन्तु रामानुजन उस स्थिति से निरन्तर जूझते हुए भी गणित में अपनी नैसर्गिक प्रतिभा को विकसित करने के लिए सतत् रूप से प्रयत्नशील रहे। कई बार तो रामानुजन के पास कागज खरीदने के लिए भी पैसे नही थे लेकिन फिर भी वे अपना धैर्य बनाए रखते। रामानुजन के पिता का मानना था कि हाईस्कूल सर्टिफिकेट के आधार पर रामानुजन को कोई छोटी नौकरी तो मिल ही जाएगी साथ ही उनका यह भी सोचना था कि रामानुजन का गणित के प्रति शौक सनक के स्तर तक पहुच गया है जिससे उसे बचाना आवश्यक है। अन्तत. कालेज से पढ़ाई छुड़वाकर रामानुजन की शादी भी कर डाली ताकि वह घर-गृहस्थी में उलझकर इस सनक को कम कर सके।

कालेज छोड़ने के पश्चात् रामानुजन जगह-जगह अपने लिए नौकरी ढूंढ़ने लगे, हाईस्कूल की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करने के बावजूद भी कोई उपयुक्त नौकरी उन्हे नहीं मिल सकी और मजबूरी मे उन्हे पच्चीस रुपए मासिक वेतन पर मद्रास पोर्ट ट्रस्ट में क्लर्की की नौकरी करनी पड़ी। नौकरी के साथ-साथ रामानुजन गणितीय सिद्धान्तों में भी जुटे रहते और समय-समय पर अपने

कालेज के शिक्षकों से भी सम्बन्ध बनाए रखते, शिक्षकगण रामानुजन की स्थिति देखकर अत्यन्त दु:खी हो जाते क्योंकि वे चाहते थे कि रामानुजन अपनी पढ़ाई पूरी करे तथा गणित के क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का समुचित उपयोग करे। शिक्षक अपने-अपने ढंग से उसकी स्थिति में परिवर्तन के लिए प्रयास भी करते और कोशिश करते कि यदि रामानुजन की आर्थिक स्थिति थोड़ी सुधर जाए तो वह अपना पूरा समय गणित पर केन्द्रित कर सकेंगे और इन्हीं प्रयासों के परिणामस्वरूप उच्च शिक्षा के अभाव मे भी रामानुजन को मद्रास विश्वविद्यालय से पचहत्तर रुपए मासिक की छात्रवृत्ति मिल गई तथा वे पुन: अपने गणितीय संसार में विचरण करने लग गए। यद्यपि रामानुजन का कार्य करने का ढग बहुत व्यवस्थित नहीं था और वह अपने किसी नए सिद्धात, प्रमेय, सूत्र से सम्बन्धित गणनाएं कहीं भी कर देते और फिर उसे सगृहीत करने की तरफ कोई ध्यान नही देते सिर्फ उन्हीं सिद्धान्तो, प्रमेयो, गणितीय तथ्यों को अपनी डायरी में नोट करते थे जिनके बारे में उन्हें पक्का विश्वास हो जाता कि ये गणितीय आधार पर सही हैं। इसी कारण आज भी रामानुजन द्वारा प्रतिपादित कई प्रमेय सिर्फ सिद्धान्त रूप मे ही मिलती हैं तथा उनके हल का पता नहीं चल पाता। वैसे रामानुजन कई गणितीय सवालों का हल ढूंढ़ने में भी उलझे रहे जिन्हें अन्य गणितज्ञ सिद्ध कर चुके थे परन्तु सूचनाओं के आदान-प्रदान की कमी के कारण वे उनसे अनभिज्ञ थे।

विश्वविद्यालय से छात्रवृत्ति पाकर रामानुजन ने अपना एक विस्तृत शोधपत्र तैयार किया जिसमें सौ के करीब नई प्रमेयों तथा कई नए सूत्रो को शामिल किया गया था और उसे कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय मे गणित के प्रोफेसर जी. एच. हार्डी को भेज दिया। प्रो. हार्डी रामानुजन का शोधपत्र पढ़कर बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने रामानुजन का नाम कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की छात्रवृत्ति के लिए अनुमोदित कर दिया ताकि वे इग्लैंड आकर अपना शोधकार्य आगे बढ़ा सकें। विश्वविद्यालय ने प्रो. हार्डी की सस्तुति स्वीकार कर ली। छात्रवृत्ति मिलने पर रामानुजन जलमार्ग से इंग्लैंड चले गए, यह यात्रा रामानुजन के लिए एक रोमाचकारी अनुभव के समान थी जहा एक ओर भारतीय परिवेश में पले-बढ़े रामानुजन के लिए अंग्रेजों के साथ रहने की चुनौती थी वही दूसरी ओर शाकाहारी होने के कारण उनके एवं अन्य परिवार गणों के मन में कई तरह की आशंकाएं भी थीं। अन्ततः रामानुजन को इस विश्वास के साथ इग्लैड भेजा गया कि वह न तो अग्रेजो के साथ एक ही कमरे में रहेगे और न ही उनके साथ भोजन करेगे। रामानुजन अपने ओढ़ने, बिछाने व खाना पकाने का सामान भारत से साथ ही ले गए परन्तु इंग्लैंड पहुंचकर वहां की ठंडी जलवायु के अनुरूप गर्म वस्त्रो की कमी से रामानुजन को प्रकृति की मार भी बहुत झेलनी पड़ी। तमाम परेशानियों के बाबजूद भी वह बड़े धैर्य एवं साहस से शोधकार्य मे जुटे रहे। प्रोफेसर हार्डी एवं डा. लिटिलहुड के निर्देशन मे उन्होंने कई शोधपत्र तैयार किए।

रामानुजन ने संख्याओं के सिद्धांत, बीजगणितीय समीकरणो, सतत् भिन्नो पर अद्वितीय कार्य किया। रामानुजन की इन विशिष्ट गणितीय प्रमेयो व बौद्धिक क्षमताओ को देखकर उनकी गणना कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय में एक महान गतिलज्ञ के रूप में होने लगी और उनके कार्यो की प्रशंसा में उन्हे उस समय का सबसे उत्कृष्ट सम्मान 'फैलो ऑफ रॉयल सोसाइटी' प्रदान किया गया जो हर एक भारतीय के लिए महान गर्व का विषय था, रायल सोसायटी का सदस्य चुने जाने के बाद रामानुजन की ख्याति विश्व के कौने-कौने तक फैलने लग गई और कुछ ही समय पश्चात् उन्हें ट्रिनिटी कालेज द्वारा भी फैलो के सम्मान से अलकृत किया गया।

इंग्लैंड के ठंडे मौसम तथा उन विषम परिस्थितियो मे भी भारतीय रहन-सहन, खान-पान के अधीन रहने से रामानुजन का स्वास्थ्य दिन-पतिदिन बिगड़ता चला गया और वह क्षय रोग के शिकार हो गए। रायल सोसाइटी का सदस्य चुने जाने के बाद रामानुजन आगे सिर्फ दो वर्ष तक ही वहां कार्य कर सके। प्रतिकूल परिस्थितियो एवं खराब स्वास्थ्य के बीच भी रामानुजन अपना कार्य करते रहे। प्रो. हार्डी एवं डा. लिटिलहुड रामानुजन के खराब स्वास्थ को देखकर बहुत दु:खी थे, वे उनकी हर

सम्भव सहायता करतें रहे, उन्होंने रामानुजन को इलाज के लिए वहां अस्पताल मे भी भर्ती करवाया परन्तु चिकित्सा विज्ञान में उस समय क्षय रोग का कोई कारगर इलाज न होने के कारण उनके स्वास्थ्य मे कोई सुधार नहीं हो सका, अस्पताल में भी रुग्ण अवस्था रामानुजन को उनके गणितीय संसार से विलग नही कर सकी और वह किसी न किसी प्रमेय, सिद्धांत के बारे में चिन्तन-मनन करते रहे, एक बार प्रो हार्डी जब रामानुजन का हालचाल पूछने अस्पताल आए तो उन्होने कहा मै जिस टैक्सी से अस्पताल आया उसकी संख्या 1729 बहुत ही अशुभ थी, रामानुजन ने तुरन्त ही उत्तर दिया नही प्रोफेसर साहब यह सख्या अशुभ नही बल्कि यह तो वह छोटी से छोटी सख्या है जिन्हें भिन्न-भिन्न पूर्णाकों के धन के जोड़ से दो तरह लिखा जा सकता है अर्थात्

$$1729 = 1^3 + 12^3 = 9^3 + 10^3$$

प्रोफेसर हार्डी के लिए वह समय दातो तले अगुली चबाने जैसा था।

रामानुजन का शरीर अब बहुत ही रुग्ण हो गया तो वह वापस भारत लौट आए और अप्रैल सन् 1920 मे विश्व के इस महान् अद्वितीय गणितज्ञ ने मात्र तैतीस वर्ष की अवस्था में अपनी आखिरी सांस ली, भारत के लिए यह एक अपूरणीय क्षति थी। रामानुजन ने भारत से तो विदा ले ली परन्तु तैतीस वर्ष के इस छोटे से जीवन मे ही उन्होंने गणितीय ससार को अपने द्वैद्वीप्यमान प्रकाश से आलोकित किया जिस कारण गणितीय आकाश मे वह सदैव प्रकाशपुज की तरह विद्यमान रहेगे। ❑❑

मकान नं. 31, रत्नम स्ट्रीट
आनंद नगर, पांडिचेरी

भिन्नात्मक संख्याएं

□ आर.के. मिगलानी

भेन्न शब्द का अर्थ व स्वरूप जानना छात्रों के लिए आवश्यक है। वास्तव मे भिन्न शब्द छात्रों के लिए व्यापक है। दैनिक जीवन में भिन्नों के द्वारा वस्तुओ, आकृतियों, चित्रों एवं क्रियाओं को बांटने या विभिन्न रूप से व्यक्त करने की जानकारी छात्रों को होनी चाहिए, यह कौशल अध्यापक ही छात्रों में विकसित कर सकता है। यह कौशल छात्रों में कैसे विकसित किया जाए? इसका प्रशिक्षण शिक्षकों को दिया जाना चाहिए। इस लेख के माध्यम से यह प्रयास किया गया है कि शिक्षक छात्रों को भिन्नात्मक संख्या एवं उसके प्रकार का ज्ञान व्यवस्थित रूप से कैसे दें। इस लेख को पढ़ने के पश्चात् शिक्षक निम्न व्यवहारगत उद्देश्यों की सम्प्राप्ति कर सकेगा।

व्यवहारगत उद्देश्य

- □ छात्रों मे स्थूल वस्तुओ, चित्रों, आकृतियों एवं क्रियाकलापो की सहायता से भिन्न की समझ विकसित हो जाती है।
- □ भिन्न का अर्थ व स्वरूप जानकर उसे परिभाषित कर लेता है।
- □ भिन्न को सरलतम रूप में परिवर्तित कर लेता है, यदि भिन्न सरलतम रूप में न हो।
- □ 100 से कम वस्तुओं की संख्या का किसी दी हुई भिन्न के अनुसार मान ज्ञात कर लेता है।
- □ भिन्नों के प्रकार उदाहरणों सहित बता देता है।
- □ छात्रों मे महांश भिन्न व मिश्र संख्यांक भिन्न की समझ विकसित हो जाती है।
- □ मिश्र भिन्न को महांश भिन्न मे व महांश भिन्न को मिश्र संख्यांक भिन्न में परिवर्तित कर लेता है।
- □ छोटी व बडी भिन्न मे भेद कर लेता है।
- □ समान हर वाली भिन्नों को आरोही व अवरोही क्रम में व्यवस्थित कर लेता है।
- □ असमान हर वाली भिन्नों को आरोही व अवरोही क्रम में व्यवस्थित कर लेता है।

भिन्नात्मक संख्याओं का प्रयोग दैनिक जीवन में प्राचीन काल से ही हो रहा है। इस बारे में छात्रों को केवल सीमित पुस्तकीय ज्ञान ही दिया जाता रहा है। जिससे भिन्न का ज्ञान व्यावहारिक नहीं बनाया जा सका। प्रस्तुत लेख में भिन्नात्मक संख्या एवं उसके प्रकार को दैनिक जीवन से जोड़कर स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है जिससे शिक्षक छात्रों को स्थायी ज्ञान देकर अपने उद्देश्यों की सम्प्राप्ति कर सकें। भिन्न सम्बन्धी प्रत्ययों को समझना शिक्षकों के लिए उपयोगी है।

भिन्न

यदि हम एक बच्चे से कहें कि घर मे चार रोटियों को चार ही भाई-बहनों में बांटकर कैसे खाएंगे तो वह बोलता है– एक-एक रोटी सभी को मिल जाएगी। यदि फिर कहें कि एक रोटी को दो भाई-बहनो मे बांटना है तो वह बोलता है– आधी-आधी, इसी प्रकार से एक रोटी
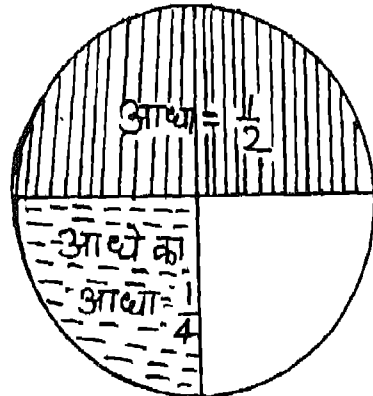
को चार भाई व बहनों में कैसे बांटेंगे वह बोलता है– आधी की आधी या एक चौथाई प्रत्येक को मिलेगी।

इस भाषा आधी या चौथाई को गणित में कैसे लिखते है? एक रोटी को दो हिस्सो मे बांटना तो एक-एक हिस्सा या आधे हिस्से को 'एक बट्टा दो' कहते हैं तथा इसे ½ लिखते हैं। इसी प्रकार आधी रोटी को दो हिस्सों मे पुनः बांटना हो तो आधी के आधे हिस्से को 'एक बट्टा चार' कहते हैं तथा इसे ¼ लिखते है।

- रस्सी या धागे या डोरी द्वारा मोड़कर 'आधा', 'चौथाई', 'एक आठवां' व 'एक सोलहवां' आदि बताया जा सकता है। इसी प्रकार से रस्सी या डोरी या धागे को काट-काट कर भिन्न के विभिन्न प्रत्ययो को समझाया जा सकता है।
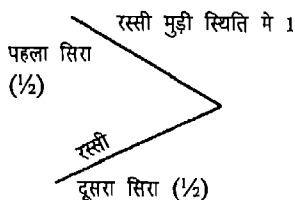
- कागज को मोड़कर फिर खोलकर भिन्न के प्रत्यय ½, ¼, ⅛ आदि को समझाया जा सकता है।

पूर्ण कागज
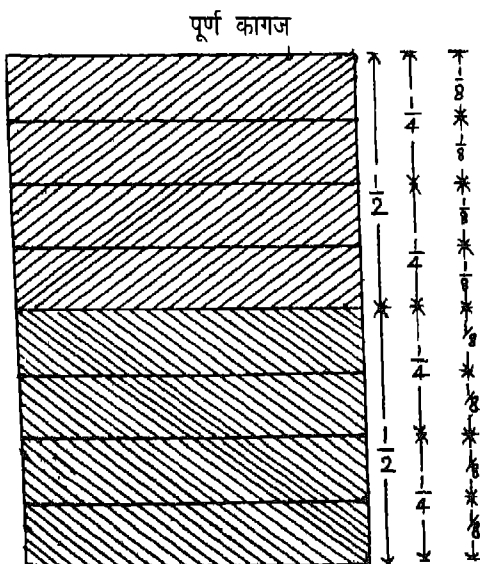
इस प्रकार की प्रक्रिया द्वारा $\frac{1}{2}, \frac{1}{4}, \frac{3}{4}, \frac{5}{8}, \frac{13}{16}$ आदि भिन्नों को दर्शाया जा सकता है।

इसी प्रकार बडे कागज को पहले विभिन्न भिन्नो को दर्शाते हुए मोड़कर फिर मुड़े कागज को काटकर भिन्न के विभिन्न प्रत्ययों को स्पष्ट किया जा सकता है। सादे कागज के स्थान पर रंगीन कागज भी प्रयोग में लाया जा सकता है।

- डबल रोटी (ब्रैड), चॉकलेट, सन्तरा, सेब, केला, अमरूद, कंकड, टॉफी, मोती आदि से भी मोड़कर, काटकर या समूह बना कर भिन्न का प्रत्यय छात्रों को स्पष्ट किया जा सकता हैं।
- किसी पौधे की एक टहनी पर लगी पत्तियों को मोडकर या तोड़कर भिन्न के प्रत्यय को स्पष्ट कर सकते हैं।

जैसे : 8 मे से 4 मोड दीं तो भिन्न बनी = 4/8
8 में से 2 मोड दीं तो भिन्न बनी = 2/8
8 में से 1 मोड दी तो भिन्न बनी = 1/8

- चित्र बनाकर या बच्चों के खेलने का मोतियों वाला स्टैण्ड लेकर भिन्न के प्रत्यय को मोतियों के समूहों द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।

16/16	0000000000000000	1/1
8/16	00000000 | 0000 0000	1/2
4/16	0000 | 0000 | 0000 | 0000	1/4
2/16	00 | 00 | 00 | 00 | 00 | 00 | 00 | 00	1/8
1/16	0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0 | 0	1/16

बच्चों के खेलने का खिलौना

- कक्षा के 40 छात्रों को चार समूहों मे बांट कर शिक्षक उनको एक-एक कर के चार आकृतियों, जिन को छात्र अपने परिवेश में सबसे पहले देखता है या
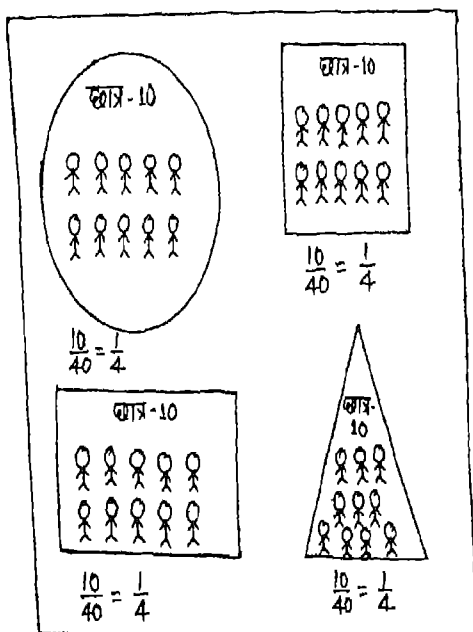
पहचानता है, मे उन्हीं की पसन्द के अनुसार भेज देता है। इस प्रकार कक्षा के सभी छात्र चार ज्यामितीय आकृतियों मे समान रूप से चार समूहों में खडे हो जाते हैं तथा भिन्न ¼ के अर्थ को समझने लगते हैं।

- कक्षा के 40 छात्रों को एक बडे वृत पर (परिधि
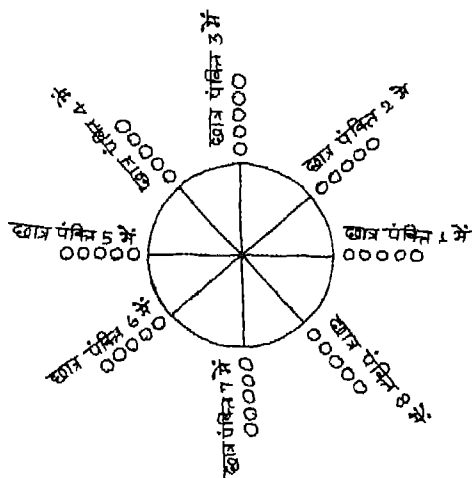
पर) समान दूरी पर आठ निशान लगाकर उन पर 5-5 छात्रों को पक्ति मे खडे होने को कहा जा सकता है जिससे हर पंक्ति में 5 छात्र (भिन्न 1/8) कुल का 'एक-आठवां' के समान छात्र खडे दिखाई दे रहे हैं। छात्रो में 5-5 के समूहो में लाईन में खडे होने व अनुशासनबद्ध होकर भिन्न के 5/40 या 1/8 के प्रत्यय की समझ विकसित हो जाएगी।

- विभिन्न ज्यामितीय आकृतियों को कागज से काटकर फिर उनको मोडकर भिन्नों 1/2, 1/4, 1/8, 3/4, 4/16 व 2/16 आदि का प्रत्यय स्पष्ट किया जा सकता है। इस से छात्रों मे ज्यामितीय आकृतियों की पहचान, उनको मोड़ना, समान भागों में बांटना या भिन्न के रूप में मुडे भाग को दर्शाना, की समझ विकसित की जा सकती है।
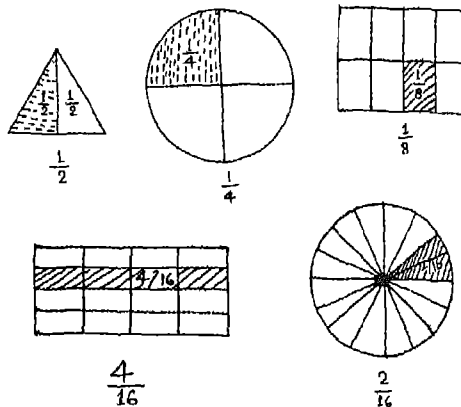
- गणित किट के भाग 'भिन्न डिस्क (चकती)' जिसमें 1/1 (1); 1/2 (2); 1/3 (3); 1/4 (4); 1/5 (5); 1/6 (6); 1/7 (7); 1/8 (8); 1/9 (9); 1/10 (10) इस प्रकार कुल 55 खण्ड होते हैं जिनको वृताकार कटाव पर लगाकर $\frac{1}{2}, \frac{1}{3}, \frac{1}{4}, \frac{1}{5}, \frac{1}{6}, \frac{1}{7}, \frac{1}{8}, \frac{1}{9}, \frac{1}{10}$ तथा
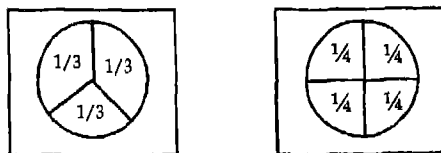
$\frac{3}{7}, \frac{4}{9}, \frac{7}{9}$ आदि भिन्नों के प्रत्यय को स्पष्ट किया जा सकता है।

- 8 मोतियो के समूह से आधे या एक चौथाई मोती निकाल कर भिन्न बनाना सिखा सकते हैं जिसमें निकाले गए मोती अंश व कुल मोती हर बनाकर भिन्न का प्रत्यय स्पष्ट किया जा सकता है।

भिन्न का अंश व हर

भिन्न को, दो संख्यांक को एक रेखाखण्ड द्वारा पृथक करके लिखा जाता है ऊपर वाला संख्यांक भिन्न का अश व नीचे वाला सख्याक (शून्य के अतिरिक्त) हर कहलाता है। इस प्रकार अंश का अर्थ भिन्न मे हिस्सा व हर का अर्थ हर एक होता है।

$$\text{भिन्न} = \frac{\text{संख्यांक}}{\text{संख्याक}} = \frac{\text{अश}}{\text{हर}} = \frac{\text{कोई पूर्ण संख्या}}{\text{कोई प्राकृत संख्या}} = \frac{W}{N}$$

भिन्न $= \frac{\text{अश}}{\text{हर}}$ जहां अंश का अर्थ है हर के समान भागों से कुछ भाग ले लेना।

भिन्न का सरलतम रूप

जब किसी भिन्न के अंश व हर दोनो के 3 या 3 से अधिक सभी सम्भव गुणनखण्ड हों या दोनों का 1 के अतिरिक्त महत्तम समापवर्तक हो तो वह भिन्न अपने सरलतम रूप में नहीं होती तब भिन्न को सरलतम रूप में लाने के लिए दोनों को बड़े से बडे सार्व गुणनखण्ड से भाग करते हैं।

यदि किसी भिन्न के अंश व हर के केवल दो ही गुणनखंड हो तो भिन्न अपने सरलतम रूप में होती है।

जैसे –

भिन्न 8/32 में 8 के सभी सम्भव गुणखण्ड = 1,2,4,8,

32 के सभी सम्भव गुणनखण्ड = 1,2,4,8,16,32

सार्व गुणनखण्ड = 1,2,4, ⑧

बड़े से बडा सार्व गुणनखण्ड = 8

अतः 8/32 अपने सरलतम रूप मे नही है। अत·

$$\frac{8}{32} \div 8 = \frac{8 \div 8}{32 \div 8} = \frac{1}{4} \quad (\text{सरलतम रूप})$$

7/13 में 7 के गुणनखण्ड = 1,7

13 के गुणनखण्ड = 1, 13

सम्भव गुणनखण्ड = 2,2 तथा सार्व गुणनखण्ड

अतः भिन्न 7/13 अपने सरलतम रूप में है।

100 से कम वस्तुओं का भिन्न के अनुसार मान ज्ञात करना

शिक्षक कक्षा के 60 छात्रों को 5 स्थानों पर एक पंक्ति में खडा करना चाहता है। तो पहले एक-एक छात्र को 5 स्थानों पर खड़ा करके पुन· एक-एक करके सभी छात्रों को उनके पीछे भेजता जाए इस प्रकार 12-12 छात्रों के 5 समूह बनेगे।

O O O O
O O O O
O O O O
12(1/5)

O O O O
O O O O
O O O O
12(1/5)

O O O O
O O O O
O O O O
12(1/5)

O O O O
O O O O
O O O O
12(1/5)

O O O O
O O O O
O O O O
12(1/5)

अब एक समूह लेकर पूछे कि प्रत्येक दल मे कितने छात्र हैं? उत्तर मिलेगा कि 12-12 के (5 दलो को हम भिन्न के रूप में कैसे दर्शाएंगे।

60 छात्रों का 1/5 = 60 का 1/5 = $12\left(\frac{1}{5}\right)+12\left(\frac{1}{5}\right)+12\left(\frac{1}{5}\right)+12\left(\frac{1}{5}\right)+12\left(\frac{1}{5}\right)$

- 80 बिस्कुट, टॉफियां, केले, संतरे, अमरूद या कंचे कक्षा के एक समूह मे 10 बच्चों को बाटते हैं तो एक-एक करके बांटने से प्रत्येक छात्र को 8 मिलेंगे।

$$80 \text{ का } \frac{1}{10} = 8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)+8\left(\frac{1}{10}\right)$$

इस प्रकार प्रत्येक छात्र को 8-8 वस्तुएं मिलेगी।

R	R	R	R	J	P	J	J	J	J
R	R	R	R	J	J	P	J	P	M
O	O	O	O	K	K	K	P	P	P
O	O	O	O	K	K	K	P	P	M
U	U	U	U	K	K	S	S	S	S
U	U	U	U	N	N	S	S	S	S
T	T	T	T	N	N	N	M	M	M
T	T	T	T	N	N	N	M	M	M

Ramesh—R, Prem—P, Om—O, Usha—U, Tapan—T, Namita—N, Mohan—M, Kewal—K, Suresh—S; Jaswant—J

- 80 वर्गों के चार्ट में 10 छात्रों को 8-8 खानों में अपने नाम का पहला बडा अक्षर लिखने के लिए कहिए देखिए यह क्रियाकलाप छात्र किस प्रकार करते हैं?

R, J, P, O, U, K, M, T, N, S सभी बडे अक्षर 8-8 बार आ गए हैं।

इस प्रकार 100 से कम संख्या को बांटने की समझ विकसित की जा सकती है।

भिन्नों के प्रकार

लहवांश भिन्न

वह भिन्न जिसका लघु हो अंश (छोटा हो) हर से तथा भिन्न का मान 1 से कम हो, को लहवांश भिन्न कहते है।

जैसे $\frac{1}{2}<1, \frac{3}{5}<1, \frac{7}{11}<1, \frac{12}{13}<1; \frac{0}{1}<1$ सभी लहवांश भिन्न हैं (हर शून्य के अतिरिक्त हो)।

∵ 1<2, 3<5, 7<11, 12<13 व 0<1 से अतः

लहवांश भिन्न $\frac{1}{2}, \frac{3}{5}, \frac{7}{11}, \frac{12}{13}, \frac{0}{1}$

महांश भिन्न

वह भिन्न महान हो अंश (बडा हो) जिसका हर से या अश हर के समान हो तथा भिन्न का मान 1 या 1 से अधिक हो।

जैसे $\frac{5}{4}>1, \frac{1}{1}=1, \frac{19}{17}>1, \frac{5}{5}=1$ (हर शून्य के अतिरिक्त) यहां 5 > 4 से, 1 = 1, 19 > 17 से व 5 = 5 इस प्रकार $\frac{5}{4}, \frac{1}{1}, \frac{19}{17}$ व $\frac{5}{5}$ सभी महांश भिन्न हैं।

इकाई भिन्न

वह भिन्न जिसका अंश 1 हो तथा हर शून्य के अतिरिक्त कुछ भी हो, इकाई भिन्न कहलाती है।

जैसे $\frac{1}{1}, \frac{1}{2}, \frac{1}{3}, \frac{1}{5}, \frac{1}{100}$ सभी इकाई भिन्न हैं

समहर भिन्न

ऐसी भिन्न जिसका अंश कुछ भी हो हर समान हो (शून्य के अतिरिक्त)

जैसे $\frac{3}{12}, \frac{5}{12}, \frac{7}{12}, \frac{11}{12}, \frac{0}{12}$ सभी समहर भिन्न हैं।

असमान हर भिन्न

वह भिन्न जिसका अंश तथा हर कुछ भी हो विशेषकर हर असमान हो (शून्य के अतिरिक्त)

जैसे $\frac{3}{9}, \frac{5}{12}, \frac{0}{15}, \frac{7}{11}$ सभी असमान भिन्न हैं।

मिश्र संख्यांक भिन्न

पूर्ण संख्या व लहवांश भिन्न के सम्मिलन से बनी भिन्न मिश्र संख्यांक भिन्न कहलाती है। जिसका मान सदैव 1 से अधिक होता है (परन्तु पूर्ण संख्या शून्य होने की दशा में 1 से कम होता है)।

मिश्र संख्यांक = (पूर्ण संख्या + लहवांश भिन्न) >1

यदि

पूर्ण संख्या 0 है तो मिश्र संख्यांक = (0 + लहवांश भिन्न) < 1

जैसे $0\frac{3}{5} < 1, 3\frac{3}{5} > 1, 10\frac{9}{11} > 1$ आदि सभी मिश्र संख्यांक भिन्न हैं।

मिश्र भिन्न का महांश भिन्न व महांश भिन्न का मिश्र संख्यांक भिन्न में परिवर्तन

मिश्र संख्यांक भिन्न

चार समान भागों में से एक भाग लेने की भिन्न को दर्शाते हैं 1/4

= 1/4

चार समान भागों में से दो भाग लेने की भिन्न को दर्शाते हैं 2/4

= 2/4

चार समान भागों में से तीन भाग लेने की भिन्न को दर्शाते हैं 3/4

= 3/4
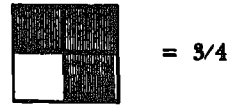
चार समान भागों में से चार भाग लेने की भिन्न को दर्शाते हैं 4/4

= 4/4
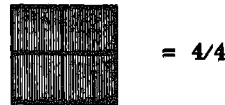
इसी प्रकार से 5 भागों से बनने वाली भिन्न को दर्शाते हैं। 5/4

$$\frac{4}{4} + \frac{1}{4} = \frac{5}{4}$$

इसी प्रकार $\frac{13}{4} = \frac{12}{4} + \frac{1}{4} = \frac{4}{4} + \frac{4}{4} + \frac{4}{4} + \frac{1}{4} =$
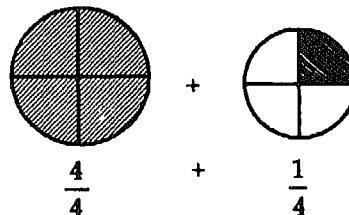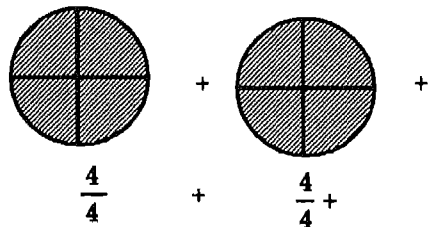
$1 + 1 + 1 + \frac{1}{4}$

$\frac{4}{4}$ + $\frac{4}{4}$ +

$\frac{4}{4}$ + $\frac{1}{4}$

महांश भिन्न का मिश्र संख्यांक भिन्न में परिवर्तन

$$\frac{13}{4} = \frac{12}{4} + \frac{1}{4} = \frac{4}{4} + \frac{4}{4} + \frac{4}{4} + \frac{1}{4} =$$

$$1 + 1 + 1 + \frac{1}{4} = 3 + \frac{1}{4} = 3\frac{1}{4}$$

$\frac{13}{4}$ = $\frac{12}{4}$ $\frac{1}{4}$

$\frac{4}{4} + \frac{4}{4} + \frac{4}{4} + \frac{1}{4}$

$\frac{1}{1} + \frac{1}{1} + \frac{1}{1} + \frac{1}{4} = 3 + \frac{1}{4} = 3\frac{1}{4}$

मिश्र संख्यांक भिन्न का महांश भिन्न में परिवर्तन

$$3\frac{1}{4} = \frac{3 \times 4 + 1}{4} = \frac{12 + 1}{4} = \frac{13}{4}$$

$1 + 1 + 1 + \frac{1}{4}$

इस प्रक्रिया को सन्तरे, अमरूद व सेब से भी कराकर स्पष्ट किया जा सकता है।

=

$\frac{3 \times 4 + 1}{4}$

  =

$\frac{12 + 1}{4}$

$\frac{13}{4}$
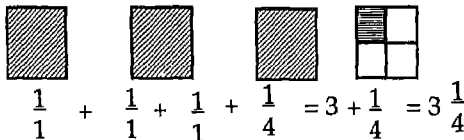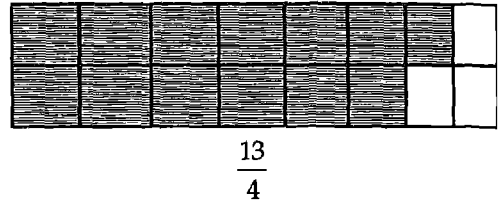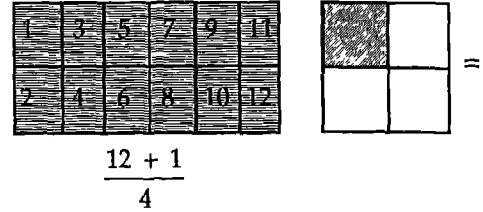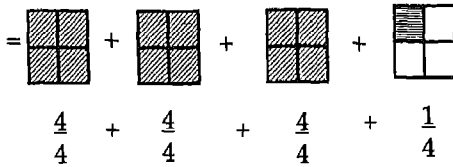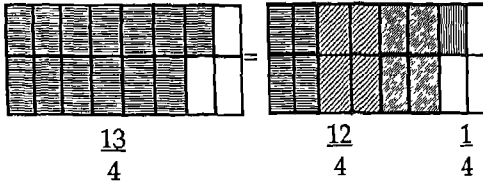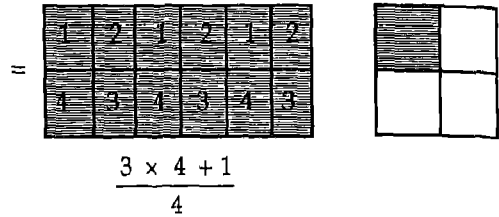
छोटी व बड़ी भिन्न

यदि दो भिन्नों मे उनके हर समान हों, उन दोनों में जिस भिन्न का अंश बडा हो वह भिन्न बड़ी तथा जिस भिन्न का अंश छोटा हो वह भिन्न छोटी होती है। जैसे–
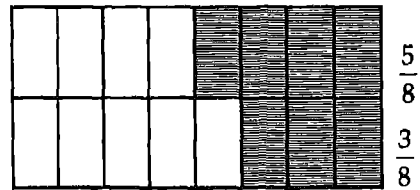
$\frac{5}{8}$ $\frac{3}{8}$

$\frac{5}{8} > \frac{3}{8}$ हर = 8, 8 अंश $5 >$ अंश 3 से

अतः रंग भरे भागों के अनुसार $5/8 > 3/8$ से

- यदि दो भिन्नों मे उनके अंश समान हों तब छोटे हर वाली भिन्न बडी व बड़े हर वाली भिन्न छोटी होगी। $7/10 < 7/8$ यहां अंश = 7, 7, और हर $8 <$ हर 10 से।
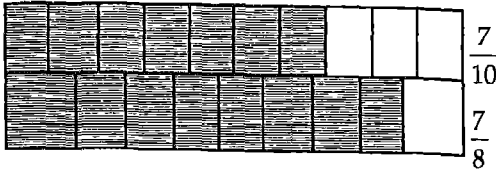
अतः रग भरे भागो के अनुसार 7/8 > 7/10 से या 7/10 < 7/8 से

- दो भिन्नों में पहली भिन्न के अंश का दूसरी के हर से तथा दूसरी के अंश का पहली के हर से गुणनफल ज्ञात करते है। जिस भिन्न के अंश का गुणनफल अधिक होगा वह भिन्न बड़ी व कम गुणनफल वाली भिन्न छोटी होगी।

जैसे

$$\frac{5}{8} \times \frac{3}{8} \quad \begin{matrix} 5\times 8 \rightarrow 40 \\ 3\times 8 \rightarrow 24 \end{matrix} \quad \because 40>24 \text{ से } \therefore \frac{5}{8} > \frac{3}{8} \text{ से}$$

तथा

$$\frac{7}{10} \times \frac{7}{8} \quad \begin{matrix} 7\times 10 \rightarrow 70 \\ 7\times 8 \rightarrow 56 \end{matrix} \quad \because 70>56 \text{ से } \therefore \frac{7}{8} > \frac{7}{10} \text{ से}$$

- आठ टॉफियो के समूह से 5 व 2 टॉफियो को अलग कर के उनकी गिनती बच्चों से करवा कर, अलग की गई टॉफियों की भिन्न 5/8 व 2/8 से छोटी व बड़ी भिन्न को उपरोक्त प्रक्रिया द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है।
- कागज को आठ समान भागों में मोडकर, मुड़े हुए 3 भागो व 2 भागों को एक-दूसरे के ऊपर रखने पर बड़ी व छोटी भिन्न का प्रत्यय स्पष्ट किया जा सकता है।

यही क्रिया किसी कागज से 3 भाग व 2 भाग काटकर भी दोहराई जा सकती है।
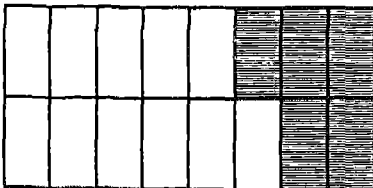
1.8 समान हर वाली

आरोही व अवरोही क्रम

उपरोक्त छोटी व बड़ी भिन्न की दक्षता को प्रयोग करते हुए विभिन्न प्रकार की भिन्नो को आरोही (बढ़ते क्रम) व अवरोही (घटते क्रम) क्रम में लिखना सिखाया जा सकता है।

$$\frac{0}{10} < \frac{1}{10} < \frac{2}{10} < \frac{3}{10} < \frac{4}{10} < \frac{5}{10} < \frac{6}{10} < \frac{7}{10} < \frac{8}{10} < \frac{9}{10} < \frac{10}{10}$$

या

$$\frac{10}{10} > \frac{9}{10} > \frac{8}{10} > \frac{7}{10} > \frac{6}{10} > \frac{5}{10} > \frac{4}{10} > \frac{3}{10} > \frac{2}{10} > \frac{1}{10} > \frac{0}{10}$$

आकृति द्वारा
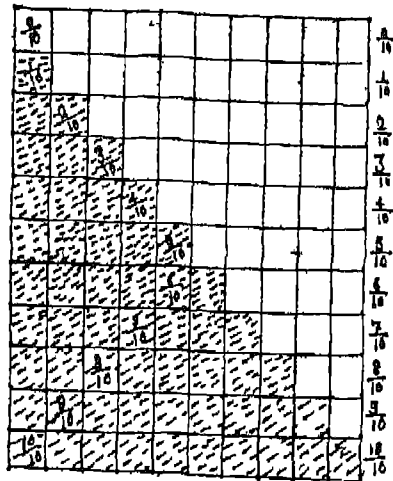
- गणित किट के भिन्न डिस्क के 55 भागों $\frac{1}{10}(10)$, $\frac{1}{9}(9)$, $\frac{1}{8}(8)$, $\frac{1}{7}(7)$, $\frac{1}{6}(6)$, $\frac{1}{5}(5)$, $\frac{1}{4}(4)$, $\frac{1}{3}(3)$, $\frac{1}{2}(2)$, $\frac{1}{1}(1)$ को भी एक-दूसरे पर लगाकर छोटी व बड़ी भिन्न तथा आरोही व अवरोही क्रम को स्पष्ट किया जा सकता है।
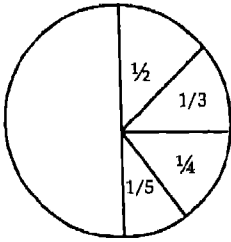
- 15 मोती लेकर 5 समूहों में इस प्रकार रखो कि पहले समूह में 15 में से 1, दूसरे समूह मे 15 में से 2, तीसरे समूह में 15 में से 3, चौथे समूह मे 15 में से 4 व अन्तिम समूह मे से 5 मोती लेकर उनके नीचे उनकी भिन्न लिख दें। जैसे $\frac{1}{15}, \frac{2}{15}, \frac{3}{15}, \frac{4}{15}, \frac{5}{15}$ इस प्रकार मोतियों को गिनकर छोटी व बड़ी भिन्न को क्रमानुसार आरोही व अवरोही क्रम में रखकर स्पष्ट किया जा सकता है।
- कक्षा के 40 बच्चों को छोटे-छोटे 2 समूहो में बांटकर उनकी भिन्न को स्पष्ट करके छोटी व बडी भिन्न तथा आरोही व अवरोही क्रम को स्पष्ट किया जा सकता है।
- गणित किट मे रखी घन छड़ों की सहायता से 10 घनों वाली छड़ो पर पहली छड़ पर 7 घनों को फिर दूसरी छड़ पर 4 घनों को रंगीन करके बड़ी व छोटी भिन्न को स्पष्ट किया जा सकता है। इसी प्रकार सभी 10 घनों वाली 10 छडों को प्रयोग करके आरोही व अवरोही क्रम सिखाया जा सकता है।
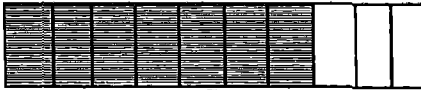
असमान हर वाली भिन्न

गणित किट मे दिए गए भिन्न डिस्क से चार टुकड़े $\frac{1}{5}, \frac{1}{7}, \frac{1}{8}, \frac{1}{10}$ भिन्न वाले लेकर उन जैसे 4 = 4 टुकड़े इकट्ठे रखने का प्रयास करें जिससे अंश समान होने पर, जिस भिन्न का हर बडा होगा जैसे $\frac{4}{10}$ वह भिन्न छोटी होगी। इस प्रकार सभी समान अंश वाली भिन्नों $\frac{4}{5}, \frac{4}{7}, \frac{4}{8}$ व $\frac{4}{10}$ को आरोही व अवरोही क्रम में लगाकर छात्रों को दिखाया जा सकता है।

$\frac{4}{5} > \frac{4}{7} > \frac{4}{8} > \frac{4}{10}$ अवरोही क्रम

$\frac{4}{10} < \frac{4}{8} < \frac{4}{7} < \frac{4}{5}$ आरोही क्रम

अंश समान है।

इसी प्रकार आकृति से $\frac{3}{4} > \frac{3}{5} > \frac{3}{6} > \frac{3}{7} > \frac{3}{8} > \frac{3}{9}$ अवरोही क्रम व $\frac{3}{9} < \frac{3}{8} < \frac{3}{7} < \frac{3}{6} < \frac{3}{5} < \frac{3}{4}$ आरोही क्रम
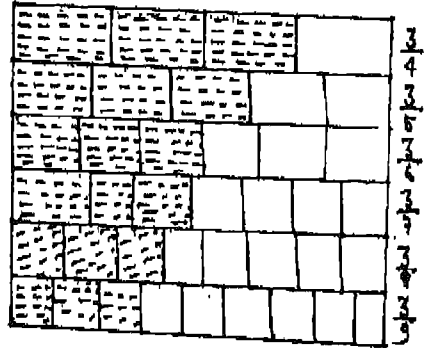
लेखक का इस लेख के माध्यम से अध्यापकों से अनुरोध है कि पूरे प्रकरण को दैनिक जीवन के उदाहरणों द्वारा व्यावहारिक बनाकर इसे अर्थपूर्ण, रुचिकर एवं मनोरंजक बनाने का प्रयास करें। □□

सेवा-पूर्व शिक्षक शाखा विभाग
मंडलीय शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान
राजेन्द्र नगर, नई दिल्ली

प्रार्थना– एक सशक्त माध्यम

❑ सांवर लाल चौधरी

विद्यालय की गतिविधियो के प्रारम्भ का आधार प्रार्थना को ही क्यो चुना गया? क्या प्रार्थना आज के नए परिप्रेक्ष्य में विद्यालयी शिक्षा में अब भी महत्वपूर्ण है? शब्द का अर्थ है–विनती करना, स्तुति करना। नम्रतापूर्वक हम विद्यालयी गतिविधियों में शामिल होकर शिक्षा अर्जन करे। प्रार्थना मानिसक रूप से विद्यालय की गतिविधियो में बालक के एकाकार होने का माध्यम है। बालक सामाजिक परिवेश से अपनी भौतिक उपस्थिति विद्यालय मे देता है और अपने आप को समाज से अलग महसूस करता है। शब्दो के द्वारा निर्विकार शक्तियों से उद्देश्य प्राप्ति में प्रार्थना एक सशक्त माध्यम है। प्रार्थना सर्वकालीन शिक्षा व्यवस्थाओं, धार्मिक संस्थाओ द्वारा सचालित विद्यालयों– औपचारिक एव अनौपचारिक गतिविधियो– का मूलाधार है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति समाज की मूल इकाई है। संपूर्ण समाज में हर व्यक्ति पूजा अर्चना करता है। अपनी दैनिक गतिविधियो के प्रारम्भ से पूर्व। क्या यह प्रार्थना नहीं है? हां मित्रो, यह भी एक प्रार्थना है। इसका रूप छोटा है। शब्दों का आकार कम या अधिक हो सकता है। धार्मिक स्थानो पर सभी धर्मो मे की जाने वाली पूजा अर्चना भी प्रार्थना का ही रूप है। उस प्रार्थना पर धर्म की छाप है। परन्तु, प्रार्थनाकर्ता का उद्देश्य तो वही है–एक निर्विकार शक्ति के सामने अनिष्ट से बचाने और शुभ की कामना के लिए एक प्रयास है। भारत धर्मनिरपेक्ष देश है इस मूल के सभी धर्मो में प्रार्थनाओ का प्रमुख स्थान रहा है। फर्क अगर पाया जाता है तो वह है, एक भौगोलिक स्थान का, एक भाषा का। गुजरात मे गाधी आश्रम मे उभरी प्रार्थना और ठीक इसके विपरीत बंगाल के शांति निकेतन से निकली गीतमयी प्रार्थना की लय। इनमे धर्म से ऊपर उठकर सभी संप्रदायो, सभी जनो को शामिल किया गया जिस पर कोई शासनाकुश नही रहा।

प्रार्थना करनी है, प्रार्थना करवानी है यही दो बिन्दु प्राचीन काल से चले आ रहे हैं, हमारी संस्कृति के विरासत के रूप में। ऐसा कोई उत्तराधिकारी न मिला जिसने पूछा हो, सुध ली हो कि क्या है ये विद्यालय रूपी मेंढक की प्रार्थना रूपी टर्र-टर्र? राज समाज और शिक्षा में कृष्ण कुमार ने प्रार्थना के लिए समर्पण को अधिक महत्व दिया है। समर्पण किसका हो? समर्पण कहां करे? समर्पण हो शिक्षार्थी का, शिक्षा के लिए, शिक्षा व्यवस्था के प्रति। जो मूर्त और अमूर्त व्यापक महत्व रखती है। समर्पण करते हैं हम, आप और सारा संसार। एक अमूर्त के सामने।

सभी क्षेत्रों की शिक्षण संस्थाओ मे प्रार्थनाएं करवाई जा रही है। क्या वे हमेशा के लिए समान विचार, सपूर्ण एवं सर्वजनहिताय रही है? वर्तमान में शिक्षण संस्थाओं का बोलबाला बढ़ा है। एक छोटे से गांव में चल रहा सरकारी प्राथमिक विद्यालय, ठीक सामने इग्लिश मीडियम का एल के जी., यू के.जी. विद्यालय खुला। प्रार्थनाएं होती है दोनों में मगर सरकारी विद्यालय मे करवाई जाती है हिन्दी माध्यम से। दूसरी ओर अंग्रेजी माध्यम में प्रार्थना और साथ में प्रतिज्ञा। भावशून्य बालक। वो भी बालकों द्वारा नहीं बल्कि प्रशासन द्वारा उकेरी जाएं। लोकतात्रिक परिप्रेक्ष्य में अपने द्वारा किए गए प्रार्थना संबंधित क्रियाकलापों एव छात्रों द्वारा

दर्शाई सहभागिता से कई परिणाम सामने आते हैं छात्रों द्वारा प्रार्थना की जाती है। प्रशासन द्वारा प्रार्थना करवाई जाती है। अध्यापकों द्वारा प्रार्थनार्थ क्रियाकलापों का जाल बिछाया जाता है। छात्रों को अनुसरण करने हेतु प्रेरित किया जाता है, सामने उज्वल भविष्य की कामना का उद्दीपक रखते हुए। ऐसा क्यों?

प्रार्थना करनी है, प्रार्थना करवानी है यही दो बिन्दु प्राचीन काल से चले आ रहे हैं, हमारी संस्कृति के विरासत के रूप में। ऐसा कोई उत्तराधिकारी न मिला जिसने पूछा हो, सुध ली हो। क्या है ये विद्यालय रूपी मेंढक की प्रार्थना रूपी टर्र-टर्र? राज समाज और शिक्षा में कृष्ण कुमार ने प्रार्थना के लिए समर्पण को अधिक महत्व दिया है। समर्पण किसका हो? समर्पण कहां करे? समर्पण हो शिक्षार्थी का, शिक्षा के लिए, शिक्षा व्यवस्था के प्रति। जो मूर्त और अमूर्त व्यापक महत्व रखती है। समर्पण करते हैं हम भी, आप भी, सारा संसार भी। एक अमूर्त के सामने।

छात्रो से अध्यापकों द्वारा प्रार्थना करवाई जाती है इस सदर्भ में समर्पण शब्द का अर्थ भी गौण-सा प्रतीत होता है। हम बालकों को अच्छे से अच्छा उद्दीपक देकर अनुक्रिया के लिए प्रोत्साहित करते है, लेकिन उत्साहित होना बालक पर निर्भर है। उदाहरण के लिए आपने मुझे भोजन पर निमंत्रण दिया, विशेष आग्रह कर ले गए। परन्तु भोजन तो मुझे करना है। भूख न हो तो भोजन नहीं कर पाऊंगा। या फिर आप भोजन को मुझे ठूस कर निमत्रण की इतिश्री कर पाओगे! इस संदर्भ मे प्रार्थना के बारे में छात्रों की मनोवृत्ति बचने की हो जाती है। यही है एक आवश्यक गतिविधि जो हमेशा संचालित की जाती है। इसकी नियमितता के बाद भी यह 90% बालकों के अंतः मन को नहीं छू पाती है। दबाव है मगर याद नहीं। ऐसा क्यों? बालक भौतिक रूप से विद्यालय में पहुंच जाता है मगर मानसिक रूप से भी उसे विद्यालय पहुंचना है।

प्रार्थना स्थल को एक सूचना केन्द्र के समान मानना भी कटु सत्य है। अधिकारी एवं कर्मचारियो द्वारा अपने आदेशों एवं निर्देशो को समाज तक पहुंचाने में मदद करता है। संदेश बालक के माध्यम से समाज तक पहुंचता है। निर्देशन एवं परामर्श के क्षेत्र में भी प्रार्थना स्थल का उपयोग सार्थक सिद्ध होता है। धर्मनिरपेक्ष भारतीय मूल में भावात्मक रूप से विद्यालय समुदाय में बालक को जोडने में प्रार्थना एक सक्रीय साधन है। समाज से समुदायों मे आए अनेक भिन्नताओं वाले बालक/बलिकाओं को एकरूपता प्रार्थना स्थलों पर ही देखने को मिलती है। एक वेशभूषा, एक स्थान पर एकत्रित होना, विभिन्न धर्म संप्रदायों से जुडे होते हुए भी, अमूर्त से प्रार्थना करना इसी प्रार्थना गतिविधि से देखी जा सकती है। अगर हमें विभिन्नता में एकता देखनी है, धर्म निरपेक्षता के अमूर्त दर्शन करने है तो आपको विद्यालय के प्रार्थना स्थल पर ही होंगे। विद्यालय की विभिन्न गतिविधियो मे प्रार्थना गीत का सर्वोच्च स्थान है। नियमित रूप से उच्चारित करना प्रार्थना की नियति है। प्रार्थना मूल्यांकन करती है अनुशासन का। प्रार्थना विद्यालयी गतिविधियों मे सर्वोपरि है। प्रार्थना का कवरेज, रूपकों के माध्यम से, राष्ट्रीयता के मूल तत्वों द्वारा सरल से सरल शब्दों में रचित हो। अलग-अलग परिवेशों से मिली बालको रूपी मूर्तियों में एकता और धर्मनिरपेक्षता की भावना रूपी बीजो का अंकुरण होता है प्रार्थना रूपी खेत में।

एक ही स्वर, एक ही स्थान, एक ही गीत, एक ही साथ उच्चारित करना सामुहिकता की भावना को पुष्ट करता है। एक ही ड्रैस में एक ही कदम ताल से अहसास होता है– अनुशासन का। नियमित रूप से की जाने वाली अनुशासनात्मक प्रार्थना से प्रस्फुटित होती है– स्वानुशासन की भावना। इस प्रकार विकसित होने वाले गुणों एवं क्रियाओ से बालक का जीवन सजता है, संवरता है जिसके आधार पर अपने भावी जीवन को खडा करने का सपना साकार करती है प्रार्थना।

प्रार्थना होती है हर क्षेत्र के विद्यालयों में मगर बालमनों के अनुरूप नहीं तो उसे अनुरूप बनाने का प्रयास करो ताकि वंचना को रोका जा सके। प्रार्थना होती है शब्दों के जाल में, तो उसे सरल शब्दों में पिरोने का प्रयास करो, जिससे बाल मन उद्वेलित हो सके। प्रार्थना हो कलापूर्ण सक्रीय गतिविधि जिसे सहजता से स्वीकार किया जा सके। प्रार्थना हो गीत संगीतमयी जिससे मूर्त तथा अमूर्त भी कुछ देने हेतु हाथ खोल सके।

प्रार्थना हो निरपेक्षवादी, जो राष्ट्रीय मूलों की पहचान करवा सके। संस्कार मानव समाज की सांस्कृतिक रीढ है। प्रार्थना संस्कार युक्त हो, जो मानव समाज रूपी भवन को संस्कारित प्रार्थना रूपी ईंट के आधार पर खड़ा किया जा सके। सस्कारित प्रार्थना के माध्यम से ही बालक देश का भावी कर्णधार बनता है। देश की सांस्कृतिक विरासत को संचारित करता है, राष्ट्रीयता के नवीन मूल्यो का सवर्द्धन करता है, असामाजिकता का नाश करता है पीढी दर पीढी। विखडन और विनाश से अमूर्त के सहारे बचाने का एक सराहनीय प्रयास है। लाभान्वित होता रहे हमारा समाज ऐसी प्रार्थना के माध्यम से, जो सभी दृष्टिकोणों से पूर्ण हो।

प्रार्थना है प्रार्थी की एक ही अमूर्त से।
मूर्त को अमूर्त बनाने की अभिलाषा से।
मन मंदिर को खोलकर, तमन्नाओ की तलाश मे।
आशा और उल्लास भर दे, विपुल इस ससार में।

❑❑

रा.आ.उच्च प्राथमिक विद्यालय
हनुतिया वाया जालिया II, अजमेर
राजस्थान

प्राथमिक स्तर पर नकल की प्रवृति

❑ रामनिवास बंसल

यह समय है बच्चे में नकल विरोधी घृणा उत्पन्न करने की शिक्षा देने का। इससे पूर्व हम सब का व्यवहार नकल विरोधी होना चाहिए अन्यथा हमारा सारा प्रयास व्यर्थ होगा। शिक्षकों द्वारा पुस्तकें देखकर पढ़ाना, पुस्तकें देखकर श्यामपट्ट पर लिखना, अभ्यास पुस्तिकाओं की अच्छी तरह जांच न करना तथा पुनः अभ्यास कराना जरूरी है। ईमानदारी, सत्य भाषण, सदाचार, बड़ों का सम्मान, समाज व देश के प्रति हमारा कर्तव्य, झूठ न बोलना, मिलावट न करना, रिश्वत को हेय दृष्टि से देखना आदि नैतिक शिक्षा का अभ्यास कराना अत्यावश्यक है।

बच्चे जन्म से ही बड़ों की नकल करते हैं। परिवार में माता-पिता, भाई-बहन आदि बालक को बोलना, खाना, चलना, शौच आदि कार्य करने का ज्ञान नकल के माध्यम से सिखाते हैं। इसके बाद आस-पड़ोस, समाज व सम्बन्धी उसे अच्छी बातों का अनुकरण करने की शिक्षा देते हैं। कई बार बच्चा अनावश्यक क्रियाएं जैसे मिट्टी खाना, मैले आदि में खेलता है तथा कपड़े गन्दे करता है तो उसे झिडक कर वैसा न करने का ज्ञान कराते हैं। इस प्रकार पूर्व विद्यालय शिक्षा जो तीन वर्ष की आयु से पूर्व नकल, अनुकरण तथा खेलकूद के माध्यम से उपलब्ध कराई जाती है।

आजकल पूर्व विद्यालय शिक्षा 3-5 आयु-वर्ग के बच्चों को औपचारिक संस्थाओं में उपलब्ध कराई जाती है जिसमे खिलौने, झूले, आकर्षक वस्तुओं के द्वारा बच्चा जीवन की जरूरी बातें सीखने की योग्यता प्राप्त करता है। दो या तीन पहियों की साइकिल, चार पहियों की गाड़ियां स्वचालित अथवा चाबी भरकर चलाने वाले खिलौनो के द्वारा बच्चों

के अगों, मांस-पेशियों को सुदृढ, विकसित करने हेतु उपलब्ध कराई जाती है। इस अवधि मे बच्चे परस्पर बोलना, व्यवहार करना, मिलकर खेलना, खाना खाना तथा लाइन बनाकर चलना, पानी पीना, वस्तुओं को सुरक्षित रखना तथा बड़ो का सम्मान करना सीखते हैं। इस समय कुशल प्रशिक्षित शिक्षको द्वारा प्रारम्भिक लिखना, बोलना, चित्रकारी आदि अन्यों को देखकर या सुनकर अनुकरण विधि से सिखाई जाती हैं। इस आयु तक बच्चे का पालन पोषण तथा शिक्षा नकल, अनुकरण तथा खेलकूद के द्वारा ही की जाती है। यह बच्चे की प्राथमिक शिक्षा की तैयारी हेतु महत्वपूर्ण है। जो बच्चे इस अवधि की प्रक्रिया को योग्य शिक्षित माता-पिता, सामाजिक परिवेश और प्रशिक्षित शिक्षकों की देख-रेख में व्यतीत करते है उनका विद्यालयी पठन-पाठन अत्यन्त सार्थक हो जाता है। इस अवधि की शिक्षा में नकल, अनुकरण तथा खेलकूद की विधियां उपयोगी है। इस समय तक बच्चा नकल, अनुकरण का अभ्यस्त हो जाता है।

अब आवश्यकता है बालक के मानसिक ज्ञान को विकसित करने की। इसके लिए भारी बस्ते, लम्बा-चौड़ा, पाठ्यक्रम, कई-कई विषयों तथा लम्बे समय तक आवश्यक सुविधाओं से हीन संस्थाओं, भीड़-भाड तथा कुशल शिक्षकों के अभाव की स्थिति बालक के बौद्धिक विकास में अनेक बाधाएं उत्पन्न करते हैं। ऐसी स्थिति में बालक धीरे-धीरे स्वय को तैयार करता है। कुशल शिक्षक यहां बच्चे के मनोविज्ञान का प्रयोग कर लिखना, पढना, याद करना, समझना, सुनना, सुनाना आदि प्रक्रियाएं बड़े सहिष्णुतापूर्वक अभ्यास कराता है। बच्चे को नैतिक स्तर पर लाने का प्रयास करना अत्यावश्यक है। यहा पुन. परिवार, समाज और विद्यालय की भूमिका महत्वपूर्ण है। कौन कहता है बच्चा जन्म से अनैतिक है उसे जन्मोपरान्त नकल, अनुकरण की विधियों का अवसर प्राप्त हुआ है जो पाच वर्ष तक शिशु अवस्था में किसी न किसी रूप में कम या अधिक प्रचलित रहा है एक दम नहीं बदल सकता। अभी तक तो उसमें ईमानदारी, सदाचार के अंकुर भी नही फूटे है तो उससे नकल की प्रकृति त्याग की अपेक्षा करना दिवास्वप्न मात्र ही है।

यह समय है बच्चे में नकल विरोधी घृणा उत्पन्न करने की शिक्षा देने का। इससे पूर्व हम सब का व्यवहार नकल विरोधी होना चाहिए अन्यथा हमारा सारा प्रयास व्यर्थ होगा। शिक्षकों द्वारा पुस्तके देखकर पढाना, पुस्तके देखकर श्यामपट्ट पर लिखना, अभ्यास पुस्तिकाओ की अच्छी तरह जांच न करना तथा पुनः अभ्यास कराना जरूरी है। ईमानदारी, सत्य भाषण, सदाचार, बड़ों का सम्मान, समाज व देश के प्रति हमारा कर्तव्य, झूठ न बोलना, मिलावट न करना, रिश्वत को हेय दृष्टि से देखना आदि नैतिक शिक्षा का अभ्यास कराना अत्यावश्यक है।

इस शिक्षा मे पाठ्यपुस्तकों का लेखन विशेषज्ञ शिक्षाविदों द्वारा कराया जाए जिसमें कोई राजनीति ने घुसाई जाए। लेखकों का लेखन राष्ट्र हित में बच्चों के चरित्र निर्माण, बौद्धिक, शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक विकास तक ही हो। यह ध्यान रहे कि हमने राष्ट्र के भावी निर्माताओं का निर्माण करना है जिससे राष्ट्र का विकास होना है। गत हजार वर्षो की दासता को भूलकर नव निर्माण का स्वप्न कुशल नागरिकों की सुशिक्षा पर निर्भर है। कुशल नागरिक ही राष्ट्र के विकास की नींव सुदृढ कर सकते हैं। इसमें नकल की कोई उपयोगिता नही। धीरे-धीरे नकल की बन्दर प्रवृति को त्यागना होगा। हमें चीन, जापान, इजरायल जैसे राष्ट्रभक्त नागरिक उत्पन्न करने हैं। प्राथमिक स्तर पर बच्चों की शिक्षा कुशल प्रशिक्षित शिक्षकों के हाथों में हो तथा बस्ते का बोझ कम करे, पाठ्यक्रम उपयोगी हो और स्तरानुसार बढाया जाए। जो एक कक्षा में पढ लिया अन्य कक्षा में उसकी पुनरावृत्ति न हो। नेता जी सुभाषचन्द्र बोस ने कहा था– "राष्ट्र का असली धन बैकों में नहीं स्कूलों में है।" हमें इस धन को प्राथमिक स्तर से राष्ट्र निर्माण की शिक्षा देनी है।

बच्चा राष्ट्र का कर्णधार है,
शिक्षा बच्चे का निर्माण है।

61/6, आश्रम रोड
पोस्ट व ग्राम– चरखी दादरी, हरियाणा

पाठ्यचर्या निर्माण के निर्देशक तत्व

❐ जय नारायण कौशिक

पाठ्यचर्चा शिक्षा का आधार बिन्दु है। इसी को केन्द्र बनाकर शिक्षार्थी को वे समग्र अनुभव कराए जाते है जो उसकी भावी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक होंगे। पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तकें, सहायक पठन सामग्री, पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाएं तथा अन्य अनुभवो का आयोजन इसी के अंग-उपांग हैं।

किन्तु क्या व्यक्ति, समाज या राष्ट्र के उद्देश्य या लक्ष्य स्थिर हैं? क्या समाज के विभिन्न वर्गो की आकांक्षाएं समान हैं? क्या एक देश की पाठ्यचर्या की परिधि मात्र एक राष्ट्र तक सीमित है? क्या देश की सुदीर्घ स्थापित परम्पराएं उसमे साधक या बाधक तो नहीं बनतीं? क्या पाठ्यचर्या का सबध, राजनीतिक दर्शन, शासन पद्धति और आर्थिक स्थिति से भी है? क्या सामाजिक उथल-पुथल इसके निर्माण के तत्वों को चुनौती नहीं देते?

पाठ्यचर्या निर्माण में इन्हीं चुनौतियों का समाहार, संतुलन, समन्वयन आवश्यक है।

पाठ्यचर्या निर्माण सतत् चलने वाली प्रक्रिया है। वैदिकयुग से वर्तमानकाल तक इसमें परिवर्तन आता रहा है। *ऋग्वेद की शिक्षा का उद्देश्य था— तत्व का साक्षात्कार* ब्रह्मचर्य तप और योगाभ्यास से तत्व का साक्षात्कार करने वाले ऋषि, विप्र, कवि, मुनि, मनीषी आदि नामों से जाने जाते थे। साक्षात्कृत का मंत्रों के आकार में संग्रह होता गया। वैदिक संहिताओं का सांगोपांग स्वाध्याय, अध्ययन, श्रवण, मनन और निदिध्यासन वैदिक शिक्षा के मूलाधार थे। गुरुगृह, आचार्यकुल, विद्यालय, गुरुकुल आदि शिक्षा के केन्द्र थे। शिक्षा की तिहरी प्रक्रिया इन्हीं से संपन्न होती थी। इन्हीं से ज्ञान, योग्यता का विकास तथा उचित रुचि-अभिरुचि और मूल्य सवर्धा भावना जाग्रत होती थी।

रामायण, महाभारत, पौराणिक काल मे निम्नोक्त श्लोक पाठ्यचर्या निर्माण के मार्गदर्शक तत्व रहे—

सा विद्या या विमुक्तये।
आत्मवत् सर्व भूतेषु।
सर्वे भवन्तु सुखिनः।
वसुधैव कुटुम्बकम्।
परोपकारः पुण्याय, पापाय परिपीडनम्।
विद्या ददाति विनयम आदि।

पाठ्यचर्या के इन्हीं निर्देशक तत्वो के कारण भारत का विदेशों मे सम्मान हुआ। भारत विश्वगुरु की उपाधि से *सुशोभित हुआ।*

भारतीय शिक्षा आयोगों ने अनेक देशों के इतिहासों को पाठ्यचर्या में सम्मिलित करने की सिफारिश की है। किन्तु यदि रूस का इतिहास पढ़ाना है तो उन तत्वों को उजागर करना चाहिए जिनके कारण वहां के समाज ने उसे नहीं स्वीकारा। अरब देशों का इतिहास पढ़ाते समय इस पक्ष पर प्रकाश डाला जाए कि वहां के शासकों में लूटपाट, मारकाट, धर्मान्धता की प्रवृत्ति क्यों थी। भारतीय समाज में उस समय ऐसी कौन-सी कमियां थीं जिनके कारण वे यहां अपने इरादों में कामयाब हुए।

भारत में विदेशी शासनकाल रक्तपात शोषण, धर्मान्धिता, अराजकता, अशाति, अनिश्चितता का काल रहा। प्रजा में दासता की मानसिकता, परराष्ट्र के प्रति निष्ठा तथा 'फूट डालो और राज करो' पाठ्यचर्या के मेरूदंड रहे। इस प्रकार के साहित्य और इतिहास लेखन को राजाश्रय और प्रोत्साहन मिलता रहा।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली पर आधारित सविधान का निर्माण हुआ। परिणामस्वरूप नवीन पाठ्यचर्या का निर्माण, राष्ट्र की प्राथमिक आवश्यकताओं में सर्वोपरि था।

विश्वविद्यालय आयोग (1949), मुदालियार आयोग (1953), कोठारी आयोग (1969-66), राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) तथा अन्य समितियो ने, पाठ्यक्रम नवीनीकरण में असाधारण योगदान दिया है। इन सभी में महात्मा गांधी द्वारा विकसित बुनियादी शिक्षा के दर्शन को महत्वपूर्ण स्थान मिला। किन्तु प्रजा की आकांक्षाओं के विस्फोट, अधिकारों की मांग, महिला शिक्षा के विकास आयाम, अनुसूचित जाति तथा जनजाति की इच्छाएं, आकांक्षाएं, पर्यावरण की समस्या, जनसंख्या विस्फोट, बेरोजगारी, गरीबी, नवधनाढ्य पीढी, बहुराष्ट्रीय कंपनियो के आगमन तथा राष्ट्र की सुरक्षा की चुनौतियों ने पाठ्यक्रम के नवीकरण के सम्मुख नई चुनौतियां ला खडी की हैं। संक्षेप में इक्कीसवी सदी की चुनौतियो के सम्मुख पाठ्यक्रम का तानाबाना बौना पड गया है। पाठ्यचर्या पर, विशेषत· भाषा और इतिहास के विषयो को लेकर जितना विचार दोहन गत 2-3 वर्षो में हुआ है, वह जागरूक राष्ट्र का सकेत है।

इन आंदोलनों की पृष्ठभूमि में परम्परावाद, प्रगतिवाद, शुद्धराष्ट्रवाद, बाह्य शासको द्वारा रचा या रचवाया गया इतिहास, किन्हीं भी परिस्थितियों में राष्ट्र को एक न होने देने की दुर्भाग्यपूर्ण मानसिकता, कुछ लेखकों तथा प्रकाशक घरानों का जन्मसिद्ध अधिनायकवाद आदि प्रवृत्तियां प्रछन्न प्रकट रूप से सक्रिय हैं। संक्षेप में 'अरे इन सबहन राह ना पाई' की उक्ति इन पर घटित होती है।

नई पीढ़ी मे अनुशासनहीनता, उच्छृखलता, दिशाहीनता, भोगवाद, अपराध जैसी प्रवृत्तिया बढ़ रही हैं। 'धर्मनिरपेक्षता' शब्द के मनचाहे अर्थ किए जा रहे हैं। संख्या की राजनीति प्रबुद्ध बौद्धिक वर्ग को मूक रहने पर बाध्य कर रही है। किन्तु इस आपाधापी में से कोई सुमार्ग तो निकालना ही होगा।

प्रश्न है हम किस प्रकार के साहित्य को पाठ्यचर्या का आधार बनाए? कौन-सा साहित्य कालजयी साहित्य है। भरणगामी साहित्य से कैसे छुटकारा पाया जा सकता है?

'साहित्य' शब्द के स्थान पर पहले 'शास्त्र' शब्द का प्रयोग होता था। वेद वेदांत मे शास्त्र निहित है। इनमे संस्कारों के परिमार्जन की शाश्वत शक्ति है। यह साहित्य इसी भूमि की उपज है। विदेशों मे भारत की पहचान और सम्मान इसी शास्त्र के कारण है। रामायण, महाभारत मात्र धर्मग्रंथ नहीं हैं। भारत के किसी राज्य की भाषा के मूल साहित्य पर आप दृष्टिपात करें, ये महाग्रथ ही वहां की कथाओं, उपकथाओं के मूलाधार हैं। अतः देश की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुसार इनके श्रेष्ठ अंश पाठ्यचर्या मे समाहित होने चाहिए। इन्हीं को आधार बनाकर महाकाव्य, नाटक, उपन्यास आदि की रचना वर्तमान संदर्भ में होनी चाहिए। इस साहित्य में भारत का ही नहीं विश्व का कल्याण निहित है।

दुर्भाग्य से भक्तिकालीन साहित्य का पाठ्यचर्या से इस आधार पर बहिष्कृत किया जा रहा है कि इनकी प्राचीन भाषा बोधगम्य नही है इस तर्क का कोई आधार नहीं है। इधर राजस्थानी, ब्रज, मैथिली, अवधी आदि भाषाओं ने ही तो समाज का मार्गदर्शन किया है और देश को एक सूत्र में बांधे रखा है। इस साहित्य में भक्ति में सराबोर करने, प्यार दुलार देने और आवश्यकता पडने पर डाटने डपटने की शक्ति है।

पौराणिक साहित्य में यद्यपि अनेक स्थानों पर अंधविश्वास जनित बाते है जिनका परिष्कार आवश्यक है। किन्तु उनमें जीवन के शाश्वत सत्यों पर परोक्ष-अपरोक्ष रूप से प्रकाश डाला गया है। पुराण के प्रतीकों को यदि बोधगम्य बनाया जाए तो वह साहित्य आज भी समाज का मार्गदर्शन करने में सक्षम है।

हमारी शिक्षा नीति में कहीं भी धर्म का विरोध नहीं मिलता। भारतीय समाज की पाचन शक्ति असाधारण है। हमें यह स्वीकार्य है कि विश्व के सभी धर्मों के मुख्य उपदेशों को पाठ्यचर्या में सम्मिलित किया जाए। हिन्दू, मुसलमान, बौद्ध-जैन, पारसी, ईसाई आदि सभी धर्म हमारे एशिया महाद्वीप में ही तो जन्मे हैं। ये हमारे लिए विदेशी कब से हो गए।

भारतीय शिक्षा आयोगों ने अनेक देशो के इतिहासों को पाठ्यचर्या मे सम्मिलित करने की सिफारिश की है। किन्तु यदि रूस का इतिहास पढ़ाना है तो उन तत्वों को उजागर करना चाहिए जिनके कारण वहां के समाज ने उसे नहीं स्वीकारा। अरब देशों का इतिहास पढ़ाते समय इस पक्ष पर प्रकाश डाला जाए कि वहा के शासको

में लूटपाट, मारकाट, धर्मान्धता की प्रवृत्ति क्यो थी। भारतीय समाज में उस समय ऐसी कौन-सी कमियां थी जिनके कारण वे यहा अपने इरादो में कामयाब हुए।

यूरोप की इतिहास पढाते समय इस रहस्य को सामने लाया जाए कि मात्र भोगवादी जीवन शैली कुछ ही दिनों मे रोमन साम्राज्य की तरह आदिवासी लोगो द्वारा घोड़ों की टापो से रोदी जा सकती है।

कोई राज्य धर्म के अधिनायकवाद से भले ही छुटकारा पा ले किन्तु धर्म विहीन समाज मे कितनी नग्नता जन्म लेती है इसके प्रति भी सचेत रहे। होटल-क्लब सस्कृति यूरोप में एड्स जैसी महामारियो की चपेट मे आ गई है। वहा नशीले पदार्थो का सेवन किस प्रकार नई पीढ़ी का सर्वनाश कर रहा है।

स्वतंत्रता आंदोलन की जानकारी की आवश्यकता पर भी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में बल दिया गया है। हमारी पाठ्यचर्या में समाज के पिछड़े वर्ग आदिवासी लोगो के बलिदानों को निर्द्वन्द्व भाव से उजागर किए जाने की आवश्यकता है। स्वतंत्रता का यह आंदोलन किसी पार्टी, वर्ग, परिवार आदि का आदोलन नहीं था। इसमे समाज के समस्त घटक सम्मिलित थे। इनकी पीडा को समझ कर ही गांधीजी का 'वैष्णवजन तो ते ने कहिए जो पीर पराई जाने रे' भजन चरितार्थ होगा।

पर्यावरण सरक्षण की समस्या का पाठ्यचर्या का अंग बनाना स्वागत योग्य है। यहां भी अपनी प्राचीन संस्कृति तथा साहित्य के उन पक्षों को आगे लाने की आवश्यकता है जिनमे मानव समाज को प्रकृति के प्रति संवेदनशील बनाया गया है। इसका अनावश्यक दोहन पाप कर्म बताया गया है। ऋग्वेद के नदी-सूक्त में नदियो को माता तुल्य हितकारी कहा गया है।

संक्षेप मे हमे पाठ्यचर्या के लिए उस साहित्य का चयन करना होगा जिसमे इन सभी समस्याओं का उल्लेख हो। जहा इन समस्याओं के समाधान के लिए रचनात्मक सदेश दिया गया हो। इस प्रकार का प्रायोजित साहित्य विकसित करने की आवश्यकता है।

अंत मे वर्तमान विज्ञान, कम्प्यूटर तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र पर सक्षिप्त टिप्पणी के बाद विषय को विराम देना उचित रहेगा। विज्ञान के युग मे जीना है तो इसे स्वीकार करना पड़ेगा। इससे राष्ट्र की सुरक्षा तथा उत्पादन शक्ति मे असाधारण समृद्धि की सभावनाए हैं। किन्तु यह वृद्धि व्यक्ति, समाज, देश या विश्व की शाति में बाधक न बने। कहावत भी है– 'वा सोने को जारिये, जासो फाटत कान', हमारे शास्त्रों में उपलब्ध शस्त्र-अस्त्रों के अध्ययन को पाठ्यक्रम मे सम्मिलित किए जाने की आवश्यकता है, इससे राष्ट्र सम्मान की श्रीवृद्धि होगी।

पाठ्यचर्या निर्माण तथा पाठ्यपुस्तको के लेखन का उत्तरदायित्व सच्चरित्र, संतुलित, स्वार्थरहित, निष्पक्ष, उदारमना, मानवतावादी, दिव्यद्रष्टा आदि गुणो से निष्णात, मनीषियो, चिन्तकों को सौंपा जाा चाहिए। इसी मे व्यक्ति, समाज, देश तथा विश्व का हित निहित है। ❑❑

सी-605, सरस्वती विहार
नई दिल्ली

पाठ्य प्रस्तुति

☐ एम. एन. बापट

विश्वविद्यालयों द्वारा विभिन्न पाठ्यक्रमो में वांछित स्तर प्राप्त कर लेने पर तद्नुसार उपाधि प्रदान की जाती है। व्यापक सर्वेक्षण के परिणाम, शिक्षा की व्यावहारिक उपादेयता शून्य मात्र ही आंकते हैं। क्या इसका कारण हम शिक्षा की विषय-वस्तु का हमारे परिसर, पर्यावरण या प्रत्यक्ष जीवनोपयोगी ज्ञान से भिन्न होना माने?

प्रयुक्त एवं व्यावसायिक शिक्षा इसी पक्ष का अंशत निदान है किंतु अभी भी कला एवं विज्ञान के अधिकांश पाठ्यक्रम परिकल्पना विकास एवं आदर्श स्थिति के निरूपण मात्र है। फलत. एक सामान्य स्नातक अपने अध्ययन का एकमात्र उद्देश्य नौकरी पेशे हेतु अपने आप को पात्र बनाना मानते हैं। विशिष्ट सेवारत कर्मी अपने भूतकाल के अर्जित ज्ञान को किंचित ही उपयोगी मान पाता है तथा कथित उपाधिधारी पूर्व अर्जित ज्ञान का महत्व, चिंतन के अभाव में नहीं समझ पाता। हालांकि तर्क द्वारा उसे अहसास कराया जा सकता है कि अर्जित ज्ञान ने व्यक्ति के व्यक्तित्व में कम से कम निम्न परिवर्तन तो आए हैं।

● साहित्य की समृद्धि ● विवाद क्षमता का विकास अर्थात् पक्ष-विपक्ष हेतु समुचित दृष्टिकोण ● विषय-वस्तु का ज्ञान ● तर्कशक्ति का विकास ● अधिक व्यापक दृष्टिकोण, ● सभ्य व्यवहार ● सूक्ष्म अध्ययन क्षमता, इत्यादि। कितु पाठ्यक्रम निर्देशिका के अतिरिक्त इन उद्देश्यों का अन्यत्र गंभीरता से समाहित न होना आज के अध्येता को अधानुकरण से परे कोई प्रेरणा नहीं देता।

विज्ञान शिक्षण विशिष्टतः भौतिकी शिक्षण विधा में किस तरह अध्यापन-अध्ययन पक्ष को पुष्ट किया जा सकता है यह विवेचना प्रस्तुत लेख का आधार है।

यह सर्वविदित तथ्य है कि भौतिकी के सभी नियम पदार्थ की प्रकृति एवं उसके विभिन्न भौतिक प्राचलों के सापेक्ष वास्तविक व्यवहार पर सूक्ष्म परीक्षणों का फल है। यही कारण है कि भौतिकी के नियमो को प्रकृति के नियम (Laws of Nature) भी कहा जाता है। इस दशा में भौतिकी का अध्ययन क्या व्यवहारिक ज्ञानपरक नहीं होना चाहिए? सिद्धांत एव व्यवहार के इस 'वास्तविक' अतर को किस दृष्टिकोण से देखें तथा उपयुक्त समाधान प्राप्त करें? शिक्षक प्रशिक्षण की दृष्टि से यह पक्ष महत्वपूर्ण है। अतः क्या यह संभव है कि शिक्षण में हम प्रथम अनुभव प्रस्तुत करें और फिर विज्ञान का उपयोग उस अनुभव की व्याख्या एव बारीकियां जानने में करें? आइए कुछ घटनाओं को इस दृष्टिकोण से देखें।

प्रयुक्त एवं व्यावसायिक शिक्षा इसी पक्ष का अंशतः निदान है किंतु अभी भी कला एवं विज्ञान के अधिकांश पाठ्यक्रम परिकल्पना विकास एवं आदर्श स्थिति के निरूपण मात्र हैं। फलतः एक सामान्य स्नातक अपने अध्ययन का एकमात्र उद्देश्य नौकरी पेशे हेतु अपने आप को पात्र बनाना मानते हैं। विशिष्ट सेवारत कर्मी अपने भूतकाल के अर्जित ज्ञान को किंचित ही उपयोगी मान पाता है तथा कथित उपाधिधारी पूर्व अर्जित ज्ञान का महत्व, चिंतन के अभाव में नहीं समझ पाता।

वायु प्रवाह

☐ किसी हलकी वस्तु (यथा शुष्क रुमाल) को एक सिरे से पकड़ें। वायु प्रवाह की उपस्थिति मे समूची वस्तु की प्रवृत्ति वायु प्रवाह के अनुदिश गमन की होती है। फलतः वह उर्ध्व स्थिति से, स्थिर सिरे के सापेक्ष वायु प्रवाह की ओर अभिविन्यासित हो जाती है। निष्कर्षतः हलकी वस्तु वायु प्रवाह की दिशा का ज्ञान कराती है तथा वायु

प्रवाह की उपस्थिति-अनुपस्थिति का सूचक है।

☐ एक सिरे से पकडी हुई हलकी वस्तु को कुछ उंचाई से मुक्त छोड़ दें। वायु प्रवाह की अनुपस्थिति मे समूची वस्तु निलंबन स्थिति से ठीक नीचे पहुंच जाती है। वायु प्रवाह की उपस्थिति मे समूची वस्तु प्रवाह के अनुदिश कुछ दूरी अंतरित कर नीचे पहुंचती है। निष्कर्षतः वायु प्रवाह वस्तु पर प्रवाह के अनुदिश बल लगाता है। बल का परिमाण वायु प्रवाह की तीव्रता पर निर्भर करता है। वायु प्रवाह वस्तु पर कार्य करता है अतः वायु प्रवाह उर्जायुक्त है।

☐ दो सर्वसम हलकी वस्तुएं ले तथा उन्हें एक-एक सिरे से सर्वथा समान रूप से पकडें केवल उनकी स्थिति वायु प्रवाह की दिशा में समुचित अतराल पर हो। वायु प्रवाह अंतराल पर स्थित दोनो वस्तुओं को अलग-अलग प्रभावित करता है। प्रवाह के अनुदिश अलग-अलग बल आरोपित करता है। निष्कर्षतः वायु प्रवाह के अनुदिश वायु द्वारा वस्तु पर आरोपित बल (दाब) भिन्न-भिन्न होता है (अर्थात् वायु प्रवाह के अनुदिश दाबांतर होता है) तथा वायु प्रवाह अधिक दाब से कम दाब की ओर होता है।

☐ एक ही प्रकार की किंतु अलग-अलग आकार की दो हलकी वस्तुओं को किसी स्थान पर एक सिरे से पकड़ें। अधिक बडे आकार की वस्तु वायु प्रवाह की दिशा में अधिक बल आरोपित करती है। निष्कर्षतः वायु प्रवाह द्वारा पिण्ड पर आरोपित बल पिण्ड के आकार के समानुपाती होता है।

उपरोक्त प्रयोगों का व्यावहारिक उपयोग पाल-नौकायन, पवन-चक्की आदि में होता है।

कृत्रिम वायु प्रवाह

घटनाओं को कृत्रिम रूप से घटित कराना विज्ञान का एक अन्य पहलू है। वायु प्रवाह के लिए पुरातनकाल से हाथ या डोरी द्वारा चलित पंखे, चवर, हवादान आदि प्रयुक्त किए जाते रहे हैं। आज विद्युत से चालित पंखे उपलब्ध हैं। इन सब में स्थिर वायु पर बल (दाब) आरोपित कर कृत्रिम प्रवाह प्राप्त किया जाता है। इन कृत्रिम उपायों के बदले यदि प्रेक्षक स्वयं गतिमान हो जाए तो भी उन सभी घटनाओं का अनुभव कर सकता है जो नैसर्गिक या कृत्रिम वायु प्रवाह से घटित होती है। निष्कर्षतः गतिमान प्रेक्षक के लिए स्थिर वस्तु भी गतिमान प्रतीत हो सकती है तथा वह उन सभी अनुप्रयोगों, प्रभावों एव प्रेक्षणों के लिए सक्षम है जो अन्यथा स्थिर प्रेक्षक एवं गतिमान वस्तु द्वारा संभव थे। यही सापेक्षता के सिद्धांत का निरूपण है।

वायु प्रवाह से संबंधित घटनाओं का अब भौतिकशास्त्री द्वारा व्यवस्थित, सूक्ष्म तथा विवेचनात्मक परीक्षण निम्नानुसार हो सकता है।

● वायु प्रवाह क्यों होता है? उतर के रूप मे दाब में अंतर, वायु घनता में अतर या बाह्य कारकों की बाध्यता कारण हो सकते हैं। कुछ उत्तरो मे तापांतर (उष्णता) का जिक्र भी हो सकता है। प्रत्येक का विश्लेषण कराएं।

● वायु प्रवाह की दिशा क्या है? उत्तर रूप में क्षितिज तल में कोई दिशा, उर्ध्व दिशा या इन दिशाओं से कोई कोण बनाती दिशा जवाब हो सकता है। विश्लेषण में वायु प्रवाह से संबधित राशि दैशिक होना शामिल होगा।

● क्या वायु प्रवाह सतत् होता है? उत्तर के रूप में वायु प्रवाह के लिए प्रेरक कारक उपस्थित होना हो सकता है। जिसके विश्लेषण द्वारा वायु प्रवाह तब तक जारी रहेगा जब तक दाबांतर हो, घनता में अंतर हो अथवा बाह्य कारक क्रियाशील हों, अर्थ निकलेगा। निष्कर्ष के रूप में वायु प्रवाह दाबांतर/घनता को समाप्त करने का प्रयास करता है। कुछ उत्तर शरारतपूर्ण हो सकते हैं यथा वायु प्रवाह तब तक जारी रहेगा जब तक किसी स्थान की वायु समाप्त नहीं हो जाती, इसके साथ ही विद्वतपूर्ण जवाब भी मिल सकता है यथा गतिक जड़ता के कारण वायु की घनता बिंदु परक्षणिक रूप से कम हो सकती है किंतु विपरीत दिशा, उर्ध्व या पश्च वायु मात्रा आपूर्ति से यह असंतुलन समाप्त हो जाएगा। विश्लेषक को इन दोनों उत्तरों में सामजस्य बिठाना होगा।

● उपरोक्त सामान्य प्रश्नों के बाद उच्च स्तरीय प्रश्नोत्तर प्राप्त किए जाएं जैसे– क्या वायु प्रवाह में वायु-मात्रा प्रवाह-दर का कोई योगदान है? क्या वायु-मात्रा प्रवाह-दर संलग्न उर्जा से संबंधित है? क्या एक दिशा की

वायु प्रवाह का उपयोग कोण बनाते हुए दिशा मे किया जा सकता है? वायु प्रवाह की उपयोगी कार्य में परिणति कैसे कर सकते हैं? वायु प्रवाह में स्थित पिण्ड स्थिर बिंदु के सापेक्ष किस कोण पर अभिविन्यस्त होना चाहिए एवं क्यों? बहुत हलके एवं सूक्ष्म आकार के मुक्त पिण्ड अनियमित गति करते हुए क्यों प्रतीत होते है? आदि।

टंकी की टोंटी से पानी

सामान्यतः पानी का संधारण पानी की बडी टंकियों मे किया जाता है तथा आवश्यकता पड़ने पर उनके निचले भाग में लगी टोंटी से उसे प्राप्त किया जाता है (शहरों में ओवर हेड टंकी प्रयुक्त होती है)। एक बाल्टी लें तथा टोंटी के नल से उसे भरने का समय ज्ञात करें। पुनः इस प्रकार उतने ही आयतन के पानी भरने का समय ज्ञात करें। यह प्रक्रिया तब तक जारी रखे जब तक टंकी खाली नहीं हो जाती। हम पाते हैं कि समान आयतन पानी प्राप्त करने का समय क्रमशः बढ़ता जाता है। व्यवस्थित निरीक्षण द्वारा ज्ञात होता है कि पूर्ण भरी टंकी से 1 बाल्टी पानी प्राप्त करने से लगभग दुगना समय आधी भरी टंकी से प्राप्त करने में तथा चौगना समय चौथाई भरी टंकी से (इत्यादि) प्राप्त करने में लगता है। निष्कर्षतः पानी प्राप्त करने की दर उस क्षण टंकी में उपस्थित पानी की मात्रा के समानुपाती होती है। प्रकृति में घटने वाली क्षरण की घटनाएं लगभग इसी प्रवृत्ति का प्रदर्शन करती हैं।

पिण्ड का पृथ्वी पर गिरना

पृथ्वी की गुरुत्व शक्ति के कारण सभी पिंड पृथ्वी की ओर आकर्षित होते हैं। स्वतंत्र पिण्ड गिरते समय गति मे निरंतर वृद्धि करते हैं किंतु समान दूरी तय करने में समान समय तथा समान गति प्राप्त करते हैं। स्वतंत्र गिरते पिण्ड द्वारा किए जाने वाले आघात का अनुमापन विभिन्न परिस्थितियों में करें।

- पैर को जमीन से एक फीट ऊपर रखे तथा उससे 4 फीट ऊची दूरी से एक बॉल उस पर गिराएं तथा आघात महसूस करें।
- पैर को जमीन पर रखें तथा उसे 4 फीट ऊंचाई से वही बॉल पैर के उसी स्थान पर गिराएं और आघात महसूस करे।
- पैर को कड़ी सतह पर रखे तथा पुन. उससे 4 फीट ऊंचाई से बॉल से पैर के उसी स्थान पर आघात कराएं। हम पाते है कि आघात की तीव्रता क्रमशः बढ़ती जाती है।

सूक्ष्म निरीक्षण इंगित करता है कि बॉल की प्रत्येक परिस्थिति में पश्च उछाल (Recoil) की मात्रा अलग-अलग है अर्थात् उछाल गति अलग-अलग है। निष्कर्षतः अधिक उछाल गति होने पर आघात अधिक होता है यही न्यूटन का वितीय नियम है– सवेग में परिवर्तन की दर आरोपित बल के समानुपाती होती है।

उपरोक्तानुसार लगभग सभी यांत्रिक, उष्मीय आदि सिद्धांतो के प्रतिपादन अनुभव आधारित घटनाओ के विवेचन के द्वारा सभव है। हमारे शिक्षक, शिक्षार्थी एवं विषय ज्ञाता में इतनी सामर्थ्य है कि वे लगभग हर घटना के विवेचन हेतु विभिन्न उदाहरण प्रस्तुत कर हर क्षेत्र के छात्र को लाभान्वित कर सके। परिसर द्वारा शिक्षा वस्तुपरक होगी तथा अध्येता का अध्ययन उसे सार्थक प्रतीत होगा। ❑❑

क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान
मैसूर

विचार

आत्मा का परिदृश्य और शिक्षक शरीर

❑ सत्यनारायण शुक्ल

आत्मा जो परमात्मा से संचित राशि का अंश है, प्रायः विशुद्ध, विशुद्धता का नमूना कहा जाता है। जीवन की पवित्रता में इसका बडा ही सहयोग है। जीवन के परिचालन में तमाम तरह की विकृतियां आती हैं, जब मन घबराने लगता वहां आत्मा मन को सम्भाल देती है, दूसरे शब्दों में आत्मा मन की औषधि है। मन मस्तिष्क को अपने मन की करने को जब बाध्य करता है; वहां भले-बुरे की सूचना यह आत्मा ही देती है। मेरी आत्मा मुझे एक नेक-दिल इंसान बनने की ओर प्रेरित करती है और अन्य को भी नेक बनाने की इच्छा शक्ति रखती है।

जीवन दिन-प्रतिदिन जटिल होता जा रहा है। मानवता मानव से रूठने लगी है। आज की हवा में जो महक है उसमें मन अनियंत्रित हो गया है। आत्मा की सूचना को लोग अनसुना करने लगे हैं। यही कारण है कि मानव अपने चारो ओर कष्ट कंटक बिछा डालता है। आत्मा, मन और प्रकृति यही तो जीवन-गति के आयाम हैं। इन्हीं तीनो के बल-बूते पर जीवन की गाडी सरकती है। मन की प्रकृति बाह्य प्रकृति से प्रभावित होती है। हम जहां निवास करते हैं, उसके चारों ओर का वातावरण मन-प्रकृति पर हावी रहता है। ऐसा प्रायः पाया जाता है कि अनुवांशिक कर्म मानव को जीवन-गति मे अपनी ओर आकर्षित करता है। उस कर्म से अलग होना प्रकृति को अलग करना है। प्रकृति यानी स्वभाव की चित्रावली में ज्ञान की रेखाओं का बड़ा ही महत्त्व है। आत्मा की भूमिका पुनः आगे आती है और आपको एक ज्ञानी मानव बनने की ओर प्रेरित करती है। ज्ञान का स्रोत 'शिक्षा' है। यानी जीवन में शिक्षा का योगदान मानव शृंखला की अद्भुत कडी है। यह आपको एक दिशा-निर्देश करती है। इसके अभाव मे मनुष्य बिना सींग और पूछ का पशु माना जाता है। इस अद्भुत प्रक्रिया को परिभाषित करना आसान नहीं, हां! मै इसे 'जीवन की तैयारी' की संज्ञा दिया करता हूं। एक पश्चिमोत्तर प्राणी रसल साहब ने बडी अच्छी ऊक्ति जीवन के सन्दर्भ में जगत् को अपर्ण की–

"जीवन, विचार से वैचारिक
और
शिक्षा से निर्देशित होता है।"

मैं एक शिक्षक शरीर हूं। एक उच्च आदर्श और शिक्षकत्व का भार वहन किए अपने जीवन-मूल्यों के प्रति सचेष्ट रहना चाहता हूं। शिक्षक जब तक स्वयं आत्म चिन्तन कर अपने आपको प्रशिक्षित नहीं कर सकेगा तब तक वह शिक्षक शब्द के लायक नहीं बन सकता। उसी प्रशिक्षण के क्रम में संतों और महान आत्माओं की वाणी का श्रवण कर अपने आपको प्रशिक्षित करता रहता हूं।

यदि सोच की दिशा को और आगे ले जाएं तो कर्तव्य बोध का भान आत्मा का कर्मक्षेत्र हो जाता है। मन की लगाम आत्मा है। यह मैं मानता हू कि लोहार अथवा सोनार अपने कला प्रदर्शन में अच्छी आकर्षक वस्तु तथा गहनों के निर्माण मे कुछ कचरे को भी प्राप्त करता है। जीवन गति में अच्छे कार्य करने के क्रम मे बुराइयां स्वयं निर्मित हो जाती हैं तो क्या हम अच्छे कार्य को छोड़ देंगे...........कदापि नहीं.......।

मैं एक शिक्षक शरीर हूं। एक उच्च आदर्श और शिक्षकत्व का भार वहन किए अपने जीवन-मूल्यो के प्रति सचेष्ट रहना चाहता हूं। शिक्षक जब तक स्वयं आत्म चिन्तन कर अपने आप को प्रशिक्षित नहीं कर सकेगा

तब-तक वह शिक्षक शब्द के लायक नही बन सकता। उसी प्रशिक्षण के क्रम मे संतों और महान आत्माओं की वाणी का श्रवण कर अपने आपको प्रशिक्षित करता रहता हूं।

'शिक्षा' और 'शिक्षक' मानव मूल्यों के आधार स्तम्भ हैं। शिक्षा शब्द का निर्माण शिक्ष् धातु से हुआ है, जिसका अर्थ देना होता है। इसी वजह से शिक्षा देने वाले को शिक्षक कहा गया है। शिक्षक अपने सम्पूर्ण जीवन मे ज्ञान बिखेरने का काम करता है। अब यहा महत्वपूर्ण बात है कि ज्ञान का परिसीमन नहीं है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो अनवरत चलती रहती है। सांख्य-दर्शन में जन्म के कुछ ही दिनों के बाद ज्ञान की आवश्यकता का अनुभव मनुष्य करने लगता है और उम्र की दहलीज पर अपना पैर रखता वह इस ज्ञान का विस्तार और सूक्ष्म ज्ञान की ओर मुखातिब होने लगता है। बहुत कुछ वह प्रकृति से सीखता और पुनः प्रकृति का चितेरा मानव से ज्ञान प्राप्त करता है। ज्ञान प्रकृति के अन्दर इस प्रकार घुला-मिला है जैसे चीनी के साथ मिठास। बोध होने पर हमने गुड़ से चीनी तक की यात्रा को प्रशस्त किया, अब चीनी ने अपने मिठास को मिठाई का स्वरूप प्रदान किया। यह मै मानता हूं कि मिठाई के निर्माण में अन्य तत्वों का भी योगदान कम नहीं रहा है। इसी प्रकार जीवन में मिठास लाने के लिए शिक्षा रूपी चीनी से शिक्षक तत्व सम्पर्क कर विद्यार्थी रूपी मिठाई का निर्माण किया। मिठाई के निर्माण क्रम में शिक्षक रूपी हलवाई का महत्व कम नहीं है। निर्माणकर्ता कभी भी अपने सामान में गुणवत्ता कम नहीं करना चाहता। ....परन्तु निर्माण क्रम में हवाओं का रुख भी उसे प्रभावित करता है।

कभी-कभी यह परिलक्षित किया गया है कि मौसम के मिज़ाज ने व्यक्ति के कर्म साधना में अड़चने पैदा करने का संकल्प ले रखा हो। जिस प्रकार साधक अपने साधना-क्रम में इतना लीन हो जाता है कि मौसम को उसकी रहनुमायी करनी पड़ती हो, ठीक उसी प्रकार आज के सन्दर्भ में शिक्षक को एक साधक की भूमिका निभानी होगी और बदली परिस्थितियों को अपने साधना के बल पर शिक्षा के प्रति दृढ़-प्रतिज्ञ होना होगा।

आज चतुर्दिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण के लिए देश ही नहीं विदेश ने भी अपने माथे पर बल देना प्रारम्भ कर दिया है। 'शिक्षा' को मानव संसाधन के रूप में लिया गया है। जो कल शिक्षा मत्री हुआ करते थे, अब वे मानव संसाधन विकास मंत्री के पदनाम से जाने जाते हैं। यूनिसेफ की अगुआई में बिहार में शिक्षा परियोजना आज करीब 7-8 वर्षो से चलाई जा रही है। इस परियोजना में अरबों रुपए पानी की तरह बहाए जा रहे हैं। शिक्षा के तमाम घटको को परियोजना ने पुष्पमाला बनाकर शिक्षक के गले मे पहनाया। बी आर.सी. तथा सी आर. सी. केन्द्र बनाकर शिक्षक प्रशिक्षण शिविर चलाए जा रहे हैं।

शिक्षा क्यों. ....?
शिक्षा किसको........... ?
शिक्षा कैसे.... ....?
शिक्षा बल केन्द्रित अथवा
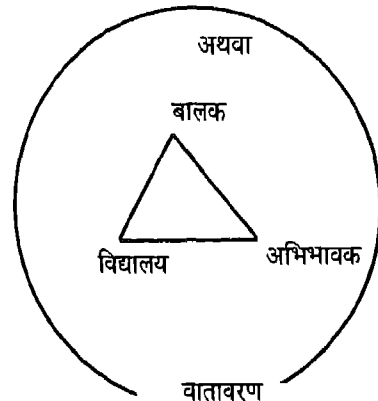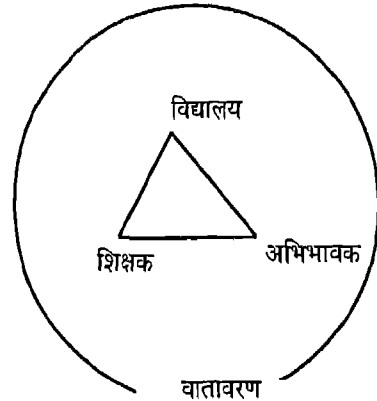
शिक्षा शिक्षक केन्द्रित

रूसो के शिक्षा सिद्धान्त को अपनाने की बात कही जा रही है। लौट चलो प्रकृति की ओर बच्चे को छोड दो प्रकृति की गोद में, सीखने दो प्रकृति से, फलने दो फूलने दो।" आदि सिद्धान्तो को लागू करने की कथा चल रही है बिहार में। शिक्षा में गुणवत्ता की परिकल्पना ही नहीं पूर्ण अस्वस्थता की कामना की जा रही है ...परन्तु कोई विशेष लाभ नजर नहीं आ रहे है।

हमारा देश विश्व मानव शृखला में दूसरे नम्बर का खिताब हासिल कर चुका है। आज अपने भारत की जनसंख्या, जनसंख्या विस्फोट के नाम से पुकारी जाने लगी है यानी जनसंख्या हमारी समस्या बन चुकी है। हा! प्रजातत्र मे सख्या से ही सरकार बनती है, इसका जुगाड हमने अवश्य कर लिया है। परन्तु.. चित्र उसी के सर्वव्यापी होते हैं जिनका चरित्र आदर्शवान होता है। इसका जुगाड करना बाकी है। ऐसी विषम परिस्थिति मे शिक्षा, शिक्षक और अभिभावक सभी का दायित्व मुखर हो उठा है।

शिक्षा की हवा गांव-गाव तक पहुंचाने का संकल्प आज मानव ससाधन का सकल्प हो गया है तो शिक्षक शरीर का दायित्व उस हवा में शिक्षारूपी धन को बच्चों को हृदय में ऊंडेल देना है।

इसलिए–

जीवन मथन से जो निकला विष,
वह उसने पान किया।
अमृत जो बाहर आया,
उसे जगत् को दान किया।।

❑❑

ग्राम व पोस्ट– चेनारी
जिला– रोहतास (सासाराम), बिहार

ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा सम्बन्धी समस्याएं व समाधान

❑ **रवि प्रकाश राय**

गांव गिरांव का नाम लेने के साथ एक ऐसे चिराग की तस्वीर हमारे मानस पटल पर उभरती है जो बुझने की शक्ल में जल रहा है। परम्परा में लिपटा हुआ गाव युगों से एक ही समानान्तर फ्रेम में जकडा हुआ है जिसमे गरीबी, अभाव और अशिक्षा की तस्वीर उभरती है। ऐसा माना जाता है कि उन्नति और विकास की रीढ शिक्षा है किन्तु आजादी के बाद के 55 वर्षो के हमारे शैक्षिक प्रयास के बावजूद हमारे गावों की दशा मे कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं आया है। हम किसी गांव में शिक्षा का पटल देखें तो उसमें हाथो में बैठने के लिए टाट के टुकड़े उठाए मैले कुचैले बच्चे दिखाई देगे, कभी गिरकर दुर्घटना करा सकने वाले भवन और बिना किसी टाइम टेबल के चलने वाली कक्षाएं दिखाई देंगी जिनका कोई सार्थक योगदान शैक्षिक प्रगति में दिखाई नही देता। प्रेम चन्द के होरी युग से लेकर आज के हीरो युग तक देहातों में पढाई के नाम पर दोपहर बाद गिनती, पहाडे रटाए जाते हैं और इसी बीच अध्यापक राजनीति मुकदमें बाजी अथवा ग्रामीण कूटनीति पर बहस करते देखे जाते है। यह उपेक्षित शिक्षा पटल वास्तव मे घोर चिन्ता का विषय है और आवश्यकता इस बात की है कि हम इस उपेक्षा का विश्लेषण करें और समाधान का और भी

सकेत करें जिससे राष्ट्र के आधार एव आत्मा के रूप में स्थित इन गांवों की दुर्दशा मे सुधार आ सके। अपने गांवो की शिक्षा सम्बन्धी कुछ समस्याओं का वितरण आधोलिखित है।

ऐसा माना जाता है कि उन्नति और विकास की रीढ़ शिक्षा है किन्तु आजादी के बाद के 55 वर्षो के हमारे शैक्षिक प्रयास के बावजूद हमारे गांवों की दशा में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं आया है। हम किसी गांव में शिक्षा का पटल देखें तो उसमें हाथों में बैठने के लिए टाट के टुकड़े उठाए मैले कुचैले बच्चे दिखाई देंगे, कभी गिरकर दुर्घटना करा सकने वाले भवन और बिना किसी टाइम टेबल के चलने वाली कक्षाएं दिखाई देंगी जिनका कोई सार्थक योगदान शैक्षिक प्रगति में दिखाई नहीं देता।

विद्यालय भवनों की जर्जर दशा

एक सर्वेक्षण के अनुसार अपने देश के लगभग 30 प्रतिशत विद्यालयों के भवन ही उपयुक्त हैं। गांवों में यह समस्या अत्यन्त जटिल है। गांवों में ऐसे अनेक विद्यालय है जहां खुले आकाश के नीचे पढाई-लिखाई की व्यवस्था होती है। इसके अलावा गांवो मे ऐसे स्कूल हैं जहां दिन में पढाई होती है लेकिन रात मे वहां के प्रधान के बैल बांधे जाते हैं। जर्जर मकानो के टूट जाने पर कई स्कूली बच्चे इस दिखावटी शिक्षा के नाम पर काल का ग्रास भी बन चुके हैं। ग्रामीण क्षेत्र के विद्यालय भी मौसम की दया पर खुलते व बंद होते है। ग्रामीण अंचल के ठेठ हृदय में स्थित कई प्राइमरी स्कूलों के भवनों का पलस्तर सतत् झरता रहता है, कमरों में बीमार शिक्षा पद्धति की पसलियों सी इटें यहां-वहा निकली हुई रहती हैं, वर्षो से न पुते ब्लैक बोर्ड ढीली कीलो से ग्लूकोज की बोतलो के समान टंगे रहते है। दुबले-पतले बीमार से बच्चे यहां-वहां घूमते है। सामान्यतया आवश्यक सामग्रियों एवं सुविधाओं के अभाव मे यहां मातम भरा वातावरण दिखाई देता है।

उदासीन अध्यापक

ग्रामीण अध्यापको का जीवन विसगति पूर्ण है। अध्यापकों से बात करने पर पता चलता है कि उनका वेतन तथा उनकी अन्य सुविधाए समाज के अन्य कर्मचारियों की तुलना में अत्यन्त कम हैं। आज भी अनेक अध्यापक 'करै मास्टरी दुई जन खाय, लडका हो ननिअउरे जाय।' कथन पर विश्वास करते हैं। उनका विचार है कि शिक्षक भी तो इसी धरती के प्राणी है। उनकी भी आवश्यकताएं हैं, उनको भी अच्छा जीवन व्यतीत करने के लिए अच्छे वेतन तथा अच्छी सुविधाओ की जरूरत है। धन के महत्व को शिक्षक के जीवन में स्पष्ट करते हुए एक अध्यापक ने एक कथा द्वारा बताया था। एक अध्यापक ने छात्रों को सिखाया 'पृथ्वी गेंद की तरह गोल है।' निरीक्षण के समय छात्रों ने यही उत्तर दिया। निरीक्षक महोदय ने अध्यापक से कहा "पृथ्वी गोल तो है लेकिन गेंद की तरह नहीं क्योंकि ध्रुवो पर जाकर यह चपटी हो जाती है।" अध्यापक बोले मुझे जितना वेतन मिलता है उससे पृथ्वी गेद की तरह गोल रहेगी। मेरा वेतन दुगुना कर दीजिए, ध्रुवों पर चपटी कर दूंगा। कहने का अर्थ है कि जितना गुड डाला जाएगा मीठापन उतना ही अधिक होगा।

परन्तु कुछ लोगों का विचार है कि आजादी के बाद अध्यापकों का वेतन कई गुना हो चुका है लेकिन उन्होने पृथ्वी को ध्रुवो पर चपटी नहीं किया है। उनके कार्य और व्यवहार में निरन्तर गिरावट ही आई है। कुछ अध्यापक प्राइवेट ट्यूशनों के भारी समय विभाग चक, घर और विद्यालय की लम्बी यात्राओं तथा अनेक काम-धन्धों के मध्य कभी कुछ समय निकल आता है तो जायका बदलने के लिए चले जाते हैं। किसी कक्षा में घड़ी-दो-घडी वहीं पड़ी कुर्सी पर पसर कर थकान मिटाने के लिए। नहीं तो अल्लाह-अल्लाह खैर सल्लाह। कहने का तात्पर्य है कि अधिकाश ग्रामीण शिक्षक मास्टरी पेशे की नौकरी करते हैं रोजगार नहीं। वे सब कुछ करते

हैं परन्तु पढाने का कार्य नहीं करते है। कुछ लोग इसी कारण कहते हैं कि अध्यापक लोग और विशेष रूप से गांव के अध्यापक पेंशन लेते हैं। कहने का तात्पर्य है कि एक उदासीन एव असन्तुष्ट अध्यापक न तो छात्रों का, न समाज का, न अपने पेशे का, न अपने गौरव का तथा न अपने देश का कल्याण कर सकता है। ग्रामीण शिक्षा वास्तव मे अध्यापकों के कर्त्तव्यच्युत होने से अधमरी-सी हो गयी है। धन की लालच तथा ट्यूशन की ललक के कारण शिक्षा की दुर्गति का चित्रण करते हुए एक विद्वान ने ठीक ही कहा है–

"आज के अध्यापक शिक्षा की अर्थी के आगे ट्यूशन की मटकी लटकाए अपने वेतन की धोती बाधे चल रहे हैं तथा शिक्षा की लाश के पीछे शोर मचाती छात्रों की भीड परीक्षा के शमशान घाट की तरफ जा रही है तथा जहां डिग्रियों के प्रेत उपलब्ध रहते हैं।"

नकल की बढ़ती महामारी

नगर की भांति गांवो में विशेष रूप से बोर्ड की परीक्षाओं में नकल की महामारी जंगल की आग की तरह तेजी से फैल रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में परीक्षा केन्द्रों के बाहर अभिभावकों और अध्यापकों का मेला लगा रहता है। ये केन्द्र किसी तीर्थ स्थल के रूप में बदल जाते है और प्रत्येक व्यक्ति यही कहते हुए सुना जाता है कि बहती गंगा मे हाथ धो लो। स्वर्गीय अज्ञेय ने शिक्षा के पेशे से जुडे लोगों को अपनी कहानी "चिड़ियाघर" में तोते कहकर सम्मानित किया है जो सम्मान काफी अंशो तक सही मालूम पडता है। परीक्षा केन्द्रो के बाहर बैठे बडे तोते यानी अध्यापक अन्दर परीक्षा दे रहे अपने वाले तोते के लिए नकल की पर्चियां या भविष्य पत्रियां बनाकर भेजते हैं। जब शत-प्रतिशत परिणाम आता है तब यही लोग बडी शान से अपनी सफलता पर गर्व करते हैं। वास्तव में नकल के इस गर्म बाजार मे प्रतिभा सिर घुनती है और बेईमानी मुस्कराती है तथा महत्व को प्राप्त करती है। आवागमन के साधनो की कठिनाई देहातों में होने से उड़नदस्ता भी नकल की महामारी को रोकने में सफल नहीं होता है। उडनदस्ते को दूर से ही देखकर परीक्षार्थियों को सूचित करके सावधान कर दिया जाता है—वतन की आबरू खतरे में है, होशियार हो जाओ।

प्राकृतिक कठिनाइयां

प्राकृतिक कठिनाइयों का सम्बन्ध मुख्यत ग्रामीण क्षेत्रो से है। राजस्थान जैसे रेतीले प्रदेश में गांवों के मध्य की दूरी बहुत अधिक होती है। कश्मीर, उत्तरांचल तथा हिमाचल प्रदेश आदि कम जनसंख्या वाले पर्वतीय प्रदेशो मे गांव एक-दूसरे से अधिक दूरी पर स्थित हैं। असम, मध्य प्रदेश व दक्षिण भारत के घने वनो से आच्छादित क्षेत्रों में अल्प जनसंख्या सुदूर गांवो में रहती है। कम जनसख्या वाले प्रत्येक गांव में प्रारम्भिक विद्यालय नहीं है तथा माता-पिता अपने बच्चो को संकटपूर्ण रास्तों से विद्यालय भेजकर अपनी मानसिक शान्ति को समाप्त नहीं करना चाहते।

अभिभावकों की अशिक्षा

गांवों के अधिकांश बालको के अभिभावक अशिक्षित हैं। वे शिक्षा को नौकरी का केवल एक साधन मात्र मानते है। वे आज भी 'उत्तम खेती मध्यम बान अधम चाकरी भीख निदान' की बात मे विश्वास करते हैं। उनकी अशिक्षा एवं गरीबी बालकों की शिक्षा के लिए अभिशाप बन जाती है। इसी कारण वे अपने बच्चों को विद्यालय भेजने के बजाय किसी ऐसे कार्य पर भेजना पसन्द करते हैं जिससे परिवार को कुछ आर्थिक सहायता मिल सके। आज भी हमारे गांवों में ज्यादातर परिवार ऐसे हैं जहा महिलाएं आज भी घर की चारदीवारी के बाहर कदम नहीं रख सकतीं। कुछ अभिभावक यह सोचते हैं कि लड़कियो को बस इतना ही पढना चाहिए कि वे पत्र लिखने व पढने मे सक्षम हो जाए। इसी कारण वे लडकियों की शिक्षा पर ध्यान नहीं देते हैं।

सामाजिक कुरीतियां

हमारे ग्रामीण समाज में अनेक ऐसी कुरीतियां व्याप्त हैं जो शिक्षा के प्रसार में बाधक हो रही हैं। उदाहरण के लिए बाल विवाह, जाति प्रथा बालिकाओं की शिक्षा के प्रति उदासीनता, सहशिक्षा को बुरा मानना, अस्पृश्यता

तथा रूढ़िवादिता आदि। जब छोटी आयु में विवाह हो जाता है तो प्रायः बच्चे अपना अध्ययन समाप्त कर देते हैं। आज भी ऐसे कट्टर जातिवादी लोग है जो अपने बच्चों का निम्न जाति के बच्चो के साथ पढ़ना पसन्द नहीं करते। कुछ अभिभावक तो अपने बच्चों को रूढिवादिता के कारण स्कूल नहीं भेजते।

इन बातों के विवरण से स्पष्ट है कि ग्रामीण शिक्षा समस्याओं से ग्रस्त है। इन समस्याओं के हल के लिए कुछ सुझाव इस प्रकार हैं–

- ☐ प्रत्येक प्राथमिक ग्रामीण विद्यालय में कम से कम दो बड़े कमरे तथा ब्लैक बोर्ड, नक्शे, टाटपट्टी, शैक्षिक सामग्री तथा पीने का पानी आदि सुविधाओं को उपलब्ध कराया जाए।
- ☐ ग्रामीण क्षेत्र के माध्यमिक विद्यालयों में चल रही नकल की प्रवृत्ति को रोकने के लिए नकल को दण्डनीय अपराध माना जाए।
- ☐ प्रत्येक गाव में कम से कम एक प्राथमिक पाठशाला खोला जाए तथा प्राथमिक शिक्षा को अनिवार्य एव निःशुल्क बनाया जाए इसके आलवा दोपहर की बालाहार योजना को लागू किया जाए।
- ☐ प्रौढ़ शिक्षा को महत्व प्रदान किया जाए तथा महिलाओ की शिक्षा को प्रोत्साहन देने के लिए लडकियों के लिए विद्यालय खोले जाए।
- ☐ ग्रामीण क्षेत्रों में बुवाई, कटाई आदि के दिनो में विद्यालय में अवकाश होना चाहिए ताकि बच्चे अपने अभिभावकों की मदद कर सकें।
- ☐ शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक विद्यार्थी का मौलिक अधिकार होना चाहिए व प्रत्येक अभिभावक के लिए यह जरूरी होना चाहिए कि बच्चों को नियमित रूप से विद्यालय भेजें ऐसा न करने वाले अभिभावको को दंडित करना चाहिए।

इन सुझावों को क्रियान्वित करने से समस्याओं से ग्रसित एवं भेड़-बकरियों के बाडे जैसे बनकर रहने वाले ग्रामीण विद्यालयों की दशा में अपेक्षित सुधार सम्भव है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जब तक ग्रामोत्थान नहीं होगा, विकास की किरणें दूर दराज की मटमैली गांव की बस्तियों को उजला नहीं करेंगी तब तक भारत का भविष्य उजला नही हो सकता है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्र में सुशिक्षा की व्यवस्था करने की आवश्यकता है तभी गांवों को शृंगार मिलेगा तथा सहारा मिलेगा। ग्रामीण वासियों के पारस्परिक सोच और पिछडेपन के छिलके को उतारने में निःसंदेह शिक्षा की भूमिका अत्यधिक होगी। ☐☐

तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय
जौनपुर, उत्तर प्रदेश

दलितों के मसीहा भीमराव अम्बेडकर का जीवन व शिक्षा दर्शन

❑ विनोद कुमार उपाध्याय

इतिहास इस बात का गवाह है कि जब-जब असहाय, निर्धन या सत्यवादी लोगों के विचारों को दबाया गया, भविष्य में उनके विचार ही समाज, राष्ट्र व विश्व को दिशा देने वाले अचूक शस्त्र साबित हुए हैं। इसी क्रम में डा. भीमराव अम्बेडकर के जीवन व शिक्षा दर्शन को भी देखा जा सकता है।

ईसा से 399 वर्ष पूर्व प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात को विषपान कराकर मृत्युदण्ड दिया गया था। यूनानी शासकों का आरोप था कि सुकरात यूनान के युवकों को प्राचीन विचारों व मूल्यों को ठुकराकर उन्हे नए मूल्य व शिक्षा देकर गलत रास्ते पर चलने की शिक्षा दे रहा है, लेकिन यूनानी शासक अधिक दिनों तक रूढ़िवादी मूल्यों एवं विचारो को जीवित नहीं रख पाए क्योंकि सुकरात के शिष्य प्लेटो और प्लेटो के शिष्य अरस्तु ने मानवतावादी, आदर्शवादी दर्शन की सहायता से एक नई दुनिया की नींव डाल दी। सन् 1600 मे ब्रुनो को जलाकर मार दिया गया उसका अपराध मात्र यह था, कि ब्रूनो, कापरनिकस के विचारो का प्रचार करता था। कापरनिकस ने इस सिद्धान्त का प्रतिपादन किया था कि ब्रह्माण्ड का केन्द्र बिन्दु पृथ्वी नही बल्कि सूर्य है। अतः पृथ्वी की परिक्रमा सूर्य नही बल्कि सूर्य की परिक्रमा पृथ्वी करती है। कापरनिकस ने एक स्वय की पुस्तक लिखी, लेकिन चर्च के भय के कारण वह उसका प्रकाशन नही करा पाया। बाद में उसके एक मित्र ने इस पुस्तक का प्रकाशन कराया था। यह पुस्तक प्राचीन मान्यताओ के असत्य को सत्य में बदल कर तत्कालीन समाज को नई दिशा प्रदान करने वाला आविष्कार साबित हुई।

इतिहास इस बात का गवाह है, कि जब-जब असहाय, निर्धन या सत्यवादी लोगों के विचारों को दबाया गया, भविष्य में उनके विचार ही समाज राष्ट्र व विश्व को दिशा देने वाले अचूक शस्त्र साबित हुए हैं। इसी क्रम में डा. भीमराव अम्बेडकर के जीवन व शिक्षा दर्शन को भी देखा जा सकता है। डा. भीमराव अम्बेडकर का जन्म 14 अप्रैल, 1891 में मध्य प्रदेश के अम्बोड़ गांव में राम जी सकपाल व भीमाजी बाई की 14वीं सन्तान के रूप में हुआ था। विद्यालय के समय से ही अम्बेडकर जी को छुआछूत के शूलों की चुभन होने लगी थी, वह अपनी कक्षा के दूसरे विद्यार्थियो के साथ नहीं पढ़ सकते थे, वे विद्यालय में अपने हाथ से पानी भी नहीं पी सकते थे और कोई ऊपर से पानी डालकर पिलाता तभी वे पानी पी सकते थे। डा. अम्बेडकर को अछूत होने के कारण ही संस्कृत विषय नहीं पढ़ने दिया गया था, बाद में अम्बेडकर संस्कृत अवश्य पढ़े। बचपन में ही अम्बेडकर ने यह अनुभव किया था, छुआछूत हिंदू धर्म पर एक कलंक है, तभी से उन्होंने इसे मिटाने के लिए संकल्प कर लिया था। मात्र 17 वर्ष की अवस्था में हाईस्कूल की परीक्षा पास करने के बाद ही उनका विवाह बम्बई में रमाबाई के साथ हो गया। सन् 1913 में उनके पिता जी का देहान्त हो गया। उस समय अम्बेडकर के पिता बड़ौदा के महाराज के यहां नौकरी कर रहे थे। बड़ौदा के महाराज ने अम्बेडकर को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए अमेरिका भेज दिया। अमेरिका में किसी प्रकार का छुआछूत नहीं था, अमेरिका के स्वच्छन्द वातावरण को एक पत्र द्वारा अपने मित्र को लिखा "हर आदमी के जीवन में कई बार ऊची लहरें आया करती हैं, अगर वह इस अवसर का सदुपयोग कर लेता है तो वह उसे अपने सौभाग्य की ओर ले जाती हैं।" इस पत्र में ही अम्बेडकर ने इस सिद्धान्त की आलोचना की थी, कि मनुष्य को इस संसार में जन्म के आधार पर पूर्व कर्मो के अनुसार सब कुछ प्राप्त होता है। इन्होंने अमेरिका से एम.ए. व कोलम्बिया विश्वविद्यालय से पीएच.डी. की

डिग्री हासिल की।

अमेरिका से वापस लौटने पर बड़ौदा मे उन्हें उच्च पद पर नौकरी प्राप्त हो गई, लेकिन छुआछूत का शूल बराबर चुभता रहा। जब वे बड़ौदा पहुंचे तो उन्हें स्वागत करने कोई नहीं पहुचा, कार्यालय मे नौकर उन्हें फाइल हाथ मे न देकर उनके आगे फेक देते थे, उन्हें कोई पानी पीने को नहीं देता था, उन्हें अछूत होने के कारण मकान भी किराये पर आसानी से नहीं मिलता था। कुछ ही दिनों बाद अम्बेडकर बड़ौदा से बम्बई वापस लौट गए। सन् 1920 में पुनः लन्दन कानून की शिक्षा लेने चले गए। लन्दन के ब्रिटिश म्यूजियम पुस्तकालय में वे प्रातः 8.00 बजे से साय 5.00 बजे तक अध्ययन करते रहते थे। सन् 1922 में वे बेरिस्टर बनकर भारत वापस लौटे। भारत में उन्होंने अछूतों पर होने वाले अत्याचार एवं अपमानों को उजागर करने के लिए एक पत्रिका 'मूक नायक' को प्रारम्भ किया। इस पत्रिका के पहले अंक में ही उन्होंने लिखा कि "हिन्दू समाज कई मंजिल इमारत की तरह है, इसके भीतर जाने के लिए न कोई सीढ़ी है और न बाहर आने के लिए कोई द्वार। यह समाज एक ओर विश्वास करता है, कि जड़ पदार्थो मे भी भगवान है, वही दूसरी ओर यह भी कहता है कि कुछ लोग जो उसी के अपने अंग है, छूने के योग्य भी नही हैं।"

1924 में डा. अम्बेडकर ने 'बहिष्कृत भारत हितकारिणी सभा' की स्थापना की। इसके लिए बम्बई के दामोदर हाल में अछूत वर्ग व अन्य वर्गो के लोगो को बुलाया गया। इस संस्था के निम्न उद्देश्य थे— ● छात्रावासों की स्थापना और अन्य आवश्यक साधनों द्वारा शोषित समाज में शिक्षण के विकास को बढ़ावा देना। ● पुस्तकालय सामाजिक केन्द्र और कथा तथा अध्ययन केन्द्र खोलकर दलितों में संस्कृति के विकास को बढ़ावा देना। ● औद्योगिक एव कृषि के स्कूलो की स्थापना कर, दलित समाज की आर्थिक स्थिति का सुधार एवं विकास करना। इन सबकी देखभाल के लिए हिन्दू, पारसी, मुसलमान सभी से उन्होंने मदद मांगी थी। उनका कहना था कुछ भी करो शिक्षा प्राप्त करो। बाबा साहब ने, लड़के-लड़कियो या दोनो के लिए अनिवार्य शिक्षा योजना को कार्यान्वित करने का उपाय सुझाया था। लेकिन उनका विचार था कि सभी को मुफ्त शिक्षा देने की आवश्यकता नहीं है, जिसमे फीस देने की आर्थिक ताकत है, उनसे फीस लेना उचित होगा। उन्होंने ब्रिटेन का उदाहरण देते हुए कहा कि ब्रिटेन में शिक्षा अनिवार्य है, फिर भी सभी को मुफ्त नहीं दी जाती है।" अम्बेडकर ने हर एक गतिविधि मे शिक्षा को स्थान दिया है। 27 दिसम्बर, 1927 को महाड़ मे, एक महिला सम्मेलन में उन्होंने कहा था, "अपने पुत्रों, पति तथा सम्बन्धियों को यदि वे शराबी हों, तो भोजन न दो। अपने बच्चों को स्कूल भेजो। जितनी शिक्षा पुरुषो के लिए आवश्यक है, उतनी ही महिलाओ के लिए भी अनिवार्य है। यदि आप पढ़ लिख जाए तो बहुत उन्नति हो सकती है, जैसे आप होगे वैसे ही आपके बच्चे बनेंगे। उनके जीवन को सद्सच्चरित्र बनाओ, क्योंकि पुत्र ऐसे होने चाहिए जो ससार में अपने पदचिह्न को छोड़ जाए।"

16 जून, 1928 को बाबा साहब ने 'भारतीय समाज शिक्षा प्रसार समिति' नाम से एक नए संगठन की स्थापना की। इस नए संगठन के गठन का मुख्य कारण उन्होने—सवर्णो की दलित विद्यार्थियो में उदासीनता को बताया था। अम्बेडकर अछूतो के उद्धार के लिए निरन्तर प्रयास करते रहे, जब 1931 में गोल मेज सम्मेलन हुआ, तो उन्होंने हरिजनो के लिए पृथक् निर्वाचन मण्डल की मांग की और 10% स्थान विधान मण्डलों में सुरक्षित रखने का एक्ट पास करा लिया। भारतीय इतिहास में इसी समझौते को पूना एक्ट भी कहा जाता है। 1936 में अम्बेडकर ने 'स्वतन्त्र मजदूर दल' नामक एक राजनैतिक पार्टी का गठन किया। उन्होंने पार्टी के घोषणा-पत्र मे शिक्षा के सम्बन्ध में निम्न बातों पर जोर दिया था— ● नि.शुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का प्रबध। ● प्रौढ़ शिक्षा का प्रबन्ध। ● व्यावसायिक तथा तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था। ● दलित छात्रों को उच्च शिक्षा हेतु शासन द्वारा भारत तथा विदेश में व्यवस्था। ● प्रादेशिक विश्वविद्यालयो की स्थापना तथा विश्वविद्यालयों की शिक्षा की पुनर्रचना।

जैसे-जैसे बाबा साहब की उम्र बढ़ती गई वैसे-वैसे उनके भीतर स्वय एवं दूसरों को शिक्षा देने की इच्छा बलवती होती गई और उन्होने इसके लिए समय-समय पर प्रयास भी किया। सन् 1946 के वर्ष को वे क्रान्तिकारी मानते थे क्योंकि इसी वर्ष 'पीपुल्स एजूकेशन सोसायटी' की स्थापना की। उस समय उन्होने ने कहा था कि 'गुलामों को उनकी गुलामी का अहसास हुआ, इसीलिए उन्होने अपनी मुट्ठिया बांध लीं। लोगो को गुलामी की आदत डालने वाली, देश को विकलांग करने वाली, अन्यायी समाज रचना को बढ़ावा देने वाली, समाज व्यवस्था को यदि मिट्टी में मिलाना हो, तो शिक्षा ही एकमात्र हथियार है, शिक्षा से ही लोग जागरूक होते हैं।' बाबा साहब अम्बेडकर चाहते थे कि शिक्षा को आम लोगों तक पहुंचाया जाए, इसलिए उन्होने परिवर्तनशील शिक्षा का आग्रह किया था। वे जानते थे कि शिक्षा एक हथियार है। इस हथियार को अपनाने वाले यदि चरित्रवान नही होंगे, तो इस हथियार का गलत उपयोग होगा। शिक्षा के जरिए सामाजिक लोकतंत्र को बढ़ावा देने वाले चरित्रवान विद्वान जब तक पैदा नही होते, तब तक उस शिक्षा को कोई महत्व नहीं है। 'पढ़ो, एक हो जाओ और संघर्ष करो।' यह नारा दिया था उन्होने और अपना पूरा जीवन उन लोगों के लिए न्याय और समानता दिलाने में लगा दिया जिन्हे समाज अछूत मानता है। वे अकसर कहा करते थे कि ईश्वर मुझे तब तक न उठाए जब तक मैं अछूतो के लिए अपने काम को पूरा नहीं कर लेता और उन्होने अपनी आखो से ही अस्पृश्यता को अपराध घोषित कर दिया, जिससे अछूतो को राजनैतिक समानता भी प्राप्त हो गई। 1 सितम्बर, 1950 को औरांगाबाद मैं, मिलिन्द महाविद्यालय की नींव रखते समय तत्कालीन राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद की उपस्थिति मे बाबा साहब अम्बेडकर ने कहा था कि "हिन्दू समाज की पिछड़ी जाति मे पैदा होने के कारण मैं शिक्षा का महत्व जानता हूं।" सन् 1951 के बाद ही उनका स्वास्थ्य लगातार खराब रहने लगा, लेकिन वे परिश्रम करना, गरीबों को न्याय दिलाने का कार्य अनवरत करते रहे। 6 दिसम्बर, 1956 को उन्होंने अपना शरीर त्याग दिया। ❑❑

श्री अग्रसेन स्नातकोत्तर शिक्षा महाविद्यालय
केशव विद्यापीठ, जामडोली, जयपुर, राजस्थान

ग्रामीण विकास में पुस्तकालयों का महत्व

❑ हरीश अवस्थी

"मुझे नरक में भेज दो, मैं वहां भी स्वर्ग बना लूंगा, यदि मेरे पास पुस्तकें हों।" देश की आजादी के लिए अपना पूरा जीवन न्यौछावर करने वाले महान नेता लोकमान्य तिलक का यह कहना पूरी तरह सही है। यह बात उन पर पूरी तरह खरी भी उतरती है। उन्होंने वर्षों तक जेल का कष्टपूर्ण जीवन सिर्फ किताबों के सहारे ही बिताया था। यही नहीं जेल में रहते हुए ही उन्होंने गीता रहस्य जैसे महान ग्रंथ को भी लिखा था। भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरु भी जेल में अपना समय किताबे पढ़कर और लिखकर बिताते थे। इन उदाहरणों से पता चलता है कि किताबें हमारी सच्ची साथी है। किताबों की दुनिया एक ऐसी दुनिया है जिसमे रहने वाला आदमी सब कुछ पा सकता है। टेलीविजन जैसे दृश्य साधनों के विस्तार के बावजूद पुस्तकों का महत्व आज भी ज्यों का त्यो है। शिक्षा के विकास के कारण पुस्तको की उपयोगिता और भी बढ गई है। दूसरे साधन जहां मनोरंजन प्रधान है वहीं पुस्तकें मनोरंजन के अलावा भरपूर ज्ञान भी देती हैं। किताबों का उपयोग हम हर जगह हर समय कर सकते हैं। ज्ञान पाने का सबसे सरल और सस्ता साधन किताबे ही है। किताबें हर उम्र के हर व्यक्ति के लिए उपयोगी होती हैं।

किताबो के महत्व को स्वीकार करते हुए यह भी मानना होगा कि वर्तमान समय मे ज्यादातर किताबे पढ़े-लिखे शहरी लोगों को ध्यान मे रखकर लिखी जा रही है। वैसे कुछ संस्थाओं द्वारा नवसाक्षरो के लिए भी कुछ किताबें प्रकाशित हुई हैं पर ग्रामीण क्षेत्रो की जरूरतों के हिसाब से ये काफी नहीं हैं। शहरो में थोड़ी बहुत संख्या में पुस्तकें पढ़ी जाती हैं। एक दो सार्वजनिक पुस्तकालय भी होते हैं पर गावों में किताबें पढने की तरफ खास ध्यान नहीं दिया जाता। इस कमी को गांव-गांव में ग्रामीण पुस्तकालय खोलकर पूरा किया जा सकता है। कुछ समय पहले प्रौढ शिक्षा और साक्षरता कार्यक्रमों के तहत गांवों मे छोटे-छोटे पुस्तकालय खोले गए थे पर या तो वे अव्यवस्था की भेंट चढ़ गए या भ्रष्टाचार की। ग्रामीण क्षेत्रो में पुस्तकालयो की स्थापना एक अभियान के रूप में की जानी चाहिए। इस काम में ग्राम पंचायत, स्कूल, स्वयंसेवी संस्थाओ, भजन मंडलियों, शिक्षित बच्चो व नौजवानों का सहयोग योजनाबद्ध ढंग से निश्चित किया जाना चाहिए। जहां स्थायी पुस्तकालय स्थापित न किए जा सकें वहां चल पुस्तकालयों से काम चलाया जा सकता है। देश में कई राज्यो में ऐसे प्रयास सफल भी हुए हैं।

ग्रामीण पुस्तकालयों के लिए ग्रामीण सामाजिक अर्थव्यवस्था के अनुरूप किताबें तैयार की जानी चाहिए जो मनोरंजन, लोक कला, ज्ञान, ग्रामीण व्यवसाय, उन्नत कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई की जानकारी से जुड़ी हों। ये किताबें सरल बोलचाल की भाषा में रोचक ढंग से लिखी गई हों न कि सीधी सपाट जानकारी या उपदेश के ढंग पर, तभी गांव का कम पढ़ा लिखा व्यक्ति इनका उपयोग कर सकेगा। स्थानीयता और क्षेत्रीयता को भी ध्यान में रखना होगा। ग्रामीण पुस्तकालयों और ग्रामीण पाठकों के लिए उपयोगी पुस्तकों के लेखन और प्रकाशन की व्यवस्था क्षेत्रीय स्तर पर करनी पड़ेगी तभी गांव की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकेगा।

ग्रामीण क्षेत्रो में लोगों का किताबों से नाता सिर्फ पढाई-लिखाई के दिनो में ही रहता है वह भी स्कूल की पाठ्यपुस्तको के साथ, जबकि किताबों का महत्व जीवन भर बना रहता है। संसार में ऐसे कई महान व्यक्ति हुए हैं जो कभी स्कूल में नहीं पढ़े पर स्वाध्याय के रूप में खुद किताबें पढकर इतना ज्ञान प्राप्त कर लिया

कि उनकी गिनती बडे-बडे विद्वानों में की जाती है। अपने देश मे भी स्वाध्याय को बड़ा महत्व दिया गया है। अज्ञान को अंधेरा और ज्ञान को प्रकाश कहा गया है इसलिए हमारे ऋषि मुनि यह प्रार्थना करते थे– "तमसो मा ज्योतिर्गमय" यानि अधेरे से उजाले की ओर ले चलो। इसका वास्तविक अर्थ अज्ञान से ज्ञान की ओर जाना ही है। यह रास्ता किताबो से होकर जाता है। पढाई के लिए उम्र बाधक नहीं होती है। स्वाध्याय तो जीवन भर किया जाता है। शास्त्रो में भी लिखा है–

गतेऽपि वयसि गाहय विद्या सर्वात्मिना वुधैः।
यद्यपि स्यान्न फलदा सुलभा सान्य जन्मनि।।

अर्थात् हे मनुष्यो ! उम्र बीत जाने पर भी यदि विद्या पाने के लिए प्रयत्नशील हो तो निश्चय ही तुम बुद्धिमान हो। यदि विद्या इस जीवन में फलीभूत नहीं हुई तो अगले जीवन में वह आपके लिए सुलभ बन जाएगी। गांवो में स्कूली शिक्षा पूरी करने के बाद अधिकांश बच्चे आगे नहीं पढ़ते और अपने परम्परागत व्यवसाय या खेती-किसानी के काम मे लग जाते हैं। स्कूल छोड़ने और काम से लगने के बीच मे कुछ समय रहता है। यह बीच का समय किशोर और युवा उम्र के लोग अक्सर ताश, चौपड़ जैसे बेकार के कामो में बिताते हैं। धीरे-धीरे उनमें नशेबाजी जैसी बुराइयां भी आ जाती हैं। ऐसी स्थिति मे गांवों में एक अच्छा पुस्तकालय किशोरावस्था और युवावस्था के व्यक्तियों को स्वच्छ मनोरंजन देने के साथ-साथ उनके काम व्यवसाय से संबंधित ज्ञान भी दे सकता है। इससे सामाजिक बुराइयों में काफी कमी आ सकती है। बड़ी उम्र के लोगो के पास काफी समय रहता है जिसे काटना उनके लिए मुश्किल होता है ग्रामीण पुस्तकालय ऐसी बड़ी उम्र के लोगो के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगे। ऐसे पुस्तकालय नया पढ़ना-लिखना सीखे लोगो को आगे पढ़ने और सीखने मे मददगार होंगे।

वैसे तो ग्रामीण क्षेत्रो मे महिलाएं काफी व्यस्त रहती हैं फिर भी उनका दोपहर बाद का कुछ समय फुर्सत का होता है जो बेकार की बातचीत मे नष्ट किया जाता है। पढी-लिखी महिलाओं को शादी के बाद गांव में पढने-लिखने के कुछ भी साधन नहीं मिलते हैं। ग्रामीण पुस्तकालय उनके मनोरजन के साथ-साथ सिलाई, बुनाई, कढाई, रसोई, सफाई, बच्चों का पालन पोषण, बीमारी से बचाव, वगैरह से जुडी अच्छी किताबें उपलब्ध करा सकते है। इस तरह ग्रामीण पुस्तकालय महिलाओं के लिए भी उपयोगी सिद्ध होंगे। ग्राम स्वराज्य के सिलसिले मे भी ग्रामीण पुस्तकालयों का खोला जाना उपयोगी होगा। इनके जरिए ग्राम पचायत, ग्राम सभा, ग्राम स्वराज्य, ग्राम न्यायालय, मतदान संबधी जागरूकता, सरकारी योजनाओं की जानकारी आसानी से गाव के लोगो तक पहुंचाई जा सकेगी।

ग्रामीण पुस्तकालयों के लिए ग्रामीण सामाजिक अर्थ-व्यवस्था के अनुरूप किताबें तैयार की जानी चाहिए जो मनोरंजन, लोक कला, ज्ञान, ग्रामीण व्यवसाय, उन्नत कृषि, शिक्षा, स्वास्थ्य, सफाई की जानकारी से जुडी हों। ये किताबें सरल बोलचाल की भाषा मे रोचक ढंग से लिखी गई हो न कि सीधी सपाट जानकारी या उपदेश के ढग पर, तभी गाव का कम पढा लिखा व्यक्ति इनका उपयोग कर सकेगा। स्थानीयता और क्षेत्रीयता को भी ध्यान में रखना होगा। ग्रामीण पुस्तकालयों और ग्रामीण पाठकों के लिए उपयोगी पुस्तको के लेखन और प्रकाशन की व्यवस्था क्षेत्रीय स्तर पर करनी पड़ेगी तभी गाव की आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकेगा।

ग्रामीण विकास के लिए जरूरी है कि गावों में भी नई-नई जानकारी, नई तकनीकी और नए ज्ञान की पहुंच हो। इसके लिए ग्रामीण पुस्तकालय बहुत उपयोगी साबित होंगे। इन पुस्तकालयो के द्वारा गांव के बेरोजगार व्यक्ति स्वरोजगार की तरफ प्रेरित किए जा सकते हैं। उनके परम्परागत व्यवसायों में सुधार किया जा सकता है। ये पुस्तकालय उन्नत खेती के लिए अच्छे बीज, यंत्र, जैविक-रासायनिक खाद, कीटनाशकों का उपयोग, ऋण सबंधी जानकारी, भूमि सुधार, पशुपालन और कल्याणकारी सामाजिक योजनाओं की जानकारी के केन्द्र बन सकते है। ग्रामीण पुस्तकालय गांव के परम्परागत ज्ञान और आधुनिक ज्ञान को जोड़ने में एक कडी का काम करेंगे। जरूरत इस बात की है कि ग्रामीण क्षेत्रों में पुस्तकालय स्थापित करने के गभीर प्रयास किए जाएं। पहली जरूरत ग्रामीण जनों की प्यास जगाने की हैं। यह कार्य जितनी जल्दी किया जाए उतना ही अच्छा होगा। सरकार पर पूरी तरह निर्भर रहने के बजाय गांव के पढ़े-लिखे लोगों और स्थानीय जन प्रतिनिधियो को भी इस काम में आगे आना चाहिए। ❑❑

जिला शिक्षा और प्रशिक्षण संस्थान
कुण्डेश्वर, जिला टीकमगढ़, मध्य प्रदेश

प्राथमिक शिक्षक की जरूरत : *शिक्षक किट*

❑ बलवीर सिंह

शिक्षण सहायक सामग्री का प्राथमिक बालकों के जीवन में अपना ही महत्व है। अध्यापक प्रशिक्षण में चार्ट, मॉडल बनाना सिखाया जाता है। पाठ व विषय विभिन्न प्रकार की शिक्षण सामग्री से भरे पड़े हैं। शिक्षण सामग्री निर्माण की प्रक्रिया पर शहरी तरीकों का भार है। बिना किसी प्रशिक्षण से शिक्षण अभ्यास से पहले अधिकतर स्वयं बढ़िया-बढ़िया मॉडल लेकर प्रशिक्षण संस्थानों में आते हैं। अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों में यहां-वहां प्रदर्शनी कक्ष भी बने होते हैं तथा कमरों व विभिन्न संकायों के बाहर शिक्षण सहायक सामग्री का काफी प्रदर्शन होता है।

आज का युग सभी के लिए शिक्षा का युग है। *सीखने-सिखाने की आसानी व ज्ञान की गुणवत्ता का महत्व* छात्र केंद्रित शिक्षण विधियों व शिक्षण सामग्री से ही बढ़ाया जा सकता है। एक कला कक्ष में जब विभिन्न जातियों, वर्गो व समूहों के छात्र बैठे हो तो शिक्षण अनुभव, शिक्षोत्तर उदाहरण, शिक्षण सहायक सामग्री भी सभी वर्गो की विरासत व परम्परागत समझ से लिए जाएं तो सीखने की क्षमता, स्थायित्व, छात्रो के आपसी सम्बन्ध, छात्र-अध्यापक अंतर्क्रिया ज्यादा ही रहती है। एक ही कक्षा कक्ष या बालसभा स्थल या प्रार्थना सभा स्थल मे जब विभिन्न सामाजिक समूहों के बच्चे अपने अध्यापक को अपनी-अपनी सांस्कृतिक विरासत को स्वीकारते, बताते, अपनाते पाते है, तो सभी छात्र अप्रत्यक्ष रूप से अपनी विरासत की महानता, साझापन व कमियों की पहचान करते हुए मानवीय मूल्यो के प्रति निष्पक्ष व सतही समझ विकसित करते है। स्व की भावना के उदात्रीकरण के साथ-साथ इन बच्चों में मानव की पहचान का गुण, खुला दृष्टिकोण काम के प्रति सार्वभौमिक दृष्टिकोण विकसित होता है। स्थानीय स्तर की बातों का महत्व पाठ्यचर्या से जोड़कर पढ़ाने वाले अध्यापको की कक्षा मे प्रथम पीढ़ी के पाठक तक गौरवान्वित महसूस करते हैं। कक्षा मे सीखना उनके लिए अनोखी घटना की शुरुआत न होकर, अपने जीवन की क्रियाओं का उत्तरोत्तर विकास ही लगता है। विभिन्नता व बधे ढांचे मे जब वह अपने परिवार व परिवेश की चीजों की उपयोगिता देखता है तो शिक्षा से उसका लगाव बढ़ता है। घर उसके लिए प्रयोगशाला व स्कूल उसे सिद्धान्तो को समझने में सहायक लगता है। पाठ्यक्रम में बने पक्षियों, नदियों, जल के चित्रों को जब अध्यापक स्थानीय पक्षियों से जोड़ता है तो छात्र के अंतर्मन मे सीखने की आसानी धीरे-धीरे ऊपन उठने लगती है। उसे लगता है कि इस स्थान पर भी मेहनत से मै आगे निकल सकता हूं। पुस्तकें मेरे जीवन का ही विकास होगी। प्रश्न ये उठता है कि प्राथमिक शिक्षा सिद्धान्तों व आदर्शों से भरी होने के बावजूद स्थानीय स्तर के ज्ञान व सामग्री से दूर क्यों है?

शिक्षण सहायक सामग्री का प्राथमिक बालकों के जीवन मे अपना ही महत्व है। अध्यापक प्रशिक्षण में चार्ट, मॉडल बनाना सिखाया जाता है। पाठ व विषय विभिन्न प्रकार की शिक्षण सामग्री से भरे पड़े हैं। शिक्षण सामग्री निर्माण की प्रक्रिया पर शहरी तरीकों का भार है। बिना किसी प्रशिक्षण से शिक्षण अभ्यास से पहले अधिकतर स्वयं बढ़िया-बढ़िया मॉडल लेकर प्रशिक्षण संस्थानों में आते हैं, अध्यापक प्रशिक्षण संस्थानों में यहा-वहां प्रदर्शनी कक्ष भी बने होते है, कमरों व विभिन्न संकायों के बाहर शिक्षण सहायक सामग्री का काफी प्रदर्शन होता है। ये सब होने के बाद जो एक बात दुख देती है वह है ये प्रशिक्षण पा रहे अध्यापक बहुत कम मामलों

में अध्यापक बनने पर ये चीजें बनाते है। शायद धन भी पहाड़ी राज्यो मे या गरीब राज्यों में समस्या रहती है। इसके पीछे अंक प्राप्ति की राजनीति व मजबूरी, प्रशिक्षण की कमी, प्राथमिक शिक्षको का नवीन विधियों के प्रति दृष्टिकोण आदि असख्य बातें एक ही सांस में गिनी जाती है। अगर सभी राज्यो के शिक्षक प्रशिक्षण विद्यालय स्थानीय स्तर की सामग्री के सहयोग से व बिना कीमत के मॉडलो व शिक्षण सहायक सामग्री को ही अक से जोड़ दे तो शायद दस वर्ष में समस्या नही रहेगी। ऐसा करने से पूरे शिक्षा ब्लाक में एक ही स्कूल नही बल्कि सभी स्कूलो को वार्षिक परीक्षण में दिखाया जा सकता है। परीक्षण के लिए शिक्षा से जुडे अन्य अधिकारियों को परीक्षणकर्ता के साथ-साथ चलकर नही बताना पड़ेगा। स्थानीय स्तर के उपलब्ध सामान का ही प्रयोग अगर प्राथमिक शिक्षक किट के रूप मे करना सिखा दिया जाए तो स्थिति कोई आए, कभी भी आए और कहीं भी देख ले तथा जिसे चाहे उसे रिपोर्ट देने के लिए समर्थ हो जाएंगे। हमे समझना पडेगा कि दूर से भूलते-भुलाते ही हमें अपने ही घर को पहचानने की क्षमता की अपेक्षा अपने घर से विश्व की ओर चलने का गुण विकसित करना इस सदर्भ में ज्यादा उपयोगी रहेगा।

हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा जिले की डाईट धर्मशाला मे पाया गया कि छात्राध्यापक स्थानीय परिवेश की चीजो की अपेक्षा उपरोक्त चीजों का ही प्रयोग ज्यादा करते है। इस समस्या से निजात पाने के लिए राज्य स्तरीय शिक्षक पुरस्कार विजेता अध्यापक ने एक शब्द का प्रयोग किया कि जब शराबी के पास शराब की बोतलो का सग्रह होता है, तो अध्यापक के पास किताबों का सग्रह क्यों न हो। जब डाक्टर के पास अपने व्यवसाय से जुड़ा किट होता है तो अध्यापक भी प्रशिक्षण के दौरान अपना प्राथमिक अध्यापक किट बनवा सकते हैं। उनका कहना था कि ये किट ऐसा हो जिसे पहाडी आंचल के छात्र भी बना सकें तथा उपयोग भी करे। इस प्रकार प्राथमिक शिक्षक किट के रूप मे ऐसे किट की कल्पना की जिसमें स्थानीय स्तर की सामग्री से बनाकर या उसी स्वरूप में सीखने के मनोविज्ञान के नियमो पर आधारित स्थानीय बेकार समझी जाने वाली सामग्री का सग्रहित थैला। हमने साथ लगती खड्ड से विभिन्न प्रकार के पत्थर, प्रशिक्षण महाविद्यालय के बाहर सफेदों के गिरे सूखे व विभिन्न आकृतियों वाले पत्ते, प्रशिक्षण महाविद्यालय के पुराने सग्रहित चार्ट व गत्ते, सरसो की व गेहूं की कटाई से बाद बचे जमीन मे से किसानो द्वारा निकाले गए डण्ठल, शहतूत की छंटाई के समय व बांस की छटाई के समय बांस व शहतूत की डण्डियों को इकट्ठा कर धागे से बांध कर ( ) (○ — \ /) आकृतियां बनाई गई, छोटी-छोटी कपड़े की थैलियो में *स्थानीय अनाजो, फलो के बीजो व पत्तियो का चार्टों* पर लगाकर संग्रह, पुरानी अखबारों से बाल कहानियो, बाल कविताओ, पहेलियो, चुटकलो, पज्जल, बाल खेलों, नवीन जानकारी तथ्य इकट्ठे कर चार्टो पर लगाकर अलग-अलग स्क्रैप बुकें बनाई गई, प्रशिक्षण सस्थान की कैटीन से कोका-कोला की बोतलों के ढक्कन व उनकी मालाएं बनाकर गिनती, जमा, घटाना व भाग की मूल समझ पैदा की गई। सामान जैसे घी के डिब्बे को इकट्ठा कर उनके ऊपर गुड्डी कागज या चार्ट पेपर चिपकाकर गिनती, वर्णमाला, अंग्रेजी के लैटर्स बनाने का प्रशिक्षण भी दिया गया। पुराने चार्टो से ही प्रश्नोत्तरी पर्चियां, प्रार्थना सभी स्थान पर बोले जाने वाले लेख, प्रश्नोत्तरियां बनाई गई। इन चार्टो से ही (○) (— \ /) नामक चिन्हों की दस-दस आकृतिया इकट्ठी की गईं। संस्थान के सगीत अध्यापक के सहयोग से प्रार्थनाओ, राष्ट्रगीत, राष्ट्रगान व शपथ का संग्रह करवाकर सगीत फाइल तैयार की गई। योग के अध्यापक ने योग फाइल बनवाई। अखबार पशुओं, पक्षियों, पहनावो, पेड़ों, दृश्यों, विभिन्न देशों के प्राकृतिक व सामाजिक दृश्यो का संग्रह कर उसका खिड़की माडल बनाया गया। इसी के आधार पर घटाव की खिड़की, दृश्यो की खिड़की बनाने का भी प्रशिक्षण दिया गया। खेलों व छात्रों से जुड़े खेलो के चित्र भी संग्रहित किए गए। कार्य अनुभव प्रशिक्षिका के माध्यम से चिकनी मिट्टी से फल, आदमी, बस, खिलौने भी बनवाए गए तथा रफ कापियो से कागज की किश्तियां, पक्षी, जहाज व प्राथमिक छात्रों की रुचि के अनुरूप सामग्री तैयार की गई।

स्थानीय गानो व राज्य के सभी जिलो के एक सी लय वाले लोकगीतो की बारह खड़ी का संग्रहण किया गया। साक्षरता समिति व जिला क्षेत्रीय औषधालय के सहयोग से सामाजिक बुराईयों को दूर करने की चेतना देने वाले, बीमारियों जैसे नेत्र, एड्स, मलेरिया से बचने वाले चार्ट व बाल स्वास्थ्य गाईडों का भी संग्रह किया गया। स्थानीय प्रचार प्रसार कार्यालय के सहयोग से सरकारी योजनाओं की जानकारी के चार्ट भी संग्रह किए गए। इसके अलावा प्राथमिक पाठशालाओं के बाहर व अन्दर की सुन्दरता के लिए चार्ट व नारे, महापुरुषों व परम्पराओं की बातें, बालकों को समझने के लिए मनोविज्ञान के प्रयोग के लिए पुस्तिकाएं तैयार की गई। सभी अध्यापको को कहा गया कि प्रतिवर्ष प्राथमिक शिक्षण या अन्य अपनी रुचि की एक पुस्तक साल में जरूर खरीदे ताकि संग्रह हो सके। अध्यापक डायरी इस किट की जरूरी वस्तु बताई गई। सभी छात्रों को स्वयं अपनी डायरी लिखकर दिखाई गई। विभिन्न पत्रों को लिखना, डाक प्राप्त करना, भेजना, आनाज व पुस्तकें बांटना आदि कार्यों की फाइल बनाना भी सिखाया गया। सभी अध्यापकों को इस किट में अंग्रेजी व हिन्दी भाषा के वर्तमान पाठ्यक्रम के अनुसार शब्दकोष स्वयं तैयार कर रखने को कहा। इस किट को तैयार कर अध्यापक ने स्वयं प्रार्थना सभा में प्रदर्शन किया। ये सारा काम कई बार कक्षाओं में ही, तो कई बार शिक्षण अभ्यास में प्रयुक्त किया गया। इस किट के अधिकतर सामान का प्रयोग प्राथमिक अध्यापक प्रशिक्षुओ में कांगडा जिले के रा. प्रा. पा. बगली व सकोह में किया। इस पूरे सामान को सेवारत अध्यापकों के प्रशिक्षण व वर्तमान अध्यापक प्रशिक्षुओं को बनवाया जा सकता है। सस्ता खद्दर का कपड़ा लेकर किट रूप में सिलाकर उस पर सफेद कपडे से प्राथमिक अध्यापक किट लिखा जा सकता है।

इसे तैयार करने के लिए जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्थानो के प्रवक्ताओं को समूह रूप मे काम करना पडता है। छात्रों को दो-तीन महीने का समय सामान इकट्ठा करने के लिए दिया जा सकता है तथा छः से सात घण्टे की क्षमता पर आधारित किट बनाने व विषय विशेषज्ञों के सहयोग से प्राथमिक कक्षाओ के पाठ्यक्रम में प्रयोग कैसे व किन चीजों को सिखाने के लिए किया जा सकता है, आदि सिखाना होगा। सेवारत अध्यापक प्रशिक्षण मे आने के लिए अध्यापकों को जो पत्र डाला जाए उसमे उन्हें जरूरी सामान साथ लेकर आने को कहा जाए। ये पत्र भी सेमिनारो या वर्कशापों से दो या तीन महीने पहले डाले जाए। दो साल, नौ महीने, तीन महीने व इक्कीस दिन के प्रशिक्षण शिविर मे इसे रखा जाए। इस किट को अलग-अलग कक्षा के लिए भी बनाया जा सकता है तथा सारी प्राथमिक कक्षाओं के लिए इकट्ठा भी।

इस किट की आकृतियों व अखबारी कतरनों का उदाहरण देकर इसे समझाया जा सकता है। प्रति वर्ष ऐसा ही प्रयोग अगर सभी न सही कुछ छात्रो के सहयोग से अध्यापक करना शुरू करे तो बाल कहानियों, बाल कविताओं व चुटकलो की कई पुस्तकें आसानी से बनाकर स्कूल में "झोला पुस्तकालय" संस्कृति पैदा की जा सकती है। इस किट को तैयार करने से अध्यापक नवीन शिक्षण विधियों की खोज व प्रयोग करने के लिए दक्ष होगा, खेल विधि व छात्रों की क्षमता व रुझानों को भी नई दिशा मिलेगी। अभिभावकों को लगेगा कि स्कूल की मदद हमारी अपनी मदद है स्कूल हमारे वातवरण व परम्पराओं के नजदीक आ रहा है, वे स्कूली बुलावे पर तुरन्त स्कूल जाएगे साथ ही व्यवस्था में धन की दोहरी हानि रोक कर पर्यावरण से जुडकर सीखना भी सीखेंगे। इस किट से शिक्षा छात्रों की उपयोगिता का ही सवाल नहीं रह जाएगा, न ही महज छात्र व अध्यापक की ही अंतर्क्रिया रहेगी बल्कि छात्र-अध्यापक-समाज व अन्य सरकारी विभागों की भूमिका की पहचान बन जाएगी। सीखना भी आसान होगा, व्यवस्था भी आसान होगी, क्रिया को बढ़ावा मिलेगा, रटने के स्थान पर करके देखने का भाव प्राथमिक शिक्षा को आलोकित करेगा। किट मूल आधारों की पहचान करवाएगी। ज्ञान को सर्वगाही बनाएगी।

ऐसा मेरा मानना है। □□

जिला शिक्षा प्रशिक्षण संस्थान
धर्मशाला, हिमाचल प्रदेश